खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

सत्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९३८-४० ई०]

संपादक

पं० विद्याभूषण मिश्र

(श्री दौलतराम जुयाल द्वारा अंग्रेजी से हिंदी में रूपांतरित)
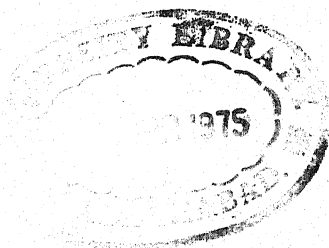
उत्तर प्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०१२ वि०

विषय-सूची

पृष्ठ

वक्तव्य

विवरण ... ... १—२९

प्रथम परिशिष्ट उपलब्ध हस्तलेखों के रचयिताओं पर टिप्पणियाँ ... ३३—८१

द्वितीय परिशिष्ट रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण ... ८५—४०४

तृतीय परिशिष्ट (अ) अज्ञातनामा रचयिताओं की कृतियों के उद्धरण ... ४०७—४५९

,, ,, (आ) अज्ञातनामा रचयिताओं की साधारण रचनाओं की नामावली ... ४६०—४६३

चतुर्थ परिशिष्ट (क) परिशिष्ट १ और २ में आये उन रचयिताओं की नामावली जो प्रस्तुत खोज में नये मिले हैं ... ४६७—४७०

,, ,, (ख) पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं ... ... ४७१—४७२

,, ,, (ग) संग्रह-ग्रंथों (पद-संग्रहों और कवित्त-संग्रहों) में आये उन कवियों की नामावली जो पहले अज्ञात थे तथा जिनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों, मिश्र बंधुविनोद और शिवसिंह सरोज में नहीं मिलता ... ... ४७३—४७४

,, ,, (घ) रचयिता और उनके आश्रयदाता ... ४७५

ग्रंथकारों की अनुक्रमणिका ... ... ४७६—४७८

ग्रंथों की अनुक्रमणिका ... ... ४७९—४८२

वक्तव्य

पिछले त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२६–२८ ई०) में खोज विवरणों के प्रकाशन के निमित्त उत्तर प्रदेशीय शासन द्वारा दिए गए १००००) के अनुदान का उल्लेख किया गया है। उक्त अनुदान से सन् १९२६ से लेकर १९३७ ई० तक के चार त्रैवार्षिक खोज विवरण छापे गए हैं। आगे के चार त्रैवार्षिक विवरणों (सन् १९३८–४९ ई०) के प्रकाशन के निमित्त भी राज्य शासन से और सहायता की प्रार्थना की गई है। विवरणों का प्रकाशन क्रम चल रहा है। इस समय सत्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण पाठकों के सामने प्रस्तुत है। इसमें सन् १९३८–४० ई० के खोज-कार्य का उल्लेख है। इस विवरण को भूतपूर्व निरीक्षक पं० विद्याभूषणजी मिश्र ने खोज विभाग के साहित्यान्वेषकों की सहायता से अंग्रेजी में संपादन किया था। हिंदी में इसका रूपांतर खोज के वर्तमान साहित्यान्वेषक श्री दौलतराम जुयाल ने सावधानी पूर्वक किया है। रूपांतर में ग्रंथों और ग्रंथकारों का अनुक्रम अंग्रेजी लिपि के ही अनुसार है। इसको परिवर्तित न करने का कारण पूर्वोक्त त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण में पं० विश्वनाथ प्रसादजी मिश्र द्वारा लिखित पूर्वपीठिका में दिया गया है। पं० विद्याभूषणजी मिश्र ने इस विवरण को छपने के पूर्व अच्छी तरह देख लिया था।

हम उत्तर प्रदेशीय शासन के आभारी हैं जिसकी सहायता से खोज विवरणों का प्रकाशन हो रहा है तथा जिसे इस कार्य के संरक्षण का श्रेय प्राप्त है। हमें पूर्ण आशा है कि राज्य शासन की सहायता से अप्रकाशित सभी विवरण शीघ्र छप जाएँगे।

मैं सभा के प्रधान मंत्री डा० राजबली पांडेय के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण रुचि लेते हुए इस विवरण को नागरी मुद्रणालय में छपवाने का तुरंत प्रबंध कर दिया। मुद्रणालय के मैनेजर बाबू महताबरायजी का मैं विशेष अनुगृहीत हूँ जिन्होंने प्रस्तुत विवरण को समय पर छापने के अतिरिक्त प्रूफ संशोधन के कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाई है। खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल के परिश्रम और लगन से ही यह कार्य शीघ्र संपन्न हो सका है। उन्होंने ही इस विवरण का हिंदी में रूपांतर किया है। अतः वे विशेष रूप से धन्यवाद के भाजन हैं। खोज विभाग के सहायक श्री पशुपतिनाथ पांडेय एवं उप सहायक श्री शिवशंकर मिश्र को भी उनकी सहायता के लिये धन्यवाद देता हूँ।

काशी,
रामनवमी, २०१३ वि०

हजारी प्रसाद द्विवेदी
निरीक्षक, खोज विभाग

प्राचीन हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज का
सत्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

(सन् १९३८–४० ई०)

प्रस्तुत सत्रहवें त्रैवार्षिक विवरण में सन् १९३८, १९३९ तथा १९४० ई० के कार्य का उल्लेख है। इस कार्यकाल के आरंभिक दिनों में डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल निरीक्षक थे, किन्तु अस्वस्थता के कारण जब उन्होंने त्यागपत्र दे दिया तब सभा ने निरीक्षक का कार्य-भार मुझे सौंपा। इसमें उल्लिखित समस्त कार्य मेरे निरीक्षण में हुआ है।

इस कार्यावधि में खोज का कार्य इटावा और मथुरा जिलों में हुआ। इटावा में कार्य करने वाले अन्वेषक—श्री बाबूराम बिस्थरिया कार्य में तत्पर और सावधान न पाए जाने के कारण खोज कार्य से अलग कर दिए गए। इससे यद्यपि खोज-कार्य को बहुत क्षति पहुँची तथापि वह अनिवार्य थी। उनके स्थान पर श्री महेशचन्द्र गर्ग एम० ए० को नियुक्त किया गया।

इस अवधि में ७९२ हस्त-लेखों के विवरण लिए गए। वर्ष क्रम से इन विवरणों की संख्या के अंक नीचे दिये जाते हैं :—

वर्ष (सन् ई०)	विवरण-संख्या
१९३८	२४९
१९३९	१९५
१९४०	३४८

२९६ ग्रंथकारों के बनाए हुए ४३६ ग्रंथों की ४९६ प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। इसके अतिरिक्त २९६ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात हैं। १०८ ग्रंथकारों के १३९ ग्रंथ खोज में बिलकुल नवीन हैं। इनमें १०३ ऐसे नवीन ग्रंथ सम्मिलित हैं जिनके रचयिता तो ज्ञात थे, किन्तु उनके इन ग्रंथों का पता नहीं था।

नीचे दी हुई सारिणी में ग्रंथों एवं उनके रचयिताओं का शताब्दि-क्रम दिखाया गया है:—

शताब्दि	१५वीं	१६वीं	१७वीं	१८वीं	१९वीं	अज्ञात एवं संदिग्ध	योग
ग्रंथकार	२	१७	४३	५६	३०	१४८	२९६
ग्रंथ	६	४२	६९	१३१	६९	४७५	७९२

ग्रंथों का विषयानुसार विभाजन इस प्रकार है:—

१	भक्ति, स्तोत्र और माहात्म्य	१६६
२	दर्शन और आध्यात्मिक	५७
३	उपदेश और नीति	२९
४	धार्मिक	४९
५	लीला और बिहार	३८
६	शृंगारिक	४६
७	काव्य	७१
८	अलंकार या रीति	१८
९	पिंगल	७
१०	इतिहास-पुराण	२८
११	पौराणिक-कथा	३७
१२	जीवनी	२५
१३	वंशावली	१
१४	कथा-कहानी	१८
१५	स्वप्न	३
१६	ज्योतिष	३५
१७	सामुद्रिक	८
१८	रमल और शकुन	२६
१९	तंत्र-मंत्र-यंत्र	१३
२०	संगीत	५
२१	कोकशास्त्र	३
२२	धनुर्वेद	१
२३	वैद्यक	१८
२४	रसायन	१
२५	योग	२
२६	स्वरोदय	७
२७	व्याकरण	२
२८	भूगोल	५
२९	राजनीति	४
३०	गणित	५
३१	कोष	३
३२	विविध	६१
	योग—	७९२

जिन नवीन ग्रंथकारों का पता लगा है उनमें से निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं:—
१—बालक राम, २—बुद्ध सिंह (राव राजा), ३—श्री प्रभु गोस्वामी चंद्रगोपालजी, ४—चिदात्माराम, ५—हरिवंश टंडन, ६—श्रीहितदासजी, ७—जय गोविंद वाजपेयी, ८—राजा जयसिंह, ९—कलीराम, १०—कुमुटी पाव, ११—ख्वाजा मुहम्मद फाजिल, १२—माणकदास, १३—परमानंद, १४—राघवदास, १५—रामजन, १६—महाराजा रसिक मोहन राय या रसिक सेवक, १७—सालू, १८—उमा, १९—वली।

१—बालकराम—प्रस्तुत शोध में इनके कुछ कवित्त मिले हैं जिनका परिमाण २७८ अनुष्टुप् छंद है। कवित्तों के साथ-साथ कुछ सवैये, माँझ और छप्पय भी हैं। लेखक ने इनमें भक्ति, ज्ञान, और वैराग्य का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। साथ ही उसने धार्मिक-पाखंड और आडम्बर का खंडन करते हुए हिन्दू-मुसलमानों की एकता का भी प्रतिपादन किया है।

ग्रंथकार का परिचय ज्ञात न हो सका। एक छप्पय में इन्होंने दादू दयाल, गोरखनाथ और सुखदेव का उल्लेख किया है:—

॥ भेंट का कवित्त ॥ छप्पय छंद ॥

स्वामीदादू साध आधि धर्म हृदय धार्यौ।
दया सील संतोष गिरा गोविंद उचार्यौ।
ज्ञान षंडग गहि तुरत पिसन पंचो मन मारै।
काम क्रोध मद लोभ मोह दल सबै संघारै।
पुनि अंग जोग गोर्ष जती भगति जोग जोगेस्व नव।
ज्ञान ध्यान सुखदेवजी म बालकराम भणि शेष शिव॥

इससे यद्यपि इनके विषय में कोई बात स्पष्टतया ज्ञात नहीं होती तथापि अनुमान होता है कि ये दादू पंथानुयायी रहे होंगे। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि इन्होंने निर्गुणियों की भाँति वर्णाश्रम की अवहेलना और धार्मिक अंध-विश्वास तथा रूढ़ियों का खंडन किया है। इन्होंने तिलक, माला और मूर्ति-पूजा आदि बाह्यायोजनों को पाखंड मात्र कहा है। इन्हें हिन्दू-मुसलमानों के पारस्परिक वैमनस्य से हार्दिक क्लेश होता था। निम्नलिखित छप्पय में उक्त दोनों जातियों के अज्ञान की ओर संकेत किया गया है:—

छप्पय

हिंदू तुरक न भूमि उरक हिंदूनहीं पानी।
हिंदू उरक न अग्नि समझ बिनु दुषी अज्ञानी॥
हिंदू तुरक न पवन तुरक हिंदू न अकासा।
चंद सूर त्रिपछि दिन राति करै प्रकासा॥
अरू एक आत्माश्रम सही हिंदू तुरक न जानिये।
कहि 'बालकराम' पायो मरम वर्णाश्रम भ्रम मानिये॥

वेदान्त की ओर भी इनकी रुचि जान पड़ती है, जिसका अधिक प्रचार निर्गुण पंथियों में सुन्दरदास ने किया था। इन बातों से यही निष्कर्ष निकलता है कि ये निर्गुण पंथी थे और जब इन्होंने दादू दयाल का नामोल्लेख इतनी श्रद्धा से किया है तब इनका दादू पंथानुयायी होना असंगत नहीं प्रतीत होता।

पंजाब खोज विवरण संख्या ११ पर आए बालकराम यही ज्ञात होते हैं। एक बालकराम 'भक्त दाम गुण चित्रणी टीका' के रचयिता के रूप में पहले भी आए हैं, देखिए त्रैवार्षिक खोज विवरण सन् १९२३-२५ ई० संख्या ३२। परंतु उनका भी परिचय ज्ञात नहीं होता। अतः नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत रचयिता ही हैं अथवा कोई अन्य।

२—राव राजा बुद्धसिंह—इनका 'सनेह तरंग' नामक रीति-ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसके अन्तर्गत नायिका भेद, रस और अलंकारों का वर्णन है। ग्रन्थ का निर्माण-काल सं० १७८४ वि०, सन् १७२७ ई० है:—

सतर सै चौरासिया नवमी तिथि ससिवार
शुकल पक्ष माही प्रगट रच्यौ ग्रंथ सुषसार।

लिपिकाल संवत् १८९४ वि०, सन् १८३७ ई० दिया है। 'सनेह तरंग' उच्चकोटि का रीति ग्रंथ है, किन्तु लिपि कर्त्ता ने जहाँ तहाँ लिखने में अशुद्धियाँ की हैं। उत्तरार्द्ध तो इतने भद्दे ढंग से लिखा गया है कि पढ़ने में भी कठिनाई होती है।

ग्रंथ से ग्रंथकार का कोई विशेष परिचय* प्राप्त नहीं होता। ये दुर्गा जी के भक्त जान पड़ते हैं। इन्होंने ग्रंथारम्भ में उन्हें नवरसमयी कहकर वंदना की है:—

मदन मोदक वदन सदन वेताल जाल वृत।
भगन भित्त भंजन अनेक जिन असुर बंस हित॥
सदा हास कर चंड चंड मुंडादिक हिरमय।
अनल जाल जुत भाल लाल लोचन विसाल जय॥
जय जय अचिंत गुन गन अगम आतम सुष चैइतनमय।
जय दुरित हरन दुरगा जननि राजित नव रस रूप मय॥

३—गोस्वामी श्री प्रभु चंद्र गोपाल जी इनका 'चंद्र चौरासी' नामक ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसके 'सुधा' नाम से तीन भाग हैं। प्रथम भाग में माध्व-सिद्धान्त का संक्षेप में वर्णन है, द्वितीय में सेवा-भाव का तथा तीसरे में उत्सव-कार्यों का। इसमें रचनाकाल और लिपि-काल का उल्लेख नहीं है।

पुष्पिका के अनुसार ग्रंथकार माध्व-गौडेश्वर संप्रदाय के सप्तम पीठ के आचार्य थे। इनको श्री चित्रा सहचरि का स्वरूप कहा गया है:—

---

* ये पौरच नरेश बुद्ध थे जिनका उल्लेख भूषण के नाम से प्रसिद्ध एक छंद में है। देखिए—"भूषण ग्रन्थावली" (फुट० ३८, ३६) साहित्य सेवक कार्यालय, काशी।

—संपादक

इति श्री मन्मध्व गौड़ेश्वर सम्प्रदाय सप्तम पीठाधिष्ठित श्री राधा माधव निकुंज मंदिर सेवाधिकारि श्री चित्रा सहचरि स्वरूप श्री प्रभु चंद्र गोपाल गोस्वामिकृता श्री चंद्र चौरासी जी समाप्तिमगात्

इसके अतिरिक्त रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। ग्रंथ-स्वामी गो० यमुना वल्लभ जी का कहना है कि गो० श्री प्रभु चंद्रगोपाल जी श्री रामराय जी के छोटे भाई थे और उनसे लगभग १३।१४ वर्ष छोटे थे। श्री रामराय जी अकबर के समकालीन हुए हैं। नाभादास जी के भक्तमाल में इनका उल्लेख हुआ है। भारतेन्दुजी ने भी निम्न-लिखित कुंडलिया में इनका उल्लेख किया है:—

जगत विदित जयदेव कवि सेवित चरन रसाल।
वृन्दावन विलसत अजहुँ श्री राधा माधव लाल॥
श्री राधा माधव लाल बिहारी जी सन्निधि लखि।
रामराय संबंध प्रेम वल्लभ कुल सब सुखि॥
सेवे चन्द्र गोपाल रूप सुन्दर चित्रा सखि।
सेवा सात्विक भाव एक दिन हौं देखी चखि॥
मिले मोहि गोस्वामी श्री ब्रजकिशोर सेवा लगत।
दर्शन वृन्दा विपिन फल हरिश्चन्द्र जेही जगत॥

यह कुंडलिया श्री रामराय जी कृत 'आदिवाणी' की भूमिका में दी हुई है। उक्त वाणी ग्रंथ-स्वामी श्री यमुना वल्लभ जी द्वारा प्रकाशित की गई है। श्री रामराय जी के एक शिष्य महाराजा भगवान दास थे जो संभवतः जयपुर नरेश विदित होते हैं जिन्होंने गोवर्द्धन में मानसी गंगा का पक्का घाट और हरदेव जी का मंदिर बनवाया था। इनके बहुत से पदों में 'भगवान हितु रामराय' की छाप मिलती है जिसके बहुत से लेखकों और विद्वानों ने 'भगवान हित रामराय' मानकर श्री रामराय जी को हितानुयायी बतलाया है, परन्तु यह भूल है। 'हितु' शब्द को 'हित' कर देने के कारण ही यह भ्रम हुआ है।

श्री प्रभु चंद्र गोपाल जी के शिष्य वंगदेश के एक राजा रसिक मोहन राय उपनाम 'रसिक मोहन' या 'रसिक सेवक' थे। जिनको चंद्र सखि का अवतार बताया गया है। उन्होंने (रसिक मोहन राय ने) प्रस्तुत ग्रंथ में प्रत्येक 'सुधा' के आदि अंत में अपनी कविता भी जोड़ दी है।

ग्रंथ-स्वामी अपने को इन आचार्यों का वंशज बतलाते हैं और अपना संबंध प्रसिद्ध गीत गोविंदकार जयदेव से जोड़ते हैं। इनके अनुसार जयदेव लाहौर के रहनेवाले सारस्वत ब्राह्मण थे। इनकी बतलाई हुई वंशावली नीचे दी जाती है:—

लवपुर (लाहौर) निवासी श्री सारस्वत द्विज मार्तण्ड आचार्यों का वंश वृक्षः—

श्री० १०८ श्री भोजदेव जी मिश्र

श्री जयदेव कविराज (गीत गोविंदकार)
श्री कृष्णदेव कविराज
श्री गोविंददेव जी महाराज
श्री मुकुन्ददेव जी महाराज
श्री अनन्यदेव महाराज
श्री माधव लाल महाराज
श्री प्रद्युम्न लाल महाराज
श्री मोहन लाल

४—चिदात्माराम—ये एक गद्य ग्रंथ 'त्रिपद वेदान्त' या 'ग्रंथ त्रिपदा' के रचयिता हैं। ग्रंथ में वेदान्त दर्शनानुसार 'माया', 'ब्रह्म' और 'जीव' का विवेचन है। इसमें रचना-काल का कोई उल्लेख नहीं हुआ है। लिपि-काल एक दूसरे ग्रंथ के आधार पर, जो इसके साथ एक ही हस्तलेख में लिपि बद्ध है, सं० १८५५ वि०, सन् १७९८ ई० है।

ग्रंथकार का नाम चिदात्माराम केवल पुष्पिका से ज्ञात हुआ है :—

इति श्री चिदात्माराम विरंचितायां त्रिपद वेदान्त निरणयं संपूर्ण ॥ भाषा संपूरण ॥

पुष्पिका से इस बात का आभास होता है कि उक्त ग्रंथ मूल रूप में कदाचित् संस्कृत में था जिसका लेखक चिदात्माराम रहा होगा। क्योंकि यदि चिदात्माराम ने ही यह रचना की होती तो दुबारा 'भाषा संपूरण' लिखने की आवश्यकता न पड़ती।

५—हरिवंश टंडन—इनके 'रसमंजरी' नामक ग्रंथ का पता चला है। यह नायिका भेद का उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसमें रचना काल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १७०९ वि०, सन् १६५२ ई० है जिससे ग्रंथ एवं ग्रंथकार दोनों की प्राचीनता सिद्ध होती है।

रचयिता ने अपना वंश-परिचय इस प्रकार दिया है:—

अति पुनीत कवि कलुष विहंडन। साहि सभा सबहिन सिर मंडन।
षुलित षग्ग षत्तिय सिर षंडन। जगमगात इकै कुल टंढन॥
तिहि वंस कियो उदोत। कित्त सुरसरि सोत।
छज्ज मल्ल सुअ आनंद। तत नंद परमानंद॥
कुल कमल मानस हंस। जिसु चित्त जगत प्रसंस।
सदनंद सुअ अवतंस। जप वंस मनि हरिवंस॥
रसिक राज हरिवंस तन चंचरीक निज हेत।
भानु उदत रसमंजरी मधुर मधुर रस लेत॥*

इसके अनुसार इनके पिता का नाम सदानंद, पितामह का नाम परमानंद, पर-पितामह का नाम आनंद तथा वृद्ध पितामह का नाम छज्जमल्ल था।

६—श्री हितदासजी—इन्होंने श्री हितहरि वंशजी कृत संस्कृत ग्रंथ 'सुधा-निधि-काव्य' की संवत् १८३४ वि०, सन् १७७७ ई० में व्रज भाषा में पद्यबद्ध टीका की। टीका अत्यंत सरस है। ग्रंथ का लिपि-काल संवत् १८४१ वि०, सन् १७८४ ई० है।

श्री हितदासजी हितानुयायी थे तथा वृन्दावन में रहते थे:—

यह रहस्य पूरण भयो भाषा वानि सार।
दास वास वृन्दा विपिन पूरन आस हमार॥"

इनके गुरु, जिनका नाम इन्होंने बड़े आदर से लिया है, कदाचित् भोरी सखि थे:—

श्रोत्र रूप कलसान करि पीयो बुद्धि निधान।
भोरी सखि प्रसाद हित भाषा कही बषान॥

इससे इस बात का भी पता चलता है कि रचयिता ने उक्त टीका इन्हीं 'भोरी सखि' के प्रसादनार्थ लिखी थी। ग्रंथ के रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है:—

---

* संस्कृत में भानुदत्त ने 'रसमंजरी' और 'रसतरंगिणी' नामक दो रीति ग्रंथ लिखे हैं। 'रसमंजरी' में नायिका भेद वर्णित है और 'रसतरंगिणी' में रसों की विवेचना की गई है। यह 'रसमंजरी' उसी के आधार पर लिखी गई है। 'भानुउदत रसमंजरी' में भानुदत्त का स्पष्ट उल्लेख है। —संपादक

संवतसर दस आठ सत गये तीस अरुचार।
सावन मास सुहावनो तीजन को त्योहार॥

७—जय गोविंद वाजपेयी—इनका 'कवि सर्वस्व' नामक रीति ग्रंथ प्राप्त हुआ है। इसके अन्तर्गत रस, नायिका भेद, अलंकार, गुण और काव्य-दोष आदि विषयों का उत्तमता से वर्णन किया गया है। ग्रंथ का रचना काल अज्ञात है। लिपि-काल संवत् १७६५ वि०, सन् १७०८ ई० है। इससे ग्रंथ तथा ग्रंथकार दोनों की प्राचीनता सिद्ध होती है।

ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसमें पद्य में दिए गए लक्षण तथा उदाहरण गद्य में भी भली भाँति समझा कर स्पष्ट कर दिए गए हैं।

पुष्पिका के अनुसार ग्रंथकार मंडन कवि के पुत्र थे:—

इति श्री मत्पद वाक्य पारावारीण महामहोपाध्याय महामहिम महाकवि श्री मंडन तनयेन जयगोविन्देन वाजपेयिना विरचिते कवि सर्वस्वे शब्दार्थो भयालंकार निरूपणो नाम दशमः परिच्छेदः॥१०॥ समाप्तोयं कवि सर्वस्व नामा ग्रंथः संवत् १७६५ वर्षे आषाढ़ मासे कृष्णपक्षे सप्तमां तिथौ॥ पतंगवासरे॥ गढ़पहरामध्ये॥

शेष परिचय अज्ञात है। एक मंडन खो० वि० १९२०–२२ ई०, संख्या १०३ पर आए हैं जिसमें उन्हें सन् १६५९ ई० में वर्तमान, बुँदेल खंड के अन्तर्गत जैतपुर नामक स्थान के निवासी तथा श्री महाराजा मंगद सिंह के आश्रित होना बतलाया गया है। इन्हें महाकवि भी कहा जाता था। यही महाकवि मंडन प्रस्तुत रचयिता के पिता जान पड़ते हैं। अतः प्रस्तुत रचयिता का समय सं० १७१६ वि० और १७६५ वि० ("कवि सर्वस्व'; का लिपि-काल) के मध्य पड़ता है।

८—राजा जयसिंह—प्रस्तुत खोज में इनके 'काव्य-रस' नामक ग्रंथ की एक अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है। ग्रंथ के प्राप्तांश में केवल चौथा और पाँचवाँ, दो ही अध्याय हैं जिनमें रस और अलंकारों का वर्णन है। रस-प्रकरण में श्रृंगार के अन्तर्गत दो अध्यायों में नायिका भेद विस्तार पूर्वक दिया गया है। इसमें एक विशेष बात यह है कि रस मंजरीकार भानुदत्त के अनुकरण पर प्रस्तुत रचयिता ने 'आगच्छत पतिका'* नामक दसवीं नायिका का नूतन आविष्कार किया है:—

नवीं नायिका है कही भानदत्त निरधारि।
प्रवत्स भर्तिका नाम धरि काढ्यो भेद विचारि॥

---

* अष्टनायिका में से एक नायिका 'प्रवत्स पतिका' है, अर्थात् जिसका पति विदेश जा रहा है। भानुदत्त ने रसमंजरी में प्राचीन मत का उल्लेख करते हुए बतलाया है कि 'प्रवत्सतपतिका' की ही भाँति 'प्रवत्स्यत्पतिका' भी एक भेद हो सकता है अर्थात् जिसका पति जानेवाला है। 'आगमिष्यत् पतिका' नायिका वह होती है जिसका पति आनेवाला हो और 'आगच्छत् पतिका' वह है जिसका पति आ रहा हो। ये दोनों भेद 'आगतपतिका' के अंतर्गत ही माने जाते हैं और दोनों का उल्लेख संस्कृत ग्रन्थों में हुआ है। —संपादक

तेही रीतिन सोधि हम दसई काढ़ि और।
आगछत पतका कही सो जनाइ इहि ठौर ॥ २८ ॥
मिलै पीउ दिन दोक मैं आवत सुनियौ वाम।
आगछत पतका कही सुपुस रति है धाम ॥ २९ ॥

कही है प्रमान अष्ट नाइका भरथ मुनि भानदत्त कही रस मंजरी बनाइकै।
पीउ चलिवे कौ होइ जाकौ परदेस को नवीं प्रवत्सभर्तिका दइ है सो गनाइ कै ॥
आइ चुक्यो नहीं घर आवतु सुन्यो है कंतु दसईं कहत जयसिंह समुझाइ कै।
आगछत पतिका कहावैं इन रीतिन सों नवीं मानौं त्योंही दई दसई जनाइ कै ॥३०॥

अर्थात् भरत मुनि द्वारा कही गई खंडितादि आठ नायिकाओं के अतिरिक्त ९वीं नायिका की कल्पना भानुदत्त ने की और उसका नाम 'प्रवत्स भर्त्तिका' (प्रवत्स्भतृका) अर्थात् जिसका पति परदेश जानेवाला हो, रखा। प्रस्तुत रचयिता ने इसी के आधार पर एक १० वीं नायिका की कल्पना की जिसका नाम 'आगछत पतिका' अर्थात् जिसका पति परदेश से आ रहा हो रखा।

ग्रंथ का रचना-काल नहीं दिया हुआ है। लिपि-काल सं० १८०२ वि०, सन् १७४५ ई० है जो इसी ग्रंथ के साथ लिपिबद्ध एक अन्य ग्रंथ 'उषा चरित्र' के आधार पर है। ग्रंथकार का नाम, जैसा कि ग्रंथ के आरंभ में दिया हुआ है, राजा जयसिंह हैं:—

लिष्यते रसकाव्य राजा जैसिंघ की भाषी।

इसके अतिरिक्त रचयिता के विषय में विशेष रूप से कुछ ज्ञात नहीं होता। परन्तु अनुमानतः ये जयपुर नरेश थे।

इन्होंने अपने 'काव्य रस' में मंडनकृत 'रस रत्नावली' और जय गोविंद वाजपेयी कृत 'काव्य-सर्वस्व' के पद्य उदाहरण स्वरूप उद्धृत किए हैं। मंडन का काल संवत् १७१६ वि० है तथा उनके पुत्र का संवत् १७६५ वि० के मध्य में माना गया है, देखिए प्रस्तुत विवरण में जयगोविंद वाजपेयी पर लिखी गई टिप्पणी। इसके अनुसार राजा जयसिंह उक्त वाजपेयी के समकालीन या उनके पश्चात् वर्तमान रहे होंगे। ग्रंथ के लिपि-काल (सं० १८०२ वि०) के अनुसार उनका इसके पूर्व वर्तमान होना निश्चित है।

संक्षिप्त-विवरण के अनुसार जयपुर के महाराज जयसिंह द्वितीय का राज्यकाल सं० १७५६ से १८०० वि० तक था। सम्भव है, प्रस्तुत 'काव्यरस' के रचयिता यही महाराज जयसिंह हों।

९—कलीराम—'सुदामा चरित्र' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। यह रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसके प्रारंभ के तीन पत्रे लुप्त हो गए हैं, किन्तु कथा भाग पूर्ण है। ग्रंथ में रचना काल नहीं दिया है; लिपि काल सं० १७३१ वि०, सन् १६७४ ई० है। कवि ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

इति श्री सुदामा चरित लिष्यो छै मिति मगसिर सुदी १३ सं० १७३१ वि० ॥

दोहा—चतुर्वेद माथुर विदित मथुर मधुपुरी धाम।
सुकविन को सेवक सदा कली राम कविनाम ॥
चरित सुदामा को रच्यो हो निज मति अनुसार।
भूल चूक होवै कछू लीज्यौ सुकवि सुधार ॥

अतः इससे अनुमान होता है कि यह लिपि-काल ही कहीं रचना काल न हो। दोहे के अनुसार रचयिता माथुर चतुर्वेदी और मथुरा के निवासी थे।

१०—कुमुटीपाव—प्रस्तुत शोध के अनुसार ये 'योगोभ्यास मुद्रा' नामक एक ग्रंथ के रचयिता हैं। इसमें छः पटल (अध्याय) हैं। चौथे पटल से आरंभ होने के कारण यह अपूर्ण है। इसमें हठयोग विषयान्तर्गत षट् चक्र, पंच मुद्रा और चौरासी आसनों का वर्णन विराट् पुराण के आधार पर किया गया है :—

इति श्री महादेवे पार्वती संवादे वैराटपुराणे योग सास्त्रे योगाभ्यास चतुर्थोपटलः।

इसका रचना काल तो ज्ञात नहीं है, किन्तु लिपि-काल संवत् १८९७ वि०, सन् १८४० है।

रचना संस्कृत मिश्रित प्राचीन हिन्दी में है। संस्कृत का रूप अत्यन्त विकृत है। हो सकता है कि यह कार्य लिपिकर्त्ता का हो। हिन्दी का प्रयोग संस्कृत के साथ-साथ किया गया है :—

(अ) अथ षट् चक्र के नाम प्रवक्षामी।

(आ) सर्व चक्र भेर प्रमाण प्रथमे आधार चक्र गुदां स्थाने वसें चतुर्दल कमल पद्म रक्त वर्ण प्रभा कमल मध्ये श्री गनेस देवता विद्या गुणं सिद्धि बुधि सक्ति चत्वारी प्रषर (? अषर) वं सं षं सं अजपा संख्या षट् सत स्वासा ६०० प्रवर्तते इति आधार चक्र जाप प्रमान बोलीये आधार चक्र पर स्वाधिष्टान चक्रं लिंग स्थाने वसें।

(ई) अजपा जपंती महामुनि इति ब्रह्म चक्र जाप प्रमान बोलीये ब्रह्म चक्र ऊपर गुह्य चक्र सीस मंडल स्थाने बसें इकईस ब्रह्मांड बोलीयें असंष्या दल कमलं अनंतं सूर्यपति कासं प्रभा कमल मध्ये श्री अचंत्यनाथ देवता अव्यसक्त सक्ति पर्म सुंन्य मर्गे इति गुह्य चक्र जाप प्रमान बोलीये इकईस ब्रह्मंड ते परम सुन्य स्थान वसे परम सून्य स्थान अपर उपर जे न विनसे न आवै न जाई योग योगेंद्र हे समाई सुनो देवी पार्वती इस्वर कथितं महाज्ञानं।

रचयिता कुमुटीपाव का केवल उसके नाम के अतिरिक्त विशेष परिचय प्राप्त नहीं होता। यह नाम अवश्य ही सिद्धों के नाम के साथ साम्य रखता है जैसे सरहपा, लूहिपा आदि। इन्हीं चौरासी सिद्धों के अन्तर्गत एक कुमरिपा भी हैं। सम्भवतः यही कुमरिपा प्रस्तुत ग्रंथकार कुमुटीपाव हैं। लिपिकारों के द्वारा 'कुमरिपा' का 'कुमुटीपाव' लिखा जाना असंभव नहीं। यदि रचयिता वस्तुतः उक्त प्राचीन सिद्धों में से हैं तो रचना साहित्यिक दृष्टि से अतीव मूल्यवान होगी।

११—ख्वाजा महम्मद फाजिल—'तीरंदाजी-रिसाला' नामक ग्रंथ के रचयिता के रूप में ज्ञात हुए हैं। ये ख्वाजा महम्मद कासिम के पुत्र और नवाब इफ्तखार खाँ के शिष्य थे। इनके पूर्वज सन् ६५७ हिजरी में हिरात से भारत आए थे। इनका वंशगत व्यवसाय धनुर्वेद था।

आरंभ के दो पत्र लुप्त होने के कारण यह ग्रंथ अपूर्ण है। यह २४ बाब या अध्यायों में विभक्त है और इसमें तीरंदाजी की कला का निरूपण उत्तम रीति से किया गया है। इसकी भाषा खड़ी बोली है जो यद्यपि अधिकतर अरबी और फारसी के शब्दों से युक्त है तथापि अत्यन्त सरल और स्वाभाविक है। कदाचित् विदेशी शब्दों को अधिक संख्या में अपनाने में उनका हिरात का संस्कार ही जाग्रत हुआ होगा, अन्यथा जैसा कि ग्रंथ पढ़ने से विदित होता है उनका प्रयत्न इसे देश भाषा हिंदी में ही लिखने का था। हिंदी शब्दों को निस्संकोच अपनाने के साथ-साथ क्रिया का प्रयोग, वाक्य-विन्यास और विभक्ति आदि सभी कुछ हिन्दी व्याकरण के अनुकूल हैं। उदाहरण के लिये निम्नलिखित अवतरणों को देखिए:—

(अ) मेरे सलाम करने वा बोलने के पहले मेरा नाम लेकर तेरा सांचा शौक तीरंदाजी का जानकार तुझको कायदा तीरंदाजी का सिषायेंगे। पर हमारा बताया हुआ भूलियो मत।

(आ) तुझको यह चाहिए कि जो जो कायदे हमारे से सीषें उन उनकूं अच्छी तरह से याद कर परीछा सबके लिखते जाया कर। इसके पढ़ने से और तीरंदाजों को फायदा या सवाब हासिल हो वा तुझकूं वा हमकूं भी सवाब हो। मैने उनका करना कबूल किया। तब उन दोनों ने तीर कमान से मिला कायदे से खड़े होकर मुँह से अल्लाहो अकबर कह तीर लगाए। इतने में मेरी आँख खुल गई नींद जाती रही।

(ई) समझना भेद तीरंदाजों के जो कि कई भांत के होते हैं।

ग्रंथ की समाप्ति भी हिन्दी के ग्रंथों के ढंग पर की गई है:—

इति ख्वाजा महम्मद कासम का फरजंद ख्वाजा मुहमद फाजिल जिसका बनाया हुआ तीरंदाजी रिसाला संपूर्णम्।

रचयिता ने शालिहोत्र पर भी एक पुस्तक लिखी थी जिसका उल्लेख इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ में किया है:—

अथ वाव पच्चीसवाँ घोड़े के सेव, सवाव व इलाज में सालोत्तर की किताब मसहूर है सो बड़ी है सो न्यारी कर लिखी है॥

खेद है ग्रंथ के रचनाकाल का पता न लग सका। लिपिकाल संवत् १८९६ वि० तथा सन् १८३९ ई० है।

१२—माणकदास—इनकी एक पदावली खोज में प्राप्त हुई है। ग्रंथ का पूरा नाम ज्ञात न हो सका, पर बाईं ओर कक्ष (हाशिया) में 'प' लिखा होने से 'पदावली' नाम मान लिया गया है जो ठीक ही जान पड़ता है। इसके रचना-काल और लिपि-काल का

पता नहीं लगा। ग्रंथ में राम और कृष्ण के भक्ति विषयक पद संगृहीत हैं। रचयिता का वृत्त भी अज्ञात ही है।

१३—परमानंद ये 'लवकुश पर्व' के रचयिता के रूप में ज्ञात हुए हैं। ग्रंथ में जैमुनि पुराण के आधार पर लवकुश की कथा का वर्णन है। इसकी शैली वही है जो गावों में गाई जाने वाली गोपीचंद आदि की कथाओं की होती है। प्रस्तुत ग्रंथ में भक्ति को प्रधानता दी गई है और कहा है कि उसके सामने योग-साधन का कोई महत्त्व नहीं:—

प्रमानाद वनु जन्मु हमारैं जहाँ कंचन तहाँ जाहि।
तोल वरावरि हम भई मोल वरावरि नाहि॥
तपु कीन्यौ तनु लालु है भक्ति बिना मुष स्यांमु।
कंचन समि तनु तौलीयौ मोल घट्यौ विनु राम॥

गावों में इस प्रकार की कथाओं को वैरागी, जोगी, भिखमंगे, चिकाड़े, सारंगी और इकतारा आदि के साथ गाते हैं। इन कथाओं में अधिक प्रचलित गोपीचंद, भर्तृहरि और शिव पार्वती आदि की कथाएँ हैं। ये कथाएँ मौखिक रूप में अत्यन्त प्रचलित हैं। इनके द्वारा ग्रामीण जनता को ज्ञान, वैराग्य और भक्ति का उपदेश मिलता है। यद्यपि साहित्यिक दृष्टि से इनका अधिक महत्त्व नहीं है; परन्तु सामाजिक दृष्टि से इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः इस प्रकार के साहित्य की गणना लोक साहित्य के अन्तर्गत होनी चाहिए जिसका साहित्य के इतिहास में स्वतंत्र वर्गीकरण वांछनीय है।

ग्रंथ में रचनाकाल तो नहीं दिया गया है; परन्तु लिपि-काल सं० १८१८ वि०, सन् १७६१ ई० है जिससे यह पर्याप्त प्राचीन जान पड़ता है। ग्रंथकर्त्ता ने अपने विषय में केवल इतना ही लिखा है कि वे कनौजिया थे और उनके पिता का नाम महिमा था:—

कनवजीया महैमा सुतु गावै प्रभु जसु परमानंद॥

१४—राघवदास या राघोदास—ये 'भक्तमाल' ग्रंथ के रचयिता हैं और दादूदयाल की शिष्य-परम्परा में श्री हरिदास के शिष्य थे:—

मेम गुरु माथै पर स्वामी हरिदास जू है प्रम गुरू स्वामी प्रहलाद वड़ी निधि है।
स्वामी प्रहलाद जू कै गुरु वडे सूरवीर नांव स्वामी सुंदरदास जणै सारी विधि है॥
तास गुरु दादू जी दयाल दिणि परम सो तो त्रियलोक मधि प्रगट प्रसिद्ध है।
स्वामी दादू जू कै गुरु ब्रह्म हैं विचित्र विग राघो रटि राति दिन नाती प्रनति वृध है॥

अतः इसके अनुसार इनकी गुरु-परम्परा निम्नलिखित है:—

ब्रह्म
दादू दयाल
सुन्दरदास
प्रहलाद
हरिदास
राघवदास (प्रस्तुत ग्रंथकार)

ग्रंथकार ने अपने को पीपावंशी और चांडाल गोत्र का बतलाया है:—

पीपा वंसी चांडाल गोत। हरि हिरदै कीन्हौं उदौत।
भक्त माल कृत कलिमल हरणी। आदि अंत मधि अनुक्रम वरणी॥

ये पीपा दादू पंथी थे और १७वीं शताब्दी में हुए (देखिए सं० विवरण)। राघवदास ने भक्तमाल की रचना सं० १७१७ वि०, सन् १६६० ई० में की:—

संमत सत्र सै सत्र होतरा सुकल पक्षि सनिवार।
तिथि तृतीया आसाड की राघो कियो विचार॥

इस भक्तमाल के टीकाकार चतुरदास हैं। इनका कहना है कि इस ग्रंथ की रचना नाभादास जी के सुप्रसिद्ध भक्तमाल के अनुकरण पर हुई है:—

अगर गुरु नाभा जू कू आज्ञा दीन्हीं कृपाकरि।
प्रथमहि साषि छप्पै कीन्हीं भक्तमाल है।
तैसें प्रहलाद जू विचारि कही राघो जू सौं
करौ संत आवली सुबात यों रसाल है॥
लई मानि करि जानि धरै आनि भक्त सब
नृगुन सगुंन षट दरसन विसाल है।
साधि छप्पै मनहर इंदवै अरेल चोपिनि
स्वानी सवइया छंद जांनियो हंसाल है॥ ३३०॥"

टीकाकार चतुरदास ने भी अपनी गुरु परंपरा दी है:—

स्वामी दादू इष्टदेव जाकौ सर्व जानै भेव दूसर सुंदर सेव जगत विख्यात है।
तिनके नारायणदास भजन हुलास पास उनहु कै रामदास पंडित साख्यात है॥
जिनके जू दयाराम कथा कीरतन नाम लेत भए सुषराम (? सुषराम) और नहीं बात है।
त्रिष्णा अरु लोभ त्याग लयो है संतोष भाग ऐसे जू संतोष गुरु चत्रदास तात है॥

तदनुसार टीकाकार की गुरु परम्परा निम्न प्रकार हुई:—

दादू
सुंदरदास
नारायण दास
रामदास
दयाराम
चतुरदास

टीका का रचना-काल सं० १८१२ वि०, सन् १७५५ ई० है:—

संमत येक रु आठ लिषै शुभ पाँच रु सातहि फेरि मिलावै।
भाद्रव की वदि है तिथि चौदस मंगलवार सुवार सुहावै॥

जिस प्रकार वैष्णव धर्म की सगुण धारा में रामानुज, विष्णु स्वामी, माध्व और निम्बार्क नाम से चार संप्रदाय हैं उसी प्रकार निर्गुण धारा में भी कबीर, नानक, दादू और निरंजनी नामक चार प्रमुख पंथ माने गए हैं। प्रस्तुत भक्तमाल में इन चार निर्गुण पंथों में होनेवाले भक्तों का वर्णन विशेष विस्तार से किया गया है। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त सगुण संप्रदायों के भक्तों, प्राचीन संतों, तथा संन्यासी, जोगी, जंगम, बौद्ध, यवन आदि मतमतान्तरों के अनेक श्रेष्ठ भक्तों का गुणगान भी सहृदयता पूर्वक किया गया है।

निर्गुण संप्रदायों से संबंध रखनेवाले अधिकांश लेखकों का परिचय इस ग्रंथ से प्राप्त हो सकता है। इस दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रंथ है। यह पूर्ण तो अवश्य है, किन्तु शोचनीय दशा में है। इसके आरंभ के पन्ने सील और दीमक के कारण आधे आधे रह गए हैं।

ग्रंथ का लिपि-काल संवत् १९३३ वि०, १८७६ ई० है।

१५—रामजन—ये स्वामी राम चरणजी के शिष्य थे और उन्हीं के पास शाहपुरा (राजस्थान) में रहते थे। इन्होंने उक्त स्वामी रामचरण जीके 'दृष्टान्त सागर' नामक ग्रंथ की टीका संवत् १८३९ वि०, सन् १७८२ ई० में रची :—

अठारा से गुणतालस संवत संष्या कही।
मघसर सुदि विसाल टीका पूरण रामजन ॥

'गुणताल' 'गुणतालस' जान पड़ता है अर्थात् गुणतालीस (उनतालीस)। यदि 'गुण' और 'ताल' को अलग-अलग लेकर विचार किया जाय तो ३ गुण और ७ ताल अर्थात् ३७ होते हैं। उस दशा में टीका का रचना-काल संवत् १८३७ वि०, सन् १७८० ई० होगा।*

टीका राजस्थानी मिश्रित व्रज भाषा गद्य में है। हस्त-लेख में लिपि-काल नहीं दिया गया है।

१६—महाराज रसिक मोहन राय या रसिक सेवक—प्रस्तुत शोध में इनकी 'सेवक बानी' नामक रचना प्राप्त हुई है जिसमें श्री जयदेवजी के वंश में उत्पन्न श्रीराम रायजी तक के १२ आचार्यों की स्तुति की गई है।

ग्रंथकार का एक अन्य नाम रसिक सेवक भी है। ये माध्व संप्रदाय के अनुयायी थे। इनके गुरु गो० श्री प्रभु चंद्रगोपालजी थे जिनका उल्लेख 'चंद्र चौरासी' ग्रंथ के साथ प्रस्तुत विवरण में हो चुका है। 'चंद्र चौरासी' के अन्त में किसी कृष्णदास की एक कुंडलिया इनके तथा इनके ग्रंथ 'सेवक बानी' के विषय में इस प्रकार है :—

वंग देश राजा रसिक मोहन राय सुनाम।
श्री प्रभु चंद्र गोपाल प्रभु पाद शिष्य सुषधाम ॥

---

* राजस्थानी में उन्तालीस को 'गुनतालिस' 'गुनतालस' या 'गुनताल' बोलते हैं। अतः यह '३९' का ही बोध कराता है। —संपादक

पाद शिष्य सुषधाम रची रुचि सेवक वानी।
प्रथम चंद्र सखि रूप सकल ऋतु रीति विधानी॥
दूजें बरनन वंश माधव आचारज जानी।
तीजें नित्य विहार कुंज सहचरी बखानी॥
जा विधि पांच पचास करि कुंडलिया सर्वस्व धन।
कृष्णदास विश्वास करि पढ़ि पावै श्री कुंजवन॥

इससे ज्ञात होता है कि ये बंगाल के एक राजा थे और माध्व संप्रदाय में इन्हें चंद्र सखि का अवतार माना जाता था। प्रस्तुत ग्रंथ में निम्नलिखित १२ आचार्यों की वंदना की गई है :—

१ श्रीप्रभु जयदेव गोस्वामी
२ " कृष्ण देव "
३ " गोविंद देव "
४ " श्रीमन्मुकुंददेव "
५ " अनन्य देव "
६ " माधव लाल "
७ " प्रद्युम्न लाल "
८ " मोहन लाल "
९ " नंद गोपाल "
१० " गोपाल जी "
११ " रामराय जी "
१२ " चंद्र गोपाल "

ग्रंथ में लिपि-काल और रचना-काल नहीं दिए गए हैं। श्रीप्रभु चंद्र गोपाल जी श्रीप्रभु रामराय जी के सहोदर भाई थे जो अकबर के समकालीन थे, देखिए प्रस्तुत विवरण में इनका विवरण। इस दृष्टि से श्रीरसिक मोहन रायजी का काल अनुमानतः अकबर के पश्चात् निश्चित होता है।

१७—साल्हू—इनकी कुछ वाणियों का विवरण प्रस्तुत खोज में प्राप्त हुआ है। जिस हस्तलेख में ये वाणियाँ लिपिबद्ध हैं उसके ३ और ४ संख्यक दो पन्ने और इसके अन्त में १३ के पश्चात् के पन्ने लुप्त हो गये हैं। अतः रचना का अधिकांश भाग इन पन्नों के साथ ही नष्ट हुआ समझना चाहिए। जो अंश शेष है उसमें 'गुरु अंग' और 'स्मरण अंग' का वर्णन है। यद्यपि आरंभ में (पन्ना १ पर) गणेश, सरस्वती और शिव जी की स्तुति की गई है तथापि इन विषयों का विवेचन निर्गुण विचारानुकूल हुआ है। अतः रचयिता निर्गुणमार्गी संत ज्ञात होता है। ये वाणियाँ विषय की दृष्टि से उच्चकोटि की हैं।

इनके रचना-काल और लिपि-काल का कोई पता नहीं चल सका। प्रत्येक दोहे के

आरंभ में 'साल्ह' शब्द आने से वही रचयिता का नाम मान लिया गया है। इसके अतिरिक्त रचयिता का और कोई परिचय ज्ञात नहीं होता।

१८—उमा—इनके निर्गुण भक्ति विषयक कुछ पद प्राप्त हुए हैं। ये रामसनेही पंथ के प्रवर्त्तक स्वामी रामचरण जी के शिष्य रामजन की शिष्या थीं:—

उमा रामजनां के सरणै निरभै पद पाइ रे।

रामजन का विवरण संख्या ११८ पर दिया गया है। ये सं० १८३९ वि०, सन् १७८२ ई० में वर्तमान थे। अतः उमा का भी लगभग यही काल मानना चाहिए।

पद राजस्थानी मिश्रित हिन्दी में हैं और विषय की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं। पदों का रचना-काल और लिपि-काल दोनों अज्ञात हैं।

१९—वली—इनके निम्नलिखित तीन ग्रंथ प्रस्तुत शोध में प्राप्त हुए हैं। १ अद्वैत प्रकाश, २ षटशास्त्र विचार और ३ वस्तु विचार।

'अद्वैत प्रकाश' में ऋग्वेद के 'प्रज्ञानंद ब्रह्म', यजुर्वेद के 'अहं ब्रह्म' और सामवेद के 'तत्वमसि' पर वेदान्त दर्शनानुसार विचार किया गया है। यह अपूर्ण है।

'षट्शास्त्र विचार' में षट् दर्शनों का सार वर्णित है।

तीसरे ग्रंथ 'वस्तु-विचार' में वेदान्त मतानुसार वस्तु के वास्तविक ज्ञान का निरूपण किया गया है।

ये तीनों रचनाएँ शंकराचार्य के अद्वैतवाद के आधार पर निर्मित हुई हैं। यह बात वस्तु-विचार के निम्नलिखित दोहों से ज्ञात होती है:—

अभिवादन कर ब्रह्म को विरचत वस्तु विचार॥
कहौं प्रगट हस्तामलक सकल सार को सार॥
जो पूरब रचना रची, सुरवानी बुधवंत॥
संक्राचारज रिषि सुमत बर्नें भाव अनंत॥
भ्रम अविद्या तम जगत मिटत सुनत ही जाहि॥
'वली' जथा मति प्रेमसों भाषा बरनत ताहि॥

रचना-काल और लिपि-काल किसी भी ग्रंथ में नहीं दिया गया है। रचयिता का जीवनवृत्त प्राप्त नहीं हुआ।

ज्ञात लेखकों में से जिनके नवीन ग्रंथ मिले हैं निम्नलिखित प्रमुख हैं:—

२०—अषैराम २१—बनारसी २२—भीष्म २३—विहारिन देव जी २४—चतुर्भुज मिश्र २५—गोपेश्वर जी २६—जटमल २७—नागरीदास २८—पलटुदास २९—रूप रसिक और ३०—श्री कृष्ण कवि या श्री कृष्ण कलानिधि।

२०—अषैराम प्रस्तुत खोज में अषैराम के चार ग्रंथ—१—मुहूर्तचिन्तामणि, २—प्रेम-रस-सागर, ३—लघुजातक और ४—कृष्णचंद्रिका नवीन प्राप्त हुए हैं। 'मुहूर्त-चिन्तामणि' और 'लघुजातक' में लेखक ने अपना परिचय दिया है।

'मुहूर्त्त-चिन्तामणि' के अनुसार इनका निवास स्थान मथुरा से डेढ़ योजन की दूरी पर स्थित वेरीनगर है जहाँ इनके वंशज अबतक वर्तमान हैं। ये ज्योतिषी थे और 'भरतनगर' या भरतपुर में रहते थेः—

> कृष्णपुरी ते निकट है जोजन डेढ़ प्रमान।
> दछिन दिसा सुहावनी बेरी नगर सुथान॥
> सो तो निजु अस्थान है अषैराम को एह।
> भरथनगर सुषवास है जानि जोतिसी जेह॥

'मुहूर्त्त-चिन्तामणि' ज्योतिष विषयक ग्रंथ है। इसमें ग्रन्थ का रचना-काल नहीं दिया गया है। लिपि-काल संवत् १९३८ वि०, सन् १८८१ ई० है।

'लघु जातक' में—जिसका रचना-काल सं० १८१२ वि०, सन् १७५५ ई० और लिपि-काल सं० १९२६ वि०, सन् १८६९ ई० है। रचयिता ने अपने विषय में विस्तार-पूर्वक लिखा हैः—

> श्री मथुरा मंडल विषै शरस शेथरी नग्र।
> जमुना पटरानी बहै सदा तास के अग्र॥
> अग्रेवज दिश मैं वसै श्री मथुरा ते सोय।
> योजन डेढ़ प्रमाण के अंतर जानो लोय॥
> सूरसेन केसवन में दीने नगर अनेक।
> नाम धरायो कृष्ण कौ यह जिय धरौ विवेक॥
> गर्ग गोत्र में जन्म है विप्र गर्ग है सोय।
> तिहि के पुन कुल विषै जन्म हमारौ होय॥
> ताहि जदु के वंश मैं बहुत शाष है अंत।
> प्रगट भये ब्रजराज के भाव सिंघ बुधवंत॥
> वदन सिंघ ताके भयौ नगर कुम्हेरी स्थान।
> पुनि ताके ग्रह औतर्यौ सूरज सिंघ सुजान॥
> नगर भरथपुर ताइ को निसदिन रहत निवास।
> रच्यौ तास ने प्रवल गढ़ दुर्ग अखंड मवास॥
> तवै सेथरी नगर तै अषैराम द्विज राज।
> आय भरथपुर नगर में नृप सों कियो समाज॥
> वहु वर्षन तापुर विषै कीयौ कृष्ण को ध्यान।
> वेद व्यास ने सुपन में आनि सुनायो ज्ञान॥
> गुरु चरणांबुज की कृपा अतुल भई मम सीष।
> सोवत जागत खात मैं भजै जगत के ईस॥
> अरु जोतिष है सहस कृत भाषा कीयौ विचारि।
> लघु-जातक यह नाम है बुद्धिमान हिय धारि॥

उपर्युक्त दोनों ग्रंथों में निवास स्थान के विषय में मत भेद है। पहले के अनुसार वह बेरीनगर है और दूसरे के अनुसार शेथरी नगर। विचार करने पर बेरीनगर ही ठीक ज्ञात होता है। लिपिकार की असावधानी से 'सुबेरी' का शेथरी' हो गया जान पड़ता है। मथुरा से दोनों गाँवों की दूरी एक ही है, अर्थात् डेढ़ योजन दखिन।

बेरी नगर निवासी पं० रेवती नंदनजी, जिनके यहाँ से 'मुहूर्तचिन्तामणि' और 'प्रेमरस सागर' के विवरण प्राप्त हुए हैं, का कहना है कि अषैराम उनके पूर्वज थे तथा उनके वंश में इनके अतिरिक्त अभैराम, सेवाराम और हरिनाम आदि सुप्रसिद्ध विद्वान् और कवि हुए हैं। इनके समय में बेरी ग्राम इतना प्रसिद्ध हो गया था कि पढ़ने के निमित्त काशी जाने वाले विद्यार्थी भी बहुधा एक रात्रि यहाँ ठहरते और उनकी सत्संगति का लाभ उठाते थे। उनका वंश वृक्ष नीचे दिया जाता है :—
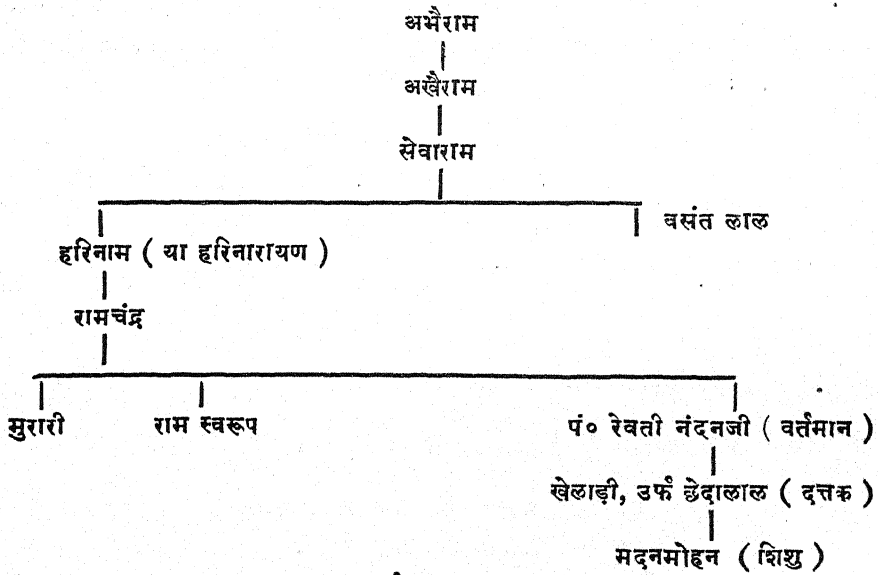
पंडित रेवती नंदनजी का यह भी कहना है कि उनके पूर्वजों में से एक व्यक्ति बाहर से आकर बेरी ग्राम में बसे थे। संभव है अभैराम ही बेरी ग्राम में आ बसे हों।

कठैला निवासी पं० पन्नालालजी, जिनके यहाँ से 'श्री कृष्ण चंद्रिका' का विवरण लिया गया है और जो उक्त पं० रेवती नंदनजी के ही वंश के हैं, के समर्थन से भी उक्त निष्कर्ष की पुष्टि होती है। उनका कहना है कि अषैराम ग्वालियर दरबार से संबंधित थे जहाँ से उन्हें बेरी ग्राम में निर्मित श्री बलदाऊजी के मंदिर के लिये प्रतिमास कुछ धन मिलता था जो घटते-घटते आठ रुपए मासिक के रूप मे अब भी चल रहा है। इसके अतिरिक्त बेरी नगर पहले ग्वालियर राज्य के ही अन्तर्गत था।

अषैराम के शेष दो ग्रंथ 'प्रेमरस सागर' और 'श्रीकृष्ण चंद्रिका' काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

'प्रेमरस सागर' वियोग शृंगार का उत्तम ग्रंथ है। इसमें सात्विकी, राजसी और तामसी नायिकाओं के विरह का अत्यन्त सरस वर्णन है। इसके नायक श्रीकृष्ण हैं। ग्रंथ का रचना-काल अज्ञात है, लिपि-काल सन् १८३९ ई० है। रचयिता ने इसमें अपनी छाप 'घनश्याम' रखी है जिसकी प्रेरणा उसे राधिकाजी से मिली कही गई है:—

एक द्यौस मुख स्वप्न में निकसत राधा नाम।
अषैराम को कृपा करी दई छाप 'घनस्याम'॥

'श्रीकृष्ण चंद्रिका' यह हिन्दी भाषा में श्रीमद्भागवत का संक्षिप्त रूप है। इसमें अन्य प्रसंगों की अपेक्षा श्रीकृष्ण की कथा का विशेष विस्तार से वर्णन हुआ है जिसमें लेखक ने गोलोक, राधाकृष्ण विवाह, तथा दिव्य बृन्दावन का वर्णन, जो भागवत में नहीं है, अन्य पुराणों के आधार पर किया है। इसमें प्रेम-भाव तथा सुदामा-चरित का वर्णन बहुत सरस और मर्मस्पर्शी हुआ है। इस ग्रंथ का उल्लेख सन् १९१२—१४ ई० की त्रैवार्षिक खोज विवरण में संख्या २ पर 'रत्नप्रकाश' नाम से हो चुका है। वहाँ इसका रचना काल नहीं दिया है, इस बार ज्ञात हुआ है जो सन् १७५४ ई० है। ग्रंथ का लिपि-काल सन् १८२६ ई० है। इसमें से कुछ अंश उद्धृत कर नीचे दिए जाते हैं:—

अथ श्रीकृष्ण जू की जन्म बधाई

आठहु सिद्धि नऊ निधि चौसठि आनि कला विकला छवि छाई॥
हीरन की नग लालन की मणि मालनि की वरषा वरसाई॥
देव सिहात गुनी विहसात सुजाचिक जात उछीरन पाई॥
गोकुल चंद कैं चंद भयौ अषैराम कहै चिरु जीवो कन्हाई॥

सुदामा चरित वर्णन

इक दिन लसि लसि कैं पिय हिय वसि वसि कैं
विपति सौं फँसि फँसि कैं हँसि हँसि कहति भई॥
ऐहो पिय परि परि कैं दारिद सौं लरि लरि कै
देह सब गरि गरि कैं झरि झरि वहत भई॥
चातक लौं चकि चकि कैं रैन दिन जकि जकि कैं
हरि हरि वकि वकि कैं साँसत सहति भई॥
अषैराम लटि लटि कैं उदरनि कटि कटि कैं
चीर तन छटि छटि कैं घटि घटि रहति भई॥

सन् १९१७–१९ ई० के त्रैवार्षिक खोज विवरण में संख्या ४ पर एक अषैराम 'हस्तामलक वेदान्त' के साथ उल्लिखित हैं जिनको अनुमान के आधार पर बुंदेलखंडी कहा गया है। परन्तु प्रस्तुत अषैराम से उन्हें अभिन्न समझना चाहिए। अतः यह महाशय हमारे सामने पंडित, दार्शनिक, और कवि आदि रूपों में उपस्थित होते हैं।

२१-बनारसी जैन—महाकवि गो० तुलसीदास जी के समकालीन सुप्रसिद्ध जैन कवि बनारसीदास आगरे के रहनेवाले थे। इनके कई ग्रंथ गत वर्षों की खोज में आ चुके हैं। प्रस्तुत शोध में इनका एक बिना नाम का ग्रंथ प्राप्त हुआ है जो अत्यन्त जीर्ण शीर्ण और खंडित अवस्था में है। इसके आदि अंत और मध्य के अधिकांश पत्रे नष्ट हो गये हैं। ग्रंथ का विषय नीचे दिया जाता है:—

प्रहेलिका, कहरानाम की चाली, प्रश्नोत्तर दशा, प्रश्नोत्तर माल, अवस्थाष्टक, षट्दर्शनाष्टक, चार वर्ण दोहा, अजितनाथ के छंद, श्री शान्तिनाथ के छंद, त्रिभंगी, नवसेना विधान, मिथ्यात्ववानो, प्रस्ताविक कर्म, चौदह विद्या, छत्तीस पौन, सप्त मिथ्यात्व दशा, गोरख वचनिका, वैद्य ज्योतिषी, वैष्णव के लक्षण, मुसलमान के लक्षण, गव्वर के नाम, हिन्दू मुसलमान ऐक्यता और उपदेश। चौदह नेम, वचनिका, निश्चय व्यवहार का विवरण, आगम आध्यात्म स्वरूप वर्णन, निमित्त उपादान, राग, जिन प्रतिमा स्तुति, मूढ़ शिक्षा, रामायण का आध्यात्मिक वर्णन, परमार्थ हिंडोलना और प्रस्ताव।

इनमें से किसी विषय पर तो अत्यल्प लिखा गया है और किसी पर विस्तारपूर्वक। हो सकता है कि जिन्हें विस्तार से लिखा है वे स्वतंत्र ग्रंथ हों अथवा सभी फुटकर रचनाएँ हों जिन्हे पुस्तकाकार कर दिया गया हो। यह आशंका ग्रंथ में विषय की दृष्टि से कोई क्रम अथवा एकरूपता न होने से उत्पन्न होती है।

ग्रंथ में 'अजितनाथजी के छंद' शीर्षक प्रसंग के अंत में संवत् १६७० वि० तदनुसार सन् १६१३ ई० का उल्लेख है:—

सोल सै सत्तरिं समय आसुनि मास सित पाषि वारसी।
वीनवै वै कर जोरि सेवक सिरी माल बनारसी॥

इससे यह तो स्पष्ट नहीं होता कि समस्त ग्रन्थ ही इस काल में लिखा गया अथवा इस संवत् के दोहे के पहले का अंश ही तबतक लिखा गया, फिर भी ग्रंथकार के इस समय में वर्तमान रहने का स्पष्ट प्रमाण अवश्य मिल जाता है।

ग्रंथ में वर्णित विषयों को देखने से रचयिता के अगाध पाण्डित्य और प्रतिभा का परिचय मिलता है। ये भारत के प्रायः सभी धर्मों के ज्ञाता मालूम होते हैं। इन्होंने शैव, बौद्ध, वैदिक, नैय्यायिक, मीमांसक और जैन मतों को ही षट्दर्शन कहा है।

कबीर आदि सन्तों की भाँति इन्होंने सत्यान्वेषण का प्रयास किया है। ग्रंथ एक बात में और महत्त्व रखता है, वह यह कि इसमें कुछ विषय, जैसे 'विवरण वचनिका' आदि गद्य में लिखे गए हैं। यह गद्य अपनी प्राचीनता को प्रदर्शित करता है और बहुत कुछ परिमार्जित रूप में है। उचित स्थानों में विरामों (।,॥) का भी प्रयोग हुआ है। ग्रंथ अपूर्ण होने से लिपिकाल का पता नहीं लगा।

इनके गद्य का उदाहरण नीचे दिया जाता है:—

अथ वचनिका

'एक जीव द्रव्य ताके अनंत गुन अनंत पर्याय······जीव पिंड की अवस्था याही भाँति।

अनंत जीव द्रव्य सपिंड रूप जानने। एक जीव द्रव्य अनंत पुद्गल द्रव्य करि संयोगित मानने। ताकौ व्यौरौ। अन्य-अन्य रूप जीव द्रव्य ताकी परनति। अन्य २ रूप पुद्गल की परनति। ताकौ व्यौरो। एक जीव द्रव्य जा भाँति की अवस्था लियें नानाकार रूप परिनमे सो भाँति अन्य जीव सों मिलै नहीं। वाकी औरे भाँति। याही भांति अनंतानंत रूप जीव द्रव्य अनंतानंत स्वरूप अवस्था लियें वर्त्तहि। काहू जीव द्रव्य के परिनाम। काहू जीव द्रव्य और सूं मिलै नाहीं॥ यही भाँति। एक पुद्गल परवान्। एक समय मांहि या भांति की अवस्था धरे। सो अवस्था अन्य पुद्गल परवान् द्रव्य सौं मिलै नांही। अनादिकाल के तामें विशेष इतनो जु जीव द्रव्य एक पुद्गल परवान् द्रव्य अनंतानंत चलाचल रूप आगमन गमन रूप अनंताकार परनमन रूप बंध मुक्ति शक्ति लिए वर्त्तहिं'।

जहाँ तहाँ रचना में कुछ खड़ी बोली के मुहावरे भी मिल जाते हैं:—

"कल्पित वचन विलास बनारसी वह जैसे का तैसा॥"

२२—भीष्म—इस बार इनकी 'भागवत' की दो अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। दोनों में रचना-काल नहीं दिया है। लिपि-काल केवल एक प्रति में है जो संवत् १८७३ वि०, सन् १८१६ ई० है।

ग्रंथकार के विषय में पहले कुछ भी ज्ञात नहीं था यद्यपि उक्त ग्रंथ के साथ ये पहले भी खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९१७–१९, संख्या २५) (१९२९–३१, संख्या ४७ सी, डी, ई, एफ)। अबकी बार जिस प्रति में लिपि-काल सं० १८७३ वि० है उसमें इन्होंने अपनी गुरु परम्परा दी है जो निम्नलिखित प्रकार से है:—

इससे ज्ञात होता है कि ये कबीर पंथी थे। यह परम्परा इन्होंने रामानंद से प्रारंभ करके अपने तक वर्णित की है:—

प्रथम अनतानंद जानि दुतिय भावानंद।
तृतिय सुरसुरीनंद चतुर्थैं है जु सुषानंद॥
पंचम नरहरिनंद षष्ठ पद्मावति जानौं।
धना सप्त रैदास अष्ट सेना नव मानो॥
दिग सुरसुर एकादस कबीर द्वादस पीपा गुण लए।
श्रीरामानंद भागवत भुव सिषि द्वादस स्कंध भए॥ २॥

भाष्य कर्त्ता बंस वर्णन

भए कबीर कृपा ते नीर जग मध्य उजागर।
नीर दया सौं जंत्रलोक भये गुण के सागर॥
जंत्र लोक कैं ध्यान भये पीतांबर दासा।
रामदास गुरु ध्यांण धरि जग भये प्रकासा॥
पुनि दयानंद जिनकैं भये हरिदास सिषि तास कौ।
प्रभु स्याम दास उर नित्य बस्यो सुभीषम चेरौ तास कौ॥ ३॥

इस प्रति में केवल पंचम स्कंध नहीं है। ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उत्तम है। विशेषतः रास वर्णन तो बहुत अच्छा बन पड़ा है। इनके 'भागवत' में वर्णित रासलीला का कुछ अंश नीचे दिया जाता है:—

श्री भगवान् जोग बल कीनौं। जोग माया कौ आसरौ लीनौ॥
सरद मल्लका फूली वन मैं। क्रीड़ा चितमन कीनौं मन मैं॥
तिहि छिन उदय भयौ उडराज। पूर्व दिसा निजु सुष कौ साज॥
अपनी अरुण किरन गुन भीनौं। पूर्व दिसा मुष लेपन कीनौं॥
ज्यौं विदेस ते नायकु आवै। त्रिया वदन कुंकुम लपटावै॥
दिनकर ताप जनन के जिते। ससि दरसन ते मिटे सब तिते॥
अषंड मंडल पूर्व ससि देष्यौ। जनु नव कुंकुम रमा मुष लेष्यौ॥
तातैं प्रफुल्लित बन अनुराग्यौ। कोमल चंद किरणि गुन पाग्यो॥
चेटक सौं कछु कियौ मुरारी। काम गायत्री वेंन मैं उचारी॥
अद्भुत सब्द बेंन मधि कीनौं। बृज जुवतिन को मन हरि लीनौं॥
वंसी धुनि सुनि कैं बृजनारी। तन मन देह दसा जु विसारी।
तनक भनक काननि सौं लागी। सबकें हियैं काम झर जागी॥
छिपिकैं घरतें निकसैं गोपी। चली तहाँ प्रीतम चित ओपी।
अति उत्ताल चाल सब ललकैं। कुंडल लोल कपोलन झलकैं॥
केतिक धेनु दुहावति वाला। वछरा छाँडि चली तिहि काला।
येकनि तजैं षीरि के हंडा। गेह गेह सब किये बिहंडा॥
येक तजति हैं निजु भरतारा। छाँड़ि चलीं तजि के भंडारा॥

× × ×

जड उन्मत्त भई जनु बौरी। पिय विनु भूलि गई सुधि सौरी॥
त्रण विद्रुम लता है जिन्हें। पियको पंथ पूछत भई तिन्हें॥
हे पीपर हे वृछ सुषदाई। हे वट पलास वृछ चित्त लाई॥
तुम कहुँ निरखे नंद किसोर। मन मोहन सोहन चितचोर॥
हे कुरु वक हे असोक सभागे। हे पुंनाग नागरस पागे॥
अहो अहो तुलसी कल्याणी। तुम निरषे कहुँ सारंग पानी॥
तुम तो पूजे हरि के चर्णा। ताते भई जगमें अष (? अघ) हर्ना॥
अहो चमेली सतोगुन झेली। सकल वरन राजत अलबेली॥
करसौं तुम्हें पकरि नंदलाल। कित दुरि रहे बतावहु हाल॥

२३—श्री विहारिनदेव जी—ये टट्टी संप्रदायी श्री विट्ठल विपुलदेव जी के शिष्य थे। इनकी दो रचनाएँ 'वाणी' और 'समय प्रबंध' नाम से पूर्व विवरणों में आ चुकी हैं, देखिए खोज विवरण (१९०५ ई०, संख्या ६१, ३१) (१९०९-११, संख्या ३१)। अबकी बार इनकी कुछ और वाणियों के विवरण लिए गये हैं जिनमें अनन्य-रस-सिद्धान्त वर्णित है। इनमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

प्रस्तुत वाणियों का विवरण वृन्दावन में श्री ठाकुर रसिक बिहारी जी के मंदिर में लिया गया है। वहाँ मन्दिर के मंत्री जी से ज्ञात हुआ कि श्री बिहारिनदेव जी दिल्ली के रहनेवाले और शाही दीवान थे। जाति के ब्राह्मण थे। श्री स्वामी हरिदास जी के शिष्यों में अधिक वाणियाँ इन्हीं की हैं। मन्दिर में इस संप्रदाय के आठ आचार्यों की संपूर्ण वाणियों का हस्तलिखित एक बृहद् संग्रह है जिसमें इनकी भी समस्त रचनाएँ सम्मिलित हैं। जिन आठ आचार्यों की इसमें वाणियाँ हैं वे निम्नलिखित हैं:—

१—श्री स्वामी हरिदास जी (जो स्वामी श्री आसधीर जी के शिष्य थे।)
२—श्री विट्ठल विपुल देव जी
३—श्री विहारिनदेवजी
४—श्री सरिसदेव जी
५—नागरीदास (ब्राह्मण)
६—नरहरदेव जी
७—रसिकदेव जी
८—पीताम्बरशरणजी

२४—चतुर्भुज मिश्र—सं० १८९६ वि०, सन् १८३९ ई० में वर्तमान भरतपुर नरेश महाराज बलवंतसिंह जी के आश्रय में रहते थे। ये गौतम गोत्र में सुकुल अहलुवा अल्ल के थे। इन्होंने अपने वंश का परिचय इस प्रकार दिया है:—

गौतम मुनि कुल तिलक मिश्र भूधर भूधर सम।
सुकुल अहलुवा अल्ल रामपद परस विगत तम॥
तिनकें वेद सरूप मिश्र भए नंदराम जू।

तिन सुत तुलसीराम मिश्र गुण गणित ग्राम जू ॥
तिनिके सुत मिश्र खुस्याल रामकृष्ण तिन जस धरन ।
सुत मिश्र चतुर्भुज तासु जो अलंकार आभाकरन ॥ २ ॥

प्रस्तुत शोध में इनके एक ग्रंथ 'अलंकार आभा' का विवरण लिया गया है। यह ग्रंथ पहले भी मिल चुका है, देखिए खो० वि० १९१७-१९ ई०, संख्या ३९। परन्तु उसमें इस ग्रंथ के ऊपर कोई विशेष विचार नहीं किया गया। इस ग्रंथ में अप्पय दीक्षित के कुवलयानंद के आधार पर केवल अर्थालंकारों का ही वर्णन किया गया है। इसकी विशेषता यह है कि अलंकारों और उनकी पुष्टि में दिए गए उदाहरणों की ब्रज भाषा गद्य में विस्तृत विवेचना की गई है। उससे यह स्पष्ट होता है कि रीति ग्रंथों में जिस गद्यात्मक-विवेचन-शैली की अपेक्षा की जाती है वह ब्रज भाषा के लेखकों द्वारा कम से कम एक शतक पूर्व व्यवहृत हो चुकी थी।

नीचे 'अलंकार आभा' से एक अंश उद्धृत किया जाता है :—

अथ पूर्णोपमा लक्षण

वाचक साधारण धरम उपमा उरु उपमेय ।
ये चारौं वरणै जहाँ पूरण उपमा गेय ॥

यथा उदाहरण

कीरति राघव रावरी रसिकनु रस उपजात ।
हंसी ज्यौं सुर गंग में विलसि विनोद अन्हात ॥

यहाँ कीरति उपमेय हँसी उपमा 'ज्यौं' पद उपमा वाचक विनोद साधारण धर्म-ऐसैं च्यारौं मिलि पूर्णोपमा है।

पुनः

गुन दूषन बुध गहत ज्यौं शंभु चंद विष दोउ ।
शिर धरि प्रथम प्रशंसियै अपर कंठ गत सोऊ ॥

यद्यपि यहाँ उपमा उपमेय दोउन कौ एक ही साधारण धर्म नहीं है क्योंकि उपमान जो शम्भु है तामैं दोऊन कौ गहिवौ कहाँ है अङ्गीकार करिबो है विन दोउन मैं प्रथम गुण रूप चंद्रमा कौ गहिवौ कहाँ है शीश पर शोभित करिबो है—और दोष रूप बिष कौ गहिबो कण्ठ मैं धरिबौ है—त्यौंही उपमेय जो बुध है तामैं गुन दोषन कौ गहिबौ कहाँ है जानिबौ है—तिन दोऊन मैं प्रथम गुन कौ गहिबो कहाँ है—शीश ढुराय कै आनंद अनुभव करिवौ है—और दोष कौ गहिबौ कहाँ है वानी करिकै नहिं उच्चारिबौ है—ऐसे भिन्न धर्म हैं तोहू चंद विष और गुन दोष इनकौ विम्ब प्रतिविम्ब भाव करिके एक ही साधारण धर्म है—यह पूर्व पूर्ण उपमा तै भेद है जहाँ वस्तु तैं भिन्नहू उपमा उपमेय परस्पर सादृश्य तै जव तुल्य हौंहि फेरि तिन मैं जो न्यारौ न्यारौ धर्म ग्रहण कीजियै सो बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव कहावै—ऐसे कवि परिपाटी है।

२५—गोपेश्वरजी—'इकतालीस शिक्षा पत्र' के टीकाकार के रूप में पहले भी खोज विवरण में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१९३५–३७ ई० संख्या २९)। ये हरिरायजी के छोटे भाई थे। इन्होंने हरिरायजी कृत 'इकतालीस शिक्षा पत्रों' की टीका व्रज भाषा गद्य में विस्तार पूर्वक लिखी है जिसमें वल्लभ कुल के सिद्धान्तों के अनुकूल उत्तम शिक्षाएँ हैं।

प्रस्तुत खोज में उपर्युक्त ग्रंथ की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं जिनमें रचना-काल नहीं दिया हुआ है। लिपि-काल केवल एक प्रति में है जो संवत् १८८९ वि०, सन् १८३२ ई० है। इस बार गोकुल स्थित वल्लभ संप्रदाय के एक महात्मा श्री वल्लभदासजी से प्रस्तुत ग्रंथकार का वंश परिचय प्राप्त हुआ है जो यहाँ दिया जाता है।

उनका कहना है कि ये (गोपेश्वरजी तथा हरिरायजी) वास्तव में श्री गोकुलनाथ ठाकुरजी के मंदिर के गुसाइयों के उत्तराधिकारियों में से थे न कि नाथद्वारा के महन्तों में से। श्री गोकुलनाथ ठाकुरजी का मंदिर भी नाथद्वारा, लिहाड़ (उदयपुर) में ही स्थापित है। उनकी वंशावली इस प्रकार है:—
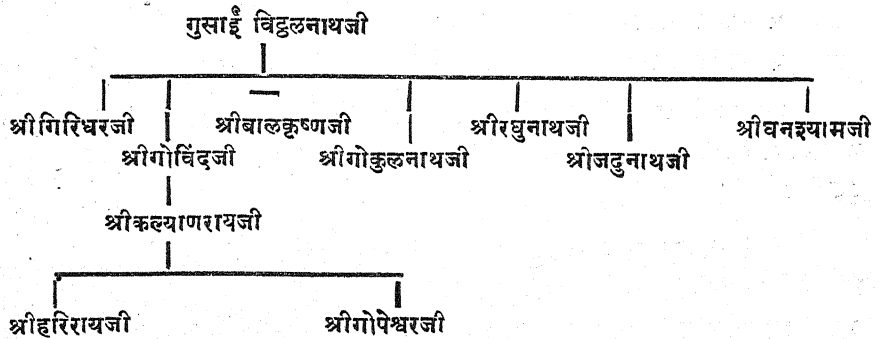
इससे स्पष्ट है कि ये वल्लभाचार्यजी के ही वंशज थे। श्रीगोपेश्वरजी को श्री हरि-रायजी का समकालीन ही समझना चाहिए। संक्षिप्त विवरण पृष्ठ संख्या १९६ पर इनके विषय में जो कुछ लिखा गया है वह ठीक नहीं है।

२६—जटमल (जाट)—प्रस्तुत खोज में इनके 'गोरा बादल की कथा' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। यह ग्रंथ पहले भी शोध में मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (१९०१ ई०, संख्या ४८)।

'गोरा बादल की कथा' इतिहास प्रसिद्ध है। पद्मिनी के लिये अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की थी। उस समय गोरा बादल ने युद्ध में जो अपूर्व वीरता दिखलाई थी उसी का वर्णन इस ग्रंथ में हुआ है।

यह ग्रंथ इस बार पद्य में प्राप्त हुआ है। इसकी भाषा राजस्थानी हिन्दी है। खेद है इसका रचना काल और लिपि काल दोनों ही अज्ञात हैं। हस्त-लेख अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पाया गया है जिससे इसकी प्राचीनता प्रगट होती है। इसके अक्षरों की बनावट भी प्राचीन है।

ग्रंथ स्वामी से ज्ञात हुआ है कि यह हस्तलेख भरतपुर के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अधिवेशन में प्रदर्शनार्थ रखा गया था जिसकी चिट इसमें अब तक विद्यमान है। उस अवसर पर डा० श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने इस ग्रंथ को माँगना चाहा था, किन्तु ग्रंथ स्वामी ने नहीं दिया। ग्रन्थ की इस बार पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

२७—नागरीदास (महाराज सावंत सिंह)—सुप्रसिद्ध कृष्ण गढ़ नरेश महाराज सावंतसिंह उपनाम नागरीदास के कई ग्रंथ पहले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१९०१ ई०) (१९०६–८ ई०) (१९०९–११, संख्या २०३)।

इस बार इनकी निम्नलिखित छः छोटी-छोटी रचनाओं का पता लगा है:—

१—विविध विषय के कवित्त

२—रीझ चतुर

३—गोवर्द्धन समय के कवित्त

४—गोकुलाष्टक

५—फाग विलास

६—सीत सार

इन सब में श्री कृष्ण की व्रज लीलाओं का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी भी ग्रंथ में नहीं किया गया है। ये सब ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं।

२८—पलटूदास या पलटुदास—अपने दो ग्रंथों के साथ पिछली दो रिपोर्टों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१९०६-८ ई०, संख्या २२२) और (१९२०-२२ ई०, संख्या १२४)। दूसरे खोजविवरण के अनुसार ये फैजाबाद के अन्तर्गत नांगा जलालपुर नामक स्थान के रहनेवाले कांदू बनिया थे। इनके गुरु का नाम गोविंददास था जो सतनामी पंथ के एक साधु थे। ये लखनऊ के नवाब शुजाउद्दौला के समय में सन् १७७० ई० के लगभग वर्तमान थे।

इस बार इनका एक ग्रंथ 'पलटुसाहब की बानी' के नाम से मिला है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। इसमें ज्ञान वैराग्य, उपदेश और भक्ति संबन्धी विषयों का वर्णन है। हिन्दू मुसलिम एकता पर भी जोर दिया गया है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है। इसकी भाषा व्रज तथा खड़ी बोली मिश्रित है जिसमें कहीं-कहीं अरबी और फारसी के शब्दों का प्रयोग भी किया गया है।

२९—रूप रसिक के 'कृपा कल्पतरु' और 'उत्सव मणिमाल' नामक दो ग्रन्थों के इस बार विवरण लिए गए हैं। पहले ग्रंथ का आरम्भ का एक पत्र लुप्त है। इसमें श्री राधा कृष्ण की प्रेम-क्रीड़ाओं और उनके जन्मोत्सवों का वर्णन है। इसमें पदों के अतिरिक्त कवित्त और सवैया भी हैं। अन्त में कुछ रेख़ते भी हैं जिनमें खड़ी बोली प्रयुक्त हुई है।

'उत्सव मणिमाल' में बसंत, होरी, डोल, अक्षय तृतीया, जानकी जन्म, नरसिंह जन्म, जल-विहार, वर्षाऋतु, पवित्रा, बधाई और जलपूजा आदि विषयों पर अनेक पद रचे गये हैं।

दोनों ग्रन्थ काव्य की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं तथा रचयिता के रचनाकौशल का पूरा परिचय देते हैं।

इन ग्रंथों में रचयिता ने अपने सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा है; परन्तु 'उत्सव मणिमाल' के अन्त में इसी ग्रंथकार द्वारा रचे हुए 'हरिव्यास देव जस अमृतसागर' की सवा छः पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। लिपिकार ने न जाने क्यों इसे अधूरा ही छोड़ दिया है। ये पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं।

श्री गणपतये नमः ॥ श्री हरिव्यास देव हरि प्रियाभ्यां नमः ॥
मांझ ॥ श्री हरिव्यास हरि प्रिया रूप तिनकी कृपा मनाई ॥
श्री हरिव्यास देव जस अमृत सागर लिखों बनाई ॥
तामैं काव्य छंद नाना विधि सो लहरि समझाई ॥
युगल रतनदाई यह गाई रूप रसिक मन भाई ॥

इससे स्पष्ट होता है कि इन्होंने 'हरि व्यास देव जस अमृत सागर' भी लिखा है जिसमें अनेक प्रकार के छंदों में कविता की गई है। यह ग्रंथ निम्बार्क संप्रदायी श्री भट्टजी के शिष्य श्री हरिव्यास देव जी के गुणगान करने के लिये लिखा गया जान पड़ता है। अतः रचयिता निम्बार्क संप्रदाय के थे और श्री हरिव्यास देव जी के ही शिष्य थे। 'वृन्दावन माधुरी' के रचयिता के रूप में पिछले एक खोजविवरण में आए रूप रसिक से ये अभिन्न जान पड़ते हैं, देखिए खोज विवरण (१९०६-८ ई०, सं० २२२)।

३०—श्रीकृष्ण कवि या कलानिधि के एक ग्रंथ 'रामचन्द्रोदय' (लंकाकांड) का विवरण प्रस्तुत शोध में लिया गया है। इसमें रामायण के लंकाकांड का वर्णन है जो वाल्मीकि के लंकाकांड का अनुवाद है। यह अनुवाद पद्यबद्ध है और काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके रचना-काल और लिपि-काल का पता नहीं चलता। रचयिता के विषय में भी और कुछ ज्ञात नहीं होता। ग्रंथ में किसी देवता की वंदना न करके सीधे विषय का वर्णन प्रारंभ कर दिया गया है। इससे पता चलता है कि कविने वाल्मीकि रामायण के समस्त कांडों का अनुवाद किया है जिनमें प्रस्तुत कांड एक है। इस कथन की पुष्टि मिश्र बंधु-विनोद से भी होती है जिसमें कृष्णभट्ट कलानिधि के बाल और उत्तर कांडों के अनुवादों का उल्लेख है, देखिए मि० बं० विनोद द्वितीय भाग संख्या ९६९। विनोद के अनुसार कृष्णभट्ट कलानिधि तैलंग ब्राह्मण थे और सं० १७६९ वि० में वर्तमान थे। प्रस्तुत कांड में रचयिता का परिचय और रचना-काल न होने के कारण यह हो सकता है कि वह सम्पूर्ण ग्रंथ के आदि या अंत में कहीं लिखा गया होगा। पिछले खोज विवरणों में तीन कृष्ण कवियों का उल्लेख हुआ है, देखिए खोज विवरण (१९०० ई०,

सं० ८३) (१९०९-११ ई०, सं० ३०१)। इनमें से दूसरे विवरण में आए हुए कृष्ण कवि प्रस्तुत रचयिता से अभिन्न ज्ञात होते हैं।

३१—जिन ग्रंथों के रचयिताओं का पता नहीं लग सका उनमें 'श्री कबीरदास जी के पदों की टीका' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। खोज के कार्य में इस ग्रंथ का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह कबीर के १२१ पदों की टीका है। इसका रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सन् १७९८ ई० है। नीचे मूल और उसकी टीका का उद्धरण दिया जाता है :-

श्री निरंजनाय नमः अथ श्री कबीर साहिबजी के पदों की टीका अर्थ सहित लिष्यते

दुलहनी गावहु मंगलचार।
हम घर आए हो राम भरतार।
तन रति करि मैं मन रत करि हूँ पंच तत बराती।
रामदेव मोरे पाहुने आये मैं जोवन मैं माती ॥ १ ॥
सरीर सरोवर वेंदी करिहूँ ब्रह्मा वेद उचारा।
रामदेव संगि भाँवरि लेहूँ धनि धनि भाग हमारा ॥ २ ॥
सुर तेतीसूं कौतिग आये मुनिवर सहस अठ्यासी।
कहै कवीर हम ब्याह चले है पुरुष एक अविनासी ॥ ३ ॥

अर्थ

दुलहनी आत्मा ॥ घट घट भरतार परमेश्वर ॥ टेक ॥ तन मन परमेश्वर सूं रत कीया। पंच तत्त तिनकी तासीर परमेस्वर सूं लीन ॥ बराती बने जोवन प्रेम मदमत्त ॥ १ ॥ सरीर सरोवर वेदी करिहूँ ॥ परमेश्वर सूं वणाव सोई वेंदी। ब्रह्मवाणी ॥ भांवरी परमेस्वर सूं विलास सोई भांवरि ॥ २ ॥ सुर देवता तेतीस ॥ पाँच इंद्री पचीस प्रकृति तीन गुण एते तीस ॥ मुनिवर सहस अठयासी ॥ नौ नाड़ी वहत्तरि कोठे शप्त धात ए अठयासी मुनि ॥ आत्मा परमात्मा सूं संजोग सोई ब्याह ॥ संसार सूं निरवासी कहुप चले ॥ ३ ॥

नीचे विवरण के साथ दिए गए परिशिष्टों की सूची दी जाती है :-

परिशिष्ट १—ग्रंथकारों पर टिप्पणियाँ।

,, २—परिशिष्ट १ में आए ग्रंथकारों के ग्रंथों के विवरण पत्र (उद्धरण, विषय, लिपि और कहाँ वर्तमान हैं आदि विवरण)।

,, ३—(अ) उन रचनाओं के विवरणपत्र(उद्धरण, विषय, लिपि, और कहाँ वर्तमान हैं आदि) जिनके लेखक अज्ञात हैं।

(आ) अज्ञात नामा रचयिताओं की साधारण रचनाओं की नामावली।

,, ४—(क) परिशिष्ट १ और २ में आये उन रचयिताओं की नामावली जो प्रस्तुत खोज में नये मिले हैं।

(ख) पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं।

(ग) संग्रह ग्रंथों (पद-संग्रहों और कवित्त संग्रहों) में आए उन कवियों की नामावली जो पहले अज्ञात थे तथा जिनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों, मिश्र बंधु विनोद और शिवसिंह सरोज में नहीं मिलता।

(घ) रचयिता और उनके आश्रयदाता।

काशी,
२५-१०-१९५५

विद्याभूषण मिश्र,
निरीक्षक, खोज-विभाग

प्रथम परिशिष्ट

उपलब्ध हस्तलेखों के रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

प्रथम परिशिष्ट

रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

१ अखैराम—इस कवि के संबंध में विस्तृत विवेचन विवरण अंश के संख्या २० पर किया गया है।

२ बालगोविंद—बालगोविंद इस शोध में प्रथमबार ही ज्ञात हुए हैं। इनके परिचय के संबंध में कुछ भी प्राप्त न हो सका। संस्कृत के कुछ पद्य खंडों पर इनके रचे सवैये प्राप्त हुए हैं जिनमें रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं पाया गया। लिपिकाल भी अज्ञात है।

३ बालकराम—इनका विस्तृत विवेचन विवरण अंश में संख्या १ पर हो चुका है।

४ बनमाली—इनके रचे 'षट्-शास्त्र-वेद-द्वादश-महावाक्य-विचार' नामक ग्रंथ के दो विवरण लिए गए हैं। यह ग्रंथ प्रथमबार ही मिला है। इसमें षट्-दर्शनों के नाम तथा उनमें प्रतिपादित विषयों का वर्णन है। वेदों में वर्णित द्वादश महावाक्यों की विस्तृत विवेचना, विषय वासनादि का त्याग, ज्ञान द्वारा उत्तम विचार, त्याग, वैराग्य का दृष्टान्त, साधु-संगति की महिमा, गुरु, महावाक्य, अजपा जाप और सार विचार, आदि विविध विषयों का विवेचन किया गया है। परन्तु प्रधान विषय 'द्वादश महावाक्य विचार' ही है।

ग्रंथ में स्थान-स्थान पर 'बनमाली' शब्द प्रयुक्त होने से उसे ग्रंथकार का नाम मान लिया गया है। इसके अतिरिक्त ग्रंथकार का और कोई परिचय नहीं मिलता। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों प्रतियों में से किसी में भी नहीं दिए गए हैं।

एक बनमाली का 'दशम भागवत' पहले भी विवरण में आया है, देखिए त्रैवार्षिक खोज विवरण (१९३२–३४, सं० ७७)। किन्तु प्रस्तुत विवरण में आए बनमाली से वह भिन्न है अथवा अभिन्न, इसका कोई पता नहीं चलता।

५ बनारसी जैन—इनका विस्तृत विवेचन विवरण अंश में संख्या २१ पर किया गया है, अतः देखिए उक्त विवरण।

६ बसंत—अपने एक अपूर्णग्रंथ 'नरसी की हुंडी' के साथ प्रथमबार ही विदित हुए हैं। ग्रंथ देसी कागज पर केवल एक ओर लिखा हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता न लग सका।

कविता में आए 'वासंत' या 'वसंत' से ही ग्रंथकार का नाम वसंत माना गया है। अन्य परिचय अज्ञात है।

रचना में केवल 'सोरठ' और 'जैजैवन्ती'—दो गीतों का प्रयोग हुआ है।

७ भड्डुली—इस बार इनके 'सगुन' और 'भड्डली-सगुनावली' नामक दो ग्रंथों के विवरण प्राप्त हुए हैं। प्रथम में 'छींक' और राशियों पर विचार किया गया है, द्वितीय में यात्रा संबंधी शुभाशुभ शकुनों का विचार हुआ है। रचनाकाल अथवा लिपिकाल का उल्लेख किसी भी प्रति में नहीं है।

इनके कई ग्रंथ पहले भी मिल चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९००, संख्या ९८; १९१२-१४, सं० २०; १९२९-३१, सं० ३२; १९२६-२८, सं० ४६) । परन्तु अभी तक इनका कोई परिचय प्राप्त नहीं हुआ।

'भड्डली सगुनावली' में भांडा ऋषि और सहदेव के नाम भी आए हैं, किन्तु ऐसे स्थल न्यून हैं। ग्रंथ की समाप्ति भड्डली के ही नाम से हुई है।

भांडा ऋषि और सहदेव का कोई परिचय नहीं मिलता। सहदेव के शकुन विषयक ग्रंथ पहले भी मिल चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९३२-३४, सं० ३५; १९३५-३७, सं० ९०)। दूसरे विवरण में इनका सहदेव भड्डरी नाम से विवरण लिया गया है।

८ भगौतीदास—इनके 'श्री चूनरी' और 'ब्रह्म विलास' नामक दो ग्रंथों के विवरण प्रस्तुत शोध में लिए गए हैं। पहले ग्रंथ में शिवसुंदरी (जीव) जिन भगवान् के साथ आध्यात्मिक ढंग से अपना विवाह (मिलन) करना चाहती है। इसका रचनाकाल सं० १६८० वि०, सन् १६२३ ई० है। लिपिकाल नहीं दिया है। रचनाकाल इस प्रकार दिया है।

राजबली जहाँगीर कै फिरइ जगति तस आण हो।
(१ ६ ८ ०)
शशि रस वसु विंदा धरहु संवत सुनहु सुजाण हो॥

ग्रंथकार का नाम भगौतीदास है और ये जहाँगीर के समय में वर्तमान थे, जैसा उपर्युक्त दोहे से ज्ञात होता है।

'सहर सुहावै बूडीए भणत भगौतीदास हो'। सहर का नाम 'सुहावै' है या 'बूडीए' यह निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता।

दूसरे ग्रंथ में जैन सिद्धान्तानुसार वैराग्य, भक्ति तथा आत्मोपदेश का वर्णन है। इसका रचनाकाल संवत् १७५५, सन् १६९८ ई० है :—

संवत् सत्रह सै पंचावन ऋतु वसंत वैशाख सुहावन।
सुकुल पक्ष तृतिया रविवार संघ चतुर्विधि के जैकार॥

ग्रंथकार आगरा के रहने वाले वोसवाल जाति के वैश्य थे। कटारिया गोत्र में दशरथ शाह के पौत्र और लालजी के पुत्र थे। ग्रंथ की रचना औरंगजेब के समय में हुई:—

जंबू दीप मै दक्षक भर्त्त। तामैं आर्य षंड विसतर्त।
तहाँ उग्रसेन पुरथान। नगर आगरौ नाम प्रधान।

तहाँ वसै जिन धर्मी लोक । पुन्य वंत बहु गुण के थोक ।
बुद्धि वंत सुभ-चर्चा करैं । अर्थ भंडार धर्म को भरैं ।
नर पति तहाँ राजै औरंग । जाकी आग्या वहै अभंग ।
तहाँ न्याति उत्तम बहु बसै । तामैं ओसवाल पुनि लसै ।
तिनके गोत्र बहुत विस्तार । नाव कहत नहिं आवै पार ।
सबतै छोटो गोत प्रसिद्ध । नाव कटारिया रिद्ध समृद्ध ।
दशरथ साह पुन्य के धनी । तिनके रिद्ध बृद्धि अति घनी ।
तिनके पुत्र लालजी भए । धर्म वंत गुन गन निर्मये ।
तिनके पुत्र भगौतीदास । जिन यह कीनो ब्रह्म विलास ।
जानै निज आतम की कथा । ब्रह्म विलास नाम है यथा ।
बुद्धिवंत हसियो मत कोई । अल्प मती भाषा कवि होय ॥

यह ग्रंथ जिसमें ग्रंथकार ने अपना नाम भगौतीदास लिखा है पहले भी खोज में मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९३२–३४, सं० २१)। किन्तु उक्त विवरण में ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १७५० वि० है जहाँ कि प्रस्तुत प्रति में संवत् १७५५ है। यथार्थ काल क्या है इसका ठीक पता नहीं चलता ।

'चूनरी' और ब्रह्म विलास के रचनाकालों में ७५ वर्ष का अन्तर पड़ता है जिससे इन्हें एक व्यक्ति की रचना मानने में बाधा पड़ती है। किन्तु दोनों में ही आध्यात्मिक विषय प्रतिपादित होने से इन्हें एक की रचना मान लेने में काल के अतिरिक्त कोई अन्य बाधा उपस्थित नहीं होती। संभव है भगौतीदास ने दीर्घ जीवनयापन किया हो ।

९ भगवान—प्रस्तुत खोज में इनका एक ग्रंथ 'अनुभव हुलास' नाम का मिला है जिसमें अनुभव ज्ञान द्वारा ब्रह्म का विचार किया गया है। इसका रचना काल ज्ञात नहीं। लिपिकाल अन्य ग्रंथ के अन्त में दिए गए लिपिकाल के आधार पर संवत् १८५५ वि०, सन् १७९८ ई० है। ये ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

ग्रंथकार का नाम निम्नलिखित दोहे के आधार पर भगवान मान लिया गया है:—

अखंड ब्रह्म कूँ षंडित जे ते कहिए अज्ञान।
क्षेत्रनि में क्षेत्रज्ञ हुँ यौं भाषै भगवान् ॥

एक भगवान दास निरंजनी पंथी हैं जिनके कई ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित हैं तथा जिनके दो ग्रंथों—१ जैमिनि-अश्वमेध और २ कार्तिक माहात्म्य के इस बार भी विवरण लिए गए हैं तथा प्रस्तुत भगवान एक ही हैं या अलग-अलग यह बिना किसी आधार के ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता।

१० भगवानदास निरंजनी—इनके 'जैमिनि अश्वमेध' और 'कार्तिक माहात्म्य' नाम के दो ग्रंथ नवीन प्राप्त हुए हैं। पहले का रचनाकाल संवत् १७५५, सन् १६९८ ई० है, लिपिकाल अज्ञात है। दूसरे ग्रंथ का रचना काल सं० १७४२, सन् १६८५ ई० है

तथा लिपिकाल संवत् १८८१, सन् १८२४ ई० है। इनके 'गीता माहात्म्य' का भी विवरण लिया गया है, किन्तु वह तथा 'अमृत धारा' ग्रंथ पिछले दो खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९२३–२५, सं० ४२९; १९०६–८, सं० १३६)। ये इन्हीं नाम के मूल संस्कृत ग्रंथों के पद्यबद्ध हिंदी अनुवाद हैं।

११ भटोत्पल—इनका एवं इनके एक ग्रंथ 'प्रश्न-ज्ञान' का खोज में पहले-पहल पता चला है। यह ग्रंथ ब्रज-भाषा गद्य में है। इसमें प्रश्नों के शुभाशुभ फल वर्णन करने के नियम दिए हुए हैं। इसका रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सं० १८६१, सन् १८०४ ई० है।

ग्रंथकार का कुछ भी परिचय ज्ञात नहीं है। संभवतः ये संस्कृत के मूल 'प्रश्न-ज्ञान' नामक ग्रंथ के कर्त्ता हैं और प्रस्तुत ग्रंथ जो मूल का अनुवाद है किसी भिन्न व्यक्ति की कृति होगी।

१२ भीष्म—इस बार इनकी 'भागवत' की दो अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। दोनों में रचनाकाल नहीं दिया हुआ है। लिपिकाल केवल एक प्रति में है जो सं० १८७३ वि०, सन् १८१६ ई० है।

ग्रंथकार के विषय में पहले कुछ भी ज्ञात नहीं था यद्यपि अपने इस ग्रंथ के साथ ये पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१९१७–१९, सं० २५; १९२९–३१, सं० ४७ सी, डी, ई, यफ)। इस बार जिस प्रति का लि० का० सं० १८७३ वि० है उसमें इन्होंने केवल अपनी गुरु परम्परा दी है जो इस प्रकार है:—

इससे ज्ञात हुआ कि ये कबीर के पंथ में हुए हैं। यह परम्परा इन्होंने रामानंद से वर्णन की है जो अधोलिखित है:—

प्रथम अनंतानंद जानि दुतिय भावानंद
तृतिय सुरसुरी नंद चतुर्थै है जु सुषानंद
पंचम नरहरि नंद षष्ट पद्मावति जानौं
धना सप्त रैदास अष्ट सेना नव मानों
दिग सुरसुर एकादश कबीर द्वादस पीपा गुण लए
श्री रामानंद भागवत भुव सिषि द्वादस स्कंध भये

भाष्य कर्त्ता वंस वर्णन

भएकबीर कृपा से नीर जग मध्य उजागर
नीर दया सौं जंत्रलोक भए गुण के सागर
जंत्र लोक कैं ध्यान भए पीतांबर दासा
रामदास गुरु ध्यान धरि जग भए प्रकासा
पुनि दयानंद जिनके भए हरिदास सिषि तास कौ
प्रभु स्यामदास उर नित बस्यो सुभीषम चेरो तास को ॥

इस प्रति में केवल पंचम स्कंध नहीं है। ग्रंथ काव्य की दृष्टि से भी उत्तम है। विशेषतः रासवर्णन तो बहुत अच्छा बन पड़ा है।

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या २२ पर भी है।

१३ भोपति कायस्थ—इनके 'भागवत दशम् स्कंध' ग्रंथ की तीन अपूर्ण प्रतियों के विवरण प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल किसी में नहीं है, पर ग्रंथ पहले भी विवरण में आ चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९०२ सं० ११५; १९१७–१९, सं० २६६; १९२३–२५, सं० ५९)। हस्त-लिखित-हिन्दी पुस्तकों के संक्षिप्त विवरण में इनका परिचय स्पष्ट नहीं है।

पिछले किसी भी विवरण में यह अस्पष्टता दूर नहीं की गई। इस बार वृंदावन से प्राप्त प्रति के आधार पर इनका परिचय दिया जाता है:—

अबहुँ गुरु की महिमा कहुँ। जिहिं माथै पूरण पद लहूँ ॥
जिनको "मेघ स्याम" सुभ नाम। सुमरत सुनत होत विश्राम ॥
परम प्रवीन पुनीत गुसाईं। भगत रीत प्रकटे सब ठाईं ॥
तिनके पिता भगत पद पायौ। जिन दामोदर नाम धरायो ॥
गंगल भट्ट प्रसिधि बषानैं। गुण मंगल सुरगण के जानैं ॥
तिनके वंश जनम उन लीनों। वही अंस हर उनकूँ दीनो ॥
प्रथम तिलंग देस के वासी। मथुरा बसकै भगत प्रकासी ॥

× × ×

भोपति जिन हर लीला गाई। परम पुनीत सदा सुखदाई ॥

ताहउ नायो काइथ जानौं। लेषराज को सुत पहैचानौं ॥
तिनके पिता हरै मन लायौ। बीठलदास नाम जिन पायो ॥
कन्हरदास जो उनके भइया। तिनके मन में बसै कन्हीया ॥
जिन ग्रेह करी इटावा माही। रहे आप राजन के पाहीं ॥
कृष्णदास से सुत जग जानै। जे सब कृष्णदास कर मानै ॥
कन्हरदास भए वड़ भागी। जिनकी मत कन्हर सूँ लागी ॥
जिनके वंस जनम धर आयो। भगत अंस मन को अब पायो ॥

तदनुसार इनका परिचय इस प्रकार है। ये जाति के कायस्थ थे। इनके पिता का नाम लेखराज और पितामह का नाम बीठलदास था। बीठलदास के भाई का नाम कन्हरदास था जिनके पुत्र का नाम कृष्णदास था। कन्हरदास को कन्हर (१ कदाचित् निरंजनी कन्हर) का मतानुयायी बताया गया है। यह भी कहा गया है कि कन्हर ही भक्ति वश कृष्णदास के रूप में प्रगट हुए।

इनके गुरु सुप्रसिद्ध गंगल भट्ट के वंश में उत्पन्न श्री दामोदरजी के पुत्र श्रीमेघश्यामजी थे। ये तैलंग थे और मथुरा आकर कृष्णभक्ति में लीन रहने लगे थे।

१४ भूप—प्रस्तुत खोज में इनके अलंकार विषयक ग्रंथ के एक पत्रे का विवरण लिया गया है। इस पत्र की संख्या ९ है जिसमें न तो ग्रंथ का ही नाम दिया हुआ है और न ग्रंथकार का। इसके रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

अलंकार का विषय प्रतिपादित होने के कारण ही इसका नाम 'अलंकार वर्णन' रख दिया गया है।

४०वीं संख्या के सवैए में एक शब्द 'भूप' आया है, जिसे रचयिता का नाम मान लिया गया है यद्यपि इसका अर्थ राजा भी हो सकता है। सवैया इस प्रकार है :—

भानु प्रचंड किधों जग जारन कौं प्रगट्यौ तन द्वादस लीने।
मानु किधौं गिले प्राची पछा॰ किधौ है प्रलयानल पुंज प्रवीने।
संगर में लख राम विरद को 'भूप' कहै पर यो भय भीने।
मानस की गति होय न ऐसी यै आवत काल सरूपहि कीने।

ग्रंथकार ने संक्षेप में अपने आश्रयदाता का भी परिचय दिया है :—

मानवंस मानस के हंस बुध निसाकर देषत ही अरि कवि पूजिके असुर है।
गिरिजा के वाम ताके काम धाम रति जाके सुजस अनंत पृथ्वी को पुरंधर है।
कूरम कलस महाराजा रामसिंह महि सुमन सुपद माल मेरु धराधर है।

× × ×

कूरम कलस जयसिंह को नंद महाराजा रामसिंह कर राजत कृपाण है।

कूर्मवंशी एक महाराजा रामसिंह नाम से नरवर में भी हो गए हैं जो महाराजा छत्रसिंह के पुत्र थे। परन्तु उपर्युक्त उद्धरणों में आए 'मानवंस' और 'जयसिंह नंद' से ज्ञात होता है कि ये जयपुर के महाराज थे। इनका राज्यकाल संवत् १७२३ से १७३२ तक था और इनके आश्रय में जैसा कि विवरण से ज्ञात होता है कुलपति मिश्र, लाल कवि, चंद्र कवि और गंगाराम थे।

अतः इन महाराज के समय में यह ग्रंथ रचे जाने से इसका रचनाकाल संवत् १७२३ से १७३२ के भीतर ही होना चाहिए।

१५ बिहारी—इनका 'छंद प्रकाश' नामक पिंगल का ग्रंथ मिला है जिसमें रचना काल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। ग्रंथकार ने अपने विषय में इतना ही लिखा है कि उन्होंने किसी दरबारी नामक सुकवि से रीति की शिक्षा पाई थी। शेष परिचय अज्ञात है।

श्री दरबारी जू सुकवि हरिजन सुक्मा धाम।
जिनतें पाई रीति सब तिन पद करौं प्रणाम॥

ग्रंथ स्वामी के कहने के अनुसार रचयिता मथुरा प्रान्त के अन्तर्गत कोसी कलां के रहने वाले अग्रवाल वैश्य थे।

सन् १९३२–३४ ई० के खोज विवरण में एक बिहारी लाल अग्रवाल अपने दो ग्रंथों 'गजेन्द्र मोक्ष' और 'दोष निवारण' तथा सन् १९३५–३७ संख्या १५ पर 'नाम-प्रकाश' के साथ उल्लिखित हुआ है। अनुमान से यह और प्रस्तुत ग्रंथकार एक ही ज्ञात होते हैं।

१६ श्री बिहारिन देवजी—ये टट्टी संप्रदाय के अनुयायी श्री विट्ठल विपुल देवजी के शिष्य थे। इनकी दो रचनाओं 'वाणी' और 'समय-प्रबंध' के विवरण क्रमानुसार खोज विवरण (सन् १९०५, सं० ६१, ३१; १९०९–११, सं० ३१) में आ चुके हैं।

अबकी बार इनकी कुछ और वाणियों के विवरण लिए गए हैं जिनमें अनन्य रस सिद्धान्त वर्णन किया गया है। इनमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

प्रस्तुत वाणियों का विवरण बृन्दावन में श्री ठाकुर रसिक बिहारीजी के मंदिर में लिया गया है। वहाँ मंदिर के मंत्रीजी से ज्ञात हुआ कि श्री बिहारिन देवजी दिल्ली के रहने वाले शाही दीवान थे एवं जाति के ब्राह्मण थे। श्री स्वामी हरिदासजी के शिष्यों में अधिक वाणियाँ इन्हीं की हैं। मंदिर में इस संप्रदाय के आठ आचार्यों की संपूर्ण वाणियों का हस्तलिखित एक बृहत् संग्रह है जिसमें इनकी भी समस्त रचनाएँ सम्मिलित हैं। जिन आठ आचार्यों की इसमें वाणियाँ हैं वे निम्नलिखित हैं:—

१—श्री स्वामी हरिदासजी (जो स्वामी श्री० आसधीर जी के शिष्य थे)।

२—श्री विट्ठल विपुल देवजी

३—श्री बिहारिन देवजी

४—श्री सरिस देवजी

५—श्री नागरीदास (ब्राह्मण)

६—श्री नरहर देवजी

७—श्री रसिक देवजी

८—श्री पीतांबर शरणजी

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या २३ पर भी है।

१७ वीर भाण—इनके एक ग्रंथ 'एकाक्षर मंजरी' के प्रथम बार ही विवरण लिए गए हैं। यह ग्रंथ कोष विषयक है और श्री माधवाचार्य कृत 'वेदक्षर रत्नमाला' नामक संस्कृत ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद है। इसमें नागरी वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर का अर्थ दिया गया है। रचनाकाल सं० १७९६ वि०, सन् १७३९ ई० है:—

१ ७ ९ ६

संमत हरि रिसि समझियै भगति राग लषि अंक

लिपिकाल नहीं दिया गया है। ग्रंथकार ने अपने विषय में कोई विशेष उल्लेख नहीं किया है। एक अभय साह महाराज का नाम अवश्य दिया है जो उनके आश्रयदाता जान पड़ते हैं:—

सत सर कौ आदर कर्‌यौ अभै साहि महाराज।

१८ ब्रज दूल्है—पहली बार ही इनका उल्लेख खोज विवरण में हो रहा है। इनका रचा 'जन्मोत्सव बधाई' नामक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसकी रचना पदों में हुई है जिनमें भगवान् कृष्ण के जन्मोत्सव का वर्णन है। रचनाकाल और लिपि-काल का कोई उल्लेख नहीं है। रचयिता का भी विशेष परिचय प्राप्त नहीं होता।

१९ राव राजा बुद्धसिंह—इनका विस्तारपूर्वक उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर किया गया है।

२० चंद—प्रस्तुत खोज में इनके पिंगल विषयक 'सुधाधर पिंगल' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसके आदि-अंत के पत्र लुप्त हो गए हैं जिसके कारण रचनाकाल और लिपि-काल ज्ञात न हो सके।

ग्रंथकार के विषय में केवल इतना ही ज्ञात हुआ है कि ये कछवाहे वंश के महाराज लक्ष्मण सिंह के आश्रय में रहते थे जिनकी आज्ञानुसार यह ग्रंथ रचा गया:—

इति श्री कृष्ण विहारी चरन सरन श्री नृपति लछमन सिंह देवाज्ञा छंद सुधाधर वरण प्रत्य आर्यादिक मूल प्रस्तार अंक छंद नाम अतर्वर्त भेद निरूपणं कवि चंद विरचिते अष्टमो मयूखः॥

जान पड़ता है कि उक्त महाराज जयपुर के थे। पिछले खोज विवरणों में आए इसी नाम के एक लेखक से प्रस्तुत ग्रंथकार भिन्न हैं कि अभिन्न इसका कोई पता नहीं चलता। सम्भवतः ये राधावल्लभी संप्रदाय के हित चंद्र लाल से अभिन्न हैं देखिए खोजविवरण

(सन् १९०९–११ ई०, संख्या३९; १९०५ ई०, संख्या २०; १९ ६–८ ई०, संख्या १४५ और १४४)।

२१ चंद—इनके एक अज्ञात नामा ग्रंथ के केवल एक पत्रे का विवरण लिया गया है। पत्र की संख्या ६ है। इसके वाईं ओर किनारे पर 'अ०' लिखा हुआ है जो ग्रंथ के नाम का प्रथमाक्षर जान पड़ता है। इसी 'अ०' के आधार पर ग्रंथ का नाम 'अनुराग-विलास' कल्पित किया गया है।

प्रत्येक छंद के चौथे चरण में 'चंद' शब्द बार-बार आया है जो रचयिता के नाम का द्योतक है। इसके अतिरिक्त उसके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। ग्रंथ के रचनाकाल और लि० का० अज्ञात हैं।

२२ श्री चंदलाल हित—ये कई ग्रंथों के साथ पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोजविवरण (सन् १९०६–८, सं० ४३ ए, बी, सी, डी, ई, यफ, जी; १९१२–१४, सं० ३५)। प्रस्तुत शोध में इनके 'हिताष्टक' और 'हित जी के कृपापात्र' नामक दो ग्रंथ नवीन मिले हैं। पहले में आचार्य श्री हित हरिवंश की महिमा का गुणगान किया गया है तथा दूसरे में आचार्य जी के कृपा पात्रों का संक्षेप में परिचय दिया गया है। परिचय भगवत मुदित और हित उत्तम के ग्रंथों के आधार पर हैं:—

भगवत मुदित परचई करी-रीति प्रीति पद्धति सब धरी

× × ×

इते रसिक की परचई भगवत मुदित वषानि
द्रग दरसन वत एक ठाँ उत्तम कीने आनि

रचनाकाल किसी में भी नहीं है। लिपिकाल दोनों का एक दूसरे ग्रंथ के आधार पर जो इन्हीं के साथ सम्बद्ध है सं० १९६८, सन् १९११ ई० है।

ग्रंथकार के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

२३ चंद कवि—इनके एक ग्रंथ का विवरण प्रस्तुत शोध में लिया गया है। यह आदि, अंत और मध्य में खंडित है। नाम भी इसका अपूर्ण 'चंद०' ही है। इसमें रामायण संबंधी कुछ कवियों का संग्रह है। इसके रचनाकाल और लि० का० का कोई पता नहीं चलता। अत्यन्त जीर्ण शीर्ण होने के कारण प्राचीन जान पड़ता है।

ग्रंथकार का नाम केवल कवित्तों में आए 'चंद' छाप से ही ज्ञात हुआ है। अन्य विवरण अप्राप्त है।

२४ गोस्वामी श्री प्रभु चंद्र गोपाल जी—इनका विस्तृत विवेचन विवरण अंश में संख्या ३ पर किया गया है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२५ स्वामी चरणदास जी—इनके इस बार ९ ग्रंथ और मिले हैं जो नवीन हैं:—

१. बानीचरण दास जी की—इसमें गुरु और परमात्मा की भक्ति का वर्णन किया गया है।

२. चरणदास जी के पद—इसमें ज्ञान और भक्ति का वर्णन है।

३. स्फुट पद और कवित्त—होरी और भक्ति सम्बन्धी पदों तथा कवित्तों का संग्रह।

४. मटकी और होली—श्रीकृष्ण की दधि लीला और गोपियों का विरह वर्णन है।

५. पद और कवित्त—आरती, झूलना, ज्ञान, होरी, और साधु निंदकों के विषय के पदों का संग्रह।

६. तेज विंद्योपनिषद्—यह अथर्वण वेद के 'तेज विंद्योपनिषद्' का हिन्दी अनुवाद है। इसमें परब्रह्म का सूक्ष्म विवेचन किया गया हैं।

७. जोग शिक्षोपनिषद्—यह अथर्वण वेद से अनुवादित किया गया है जिसमें योग की शिक्षा का वर्णन है।

८. तत्व जोग नामोपनिषद्—इसमें योग क्रिया द्वारा ध्यानस्थ होकर प्रणव मंत्र के जाप से मुक्ति प्राप्त होना कहा गया है।

९. सर्वोपनिषद्—अथर्वण वेद के अन्तर्गत सर्वोपनिषद का हिन्दी अनुवाद है। इसमें प्रजापति और उनके शिष्यों के संवाद के रूप में विद्या अविद्या, बंधन, मुक्ति, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुर्य्या, पंचकोष, जीवात्मा आदि का विशद निरूपण किया है।

इनमें से किसी में भी रचनाकाल नहीं दिया गया है। लि० का० केवल प्रारंभ के दो ग्रंथों में है जो एक ही समय में लिपिबद्ध हुए हैं, अर्थात् सं० १८५० वि०, सन् १७९३ ई०।

स्वामी चरण दास जी अपने कई ग्रंथों के साथ पिछले खोजविवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोजविवरण (सन् १९०६–८, सं० १४; १९०१, सं० ७०; १९१२–१४, सं० ३६ सी; १९२६–२८, सं० ७८; १९२०–२२, सं० २९ सी; १९२३–२५, सं० ७४; १९१७–१९, सं० ३९)।

२६ श्री चतुर शिरोमणि लाल जी—ये अपने ग्रंथ 'हिताष्टक' के साथ पिछले एक खोजविवरण में उल्लिखित हैं, देखिए खोजविवरण (सन् १९१२–१४, सं० ४२)। इस बार इनके 'भावना-सार' नामक एक बृहद् गद्य ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें राधावल्लभी सम्प्रदाय के अनुसार भक्ति के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। यह संवत् १८६८ वि०, सन् १८११ ई० में रचा गया और संवत् १९६४ वि० में लिपिबद्ध हुआ।

ग्रंथकार हितानुयायी थे। प्रस्तुत ग्रंथ से इनका कोई विशेष वृत्त ज्ञात न हो सका।

२७ मिश्र चतुर्भुज—इनका विस्तृत विवेचन विवरण अंश में संख्या २४ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२८ चतुर्भुज दास—इनका एक बिना नाम का अपूर्ण ग्रंथ प्रस्तुत शोध में मिला है। विषय की दृष्टि से इसका नाम 'श्री गोवर्द्धन रूप माधुरी' रख लिया गया है। इसमें श्री कृष्ण भगवान् से श्री गोवर्द्धन पर्वत पर युग-युग तक निवास करने की प्रार्थना की गई है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। ग्रंथकार का भी कोई परिचय प्राप्त नहीं हुआ। पिछले खोजविवरणों में आए हुए इस नाम के ग्रंथकारों के साथ इनकी एकता स्थापित करने के लिये कोई आधार नहीं मिलता।

२६ चिदात्माराम—इनका उल्लेख विशेष रूप से विवरण अंश संख्या ४ पर हुआ है; अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

३० चीखा—इनके एक छोटे से ग्रंथ 'चीखा की बारह खड़ी' का विवरण प्राप्त किया गया है। इसमें प्रत्येक छंद के आरंभ में 'क' से लेकर 'ह' तक एक-एक अक्षर का नाम रखते हुए ईश्वर भक्ति का उपदेश दिया गया है। रचनाकाल अप्राप्य है; लिपिकाल संवत् १७६४ वि०, सन् १७०७ ई० है।

ग्रंथकार का नाम पुष्पिका में तथा प्रत्येक छंद के चौथे चरण में 'चीषा' आया है। इसके अतिरिक्त इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता।

३१ चिन्तामणि—का प्रस्तुत शोध में पहली बार ही पता चला है। इसके रचे 'कर्म विपाक' (४९ वाँ अध्याय) नामक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है जिसमें मनुष्यों को उनके शुभाशुभ कर्मों पर जो-जो फल मिलते हैं उनका वर्णन किया गया है। रचनाकाल तथा लि० का० अज्ञात हैं। ग्रंथ पद्म-पुराण के आधार पर लिखा गया है।

ग्रंथकार का नाम ग्रंथान्त में दिए हुए एक सोरठे से ज्ञात हुआ है जो यहाँ दिया जाता है:—

छूटि चला सो बाजि गिर कानन सो अति भ्रम्यो।
चली चमू अति गाजि 'चिन्तामणि' रघुवीर की॥

परिचय के विषय में अधिक जानने का कोई साधन नहीं।

३२ चिन्तामणि गुपाल—इनका एक छोटा सा अपूर्ण ग्रंथ 'उषा-अनिरुद्ध' नाम का प्रस्तुत खोज में प्राप्त हुआ है। इसमें उषा और अनिरुद्ध के विवाह का वर्णन है। रचना काल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८०२ वि०, सन् १७४५ ई० है।

ग्रंथकार का नाम २११ वें छप्पय की अन्तिम पंक्ति से तथा अन्तिम दोहे से क्रमशः 'जनि गोपाल' और चिन्तामणि गोपाल' ज्ञात हुआ है। अन्तिम नाम पुष्पिका में भी दिया हुआ है :—

गोपाल चरन पंकज सरन सुकरति जनि गोपाल भनि २११
कवि कोविद वंदी जनै दीने दान विसाल
हरषित जोरी जुगल लषि चिन्तामन गोपाल

इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता।

३३ चोखन—इनके 'प्रह्लाद-चरित्र' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण लिया गया है। जिसमें भक्त वर प्रह्लाद की कथा है जो पदों में वर्णित है। रचनाकाल और लि० का० दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि वे किसी बालक राम स्वामी के शिष्य थेः—

चोषन के बालक राम स्वामी चरण कमल बलि जाई।

३४ दलेल पुरी—इनका 'मुहूर्त्त चिन्तामणि' नामक ग्रंथ सन् ३५–३७ ई० के खोजविवरण में संख्या १९ पर आ चुका है। इस बार इनके 'ग्रह भाव फल' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण लिया गया है। यह ग्रंथ फलित ज्योतिष से सम्बन्ध रखता है। इसमें नव ग्रहों के भाव का फल कथन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथकार का विशेष परिचय भी अप्राप्य है।

३५ दयाल—इनके 'चंडी चरित' नामक एक छोटे से ग्रंथ का विवरण प्रस्तुत खोज में लिया गया है जिसमें चंडी के युद्धों का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, लिपिकाल सं० १८८९ वि०, सन् १८३२ ई० है।

ग्रंथान्त में दी गई चौपाई के आधार पर ग्रंथकार का नाम 'दयाल' ज्ञात हुआ हैः—

वासदेव मारषंडै नै वरणी। सोई कथा अब 'दयाल' ने वरणी॥

पिछले एक विवरण में भी एक जन दयाल 'धर्मसंवाद' के रचयिता के नाम से उल्लिखित हैं। सम्भव है, येप्रस्तुत दयाल से अभिन्न हों, देखिए खोजविवरण (सन् १९२६–२८, सं० १९३)।

३६ दयाराम—इनके 'केवल-भक्ति' नामक ग्रंथ के तीन विवरण लिए गए हैं। ग्रंथ में कृष्ण भक्ति का उपदेश, भक्ति की आवश्यकता और उसके लाभ आदि विषयों का वर्णन है। रचनाकाल और लि० का० अज्ञात हैं।

ग्रंथ द्वारा रचयिता के विषय में कुछ भी पता नहीं चलता केवल ग्रंथान्त में दिए गए दोहे से ही इनका नाम दयाल ज्ञात हुआ है।

प्रेम प्रीति वारा षरी लिषै पढ़ै सब कोई।
दयाराम मन आपने पढ़ै सो पंडित होय॥

पिछले खोजविवरणों में आए हुए दयाराम से ये भिन्न हैं या अभिन्न यह जानने का कोई आधार नहीं मिलता।

३७ दयाराम—प्रस्तुत ग्रंथकार का 'दया-विलास' नामक एक आयुर्वेद ग्रंथ का इस बार भी विवरण लिया गया है। पिछले खोजविवरणों में यह आ चुका है, देखिए

खोजविवरण (सन् १९२६–२८, सं० ९४; १९२०–२२, सं० ३७; १९२३–२५, सं० ८७; १९०१, सं० ५०; १९०२, सं० ११४; १९०९–११, सं० ६३)।

इन विवरणों में ग्रंथकार का निवासस्थान दिल्ली लिखा हुआ है; परन्तु प्रस्तुत प्रति से इनका प्रयाग निवासी होना सिद्ध होता है :—

तं तं तं तं तीर्थराज सजति प्रान प्राग सत गुनपद चारि
दं दं दं दयावास जहँ शंभू विरत माधो वपु धारि

यहाँ लेखक ने स्वयं अपने निवास स्थान तीर्थराज का निर्देश किया है जहाँ श्री वेणीमाधव जी (शिव) विराजमान हैं। इन्होंने और भी स्पष्ट किया है:—

वं वं वहत वारि घन अरुन सुकल भव निगम समेतं
झं झं झं झरत सोत गति पोत अछै वट फल भुज सेतं
भं भं भं भजत वारि षट कुल इंद्र फणि गण भनि जेते
फं फं फं फल चढ़त कुसुम दल धूप दीप छिण विधि फल लेते

अर्थात् जहाँ घन, अरुण और शुक्ल वारि धाराएँ बहती हैं—अर्थात् त्रिवेणी जहाँ अक्षयवट है। इनके दिल्ली निवासी होने का भ्रम निम्न दोहों से हुआ जान पड़ता है:—

चतुरसेन चतुरंगिनी राजत रजत जहाँन
सुरपति समगम लक्षिणी दिल्ली सुजस मकान
तिमिर की वंस तिमिर हर लक्षन लक्ष प्रकार
करत कवि कोट माहि धरत ए महं मद साह प्रमाण भूपति महिमाकार
दया कविन को दासु जासु जस चंद दिवाकर

उपर्युक्त दोहों में 'दिल्ली' और 'मकान' शब्दों का प्रयोग भ्रामक है। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि इनका मकान दिल्ली था। यह सब तो दिल्ली के तत्कालीन बादशाह मोहम्मद शाह के प्रसंग में कहा गया है। प्रथम दो पंक्तियों का अर्थ यह हो सकता है:—

'किसी चतुरसेन की चतुरंगिणी संसार में यशस्विनी के रूप में विराजती है, वह सुरपति के समान है ऐसे यशस्वी चतुर दिल्ली में निवास करते हैं'।

हो सकता है, कोई चतुरसेन ग्रंथकार का आश्रयदाता हो जो दिल्ली में मोहम्मदशाह बादशाह के यहाँ उच्च पद पर रहता रहा हो।

३८ दयाराम—"सदाशिवजी को व्याहलो" नामक इनके एक छोटे से ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें सिव-पार्वती के विवाह की कथा है। रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ के आधार पर जो इसी के साथ सम्बद्ध है संवत् १९१५ वि०, सन् १८५८ ई० है।

कवित्तों में 'दया' और 'दयाराम' शब्दों का बार-बार प्रयोग होने से उसे ग्रंथकार का नाम मान लिया गया है। कहीं-कहीं पर 'कहै दयाराम' स्पष्ट आया है :—

कहै दया राम प्रभु राखी लाज मेरी है

प्रस्तुत विवरण में आए अन्य दयाराम और ये एक ही हैं या अलग-अलग यह जानने का कोई आधार नहीं है।

३९ देवीदास—प्रस्तुत खोज में 'ओषाहरण' नामक ग्रंथ के रचयिता के रूप में इनका पहले पहल विवरण लिया गया है। ग्रंथ में उषा और अनिरुद्ध की कथा विस्तारपूर्वक वर्णन की गई है। रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, लिपिकाल सं० १८४७ वि०, सन् १७९० ई० है।

ग्रंथकार ने अपना नाम तक भी स्पष्ट नहीं दिया है। प्रथम पद के अन्त में 'देवीदास' नाम आया है:—

देवीदास परथ कृपा ज्यों कीजे हर तुमहि छाढ कति धाइए

ग्रंथ के अन्त में भी संक्षेप में कुछ वृत्त आया है:—

दीसावाल कुल अवतरो ने वीर क्षेत्र मां वास जी
कर जोडीने करे वीनती नाकर हरीनो दास जी ॥

इससे ज्ञात होता है कि ये दीसावाल कुल में पैदा हुए थे और वीर क्षेत्र में वास करते थे।

ग्रंथ राजस्थानी भाषा में है और राग रागिनियों में लिखा गया है।

४० देवीदीन मुदर्रिस—इनका रचा हुआ 'माप विधान' नामक ग्रंथ इस शोध में प्रथम बार ही मिला है। यह माप-विद्या के विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। इसमें त्रिभुजों, चतुर्भुजों, टेढ़े क्षेत्रों, वृत्तों, अंडाकार आकृतियों, यष्टि, सूची आदि के क्षेत्रफल जानने की विधियाँ दी हुई हैं। रेखा गणित के प्रेमियों के लिए ग्रंथ उपादेय है। नियमों की उपपत्ति तथा उनसे संबंधित चुने हुए ७० प्रश्न भी दिए गए हैं। यह सन् १८७३ ई० की रचना है।

देवीदीन हलकावंदी मुदर्रिस इटावा के थे। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ उस समय के इटावा जिले के स्कूलों के डि० इन्सपेक्टर प्राण सुख की अनुमति से बनाया। अन्वेषक के अनुसंधान से पता लगा है कि उक्त डिप्टी इन्सपैक्टर जाति के माथुर वैश्य, कागारोल, जिला आगरा के निवासी थे। जिस समय यह ग्रंथ रचा गया उस समय युक्त प्रान्त (अब उत्तरप्रदेश) के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर (पाठशालाधिपति) एम० के० मसन् साहब थे तथा किस्मत दोम आगरा (जिसके अन्तर्गत इटावा है और जहाँ ग्रंथकार अध्यापक थे) के इन्सपैक्टर मिस्टर लाइड थे।

ग्रंथ में इसकी छपाई का भी ब्योरा दिया गया है जिससे पता चलता है कि यह छापा भी गया था।

४१ रानी धर्म कुँवरि—ये राजा बाजार के महाराज महेश नारायण सिंह जी की धर्म पत्नी थीं। इस शोध में इनके 'गीत शतक' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें प्रेम और भक्ति सम्बन्धी लगभग १०० गीतों का संग्रह है। रचनाकाल और लि० का० दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता का अन्य परिचय ज्ञात नहीं। ग्रंथ का पता खोज में प्रथम बार ही लगा है।

४२ ध्रुवदास—ये सुप्रसिद्ध भक्त कवि गो० श्रीहित हरिवंश जी के शिष्य थे। इनके बहुत से ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं। संवत् १६८६ वि०, सन् १६२६ ई० में ये वर्तमान थे, देखिए खोजविवरण (सन् १९००, सं० ८, ९, १४; १९०२, सं० २६४; १९०६–११, सं० ७३; १९१२–१४ सं० ५२; १९२६–२८, सं० १०५; दि० ३१–२९)।

इस समय इनके 'जुगल ध्यान' और 'रतिविहार' नामक दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं। र० का० और लि० का० किसी में नहीं दिया है।

जुगल ध्यान' में श्री राधा कृष्ण का स्मरण करते समय हृदय में उनकी जिस युगल छवि का ध्यान करना आवश्यक है उसका श्रृंगारपूर्ण वर्णन किया गया है।

'रति विहार' में श्रीराधा कृष्ण की नाना प्रकार की क्रीड़ाओं के समय चित्रा, कुंडला, चन्द्रिका, सुचरिता आदि सखियों द्वारा सेवा टहल करने का वर्णन है। यह ग्रंथ आदि अंत से खंडित है। इसका नाम भी ज्ञात न हो सका। केवल विषय के आधार पर 'रति-विहार' नाम रख दिया गया है।

४३ दीन जी—दीन जी कृत 'झूलणा'—जिसमें दो दोहे और एक झूलना हैं—प्राप्त हुआ है। इसमें संसार को निस्सार बतलाकर शिव से अनुराग करने का उपदेश दिया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चला।

रचयिता के विषय में भी नाम के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

४४ दीनबन्धु कुर्मी—प्रस्तुत खोज में इनके 'रामाश्व वर्णन' नामक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें जनकपुर में भगवान् रामचंद्र के अश्व की शोभा का वर्णन है। ग्रंथ का रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

ग्रंथकार के विषय में उनके अनिखा निवासी होने के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं होता।

ग्रंथ अपूर्ण जान पड़ता है क्योंकि अन्तिम दोहे से—जिसमें लेखक ने अपना नाम, वंश तथा स्थान का उल्लेख किया है—इसकी समाप्ति विदित नहीं होती :—

कौर्म वंश औलंश जन्म तातु को जानु
दीनबन्धु अस नाम है अनिषा में अस्थानु

ये दीनबन्धु वस्तुतः कुर्मी, कुनबी अथवा कूर्मी अर्थात् कछवाहा छत्री में से किस जाति के थे, इसका निर्णय करना कठिन है।

४५ दीनदयाल गिरि—इनके कई ग्रंथ पहले भी विवरणों में आ चुके है, देखिये खोजविवरण (सन् १९०४, सं० ४०, ४४, ७१, ७७, ६१, ९२; १९०९–११ ई०, सं० ७४ ए, बी; १९२०–२२ ई०, सं० ४४)।

ये काशी निवासी दशनामी सन्यासी थे और इनकी मृत्यु सन् १८६५ ई० में हुई।

इस समय इनका एक 'चित्र काव्य' (उदधिबंध) खोज में मिला है। इससे १ अनुष्टुप्, ३ बरवै, १ प्रमाणिका, १ चित्तपदा, १ दोहा और १ रमल कुल ८ छंद निकलते हैं। इसका रचनाकाल तो नहीं दिया हुआ है; परन्तु लि० का० संवत् १९२४ वि०, स १८६७ ई० है।

४६ दुर्गाप्रसाद वाजपेयी—इनके 'संग्रह' का विवरण लिया गया है जिसमें कृष्णभक्ति, गणेश गंगा और शिव संबंधी भजन हैं। आरंभ में रचयिता ने एक रानी से जिसके यहाँ वे सिपाही थे, १६ वर्ष नौकरी कर लेने के पश्चात् पेंशन लेकर घर जाने की प्रार्थना की है।

इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए गए हैं। ग्रंथ के अनुसार रचयिता वाजपेयी ब्राह्मण थे और एक रानी के यहाँ सिपाही की नौकरी पर नियत थे।

४७ दुत—इनके 'देवी स्तुति' नामक एक छोटे से ग्रंथ के विवरण इस बार लिए गये हैं जिसमें देवी की स्तुति की गई है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ के आधार पर जो इसके साथ एक ही हस्तलेख में है, संवत् १८९० वि०, सन् १८३३ ई० है।

रचयिता का नाम ग्रंथ के अन्त में दिए गए छंद के अन्तिम पद से "दुत" ज्ञात हुआ है:—

सत्रु नासक प्रकासनी कै ''दुत' आनंद मंगल कहै
शेष परिचय अज्ञात है।

४८ द्वारिकेश—अपने कुछ ग्रंथों के साथ पिछले खोजविवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोजविवरण (सन् १९०६–८, सं० १६४; १९१२–१४ ई०, सं० ५३)। उक्त विवरणों के अनुसार इनके पिता का नाम मथुरानाथ था। ये ब्रज के निवासी, वल्लभ संप्रदायी तथा १६ वीं शताब्दी के मध्य में वर्तमान थे।

प्रस्तुत शोध में इनका एक ग्रंथ 'मूल पुरुष' नाम का मिला है जिसमें श्री वल्लभाचार्य जी का वंशवृत्त देकर उनके कार्यों का वर्णन किया गया है। इसका रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। यह राग रागिनियों में रचा गया है।

४९ साधु गंगादास—प्रस्तुत शोध में इनका पता प्रथम बार ही लगा है। 'लावनी' नाम से इनके एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में श्री रामानुजाचार्यजी की स्तुति है। इसकी रचना कब हुई अथवा यह कब लिपिबद्ध हुआ, कुछ पता नहीं।

ग्रंथकार का नाम साधु गंगादास कहीं भी नहीं दिया हुआ है। अन्वेषक (श्री० पं० बाबूराम वित्थरिया) ने यह नाम किस आधार पर लिखा है, यह नहीं कहा जा सकता। ग्रंथ के अन्त में आया है:—

श्री गुरु तुलसीदास पद आश्रित जान्हविजन पोषण भरनम्

संभवतः 'जान्हवि जन' पद से ही 'गंगादास' की कल्पना की गई हो, फिर भी यह बात रह ही जाती है कि 'साधु' शब्द गंगादास के साथ क्यों जोड़ा गया है।

हो सकता है किसी से सुन कर ही ऐसा लिखा गया हो। यह स्पष्ट है कि ग्रंथकार रामानुज संप्रदायी तथा तुलसीदास के शिष्य थे। ये तुलसीदास कौन थे, यह नहीं कहा जा सकता।

५० गंगाधर—ये 'गोबर्द्धन लीला' नामक ग्रंथ के साथ दिल्ली खोज विवरण संख्या ३२ पर उल्लिखित हैं। अभी तक इनका परिचय अप्राप्य है। इस बार ग्रंथ के दो विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों प्रतियों में से किसी में भी नहीं हैं। जैसा ग्रंथ के नाम से स्पष्ट है इसमें श्री कृष्ण की गोवर्द्धन लीला का वर्णन किया गया है।

५१ गौतम ऋषि—इनका 'शकुन-प्रकाश' नामक ग्रंथ पिछले एक खोज विवरण में भी आ चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९१२–१४, सं० ६४)। परिचय इनका अभी तक अज्ञात है।

प्रस्तुत शोध में इनका एक 'रामरक्षा' नामक शकुन विषयक ग्रंथ और प्राप्त हुआ है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

५२ गिरिधरनाथ या नाथ कवि—शोध में ये प्रथम बार ही ज्ञात हुए हैं। इनका रचा हुआ 'रसिक-श्रृंगार' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है जिसमें 'दानलीला' का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसका प्रथम भाग लुप्त हो गया है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का नाम कवित्तों में आए 'गिरिधरनाथ' या 'नाथ' नामों के आधार पर ज्ञात हुआ है। ये शब्द श्लिष्ट पदों के रूप में श्री कृष्ण के लिये प्रयुक्त हो सकते हैं; किन्तु प्रत्येक कवित्त में 'नाथ' के प्रयोग से ज्ञात होता है कि यह रचयिता का ही नाम या उपनाम है।

पहले के कवियों द्वारा अपने ग्रंथों में इस प्रकार नाम या उपनाम रखने की परिपाटी प्रसिद्ध है।

यही नाथ कहीं-कहीं गिरिधर के साथ कवि का पूरा नाम और 'नाथ' उसका उपनाम प्रतीत होता है। विशेष परिचय अज्ञात है।

५३ श्री गोपेश्वरजी—इनका उल्लेख विस्तृत रूप से विवरण अंश में संख्या २५ पर किया गया है, अतः कृपया देखें उक्त विवरण अंश।

५४ गुपाल कवि—इनका पता 'सुख दुख वर्णन' नामक ग्रंथ के साथ प्रस्तुत शोध में पहले ही पहल लगा है। ग्रंथ के अन्तर्गत स्त्री पुरुष के कथोपकथन के रूप में विवाह, नशा, धूम्रपान, चौपड़, शतरंज, खुशामद और देश-विदेश के सुख-दुख तथा हानि-लाभ का वर्णन किया गया है। पुरुष किसी वस्तु विशेष का गुण कथन करता है और स्त्री उसके दोषों को बतलाती है। इसमें मनुष्य की जरा आदि अवस्थाओं के सुख-दुख का भी वर्णन है। खेद है, ग्रंथ का रचानकाल तथा लिपिकाल ज्ञात न हो सके।

कवित्त और सवैयों में 'गुपाल' या 'सुकवि गुपाल' की छाप है जिसके आधार पर रचयिता का नाम निश्चित किया गया है। शेष परिचय अज्ञात है।

५५ ग्वाल कवि—ग्वाल कवि सन् १८२२ ई० में वर्तमान थे। इनके चार ग्रंथ—१ प्रस्तार प्रकाश, २ कवित्त वसंत, ३ होरी आदि के छंद और ४ प्रास्ताविक—प्रस्तुत खोज में नवीन मिले हैं। इनके अतिरिक्त रसिकानंद, भक्त भावन, और यमुना लहरी के भी विवरण लिए गए हैं जो क्रमानुसार खोज विवरण (सन् १९२६–२८, संख्या १६१; १९१७–१९, सं० ६५ बी; १९२०–२२, सं० ५८६) में आ चुके हैं।

'प्रस्तार-प्रकाश' जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है पिंगल विषय का ग्रंथ है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें विषय को गद्य में भी समझाने, का प्रयत्न किया गया है। गद्य व्रज भाषा में है और इसे 'वार्ता' कहा गया है। संभवतः, संस्कृत वार्तिक का यह हिंदी रूप है।

'कवित्त वसंत', 'होरी आदि के छंद' और 'प्रास्ताविक' रचनाओं में उन्हीं के नामानुकूल विषयों का वर्णन है। इनमें से किसी में भी रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिया गया है।

५६ हरिबक्स विसेन—इनके कुछ ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं देखिए खोज विवरण (सन् १९०९–११, सं० १०६; १९१७–१९, सं० ६८; १९२३–२५ सं० १५; १९३५–३७, सं० ३४)। इन विवरणों के अनुसार ये सन् १८४८ ई० में वर्तमान थे।

इस बार इनका एक अपूर्ण 'संग्रह' जिसमें पिंगल, राम भक्ति आदि कुछ फुटकर विषयों पर रचनाएँ की गई हैं, प्राप्त हुआ है। इसमें पद्यबद्ध एक चिट्ठी भी दी गई है जो ग्रंथकार ने श्री बाबा रघुबर वल्लभ शरण को लिखी थी।

इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि ये बाबाजी ग्रंथकार के गुरु थे या क्या। चिट्ठी नीचे दी जाती है :—

सिद्धि श्री शुभ गुण सदन श्री महाराजधिराज
श्री बाबा शुभ मुद मई श्री भक्तन सिरताज

श्री रघुबर वल्लभ शरण तव पद कमल नमामि
दास हरिबक्स की विनै सुनिये मेरे स्वामी
चाहत हों सिय राम सौं कुशल क्षेम तव नाथ
तुमरी कृपा कटाक्ष में मुद मंगल मम हाथ
बहुत दिवस से तुम चरण दर्शन मिले न मोहिं
तव पद दर्शन तव मिलै जो कृपालु प्रभु होहिं
यद्यपि हौं अज्ञान मैं तद्यपि निज जन जानि
करहु कृपा मैं दास तव अहौं कर्म मन वानि
विनै पत्र के देखतै लिखियै अपनो हाल
दया करहु चित लाइकै सुनहु मोर अहवाल

ग्रंथ में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

५७ जन हरिदेव—इनके 'रामाश्वमेध' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण लिया गया है। ये ग्रंथकार नवोपलब्ध हैं। 'रामाश्वमेध' की कथा पद्मपुराण के आधार पर लिखी गई है। इसमें रचनाकाल दिया तो हुआ है, परन्तु वह संदिग्ध है :—

निधि नवनिधि ससि अंक धरि संवतसर लेहु विचारि
फागुन कृष्ण त्रोदसी क्षीरसिन्धु सुतवार

लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। ग्रंथकार का भी विशेष परिचय ज्ञात नहीं हुआ।

५८ हरिनाम या हरिनारायण मिश्र—इनके 'गोवर्द्धन लीला' और 'बारह मासी' नामक दो ग्रंथों का विवरण प्राप्त हुआ है। ये ग्रंथकार नवीन हैं। ग्रंथों का विषय उनके नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल किसी में भी नहीं है।

ग्रंथकार का नाम ग्रंथों में दी हुई 'हरिनाम' छाप के आधार पर ही ज्ञात हुआ है। ग्रंथों में इन्होंने अपना कुछ भी परिचय नहीं दिया, परन्तु ग्रंथ स्वामी बेरी (जि० मथुरा) निवासी पं० रेवती नंदनजी का कहना है कि ये उनके पर बाबा थे और इनका वास्तविक नाम हरिनारायण था। कविता में ये 'हरिनाम' का प्रयोग करते थे। उनके (ग्रंथ स्वामी के) वंश में इनसे पूर्व अभैराम, अखैराम और सेवाराम नाम के तीन प्रसिद्ध लेखक और कवि हो चुके हैं। इनके विषय में ग्रंथ स्वामी द्वारा कहा गया पूरा विवरण अखैराम के साथ दे दिया गया है। कृपया देखिए अखैराम पर लिखी गई टिप्पणी।

ग्रंथकार का समय तो ज्ञात नहीं, किन्तु ये संवत् १९३८ वि० में वर्तमान थे; क्योंकि इस संवत् में इन्होंने अखैराम कृत 'मुहूर्त चिन्तामणि' की प्रतिलिपि की थी। अखैराम के ग्रंथों के विवरण लिए जा चुके हैं।

५९ गो० श्री हरिरायजी 'रसिक प्रीतम'—इनके कुछ ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९००, संख्या ३८; १९०९–११, सं० ११५ बी; १९२३–२५, सं० १३०; १९३२–३४, सं० ८३)।

इस बार इनके एक नवीन ग्रंथ, 'रसिक लहरी या कीर्तन' का विवरण लिया गया है। इसमें पदों में भगवान् श्रीकृष्ण की बाल क्रीड़ा का वर्णन और श्री वल्लभाचार्य की स्तुति है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अप्राप्य हैं।

हरिरायजी सिहाड़ नाथ द्वारा (उदयपुर) में स्थित श्री गोकुल नाथ ठाकुरजी के मंदिर के गुसाईंयों के उत्तराधिकारियों में थे। संक्षिप्त विवरण संख्या १९६ पर तथा कुछ पिछले खोज विवरणों में इनका परिचय ठीक-ठीक नहीं दिया गया है। अब जो कुछ ज्ञात हुआ है, वह प्रस्तुत विवरण में सम्मिलित श्री गोपेश्वरजी के विवरण के साथ दे दिया गया है।

६० हरिसंकूर—अपने एक ग्रंथ 'हरिचरित्र' के साथ प्रथम बार ही विदित हुए हैं। ग्रंथ में श्री कृष्ण का अक्रूर के साथ मथुरा जाने, वहाँ कंस को मार कर उग्रसेन को राज देने तथा अंत में नंद को मथुरा से वापस गोकुल भेजने की कथा वर्णित है। र० का० नहीं दिया हुआ है, लि० का० सं० १८१८ वि०, सन् १७६१ ई० है। ग्रंथ की लिपि बहुत ही अशुद्ध है।

ग्रंथकार के विषय में नाम के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

६१ हरिवंश—प्रस्तुत शोध में इनका एक ग्रंथ 'मनोरंजन माला' नाम से मिला है। विवरणकार (श्री हरिदास दुबे, कंपौंडर, दतिया) ने रचनाकाल और लिपिकाल एक ही—संवत् १८५५ वि०, सन् १७९८ ई० दिया है; किन्तु यह पता नहीं चलता कि यह संवत् ग्रंथ में कहाँ पर दिया हुआ है। विवरण को देखने से कहीं पर भी संवत् नहीं मिलता। ज्ञात होता है कि यह संवत् ग्रंथ की पुष्पिका में होगा जिसको विवरण-कर्त्ता ने उद्धृत नहीं किया। ग्रंथ में बारह मासी, नायिका भेद, अर्ध नारीश्वर आदि विविध विषयक रचनाएँ संगृहीत हैं।

रचयिता ग्राम, पचवारा, तहसील, मऊ के रहने वाले थे।

६२ हरिवंस टंडन—इनका उल्लेखविशेष रूप से विवरण अंश में संख्या ५ पर हुआ है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

६३ हरिवंश अली—इनका एक 'अष्टक' मिला है जिसमें राधा कृष्ण का शृंगार पूर्ण वर्णन कर उनकी ओर भक्ति प्रदर्शित की गई है।

"अष्टक" अपूर्ण है। इसका अंत का एक सवैया लुप्त हो गया है।

रचयिता ने अपने नाम के आगे 'अली' शब्द जोड़ा है जिससे वे सखि सम्प्रदाय के जान पड़ते हैं। इनके सम्बन्ध में और कोई बात ज्ञात नहीं होती। अष्टक का रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

६४ हेम—प्रस्तुत शोध में इनके रचे एक छोटे से ग्रंथ 'श्री चूनरी' का विवरण लिया गया है जिसमें तीर्थंकर श्री नेमचंद जी के वैराग्य की कथा का वर्णन है। ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचना में राजस्थानी भाषा का भी किंचित पुट है।

रचयिता के नाम का उल्लेख केवल ग्रन्थ के अन्त में पाया जाता है:—

'हेम' भने ते जानीए ते पावई भवपार जी

इन्होंने सुलतानपुर के कुछ जैन आचार्यों का विवरण दिया है जिससे ज्ञात होता है कि वहाँ काष्ट संघ के अन्तर्गत माथुर गछ के आचार्य (कदाचित्) सीलचंद मुनि हुए। उनके पट्ट जस कीर्ति मुनि थे और जिनके शिष्य गुणचंद थे :—

काष्ट संघ सुहावणा माथुर गछ अनूप जी
सीलचंद मुनि जानीयो सब जइतन सिर भूप जी
जास पट्ट जसकीर्ति मुनि काष्ट संघ सिंगार जी
तास शिष्य गुणचंद मुनि विद्या गुन भंडार जी

रचयिता ने यह नहीं बतलाया कि इन मुनियों के साथ उस का क्या संबन्ध था। शायद ये गुणचंद के शिष्य रहे हों।

६५ श्रीहितहीरा सखी—प्रस्तुत खोज में प्रथम बार ज्ञात हुए हैं। इनके रचे दो ग्रंथों:—

१—अनुभव रस अष्टयाम और
२—चतुर्थ अष्टयाम

के विवरण लिये गए हैं। इन दोनों में सखियों द्वारा श्री राधाकृष्ण की आठोंयाम की सेवाओं का वर्णन किया गया है। पहले ग्रंथ की रचना दोहे चौपाइयों में है। और दूसरे की पदों और दोहों में। रचनाकाल तथा लिपिकाल किसी में भी नहीं है।

श्री हित हीरा सखि हित संप्रदाय के थे। इन्होंने अपने उपर्युक्त दोनों ग्रंथों में क्रमानुसार श्री रूप सहचरि और श्री हित वृंदावनदास जी के नामोल्लेख किए हैं। यह स्पष्ट नहीं होता कि उक्त दोनों महानुभावों के साथ इनका कैसा संबन्ध था। इतना पता अवश्य चलता है कि ये इनके समकालीन थे। श्री हित वृंदावन दास जी का काल उनके प्रस्तुत शोध में मिले 'अष्टयाम समय प्रबन्ध' के अनुसार संवत् १८३० वि०, सन् १७७३ ई० है। अतः हीरा सखि भी इसी काल के लगभग वर्तमान रहे होंगे। शेष परिचय अप्राप्य है।

६६ श्रीहितदासजी—इन्होंने संवत् १८३४ वि०, सन् १७७७ ई० में श्री हित हरिवंश जी कृत सुप्रसिद्ध 'सुधानिधि काव्य' की व्रजभाषा में पद्यबद्ध टीका की। टीका सरस और भावमय है। इसका लिपिकाल संवत् १८४१ वि०, सन् १७८४ ई० है।

हितदास जी हितानुयायी थे और वृंदावन में निवास करते थे:—

यह रहस्य पूरण भयो भाषा वानि सार।
दास वास वृंदा विपिन पूरन आस हमार॥

इनके गुरु शायद श्री भोरी सखी थे जिनका इन्होंने बड़े आदर से नाम लिया है:—

श्रोत्र रूप कलसान करि पीयो बुद्धि निधान
भोरी सखि प्रसाद हित भाषा कही वषान

ग्रंथ के रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है:—

संवतसर दस आठ सत गए तीस अरु चार
सावन मास सुहावनो तीजन को त्योहार

रचयिता का विशेष उल्लेख विवरण अंश में संख्या ६ पर हो चुका है, अतः कृपया देखें उक्त विवरण अंश।

६७ ईसख (मिरजा)—ये 'ईसख प्रकास' नामक रचना के कर्त्ता हैं। ग्रंथ में सामुद्रिक विषय का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५९ वि० है। विषय की दृष्टि से वह महत्त्वपूर्ण है। इसके आरंभ के छः पत्रे लुप्त हैं, अतः प्रति खंडित है।

रचयिता के पिता का नाम निजावत खान था। इन्होंने सामुद्रिक विद्या का अध्ययन एक वासुदेव नामक ब्राह्मण से किया था जो इनके पिता के कृपापात्र थे। अन्य परिचय अज्ञात है। ग्रंथ नवोपलब्ध है।

६८ जगन्नाथ 'सुखसिंधु'—इन्होंने रस और नायिका भेद विषय पर 'काव्य पीयूष रत्नाकर' नामक ग्रंथ की रचना की। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति का आरंभ का एक पत्र लुप्त है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

रचयिता के पिता का नाम व्रजनाथ था और ये तैलंगदेश के अंतर्गत कांकरवार ग्राम के रहनेवाले दीक्षित ब्राह्मण थे। इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है:—

रामचंद्र दीक्षित
|
श्रीहरिहर
|
श्रीगणेश
|
श्रीहरपति
|
जगन्नाथ
|
पुरुषोत्तम
|
चिम्मनजी
|
गोवर्द्धनजी
|

('सुखसिंधु')
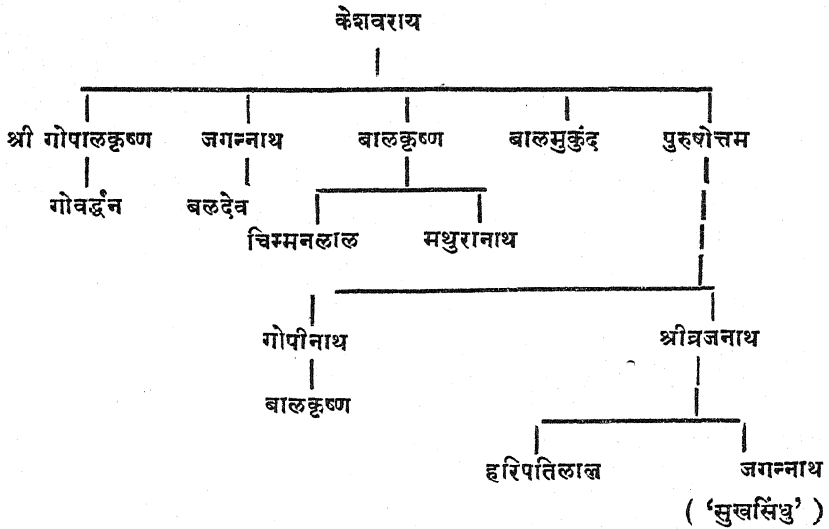
ये एक प्रौढ़ कवि थे। इनके पुरखा श्रीगणेश को गुसांई विट्ठलनाथ जी की पुत्री विवाही हुई थी। इसके फलस्वरूप श्रीगणेश जी अपने दक्षिण के गाँव कांकरवार को छोड़ कर गोकुल में आकर बस गए थे। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

६९ जमुनादास जी—इनका रचा हुआ एक 'अष्टक' का विवरण लिया गया है जिसमें श्रीकृष्ण की प्रेम क्रीड़ाओं का वर्णन है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९६८ वि० है।

रचयिता हितानुयायी थे। ग्रंथांत में इन्होंने वन चंद जी और हित कीरतलाल जी का उल्लेख किया है। संभवतः ये वृंदावन में ही रहते थे। ग्रंथस्वामी (श्री हित रूपलाल जी, अधिकारी, श्रीराधावल्लभ मंदिर, वृंदावन) के कथनानुसार रचयिता ने प्रस्तुत 'अष्टक' अपने गुरु हित कीरतलाल जी को भेंट किया था जिसका समर्थन ग्रंथ की पुष्पिका से होता है:—

'इति श्री भेंट को अष्टक सपूर्ण'

अष्टक में जमुनादास (रचयिता) का कोई नाम नहीं है। खोज में रचयिता नवोपलब्ध हैं।

७० जनौल—इनका पता खोज में प्रथम बार लगा है। नाम के अतिरिक्त इनका अन्य परिचय अज्ञात है। 'शनिश्चर की कथा' नाम से इनके एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में शनि ग्रह की महिमा का वर्णन है जो कथा के रूप में है। एक बार अवंतिका के महाराजा विक्रम शनि ग्रह से पीड़ित हुए थे। उन्हें अपना समस्त राजपाट परित्याग कर देशविदेश मारे-मारे फिरना पड़ा था। अंत में जब शनि की अस्तुति की तब कहीं जाकर वापस राजधानी में आए और सुखपूर्वक रहने लगे।

प्रस्तुत कथा स्कंद पुराण से ली गई है जिसका उल्लेख ग्रंथ की पुष्पिका में किया गया है:—

इति श्री स्कंद पुराणे शनिकथा संपूर्ण

इससे इस तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि किस प्रकार पुराण कथा वाचक पीछे की कथाओं का पुराणों में समावेश कर देते थे। पुराणों के कर्त्ता 'व्यास' जी कहे जाते हैं। महाराज विक्रमादित्य व्यास के बहुत पीछे हुए हैं। अतः स्कंद पुराण में व्यास द्वारा विक्रम की कथा का उल्लेख किया जाना किसी भी प्रकार संभव नहीं माना जा सकता। यह कार्य केवल एक पुराण कथावाचक का ही हो सकता है।

७१ जटमल (जाट)—प्रस्तुत खोज में इनके 'गोराबादल की कथा' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। विशेष के लिये देखिए विवरण-अंश संख्या २६।

७२ जवाहिरलाल—ये राजाबाजार (जौनपुर) स्थित एक पाठशाला के अध्यापक थे। इन्होंने 'धर्मचरित्र' नाम से एक छोटी सी पुस्तक की रचना की जिसमें राजाबाजार के राजा महेश नारायण सिंह की धर्मपत्नी श्रीमती धर्मराज कुँवरि के धर्म चरित्रों का वर्णन है। ये समस्त चरित्र उक्त महाराज की मृत्यु (१८७८ ई०) के उपरांत के हैं। रानी कुछ अनिवार्य प्रतिबंधों के कारण सती न हो सकी, अतः पति की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने राजभार सँभाला। वे जब तक जीवित रहीं उन्होंने राज्य के समस्त कार्य सुचारु रूप से संपन्न किए। राजधानी में उन्होंने अनेक मंदिर बनवाए और भक्ति भाव में मन लगा कर अपना जीवन व्यतीत किया। अनेक तीर्थों की यात्राएँ करके बहुत सा दान पुण्य भी किया।

रचयिता इन्हीं धर्मराज कुँअरि के आश्रय में रहते थे। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

७३ जयगोविंद वाजपेयी—इनके रचे 'कवि सर्वस्व' नामक रीति ग्रंथ प्राप्त हुआ है। ग्रंथ में रस, नायिका भेद, अलंकार, गुण और काव्य दोष आदि विषयों का उत्तम वर्णन किया गया है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं। विशेष के लिये देखिए विवरण अंश संख्या ७।

७४ राजा जयसिंह—खोज में ये नवोपलब्ध हैं। इनके 'काव्य रस' नामक ग्रंथ की एक अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है जिसके विवरण लिए गए हैं। विशेष विवरण के लिए देखिए विवरण अंश संख्या ८।

७५ ज्ञानीजी—इनकी प्रस्तुत खोज में दो रचनाएँ 'ब्रह्मस्तुति' और 'शब्दपारखी' नाम से मिली हैं। प्रथम रचना में ब्रह्म की स्तुति की गई है। इसकी प्रस्तुत प्रति खंडित है जिसके कारण इसका वास्तविक नाम विदित न हो सका। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। दूसरी रचना में निर्गुण सिद्धांतानुसार गुरु, योगी, मुनि, संन्यासी, जंगम, पंडित, ब्राह्मण, जन, हिंदू, शेख, मुसलमान, मुल्ला, पीर, सैयद, ग्रही, भक्त, भक्ताभाव और दास एवं मुक्त की विवेचना की गई है। इसका उल्लेख पिछले खोज विवरण (सन् १९२६-२८ ई०, सं० २१०) पर हो चुका है। इसकी प्रस्तुत प्रति पूर्ण ही है, पर रचनाकाल और लिपिकाल इसमें भी नहीं दिए हुए हैं।

रचयिता 'शब्दपारखी' के अनुसार कबीर के अनुयायी थे। अन्य विवरण इनका अब भी अप्राप्त है। खोज विवरण (सन् १९३२-३४, संख्या १००) पर इनकी दो रचनाओं—साखी और ज्ञानपाति का उल्लेख है तथा उसमें इस बात का भी वर्णन है कि

इनके नाम पर मिली सबसे पुरानी रचना की प्रति सं० १७९७ (१७४० ई०) की लिखी हुई है।

७६ मुं० ज्वाला स्वरूप—इन्होंने 'रुद्रमालिनी' नामक ग्रंथ की रचना की है जो संस्कृत के मालिनी छंद में है तथा जिसमें शिवजी की स्तुति की गई है। रचना अंत से खंडित है। रचनाकाल संवत् १९२५ है, लिपिकाल अज्ञात है।

रचयिता ने जैसा कि ग्रंथारंभ में दिया है किसी मुंशी लछमन स्वरूप (रईस, सिकंदराबाद) के आज्ञानुसार प्रस्तुत रचना की। इसके अतिरिक्त इनका और परिचय नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

७७ कबीरदास—इनके एक ग्रंथ की दो खंडित प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। खंडित होने के कारण ग्रन्थ का नाम ज्ञात न हो सका। रचनाकाल एवं लिपिकाल भी अज्ञात हैं। इसमें सतनाम की महिमा, गुरु माहात्म्य, दास की पहचान, पंचतत्व आदि विषयों पर दार्शनिक विवेचन किया गया है।

७८ कलीराम—'सुदामा चरित्र' नामक एक ग्रंथ के साथ प्रस्तुत खोज में पहले ही पहल इनका पता चला है। ग्रंथ में जैसा कि इसके नाम से विदित होता है, सुदामा की कथा है। यह रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसके प्रारंभ के तीन पत्रे लुप्त हो गए हैं, किन्तु कथा भाग पूर्ण है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १७३१ वि०, सन् १६७४ ई० है जिसके पश्चात् कवि ने अपना परिचय दिया है:—

इति श्री सुदामा-चरित्र लिष्यो छै मिति मगसिर सुदी १३ सं० १७३१ वि०

दोहा

चतुर्वेद माथुर विदित मधुर मधुपुरी धाम
सुकविन को सेवक सदा कलीराम कवि नाम
चरित सुदामा को रच्यौ हो निज मति अनुसार
भूल चूक होवै कछू लीज्यौ सुकवि सुधार

अतः इससे अनुमान होता है कि यह लिपिकाल ही कहीं रचनाकाल न हो। दोहे के अनुसार रचयिता माथुर चतुर्वेदी और मथुरा के निवासी थे।

इनका उल्लेख विवरण अंश संख्या ९ पर भी हुआ है।

७९ काशी गिरि—इनकी रची 'कृष्ण और शिव का अर्द्धांग स्वरूप वर्णन' नामक एक छोटी सी रचना मिली है जिसमें भगवान् कृष्ण और शिव का अर्द्धांग स्वरूप वर्णन कर उनके तादात्म्य का प्रतिपादन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों नहीं दिए हैं। साथ ही रचयिता के विषय में भी कुछ ज्ञात नहीं होता। ये पिछले खोज विवरणों (सन् १९२६–२८, सं० २२७; सन् १९२९–३१, सं० १८८) पर आये काशी गिरि से अभिन्न जान पड़ते हैं।

८० केशरी कवि—इनके एक अपूर्ण ग्रंथ 'गणेशकथा' का विवरण लिया गया है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हुए हैं। ग्रंथ से इनका कोई परिचय प्राप्त नहीं होता।

८१ खगपति कायस्थ—ने 'गंगा की कथा' नामक एक छोटे से ग्रन्थ की रचना की है जिसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। इसका विषय ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट है। इसमें रचनाकाल का निर्देश तो है, परन्तु स्पष्ट नहीं है:—

संवत् सत्रह सै दिवोत्रः चंद्र सुरज गुन लीन
खगपति कवि भारतसुत कथा प्रघट जिन्ह कीन्ह
भादों सुदि पांचैं तिथि भली
कथा पवित्र जुगत में चली

इससे संवत् १७०० वि० तो स्पष्ट है, किन्तु 'दिवोत्रः' और 'चंद्र सुरज' से जो संख्याएँ निकलती हैं उससे कोई सुसंगत काल नहीं बनता। यदि 'द्विवोत्रः' से हम 'दिव+उत्तरा' लें अर्थात् 'आगे सात' तो संवत् १७०७ निकलता है और यदि चंद्र को १ और सूरज को १२ मानकर सं० १७०० में जोड़े तो १७११२ होता है जो असम्भव है। अतः इस विषय में कोई निश्चय नहीं होता।

रचयिता का नाम ग्रन्थ के आदि और अन्त में न होकर कुछ चौपाइयों में दिया हुआ है जो यहाँ उद्धृत की जाती हैं:—

खगपति कवि भारत सुत कथा प्रगट जिन्ह कीन्ह

और:—

खगपति कायथ बरनी कथा

इससे यह ज्ञात होता है कि ये कायस्थ और किसी भारत नामा व्यक्ति के पुत्र थे। एक बात और भी है, इन्होंने ग्रन्थारंभ में दिल्ली का भी उल्लेख किया है:—

सहजहि डिल्लीपति कीन्हों। बड़ विस्तार विधातहि दीन्हो।

पता नहीं 'सहजहि दिल्लीपति' से इनका क्या अभिप्राय है। संभव है दिल्लीपति शाहजहाँ से तात्पर्य हो।

८२ किंकर कवि—इनकी एक रचना 'गोपी दाऊ जी की बारह मासी' पहले भी प्रकाश में आ चुकी है, देखिए खोजविवरण (सन् १९२६–२८, सं० २४)।

इस बार इनके एक ग्रंथ 'महेश्वर महिमा' का जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हुए हैं, विवरण लिया गया है। इसमें शिवजी की महिमा का वर्णन है।

८३ कृष्णदास—एक 'अष्टक' के रचयिता के रूप में इस बार नये विदित हुए हैं। अष्टक में श्री राधाजी की भक्ति की व्यंजना है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये गए हैं।

रचयिता राधा वल्लभ संप्रदाय के जान पड़ते हैं। इस संप्रदाय में राधाजी का स्थान सर्वोच्च है और अष्टक में उन्हीं की महिमा का वर्णन किया गया है।

८४ केवल कृष्ण या कृष्णकवि—प्रस्तुत खोज में १५ ग्रंथों के साथ नवीन ही ज्ञात हुए है। एक ग्रंथ 'विनय निवेदन' से इनके विषय में बहुत कुछ ज्ञात हुआ है। इसमें इन्होंने इष्ट मित्रों को लिखे गए कुछ पत्रों का संग्रह किया है जिसमें एक श्री मोहन लाल बिष्णुलाल पण्ड्या को लिखा गया नौकरी सम्बन्धी पत्र भी है।

ये कट्टर आर्यसमाजी थे और सुजरई, खिमएपुर, मैनपुरी तथा रिजोर (एटा) के राजाओं से पंडिताई-पुरोहिताई का सम्बन्ध रखते थे। राजा लक्ष्मणसिंह कुरावली के भी पुरोहित थे। श्री स्वामी दयानंद जी तथा पं० भीमसेन जी से इनकी घनिष्ट मित्रता थी। ये संस्कृत और हिन्दी के कवि होने के साथ-साथ अंकगणित, बीजगणित, रेखा गणित और माप विद्या आदि अनेक विषयों के ज्ञाता थे। इनके अनुज रामदयाल जी ने गोरक्षा के संबंध में २५०००० दो लक्ष पचास हजार पुरुषों के हस्ताक्षर कराये थे जिसपर प्रसन्न होकर श्री स्वामी जी ने उन्हें दो प्रशंसापत्र दिए थे। सन् १८८२ ई० में ये वर्त्तमान थे।

इनके ग्रन्थों का विवरण नीचे दिया जाता है:—

१—विनय निवेदन—इसमें कुछ पत्रों का संग्रह है। इसके अन्त में सन् १८८२ ई० दिया हुआ है जो इसका रचनाकाल है।

२—देवी अष्टक-(खंडित) इसमें देवी की महिमा का वर्णन है जो कुरावली के राजा लक्ष्मणसिंह के राजसिंहासन प्राप्ति के समय कही गई थी। इसका रचनाकाल सं० १९२५, सन् १८६८ ई० है:—

५ २ ९ १

सर लोचन खण्ड शशि प्रमि तो वर वत्सरे फाल्गुन मास सिते दशमी सुरबिंदु युते दिवसे। नृप लक्ष्मण सिंह पदं ह्यभवत्।

३—पनहारिन वर्णन—इसमें एक दुश्चरित्र पनिहारिन का परपुरुष के साथ प्रेम करने का वर्णन है।

४—उपदेशावली—खंडित। इसमें विविध बातों का उपदेश किया गया है।

५—कृष्ण कवि का संग्रह—इसमें इनकी काव्य-रचनाओं का संग्रह है जिसमें एक दो अन्य कवियों की भी रचनाएँ सम्मिलित हैं।

६—पदों का संग्रह—इसमें सूर, तुलसी, अमीर, अमीचंद आदि के पदों का संग्रह है, पर खंडित है।

७—संग्रह—दो मिले हैं। एक में कृष्ण कवि द्वारा किया गया विविध कवियों के कवित्त सवैयों का संग्रह है और दूसरे में स्वयं कृष्ण कवि की कविताओं का संग्रह है। यह अपूर्ण है।

८—संस्कृत के काल—इसमें संस्कृत के दस कालों का वर्णन है।

९—संस्कृत व्याकरण—इसमें हिन्दी भाषा द्वारा संस्कृत व्याकरण का ज्ञान कराया गया है। यह अपूर्ण है।

१०—पंचरत्न—इसमें एक ग्रूस साहब की प्रशंसा में पाँच कवित्त कहे गये हैं। इसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं।

११—ब्रह्मोपासना—में संध्योपासना, पंचयज्ञ विधि, सृष्टि विद्या विषय, तृतीय ब्रह्मोपासना और चतुर्थ युक्ति का वर्णन है। यह अपूर्ण है।

१२—दमयन्ती नल की कथा—इसका विषय नाम से ही स्पष्ट है। ग्रंथ अपूर्ण है।

१३—युवती धर्म—ग्रंथ में युवतियों के धर्म का वर्णन किया गया है। यह ग्रंथ खंडित है।

१४—ईसाई धर्म वर्णन सार—में ईसाई धर्म की निस्तारता का वर्णन है। इसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं।

१५—नीति पच्चीसी—इसमें नीति सम्बन्धी पच्चीस दोहों का संग्रह है। रचनाकाल केवल प्रथम दो ग्रन्थों में दिया है जो क्रमानुसार सन् १८८२ ई० और सन् १८६८ ई० हैं। लिपिकाक किसी में नहीं है।

८५ कुमुटीपाव—इनका विशेष उल्लेख विवरण अंश संख्या १० पर हुआ है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

८६ कुसल—के रचे हुए 'गंगा नाटक' नामक एक ग्रन्थ की तीन प्रतियों के विवरण प्रस्तुत खोज में लिए गए हैं। इसमें गंगा के पृथ्वी में आने की कथा वर्णित है। रचनाकाल सं० १८२६ वि०, सन् १७६९ ई० है। लिपिकाल किसी भी प्रति में नहीं दिया है। यह ग्रन्थ पहले भी मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९००, सं० ५७; १९१७–१९, सं० १०१)।

अबकी बार रचयिता के गुरु का नाम इक्ष्यादास ज्ञात हुआ है। ये (रचयिता) आगरा जिला के अन्तर्गत ज्योंधरी स्थान में ठाकुर अनिरुद्ध सिंह के आश्रय में रहते थे।

८७ लछमनदास उदासी—की 'भजन' नामक एक रचना जिसमें रचनाकाल और लि० का० का उल्लेख नहीं इस बार विवरण में आई है। इसमें श्री गुरु नानक की स्तुति सम्बन्धी कुछ भजनों का संग्रह है। रचयिता के विषय में उनके नाम के अतिरिक्त और कुछ पता नहीं चलता। नाम के साथ 'उदासी' शब्द जुड़ा होने से वह नानकपंथी विदित होता है, क्योंकि नानकपंथ के अंतर्गत एक 'उदासी' संप्रदाय भी है।

८८ श्री लक्ष्मीदास चतुर्वेदी—एक ग्रंथ 'गुटका के पद्मावत की टीका' के रचयिता के रूप में इस बार विवरण में आये हैं। गुटका से अभिप्राय राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द कृत पाठ्य-संग्रह से है। इन्होंने यह टीका गुटके में दिए गए जायसी कृत पद्मावत के अंश पर की है। इसका रचनाकाल और लिपिकाल एक ही है जो सं० १९३३ वि०, सन् १८७६ ई० है। प्रस्तुत प्रति स्वयं ग्रंथकार के हाथ की लिखी है।

ग्रंथकार करहला नामक स्थान के निवासी थे। इन्होंने प्रस्तुत टीका उपर्युक्त राजा साहब की आज्ञानुसार जनाब मौलवी जमीलुद्दीन साहब डिप्टीइन्सपेक्टर और पं० गोपीनाथ जी सबडिप्टीइन्सपेक्टर तथा अपने गुरु पं० सुन्दर लाल मुदर्रिस के प्रसन्नतार्थ बनाई थी।

८९ हित ललित—के एक 'अष्टक' का विवरण लिया गया है जिसमें श्री हित हरिवंश जी की वंदना की गई है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता। रचयिता 'अष्टक' के अनुसार हितानुयायी थे और श्री हितकीरति के पुत्र थे। शेष परिचय अज्ञात है।

९० लोचनसिंह कायस्थ—का बनाया हुआ 'लोचन प्रकाश' नामक फलित ज्योतिष विषयक एक अपूर्ण ग्रंथ का विवरण पहले ही पहल लिया जा रहा है। इसमें रचनाकाल और लि० का० का उल्लेख नहीं है।

प्रस्तुत शोध में ग्रंथकार का एक दूसरा ग्रंथ 'जातकालंकार' भी मिला है, परन्तु वह पिछले एक खोजविवरण में आ चुका है, देखिए खोजविवरण (सन् १९२६–२८, सं० २६९)। "जातकालंकार" का रचनाकाल १८५३ ई० है। लोचनप्रकाश के पंचम सर्ग की समाप्ति की विज्ञप्ति के अनुसार रचयिता किसी राजमल गाँव के थे :—

इति श्री 'लोचन-प्रकास' कवि लोचनसिंह विरचतायां राजमल ग्राममध्ये। इनका और परिचय नहीं मिलता।

९१ लोकमणिदास चतुर्वेदी—इनका 'क्षेत्र-भास्कर' नामक माप-विद्या का ग्रंथ मिला है जो अपूर्ण है। रचनाकाल नहीं दिया है। लि० का० सन् १८८१ ई० है। ग्रंथकार का निवासस्थान मैनपुरी था। ये ओवरसीयर रहे थे।

९२ माधोदास—का 'नरसिंह लीला' नाम का एक छोटा सा किन्तु अपूर्ण ग्रंथ प्राप्त हुआ है। इसका रचनाकाल तो ज्ञात न हो सका, किन्तु लिपिकाल सं० १८२३ वि०, सन् १७६६ ई० है। इसमें रोला छंदों में नरसिंह लीला का वर्णन किया गया है।

रचयिता का नाम केवल ग्रंथ के अन्तिम रोला से ज्ञात हुआ है। अन्य परिचय अज्ञात है।

९३ माधोदास—एक छोटे से ग्रंथ "बड़ी ओनम" के साथ विवरण में आ रहे हैं। इनका विशेष परिचय ज्ञात नहीं। 'बड़ी ओनम' में वैराग्य, भक्ति और आत्मज्ञान सम्बन्धी उपदेश हैं।

यह किस काल में रचा गया, कुछ पता नहीं चलता। लि० का० केवल एक प्रति में है जो सं० १८९९ वि०, सन् १८४२ ई० है। शोध में ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं।

९४ मधुकर दास—खोज में प्रथम बार ही इनका पता लगा है। इनके 'ध्रुव-चरित्र' नामक ग्रंथ की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। इसमें जैसा कि नाम से स्पष्ट है, ध्रुव, भक्त की कथा का वर्णन है। यह ग्रंथ संवत् १७८२ वि०, सन् १७२५ ई० में रचा गया। लिपिकाल केवल एक प्रति में सं० १८९६ वि०, सन् १८३९ ई० दिया है।

रचयिता के विषय में उनके नाम के अतिरिक्त और कोई पता नहीं चलता।

९५ ख्वाजा मुहम्मद फाजिल—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या ११ पर किया गया है, अतः कृपया देखें उक्त विवरण अंश।

९६ महेश नारायण सिंह—इनकी बनाई हुई 'ज्ञान-चालीसा' नामक रचना के विवरण इस बार लिए गए हैं। इसमें राधाकृष्ण और सीताराम की भक्ति तथा उनके आमोद-प्रमोद सम्बन्धी गीतों का संग्रह है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता।

रचयिता के सम्बन्ध में इतना ही पता चलता है कि ये राजाबाजार के महाराज थे। इनकी रानी का नाम धर्मकुँवरि था जो हिन्दी में कविता करती थीं तथा जिनका उल्लेख प्रस्तुत विवरण में अन्यत्र (संख्या ४१ में) किया गया है ।

९७ माणकदास—शोध में इनका पता एक अपूर्ण 'पदावली' के साथ प्रथम बार ही लगा है । ग्रंथ का पूरा नाम ज्ञात नहीं हो सका । बाईं ओर हाशिये पर 'प०' लिखा होने से 'पदावली' नाम मान लिया गया है जो ठीक जान पड़ता है । इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों का ही पता नहीं लगा । इसमें श्री रामकृष्ण की भक्ति विषयक उत्तम पदों का संग्रह है ।

रचयिता का नाम के अतिरिक्त और कोई पता नहीं चलता ।

९८ मोहन--मोहन जाति के जैन थे और कुम्हेरपुर (भरतपुर) में रहते थे। इनकी 'सगुनावली' नामक एक छोटी सी रचना मिली है जिसका विवरण लिया गया है। इसकी रचना सं० १८७८ वि०, सन् १८२१ ई० में हुई और प्रतिलिपि सं० १९२९ वि०, सन् १८७२ ई० में ।

९९ मोहनदास—मोहनदास 'बुद्धिविलास' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं और खोज में प्रथम बार ही विदित हुए हैं । विशेष परिचय इनका अप्राप्य है ।

ग्रंथ में मन तथा बुद्धि के संवाद के रूप में ज्ञानोपदेश वर्णित है । बुद्धि, मन को नीच कर्मों की ओर प्रवृत्त न होकर सन्मार्ग की ओर चलने और हरि भक्ति करने का उपदेश करती है । रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं ।

१०० मोहनलाल समाधिया—द्वारा रचित 'रामायण की घटनाओं का तिथि पत्र' नामक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है जिसमें रामायण में वर्णित घटनाओं की तिथियाँ दी गई हैं। यह संवत् १९१३ वि०, सन् १८५६ ई० में रचा गया। लिपिकाल नहीं दिया गया है :—

संवत् विगत उनीस सै पुनि तेरह को साल
भादों बदि की द्वादसी पुष्य नषत ससिवाल

रचयिता कुलपहार में रहते थे और तुलसीकृत 'रामायण' पढ़कर राम भक्त हुए थे:-

मोहनलाल समाधिया कुलपहार कौ बास।
तुलसीकृत की कृपा तैं भयो राम कौ दास ॥

१०१ मोतीलाल—इनके एक ग्रंथ 'चित्रगुप्त की कथा' का विवरण लिया गया है। जिसके चित्रगुप्त की कथा एवं कायस्थों की उत्पत्ति का वर्णन है ।

ग्रंथ कब रचा गया अथवा कब लिपिबद्ध हुआ, कुछ पता नहीं चलता । इसकी प्रस्तुत प्रतिलिपि अत्यन्त अशुद्ध है, ठीक-ठीक पढ़ी नहीं जाती ।

रचयिता का विशेष परिचय नहीं मिलता । इन्होंने एक कोक राज का भी उल्लेख किया है, पर यह स्पष्ट नहीं होता कि उनका इस ग्रंथ से क्या सम्बन्ध था ।

१०२ मुरलीधर—'शृंगार सार' नामक ग्रंथ के साथ शोध में प्रथम बार ही विदित हुए हैं। इनका विशेष परिचय प्राप्त नहीं हुआ। पंजाब के खोज विवरण में एक मुरलीधर आए हैं; किन्तु यह जानने का कोई आधार नहीं मिलता कि वे प्रस्तुत ग्रंथकार से भिन्न हैं या अभिन्न।

प्रस्तुत ग्रंथ में नायिका भेद का वर्णन है जो किसी रसमंजरी ग्रंथ को देख कर किया गया है:—

निरषि ग्रंथ रस-मंजरी मन में कियो विचार
लक्षिण नायक नाइका कहिये मति अनुसार

ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, लिपिकाल जो दोहे में है सं० १८९६ वि०, सन् १८३९ ई० है:—

सम्वत् अठारै सै छानवा माघ वदी भृगुवार
षष्ठी पुस्तग पूर्न कियौ लेषक नाम सुकुमार

१०३ महाराज सावंत सिंह (नागरीदास)—नागरीदास (महाराजा सावंतसिंह) सुप्रसिद्ध कृष्ण गढ़ नरेश के कई ग्रंथ पहले खोजविवरणों में आ चुके हैं, देखिए खो० वि० (सन् १९०१, सं० ११२, ११३ आदि; १९०६–८, सं० १९८; १९०९–११, सं० २०३)। इस बार इनकी छः छोटी-छोटी रचनाओं का पता और लगा है जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं:—

१—विविध विषय के कवित्त, २—रीझ चतुर, ३—गोवर्द्धन समय के कवित्त, ४—गोकुलाष्ट, ५—फाग विलास और ६—सीत सार।

इन सब में श्री कृष्ण की ब्रज लीलाओं का ही वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी ग्रंथ में भी नहीं किया गया है। ये समस्त ग्रंथ काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या २७ पर भी हुआ है।

१०४ नवल—कृत 'जैजिन पचीसी' नामक एक छोटी सी रचना का विवरण लिया गया है। इसमें जिन भगवान् की स्तुति है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये गए हैं। रचयिता का केवल नाम ही ज्ञात हुआ है जो ग्रंथांत के दोहे में दिया गया है:—

ए सरधा मोरे उर भई कीजै तुम पद सेव।
नवल नवल गुण गाइये जै जै जै जिन देव॥

१०५ नवलदास—शोध में प्रथम बार ज्ञात हुए हैं। इनका रचा हुआ 'नवलदासजी की वाणी' नामक एक ग्रंथ मिला है जिसमें एक कथा द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान का प्रतिपादन किया गया है। कथा जो रूपक को लिए हुए है इस प्रकार है:—

जीव राजा की सुमति और कुमति नामक दो रानियाँ थीं। सुमति के परिवार में ज्ञान, वैराग्य तथा सन्तोष आदि सद्वृत्तियाँ थीं। कुमति की सन्तानें काम, क्रोध, लोभ, मोहादि असद्वृत्तियों से युक्त थीं।

एक दिन सुमति ने जीव राजा को दया, धर्म आदि पुण्य कार्यों के प्रति उत्साहित किया। जब यह बात कुमति को ज्ञात हुई तो उसने राजा को उसके विरुद्ध भड़काया। परिणाम यह हुआ कि सुमति और कुमति दोनों में परस्पर विवाद होने लगा। परंतु अन्त में सुमति विजयी हुई। उसे देवताओं ने आशीर्वाद दिया। यह कथा उपनिषद्, गीता तथा योग-वाशिष्ठ आदि ग्रंथों का सार लेकर कही गई है, जैसा कि ग्रंथ कर्त्ता लिखता है:—

एकादस अरु उपनिषद् निज गीता को आस।
जोग वाशिष्ठ और वेदान्त मत वरन्यो नवलदास॥

ग्रंथ में रचनाकाल का दोहा दिया तो है; परन्तु वह स्पष्ट नहीं है:—

येक सहश्र अठाइस परमान
फागुन सुदि चौदसि मिति मन परमोद बषान

इससे साफ पता चलता है कि पहली पंक्ति में 'सहस्त्र' और 'अठाइस' शब्दों के बीच कुछ शब्द छूट गए हैं जो सम्भवतः ७०० के वाचक रहे होंगे। पंक्ति में वे शब्द अनुमानतः इस प्रकार रहे होंगे:—

येक सहस्त्र (अरु सात सै) अठाइस परमान

इससे संवत् १७२८ वि० बनता है। मलूकदासजी जो नवलदासजी के गुरु थे श्री गो० तुलसीदासजी के समकालीन कहे गए हैं। अतः नवलदासजी का सं० १७२८ वि०, सन् १६७१ के लगभग वर्तमान रहना असंगत नहीं जान पड़ता।

रचयिता रामानुज सम्प्रदाय के थे और कड़ा नगर में रहते थे। उनके गुरु का नाम मलूकदास था:—

रामानुज है संप्रदाय कड़ा नगर सुषवास
गुरु मलूक उपदेस सों वरन्यौ नवलादास

१०६ पलटूदास या पलटू साहब—अपने दो ग्रंथों के साथ पिछले दो खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९०६–८, सं० २२२; १९२०–२२, सं० १२४)।

दूसरे खोज विवरण के अनुसार ये फैजाबाद जिला के अन्तर्गत नांगा जलालपुर नामक स्थान के रहने वाले काँदू बनिया थे। इनके गुरु का नाम गोविंददास था जो सत नामी थे। ये लखनऊ के नबाब शुजाउद्दौला के समय में सन् १७७० ई० के लगभग वर्तमान थे।

इस बार इनका एक ग्रंथ 'पलटु साहब की बानी' के नाम से मिला है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। इसमें ज्ञान, वैराग्य, उपदेश और भक्ति संबंधी विषयों का वर्णन है। हिन्दू-मुसलिम एकता पर भी जोर दिया गया है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उच्च कोटि का है।

इसकी भाषा ब्रज तथा खड़ी बोली मिश्रित है जिसमें कहीं-कहीं अरबी तथा फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है।

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या २८ पर भी है।

१०७ परमानंद—इनका विशेष उल्लेख विवरण अंश में संख्या १३ पर हुआ है, अतः कृपया देखिए उक्त विवरण अंश।

१०८ प्रभुदयाल—के प्रस्तुत शोध में १० ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनमें से केवल तीन ग्रंथ ही नवीन हैं:—

१—भाव कवित्त
२—होली उषादि
३—सद्गुरु स्तोत्र

शेष सात ग्रंथ पहले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (सन् १९३२–३४, संख्या १३६; १९३५–३७, सं० ७७)। नवीन ग्रंथों में से किसी में भी रचना काल अथवा लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचयिता सिरसागंज (जिला मैनपुरी) के निवासी एक महाजन (कलवार) थे। अन्वेषक के कथनानुसार ये सन् १९३७ ई० के लगभग वर्तमान थे।

१०९ प्राणनाथ—के कई ग्रंथों का उल्लेख पिछले खोज विवरणों में हो चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९२६–२८, सं० ३४६; दिल्ली १९३१, सं० ६५; १९२९–३१, सं० २७०; १९३२–३४, सं० १६८)।

ये सुप्रसिद्ध महाराज ओड़छा नरेश छत्रसाल के गुरु थे जिनको इन्होंने हीरा की खान बतलाई थी।

इस बार इनके 'विराट चरितामृत' नामक एक ग्रन्थ का विवरण लिया गया है जिसमें सूर्य, चंद्र और दीपक की सहायता से सिद्ध होनेवाली एक ऐसी क्रिया का वर्णन है जिसके द्वारा गुप्त से गुप्त बातों का पता लग जाता है। यह वर्णन शिव पुराण के आधार पर किया गया है। ग्रन्थ में रचनाकाल अथवा लिपिकाल नहीं दिए हैं।

११० प्रसिद्ध—का 'जानकी विजय' नामक एक ग्रन्थ इस बार विवरण में आया है। इसका रचनाकाल संवत् १८१३ वि०, सन् १७५६ ई० में हुआ:—

"एक सहस अरु आठ सै संवत दस अरु तीन
सुक्ल पक्ष दुतिया मास मधु भाषी कथा नवीन'

लिपिकाल सं० १९१२ वि० १८५५ ई० है। इसमें श्री सीता जी द्वारा सहस्र शीश रावण को मारे जाने की कथा वर्णित है। रचयिता के विषय में उसके नाम के अतिरिक्त और कोई पता नहीं चलता।

१११ प्रेमनिधि—के भक्ति संबन्धी कुछ कवित्तों का विवरण लिया गया है। रचनाकाल अथवा लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। इसके अतिरिक्त रचयिता का भी कोई विशेष विवरण नहीं मिलता।

११२ राघवदास या राघोदास—रचयिता का विशेष उल्लेख विवरण अंश में संख्या १४ पर हो चुका है, अतः कृपया देखें उक्त विवरण अंश।

११३ राघोदास—का 'पांडु-चरित्र' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ का इस बार विवरण लिया गया है। ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १७३९ वि०, सन् १६८२ ई० है।

इसमें श्री कृष्ण भगवान् का पांडवों को दुर्वासा ऋषि के श्राप से बचाने का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति अत्यन्त अशुद्ध लिखी हुई है। ग्रंथकार का अन्य परिचय नहीं मिलता।

११४ महाराज रघुराज सिंह (रीवाँ नरेश)—इस बार इनका रामायण संबंधी कुछ कवित्तों का एक संग्रह मिला है जिनके रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। संग्रह खंडितावस्था में है। इनके ग्रंथों का विवरण पहले अनेक बार लिया जा चुका है।

११५ रामचंद्र—जैन धर्मावलम्बी थे। नाम के अतिरिक्त इनका अन्य परिचय अप्राप्य है। प्रस्तुत खोज में इनका एक ग्रंथ 'द्रव्य संग्रह' का विवरण लिया गया है। यह जैन आचार्य नेमीचंद कृत मूल 'द्रव्य संग्रह' का व्रज भाषा गद्य में अनुवाद है। इसका रचनाकाल तो नहीं दिया है, किन्तु लिपिकाल से जो सं० १७६१ वि०, सन् १७०४ ई० है इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है।

११६ रामचरण स्वामी—शाहपुरा (राजपूताना) निवासी और रामसनेही पंथ के प्रवर्तक थे। पिछले खोज विवरणों में इनके कुछ ग्रंथों का उल्लेख हो चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९२९-३१, सं० २८२; १९३२-३४, सं० १७५; पं० १९२२-२४, सं० ९१ ए, बी, सी)।

इस बार इनके दो ग्रंथ—१ दृष्टान्त सागर और २. पद—और मिले हैं जिनमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं पाया गया। पहले ग्रंथ में नाना प्रकार के दृष्टान्त देकर ज्ञान, वैराग्य और भक्ति का उपदेश किया गया है। दूसरे में भक्ति विषयक पदों का संग्रह है।

११७ रामदयाल—का प्रस्तुत खोज में 'गोपीचंद' नामक ग्रंथ उपलब्ध हुआ है जिसमें धारा नगरी के राजा गोपीचंद के वैराग्य की कथा का वर्णन है। इस कथा को नाथ लोग इकतारे पर गाते देखे जाते हैं। ग्रंथ अपूर्ण है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता।

ग्रंथकार के परिचय की बात तो दूर रही उसका नाम भी बड़ी खोज के पश्चात् एक चौपाई में मिला जो नीचे दी जाती है:—

गोपीचंद विनती यह कीनी
रामदयाल कान धरि लीनी

यह रामदयाल नाम ग्रंथकार के लिए प्रयुक्त हुआ समझा गया है।

११८ राम जन—का श्री स्वामी रामचरण जी के 'दृष्टान्त सागर' नामक ग्रन्थ के टीकाकार के रूप में इस बार पता चला है। ये स्वामी चरणदास जी के शिष्य थे और उन्हीं के पास शाहपुरा (राजपूताना) में रहते थे। उपर्युक्त टीका इन्होंने सं० १८३९ वि०, सन् १७८२ ई० में रची:—

अठारा सै गुण ताल ए संवत संध्या कही
मघसर सुदि बिसाल टीका पूरण रामजन

'गुणताल' पद गुणतालीस अर्थात् उनतालीस का वाचक माना गया है। यदि गुण और ताल को अलग अलग लेकर विचार किया जाय तो ३ (गुण) और ७ (ताल) अर्थात् ३७ का अंक प्राप्त होता है। उस दशा में रचनाकाल सं० १८३७ वि० या १७८० ई० निर्धारित होता है।

टीका ब्रजभाषा में है जिसमें राजस्थानी की भी कुछ पुट है। हस्तलेख में लिपिकाल नहीं दिया हुआ है।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १५ पर भी किया गया है

११९ राम कवि—ने 'विहारी सतसई' के साढ़े सात सौ दोहों का विषयानुसार क्रम लगाकर संकलन किया है। इन दोहों को निम्नलिखित १३ विषयों के अन्तर्गत विभक्त किया गया है:—

१ श्री कृष्ण, २ नयन, ३ खंडिता, ४ मानवती, ५ सुरति, ६ विरह, ७ लगन ८ युक्ति, ९ मूक प्रश्न, १० केस, ११ श्लेष, १२ अन्योक्ति और १३ प्रास्ताविकः—

कहे क्रस्न जू नैन के साठि पांच घटि ईस
इक षंडित चालीस कहि मानवती है बीस
तीन तीस कहि सुरति के विरहिन इक घटि साठ
लगिन पिचोतर जुक्ति के दो सै उनसठ पाठ
मूक प्रश्न के चार है केस वंरन के आठ
अर लोषक के सैतीस कहि अन्योक्त के अध साठ
प्रस्ताइक छह आगरे चालीस वरनै विप्र
करै अनुक्रम रामजू तातै समझ्यो छिप्र

संकलन कर्त्ता का परिचय तथा काल प्राप्त नहीं होता। अपने कार्य के विषय में ये कहते हैं:—

विप्र विहारी नाम हुव तीसी ष्यांत प्रवीन
तिन कवि साढ़े सात सै दोहा उत्तिम कीन
बीते काल अपार ते भये वित्रक्रम लेष
करे अनुक्रम फेर ते प्रोहत प्रेम विसेष

'प्रोहत' शब्द कदाचित् पुरोहित के लिए प्रयुक्त हुआ है जिसके अनुरोध से कर्त्ता ने इन दोहों का अनुक्रम लगाया। उद्धृत दोहों से एक बात यह भी प्रकट होती है कि प्रस्तुत ग्रंथकार विहारी से बहुत कालोपरान्त हुए। सम्भवतः ये विक्रम की १८ वीं शताब्दी के अन्त और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में वर्तमान रहे होंगे। इसकी पुष्टि ग्रन्थों के लिपिकाल द्वारा भी हो जाती है जो सं० १८९० वि०, सन् १८३३ ई० है। ग्रन्थ की यह प्रति अत्यन्त अशुद्ध लिखी गई है। उदाहरणार्थ एक दोहा नीचे दिया जाता है:—

अपने अंग के जानिकै जोवन नृपति प्रवीन।
रतन नैन निखत कौ बड़ौ इजाफा कीन॥

इसमें रेखांकित शब्दों के ठीक-ठीक रूप 'स्तन मन नैन और नितंब' हैं।

१२० रामलला—का 'रुक्मणी मंगल' नामक एक अपूर्ण ग्रंथ मिला है जिसमें श्री कृष्ण और रुक्मिणी के विवाह का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, लिपिकाल सं० १८६० वि०, सन् १८०५ ई० है। इसका उल्लेख खोज विवरण (सन् १९१२-१४, सं० १४७) में हो चुका है। रचयिता के सम्बन्ध में अन्य कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

१२१ रामनारायण—का रचा हुआ एक 'हिताष्टक' प्राप्त हुआ है। इसमें श्री हितजी की वंदना की गई है। ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८७७ वि०, सन् १८२० ई० है।

रचयिता जैसा कि अष्टक से प्रकट होता है हितानुयायी थे और उनके गुरु का नाम विष्णु सखि था। अन्य परिचय अज्ञात है।

१२२ रामपुरी—एक अपूर्ण ग्रंथ 'जैमुनि अश्वमेध' के रचयिता हैं और खोज में नवोपलब्ध हैं। ग्रन्थ में पांडवों के अश्वमेध का वर्णन किया गया है। इसका रचनाकाल सं० १७५४ वि०, सन् १६९७ ई० है:—

सत्रह सौ चौवन समै कृष्ण पक्ष बुधवार
माघ मास तिहि पंचमी कियौ कथा विस्तार

ग्रन्थ के अपूर्ण होने के कारण लिपिकाल का पता न चल सका। रचयिता के गुरु का नाम जगतमनि था। इसके अतिरिक्त उनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता।

१२३ पं० रामसिंह—के एक ग्रंथ 'पिंगल मंजरी' का विवरण लिया गया है जिसमें दो उल्लास (अध्याय) हैं। प्रथम उल्लास में मंगलाचरण, लघु-दीर्घ अक्षर और मात्रिक छंदों का वर्णन है। दूसरे में वर्ण वृत्तों का उल्लेख है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९१६ वि०, सन् १८५९ है। ग्रन्थ यद्यपि छोटा सा ही है, किन्तु संस्कृत में 'श्रुत बोध' के समान महत्वपूर्ण है। इसको पढ़कर पिंगल विषयक साधारण ज्ञान अच्छी तरह हो सकता है।

रचयिता का उनके नाम के अतिरिक्त और अधिक परिचय नहीं मिलता। उन्होंने अपनी स्त्री के कहने से प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की:—

एक समै एकान्त में तिय पूछयौ कर प्रीत।
परतत रसिक फनिंद की उक्त छन्द की रीत॥

१२४ रसिक—इनका 'ख्याल' नामक एक अपूर्ण ग्रन्थ प्रस्तुत शोध में प्राप्त हुआ है। यह पदों में लिखा गया है जिनका विषय कृष्ण भक्ति है। अपूर्ण होने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल का कोईपता नहीं चलता। रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता संभवतः ये राधावल्लभी सम्प्रदाय के अनुयायी रसिकदास हैं जो पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित हैं।

१२५ महाराजा रसिक मोहन राय या 'रसिक सेवक'—अपने एक ग्रंथ 'सेवक वानी' के साथ प्रथम बार ज्ञात हुए हैं। इनका अन्य नाम 'रसिक सेवक' है। ये माध्व सम्प्रदाय के अनुयायी थे। गुरु का नाम गो० श्री प्रभुचंद्र गोपाल था जिनका उल्लेख 'चंद्र चौरासी' ग्रन्थ के साथ प्रस्तुत विवरण में अन्यत्र (संख्या २४ पर) हो चुका है। 'चन्द्र चौरासी' के अन्त में किसी कृष्णदास की एक कुंडलिया इनके तथा इनके प्रस्तुत ग्रन्थ 'सेवक वानी' के विषय में इस प्रकार है:—

वंग देश राजा रसिक मोहन राय सुनाम
श्री प्रभु चंद्र गोपाल प्रभु पाद शिष्य सुषधाम
पाद शिष्य सुखधाम रची रुचि सेवक वानी
प्रथम चन्द्र सषि रूप सकल ऋतु रीति विधानी
दूजे वरनन वंश माधव आचारज जानी
तीजे नित्य विहार कुंज सहचरी बखानी
जा विधि पाँच पचास करि कुंडलिया सर्वस्वधन
कृष्णदास विश्वास करि पढ़ि पावै श्री कुंजवन

इससे प्रकट होता है कि ये बंगाल के एक राजा थे और सम्प्रदाय में इन्हें चंद्र-सखि का अवतार कहा जाता था। ग्रंथ में माध्व सम्प्रदाय के निम्नलिखित १२ आचार्यों के नामों की वन्दना की गई है:—

१—श्री प्रभु जयदेव गोस्वामी
२—श्री कृष्णदेव जी गोस्वामी
३—श्री गोविन्द देव गोस्वामी
४—श्री मन्मुकुन्द देव गोस्वामी
५—श्री अनन्यदेव गोस्वामी
६—श्री माधव लाल गोस्वामी
७—श्री प्रद्युम्नलाल गोस्वामी
८—श्री मोहनलाल गोस्वामी
९—श्री नन्दगोपाल गोस्वामी
१०—श्री गोपाल जी गोस्वामी

११—श्री रामराय जी गोस्वामी
१२—श्री चंद्र गोपाल गोस्वामी

इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए गए हैं।

श्री प्रभुचन्द्र गोपाल जी श्री प्रभु रामराय जी के (जो अकबर के समकालीन थे, देखिए संख्या २४) सहोदर भाई थे, अतः इस दृष्टि से श्री रसिक मोहन राय जी का काल अनुमानतः अकबर के पश्चात् निश्चित होता है।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १६ पर भी हुआ है।

१२६ रतन—के 'आनन्द लहरी' नामक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। यह प्रारंभ, मध्य तथा अंत के बहुत से पत्रों के लुप्त हो जाने के कारण खंडित है। जो अंश शेष है उसमें प्रथम पत्र की संख्या १६६ है और अन्तिम पत्र की २२५। इस प्रकार यह अनुमान सरलता पूर्वक लगाया जा सकता है कि यह ग्रंथ कितना बड़ा रहा होगा।

इसमें भागवत् दशम् स्कंध की कृष्ण लीलाओं का दोहों में वर्णन किया गया है। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है। इसके खंडित होने के कारण रचनाकाल अथवा लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। रचयिता का भी कोई अधिक परिचय प्राप्त नहीं होता। ये पिछले खोज विवरणों में आए हुए अपने नाम के सभी रचयिताओं से भिन्न जान पड़ते हैं।

१२७ ऋषिकेश (कवि)—के दो ग्रंथों—१ काल ज्ञान और २ स्वरोदय के बिबरण प्रस्तुत शोध में लिए गए हैं। दूसरा ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९०६—८, सं० २२१; १९१७—१९, सं० १६५)। इनके अनुसार ये सन् १७५१ ई० के लगभग आगरा में निवास करते थे।

'काल ज्ञान' फलित ज्योतिष विषयक एक अपूर्ण ग्रंथ है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं पाया गया।

१२८ रूपचंद—के प्रस्तुत शोध में पाँच ग्रंथों का पता लगा है जिनके नाम, १ विन्ती, २ पंच मंगल, ३ तप कल्याणक, ४ ज्ञान कल्याणक, ५ पंच कल्याणक हैं।

'पंच-कल्याणक' का उल्लेख खोज विवरण (सन् १९२६—२८, सं० ४१०) में हो चुका है।

अन्य चार ग्रंथ जिन भगवान् की स्तुति तथा उनके उपदेशों से सम्बन्ध रखते हैं। रचनाकाल और लिपिकाल किसी ग्रंथ में भी नहीं पाया गया। रचयिता के विषय में उनके नाम के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

१२९ हितरूपलालजी—अपने दो ग्रंथों, १ समय प्रबोध और २ छद्मलीला के साथ इस बार विवरण में आए हैं। इनका "मानसिक सेवा" नामक एक अन्य ग्रंथ पहले भी आ चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९१२—१४, संख्या १५८) जिसके अनुसार ये हितानुयायी थे और सं० १७३८ वि०, सन् १६८१ ई० में वर्तमान थे।

प्रस्तुत खोज में मिले उपर्युक्त दो ग्रंथों में से प्रथम ग्रंथ 'समय प्रबोध' में श्रीकृष्ण और राधाजी के समय-समय पर के संयोग शृंगार का वर्णन है। दूसरे ग्रंथ, 'छद्मलीला' में

श्रीकृष्ण का सुनारिन के भेष में बरसाना जाकर श्री राधाजी से मिलने की कथा दी हुई है। यह ग्रंथ अपूर्ण है। रचनाकाल किसी में भी नहीं दिया हुआ है।

लिपिकाल केवल "समय प्रबोध" में है जो सं० १९६७ वि०, सन् १९१० ई० है। काव्य की दृष्टि से दोनों ग्रंथ उत्तम हैं।

१३० **रूपरामजन**—की रची हुई 'गंगा लहरी' का विवरण लिया गया है। इसका रचनाकाल सं० १८०० वि०, सन् १७४३ ई० है:—

संवत्सर भरि वासु चंद्र प्रति ष्युभमाघ शुक्ल ते सरस
बुद्धवार कर गंगा लहरी रूपराम हिय करो निवास

'वासु चंद्र' से अभिप्राय सम्भवतः वसु = ८ और चंद्रमा = १ है। रचयिता का विशेष परिचय अज्ञात है।

१३१ **रूप रसिक**—के 'कृपा कल्प तरु' और 'उत्सव मणि माल' नामक दो ग्रंथों के इस बार खोज में विवरण लिए गए हैं। पहले के आरंभ का एक पत्र खंडित है। इसमें श्री राधा कृष्ण की प्रेम-क्रीड़ाओं और उनके जन्मोत्सवों का वर्णन है। पदों के अतिरिक्त इसमें कवित्त और सवैया भी हैं, अन्त में कुछ रेखते भी हैं जिनमें खड़ी बोली प्रयुक्त हुई है।

'उत्सवमणिमाल' में वसंत, होरी, डोल, अक्षय तृतीया, जानकी जन्म, नरसिंह जन्म, जल विहार, वर्षा ऋतु, पवित्रा, बधाई और जल पूजा आदि विषयों पर अनेक पद रचे गए हैं।

दोनों ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उच्च कोटि के हैं तथा रचयिता के कला-कौशल का पूरा परिचय देते हैं।

इनमें रचयिता ने अपने संबंध में कुछ नहीं लिखा है। परन्तु 'उत्सवमणिमाल' के अन्त में इसी ग्रंथकार द्वारा रचे हुए 'हरी व्यास देव जस अमृत सागर' की सवा छः पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। लिपिकार ने न जाने क्यों इसे अधूरा ही छोड़ दिया है। अस्तु ये पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं:—

श्री गणपतये नमः॥ श्री हरि व्यास देव हरि प्रियाभ्यांनमः॥
माँझ ॥ श्री व्यास हरि प्रिया रूप तिनकी कृपा मनाई।
श्री हरि व्यास देव जस अमृत सागर लिखों बनाई॥
तामैं काव्य छंद नाना विधि सो लहरि समझाई।
युगल रतन दाई यह गाई रूप रसिक मइ भाई॥

इससे स्पष्ट होता है कि इन्होंने 'हरि व्यास देव जस अमृत सागर' भी लिखा है जिसमें अनेक प्रकार के छंदों में कविता की गई है। यह ग्रंथ निम्बार्क सम्प्रदायानुयायी श्री भट्टजी के शिष्य श्री हरि व्यास देवजी के गुणगान करने के लिये लिखा गया जान पड़ता है।

अतः रचयिता निम्बार्क संप्रदाय के थे और श्री हरि व्यास देवजी के ही शिष्य थे। 'वृंदावन माधुरी' के रचयिता के रूप में पिछले एक खोज विवरण में आए रूप रसिक से ये अभिन्न ज्ञात होते हैं (सन् १९०६–८, सं० २२२)।

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या २९ पर भी है।

१३२ साहब राय—ये और इनका ग्रंथ 'रामायण' प्रस्तुत खोज में नवीन ही ज्ञात हुए हैं। ग्रंथ में रामचरित का स्वतंत्र वर्णन हुआ है। इसमें कांड नहीं दिए हुए हैं। यह अन्त से खंडित है जिसके फलस्वरूप रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता न लग सका। काव्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण न होते हुए भी ग्रंथ मनोरंजक है।

रचयिता का जन्म स्थान औध (अवध) था और ये सक्सेना कायस्थ थे। इनके पिता का नाम नारायण दास, पितामह का नाम दयाल दास और परपितामह का नाम रामराय था। ये व्रज के रहने वाले किसी बाबा नंद के शिष्य थे। इनका कहना है कि इन्होंने अपना जन्म स्थान औध कभी नहीं देखा था। जन्म से ही ननसाल में रहते थे जो दक्खिन में थी और जिसका नाम संभवतः मैनिज था। नाना का नाम खेतलदास था:—

अब गुरुदेव नाम गुण कहूँ। जाते प्रगट गुहा सुख लहूँ
बाबानंद तिनको नांवा। जिनको नावं भलो सवठावाँ
अब मैं अपनी बात बताऊँ। सो सब कह प्रतछ सुनाऊँ॥
साहब राय नाम मम जानो। तात नरायण दास बषानो॥
पर अजा दयालदास बड़ भागी। रामराय पर अजा सुभागी॥
तिनके वंस जन्म धर आए। कायथ सगसैने जु कहाये॥
औध देस कहिए भुगावा। साहब नहि देषी वह ठावाँ॥
सदा रहे दषिण कर वासी। भली सभा में बुध प्रगासी॥
मैनिज जो है ननसार हमारी। सो हमको लागै अति प्यारी॥
नना हमार हते बड़भागी। जिन्ह की मति प्रभु सौं लागी॥

दोहा

षेतल दास नना हुते जिन चीन्हे भगवान्।
तिनके नाम प्रताप ते साहब पायो ज्ञान॥

१३३ सहज—के अपूर्ण ग्रंथ 'एकादशी माहात्म्य' के विवरण लिए गए हैं। इनका अधिक परिचय ज्ञात नहीं। ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल सं० १९०० वि०, सन् १८४३ ई० है।

१३४ सालू—की 'वाणी' का प्रस्तुत खोज में विवरण लिया गया है। जिस हस्तलेख में यह 'वाणी' लिपिबद्ध है उसके बीच के संख्या ३ और ४ के दो पत्रे तथा अन्त के संख्या १३ के पश्चात् के पत्रे लुप्त हो गए हैं। अतः रचना का बहुत सा अंश उनके साथ ही नष्ट हुआ समझना चाहिए। जो शेष है वह केवल दो विषयों—'गुरु अंग' और

'स्मरण अंग' में वर्णित है। यद्यपि प्रारंभ में गणेश, सरस्वती और शिवजी की स्तुति की गई है तो भी इन विषयों का विवेचन निर्गुण विचारधारानुकूल हुआ है। अतः यह रचयिता निर्गुण मार्गी संत ज्ञात होता है। इसकी प्रस्तुत वाणी विषय की दृष्टि से उच्चकोटि की है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता न चल सका। प्रत्येक दोहे के आरंभ में 'साल्हू' शब्द आने से वही रचयिता का नाम मान लिया गया है जो उचित जान पड़ता है। इसके अतिरिक्त रचयिता का और कोई परिचय नहीं मिलता। इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १७ पर भी हुआ है।

१३५ सनेहीराम—ने 'लीला' नामक एक ग्रंथ की रचना की है जिसका विवरण प्रस्तुत खोज में लिया गया है। ग्रंथ अपूर्ण है जिसके कारण इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अविदित हैं। इसमें श्रीकृष्ण की दावानलपान और इन्द्रपूजा आदि व्रजलीलाओं का वर्णन है।

रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं।

१३६ शंकराचार्य—के नाम पर 'देवाष्टक' नामक एक ग्रंथ के विवरण प्राप्त हुए हैं। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता।

रचयिता का परिचय भी अज्ञात है।

१३७ सरस्वती—इनके 'रस रूप' नामक ग्रंथ की एक अपूर्ण प्रति के विवरण इस बार खोज में लिए गए हैं। इसके नाम से तो विदित होता है कि इसमें सभी रसों का विवेचन होगा; परन्तु ऐसा न होकर श्रृंगार और नायिका भेद का ही विस्तार पूर्वक वर्णन है। अन्त में हास्य और करुण रस के उदाहरण देकर ग्रंथ को बिना समाप्त किये ही छोड़ दिया है। सम्भवतः अन्य छः रसों के भी उदाहरण दिये रहे होंगे जिनको लिपि-कर्त्ता ने या तो अनिच्छावश नहीं लिखा अथवा महत्वहीन समझकर छोड़ दिया होगा। ग्रंथ का रचनाकाल ज्ञात नहीं है। इसमें १—अलंकार कलानिधि, २—श्रृंगार रस माधुरी, ३—रसराज, ४—श्रृंगार तिलक, ५—सुन्दर श्रृंगार, ६—रसिक प्रिया, ७—रस मंजरी, और ८—रस रत्नावली नामक ग्रंथों से कुछ उद्धरण उदाहरण स्वरूप दिए गए हैं। इन ग्रंथों के रचयिताओं का नामोल्लेख नहीं हुआ है।

इन समस्त ग्रंथों का रचनाकाल ज्ञात नहीं होता। केवल रसराज, सुन्दर श्रृंगार और कवि प्रिया के ही रचनाकाल विदित हैं जिनमें 'रसराज' पीछे की रचना है। इसका काल सं० १७०७ वि०; सन् १६५० ई० है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ रसरूप की रचना संवत् १७०७ वि०, सन् १६५० ई० के पश्चात् हुई होगी। इसका लिपिकाल १८८९ वि०, सन् १८३२ ई० है।

रचयिता का विशेष परिचय प्राप्त नहीं होता। इन्होंने ग्रन्थ में 'राज वर्णन छप्पय' में माधवेस और मधुकर की नरेश के रूप में प्रशंसा की है। जैसेः—

अथ राज वर्णन छप्पै

द्विजनि सुरनि-सुर विधिहि विधि कियहु ईस निवेदन
तब वे प्रभु ढिग जाय द्विजनि की वरनी वेदन
तब प्रभु करुणा सिंधु सकल त्रभुवन के नायक
लिये लछि कौं संग मतौ किय सकल सहायक
तब आनंदइ प्रभु सुरन कौं सुरन द्विजन कौं अभय दिय
भुव भार हरन मंगल करन माधवेस अवतरन लिय

दोहा

संवद अरथ जीरन वसन लषित दुल गुन गाथ
माधव मोच सुदाम सौं कर्‌यौ द्वारका नाथ
गुन रतनाकर नृप मुकुट विलसत मधुकर भूप
निज मत उज्ज्वल करन मैं कियौ ग्रंथ रसरूप

× × +

पलक विछावने करौंगी धनि धनि आजु मधुकरराज
मेरे भवन सिधारेंगे।

यदि माधव और मधुकर को अलग-अलग व्यक्ति मान लें तो सरस्वती के अवश्य ही दो आश्रयदाता प्रकट होते हैं। परन्तु एक ही ग्रंथ दो आश्रयदाताओं के लिये लिखा जाना असंगत जान पड़ता है। अतः दोनों को एक ही व्यक्ति मानना उचित है। यह व्यक्ति जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है एक महाराज थे जिनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। सन् १९०४ ई० के खोज विवरण में संख्या ३९ पर भी एक सरस्वती आया है जो सं० १६८७ वि० के लगभग वर्तमान थे। यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत ग्रंथकार से भिन्न हैं या अभिन्न।

१३८ सर्वसुखदासजी—कृत 'मांझ बत्तीसी' ग्रंथ का इस बार विवरण लिया गया है। इसमें ३२ माँझ छंदों में आचार्य श्री हरिवंश जी का गुणगान किया गया है। इसकी कविता उत्तम है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १९६६ वि०, सन् १९०९ ई० है।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि वह राधावल्लभी सम्प्रदाय का था।

१३९ सेवाराम—के तीन ग्रंथों १—श्री गंगा चरित्र, २—नासकेत पुराण, ३—भागवत दर्शस्कन्ध (भाषा) के विवरण इस बार खोज में लिए गए हैं। इनका विषय इनके नामों से स्पष्ट हो जाता है।

भाषा 'भागवत दर्शस्कंध' जिसकी अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है व्रजभाषा गद्य में है। इसका रचनाकाल और लिपिकाल एक ही है जो सं० १८८० वि०, सन् १८२३ ई० है।

अन्य दो ग्रंथों 'श्री गंगा चरित्र' और 'नासकेत पुराण' में रचनाकाल नहीं दिए गए हैं। लिपिकाल क्रमशः सं० १६२३ वि०, सन् १८६६ ई० और संवत् १९१८ वि०, सन् १८६१ ई० हैं।

रचयिता का ग्रन्थों से कोई परिचय नहीं मिलता। पंडित पन्नालाल जी का, जिनके यहाँ 'श्री गंगाचरित्र' और 'नासकेत पुराण' के विवरण लिए गये हैं, कहना है कि सेवाराम बेरी ग्राम के रहनेवाले थे और अखैराम के वंश में थे। अखैराम का विवरण प्रस्तुत विवरण के प्रारम्भ (संख्या १) में है।

१४० सीधर या श्रीधर—का एक ग्रन्थ 'मानलीला' नाम का मिला है। इसमें श्री राधा जी का मान वर्णित है। इसका रचनाकाल और लिपिकाल दोनों ही अज्ञात हैं।

रचयिता का भी कोई विशेष परिचय नहीं मिलता।

१४१ सीतल—के एक ग्रंथ 'लोलंब राज' की एक अपूर्ण प्रति इस बार खोज में प्राप्त हुई है। यह वैद्यक विषयक रचना है। इसका रचनाकाल संवत् १८४४ वि०, सन् १७८७ ई० है और लिपिकाल सं० १९२७ वि०, सन् १८७० ई० है।

रचयिता का विशेष वृत्त प्राप्त नहीं हुआ। पिछले कुछ खोज विवरणों में 'गुलज़ार चमन' के लेखक एक 'सीतल प्रसाद' या 'सीतल' नाम आया है, किन्तु प्रस्तुत ग्रंथकार से उसकी एकता स्थापित करने के लिए कोई विश्वस्त प्रमाण नहीं है।

१४२ शिवानंद—'त्रिमूर्ति आरती' के रचयिता के रूप में पिछले एक विवरण में उल्लिखित हैं, देखिए खोजविवरण (सन् १९२६–२८, सं० ४४६)।

इस बार इनकी 'अम्बा आरती' की एक अपूर्ण प्रति के विवरण लिए गए हैं जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। रचयिता का अन्य वृत्त भी नहीं मिलता।

१४३ शिवप्रसाद कायस्थ—'पिंगल' या 'छंदसार पिंगल' नामक एक ग्रंथ के साथ इस बार विवरण में आये हैं। ग्रंथ की प्रति अपूर्ण है जिसके कारण रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात नहीं हो सके। इसमें जैसा कि नाम से प्रकट है पिंगल का विषय वर्णित है। इसमें अध्यायों के स्थान पर उल्लासों का प्रयोग हुआ है। प्रस्तुत प्रति में केवल दो से लेकर सात तक उल्लास रह गए हैं। अन्त में कुछ चित्र काव्य के भी नमूने दिये गए हैं।

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिला।

१४४ सोमनाथ—का 'संग्राम दर्पण' नामक स्वरोदय विषयक एक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसका रचनाकाल सं० १७८६ वि०, सन् १७२९ ई० है और लिपिकाल सं० १८१० वि०, सन् १७५३ ई०।

रचयिता पिछले खोज विवरणों में आ चुका है। इस बार इनका 'सुजान विलास' भी मिला है जो सन् १९१७–१९ के खोज विवरण में संख्या १७९ पर उल्लिखित है। प्रस्तुत ग्रंथ में इन्होंने अपना वंश परिचय इस प्रकार दिया है:—

॥ कविकुल वर्णन ॥

मिश्र नरोत्तम महाकवि भए छिरोरा वंस
रामसिंह नृप के गुरु माथुर कुल अवतंस
तिनके पुत्र प्रसिद्ध देवकीनन्दन लाइक
बेटा तिनके चार सदा सबकौं सुषदाइक
मिश्र महामनि और राजाराम सु रिपुघाइक
चारयौं भाषा कवि बहुरि ज्योतिष विद्या में निपुन
नीलकंठ महिमा अधिक प्रगट्यौ अंब प्रसाद गुन ॥९२॥
नीलकंठ जू के तनय तीन सदा बड़ भाग
तिनके कहत सुनाम अब सुनत बढ़ै अनुराग ॥
बड़े उजागर गंगधर सुष संपति के धाम
सबतें छोटो सु लघु मति सोमनाथ इहि नाम ॥
तानें कीनौ सुगम पद यह अगम स्वरोदय भेद
जाकौ बाँचत सुनतहू मनमें रहै न षेद ॥
मिश्र महामनि के तनय माधोराम विचित्र
पुत्र उजागर मिश्र के उदैचंद सुपवित्र ॥
सगुनी माधोराम अरु उदैचंद सुपवित्र
सोमनाथ पुनि तीनहू जानो एक मति मित्र ॥

इसके अनुसार इनके कुल का वंश वृक्ष इस प्रकार हुआ:—
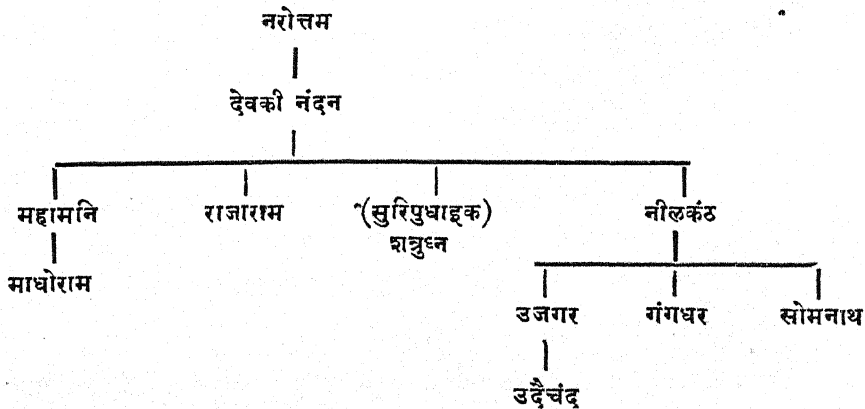
माधोराम, उदैचंद और सोमनाथ तीनों ही आपस में मित्र थे।

१४५ श्रीधर—के एक 'रुपैया-अष्टक' के विवरण लिए गए हैं। इसका विषय जैसा कि नाम से स्पष्ट है रुपैया का महत्व दिखाना है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता रचयिता का भी नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता।

१४६ श्रीकृष्ण कवि या कलानिधि—के एक ग्रंथ 'राम चंद्रोदय (लंका कांड)' का विवरण प्रस्तुत शोध में लिया गया है। इसमें रामायण के लंका कांड का वर्णन है जो वाल्मीकि-रामायण के लंका कांड का अनुवाद है। यह अनुवाद पद्यबद्ध है और काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता। रचयिता के विषय में भी और कुछ ज्ञात नहीं होता। ग्रंथ में किसी देवता की वंदना न करके सीधे विषय का वर्णन प्रारंभ कर दिया गया है। इससे पता चलता है कि कवि ने वाल्मीकि रामायण के समस्त कांडों का अनुवाद किया है जिसमें से प्रस्तुत कांड एक है। इस कथन की पुष्टि मिश्र बंधु विनोद से भी होती है जिसमें कृष्ण भट्ट कलानिधि के बाल और उत्तर कांडों के अनुवादों का उल्लेख है (देखिए मिश्र बंधु विनोद, द्वितीय भाग, संख्या ९६९)। इसके अनुसार कृष्ण भट्ट कलानिधि तैलंग ब्राह्मण थे और सं० १७६९ में वर्तमान थे। प्रस्तुत कांड में रचयिता का परिचय और रचनाकाल न होने का कारण यह हो सकता है कि वह संपूर्ण ग्रंथ के आदि या अंत में दिया गया होगा। पिछले खोज विवरणों में भी तीन कृष्ण कवियों का उल्लेख हुआ है, देखिए खोज विवरण (सन् १९००, सं० ८३; १९०९–११, सं० ३०१)। इनमें से दूसरे में आए हुए कृष्ण कवि से प्रस्तुत ग्रंथकार अभिन्न ज्ञात होते हैं।

रचयिता का उल्लेख विवरण अंश में संख्या ३० पर भी है।

१४७ पंडित श्रीलाल—का रचा हुआ एक ग्रंथ 'भूगोल सार' का विवरण इस बार खोज में लिया गया है। इसका रचनाकाल तो नहीं दिया गया है, किन्तु यह सन् १८६१ में आगरा एहितमाम वजीर खाँ के इलाही छापेखाने कम्मूटोले में छापा गया था। इससे प्रकट होता है कि यह सन् १८६१ से पूर्व रचा गया होगा।

रचयिता दस्तूर तालीम आगरा में अध्यापक थे। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना उसी स्कूल के हेडमास्टर शार्पिली साहब बहादुर के आज्ञानुसार की थी:—

भूगोल सार: यह भूगोलसार भरत खंड के वर्णन में है। श्रीयुत हेडमास्टर शार्पिली साहिब बहादुर दस्तूर तालीम आगरा की आज्ञानुसार पंडित श्रीलाल दस्तूर तालीम आगरा इते दस्तूर तालीम विद्यार्थियों के लिये बनाया आगरा एहितमाम वजीर खाँ के से इलाही छापेखाने कम्मूटोले में छापा गया। सन् १८६१ ई० भूगोलसारः ॥

ग्रंथ के अंत का एक पत्र लुप्त हो गया है। यह विशुद्ध खड़ी बोली ही में लिखा गया है।

१४८ सुखलाल—अपने कुछ ख्याल ग्रंथों के साथ पिछले खोज विवरणों (सन् १९३२–३४, सं० २०८; दिल्ली १९३१, सं० ८५) मेंउल्लिखित है। इस बार इनके ख्याल विषयक दो ग्रंथ और मिले हैं जिनमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए गए हैं।

इनका परिचय अभी तक अज्ञात ही है।

१४९ गो० सुखलाल—अपने ग्रंथ 'दंपति भावामृत' के साथ प्रथम बार ही खोज में विदित हुए हैं।

ग्रंथ में श्री राधावल्लभी संप्रदाय के दृष्टिकोण से श्री वृंदावन और श्री राधाकृष्ण का ध्यान और सेवा करने का ध्यान बतलाया गया है। इसके रचनाकाल का पता नहीं चलता, लिपिकाल संवत् १८६० वि०, सन् १८०३ ई० है।

रचयिता का विशेष पता तो नहीं चलता, किन्तु इनके नाम के साथ 'गोस्वामी' शब्द होने से श्रीराधा वल्लभी संप्रदाय के गुसाइँयों में से जान पड़ते हैं।

१५० श्याम—के श्रीकृष्ण भक्ति संबंधी चार अष्टक मिले हैं। ये चारों ग्रंथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध हैं जो संवत् १७८५ वि०, सन् १७२८ ई० में लिखा गया था। रचनाकाल किसी भी अष्टक में नहीं दिया है। ये अष्टक कविता की दृष्टि से उत्तम हैं।

रचयिता का परिचय प्राप्त नहीं हुआ।

१५१ तापा या तापन—का 'सदा शिवजी को ब्याहलो' नामक एक छोटे से ग्रंथ का बिवरण इस बार लिया गया है। रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता।

१५२ तुकाराम—की एक छोटी सी रचना 'शिवस्तुति' मिली है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं।

१५३ गो०तुलसीदासजी—इस बार खोज में 'हनुमान अष्टक' और 'हनुमानस्तुति' नामक दो छोटे-छोटे ग्रंथों के रचयिता के रूप में विवृत हुए हैं। इनके रचनाकाल का कोई पता नहीं चला। लिपिकाल केवल 'हनुमान अष्टक' में दिया गया है जो संवत् १९२० वि०, सन् १८६३ ई० है।

१५४ तुलसीदास—सुप्रसिद्ध गोस्वामी तुलसीदास से भिन्न 'रामचंद्र औतार' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। विशेष परिचय इनका प्राप्त नहीं हुआ। ग्रंथ में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है।

१५५ उदय—कृत 'ज्ञान वतीसी' नामक एक छोटे से ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसका विषय ज्ञान और उपदेश है। रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल लगभग सं० १७३९ वि०, सन् १६८२ ई० है।

रचयिता का केवल नाम मात्र ज्ञात हुआ है। पिछले खोज विवरण में आए हुए इस नाम के लेखकों से ये भिन्न हैं।

१५६ उदय—के दो ग्रंथ 'अहरावन लीला' और 'चोर-मिहचनी-लीला' के विवरण प्रस्तुत खोज में लिए गए हैं। इनमें से किसी में भी रचनाकाल नहीं दिया गया है। लिपिकाल दोनों का क्रमशः सं० १९१० वि०, सन् १८५३ ई० और सं० १८८५ वि०, सन् १८२८ ई० हैं।

प्रथम ग्रंथ में हनुमान द्वारा अहिरावण के मारे जाने की कथा है तथा दूसरे में राधाकृष्ण की 'चोर मिहचनी' लीला का वर्णन है।

रचयिता अपने कई ग्रंथों के साथ पहले भी विवरण में आ चुका है, देखिए खोज विवरण (सन् १९३२–३४, सं० २२३; १९३५–३७, सं० १०२) ।

१५७ उमा—इनके निर्गुण भक्ति विषयक कुछ पद प्राप्त हुए हैं जिनका प्रस्तुत खोज विवरण में उल्लेख हो रहा है। ये रामसनेही पंथ के प्रवर्त्तक स्वामी रामचरण जी के शिष्य रामजन की शिष्या थीं।

उमा राम जनां के सरणै निरभै पद पाइ रे।

राम जन का उल्लेख प्रस्तुत खोज विवरण में संख्या ११८ पर किया गया है। वे सं० १८३९ वि०, सन् १७८२ में वर्तमान थे। अतः उमा का भी लगभग यही काल मानना उचित है।

प्रस्तुत पद राजस्थानी मिश्रित हिन्दी में हैं और विषय की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं। इनका रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १८ पर भी हुआ है।

१५८ हित उत्तम दास—का रचा हुआ एक ग्रंथ 'अनन्यमाल' इस बार विवरण में आया है। इसमें आचार्य श्री हरिवंश जी और उनके कुछ शिष्यों का जीवन-वृत्त दिया गया है और यह भगवत् मुदित के 'रसिक अनन्य माल' के आधार पर रचा गया है:—

भगवत् मुदित परचई करी। रीति प्रीति पद्धति सब धरी

इसका रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल सं० १९६६ वि०, सन् १९०९ ई० है।

रचयिता ग्रंथ के अनुसार हितानुयायी थे। अन्य वृत्त प्राप्त नहीं।

१५९ वली—के तीन ग्रंथों—१—अद्वैत प्रकाश, २—षट शास्त्र विचार और ३—वस्तु विचार—के विवरण लिए गये हैं।

'अद्वैत-प्रकाश' में ऋग्वेद के 'प्रज्ञानन्द ब्रह्म', यजुर्वेद के 'अहं ब्रह्म' और सामवेद के 'तत्वमसि' पर वेदान्त दर्शनानुसार विचार किया गया है। यह अपूर्ण है।

'षट्-शास्त्र विचार' में षट्दर्शनों का सार वर्णित है। 'वस्तु विचार' में वस्तु के वास्तविक ज्ञान के विषय का वेदान्त मतानुसार प्रतिपादन किया गया है। यह भी अपूर्ण है।

ये तीनों ही रचनाएँ शंकराचार्य के अद्वैत सिद्धान्त के आधारपर निर्मित हुई हैं जैसा वस्तुविचार के निम्नलिखित दोहों से पता चलता है:—

अभिवादन कर ब्रह्म को विरचत वस्तु विचार
कहौ प्रगट हस्तामलक सकल सार को सार
जो पूरव रचना रची सुरवानी बुध वंत
संक्राचारज रिषि सुमत वर्नें भाव अनंत

रचनाकाल और लिपिकाल किसी ग्रंथ में भी नहीं दिए हैं। रचयिता का जीवन वृत्त प्राप्त नहीं हुआ।

विवरण अंश में संख्या १९ पर भी इनका उल्लेख है।

१६० **विनोदीलाल**—के एक ग्रंथ 'नेमनाथ जी को बारा मासो' के विवरण लिए गये हैं ये पिछले कई खोज विवरणों में उल्लिखित लालचंद विनोदी से अभिन्न ज्ञात होते हैं। देखिए, खोज विवरण (सन् १९०२, संख्या ७६; १९१७-१६, संख्या १०६; पं० १९२२-२४, सं० ५९)।

प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १८०६ वि०, सन् १७४६ ई० है।

१६१ **विसनदास**—के एक छोटे से ग्रंथ 'पांडव सत' का विवरण प्रस्तुत शोध में लिया गया है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १९१२ वि०, सन् १८५५ ई० है।

रचयिता का और परिचय नहीं मिलता।

१६२ **विश्वेश्वर कवि**—के तीन ग्रंथों—१—दोहा पचीसी, २—उल्था श्री सत्यनारायण और ३—कृष्ण पदाष्टक के इस बार विवरण लिए गए हैं। इनका कोई वृत्त नहीं मिलता।

प्रथम ग्रंथ में रामभक्ति के पच्चीस दोहों का संग्रह है, दूसरे में श्री सत्यनारायण की कथा का केवल तीन कवित्तों में संक्षिप्त वर्णन है तथा तीसरे में कृष्ण भक्ति सम्बन्धी पदों का संग्रह है। रचनाकाल या लिपिकाल किसी भी ग्रंथ में नहीं दिया हुआ है।

१६३ **वृन्दावन या जन विंदा**—के दो ग्रंथ 'कृष्ण विलास' और 'गोकुल लीला' नाम से मिले हैं। कृष्ण विलास में श्री राधा कृष्ण के मिलन का वर्णन है। और गोकुल लीला में श्री कृष्ण के बाल्यावस्था से लेकर युवावस्था तक के चरित्रों का विवेचन है।

दोनों ही ग्रंथों में रचनाकाल तथा लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

रचयिता का विशेष परिचय नहीं मिला। संभवतः ये सुप्रसिद्ध चाचा वृंदावनदास हैं

१६४ **हितवृन्दावन दास या चाचा वृन्दावन दास**—के 'सुघर सुनारी लीला' और 'अष्टयाम समय प्रबोध' नामक दो ग्रंथों के प्रस्तुत खोज में विवरण लिए गए हैं। 'सुघर सुनारी लीला' में श्री कृष्ण का छद्मवेश धारण कर श्री राधा जी से मिलने का वर्णन है।

'अष्टयाम' में श्री राधा कृष्ण की आठों याम के सेवा विधान का वर्णन है। पहले ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है; परन्तु दूसरे में दिया गया है जो सं० १८३० वि०, सन् १७७३ ई० है :—

अठारह सै तीस विदित नौमी माघ पुनीत
गुरु वासर पुनि कृष्ण पक्षि कथी जुगल रस रीति

लिपिकाल किसी में भी नहीं दिया हुआ है। रचयिता हितानुयायी थे और एक प्रसिद्ध भक्त हो गए हैं। ये पिछले कई खोज विवरणों में आ चुके हैं।

१६५ श्री व्यास जी—की 'रास पंचाध्यायी' इस बार खोज में प्राप्त हुई है। यह पहले भी आ चुकी है, देखिए खोजविवरण (सन् १९१२–१४, सं० १९८)।

प्रस्तुत विवरण में इसका दुबारा उल्लेख करने की इसलिये आवश्यकता समझी गई कि बृन्दावन में श्री व्यास जी के सम्बन्ध में बड़ा मतभेद है। राधावल्लभ संप्रदायवाले इनको हितानुयायी बतलाते हैं और माध्व सम्प्रदायवाले अपनी ओर खींचते हैं।

गो० राधिका किशोर जी का, जो अपने को व्यास जी का वंशज कहते हैं, कहना है कि व्यास जी माध्व संप्रदाय के माननेवाले थे। उन्होंने श्री हितहरिवंशजी की प्रशंसा एक सहृदय भक्त के नाते की है, गुरु के नाते से नहीं।

व्यासजी की रचनाओं से भी ज्ञात होता है कि ये हितानुयायी नहीं थे। यदि ये हितानुयायी होते तो अपने नाम के साथ अपनी रचनाओं में 'हित' शब्द अवश्य जोड़ते जैसा कि उस समय के प्रत्येक हितानुयायी कवियों ने किया है।

दूसरी बात यह है कि व्यास जी के हितानुयायी होने की दशा में उनके वंशजों को भी उन्हीं का अनुकरण कर हितानुयायी होना चाहिए था, परन्तु ऐसा न होकर ये लोग माध्व संप्रदायावलम्बी हैं।

———

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

संख्या १ ए. मुहूर्त चिंतामणि, रचयिता—अखैराम (स्थान–बेरी; जिला, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—३७, आकार—११ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप् छन्द)—८३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवतीनंदन जी (रेवती रमणजी मिश्र), मुकाम—बेरी, डाक०—बरारी, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ मुहूर्त चिंतामणि लिष्यते ॥

॥ दो० ॥

बुद्धिसदन गजवदन वर, वरदायक फल चारि।
अषैराम वंदित चरण, गवरि पुत्र सुष सारि ॥ १ ॥
रतन महूरत चिंतमणि, कछू अरथ मन जोहि।
अषैराम भाषा रची सुनौ सिखि सिष तोहि ॥ २ ॥
उग्र रुद्र मिश्रित नषत, असलेषा गज रोहि।
स्वाति पुनर्वस मृग मघा मूल उत्तरा जोहि ॥ ३ ॥

अंत—करन बेध परीछता भाषै एते भेद।
अषैराम गुरु अस्त भृगु बाल वृद्ध तजि वेद ॥ ६५ ॥
महूर्त चिंतामनि कला भाषा अर्थ वनाइ।
अषैराम वर्णन कियौ जथा बुद्धि बल आय ॥ ६६ ॥
कृष्णपुरी तें निकट है जोजन डेढ़ प्रमान।
दछिन दिसा सुहावनी, वेरी नगर सुथान ॥ ३७ ॥
सौ तौ निजु अस्थान है, अषैराम कौं एह।
भरथ नगर सुषवास है, जानि जोतिसी जेह ॥ ६८ ॥

इति श्री महूर्त चिंतामनि समाप्तोयं ग्रंथ ॥ श्री सम्वत् १९३८ मि० का० सु० ५ भौमवार हस्ताक्षर हरनारायन पठनार्थी रामचन्द्र ॥

विषय—मुहूर्त आदि ज्योतिष विषय वर्णन किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—यह ज्योतिष विषय का ग्रंथ है जिसका रचयिता "अषैराम" है। एक अषैराम 'प्रेम सागर' के रचयिता हैं। अभी यह सन्देह बना हुआ है कि ये रचयिता अलग-अलग हैं या एक ही। ग्रंथ स्वामी पं० रेवतीनन्दन जी से मालूम हुआ कि ये एक ही व्यक्ति हैं। वे इन्हें अपना पुरखा बतलाते हैं। ग्रन्थ का रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल १९३२ वि० है।

संख्या १ बी. लघु जातक, रचयिता—अखैराम (सेथरी, मथुरा मंडल), कागज—देशी, पत्र—५१, आकार—८ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८१२ वि०, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० नंदलाल, स्थान व पो०—वाजना, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।

॥ दोहा ॥

उदय अस्त पुनि जास को, मुनिगण करत प्रणाम ।
संकर जोरत हाथ जिहि, नमो तेज निध नाम ॥ १ ॥
सब सास्त्रन को सार यह 'लघु जातक' शुक माज ।
भाषा कर वरनन कियो, अषैराम द्विज राज ॥ २ ॥
पूर्व सुभासुभ कर्म तैं, प्रघटे दुष सुष जेह ।
अंधकार में दिप ज्यौ प्रघट करै जौ तेह ॥ ३ ॥
मेष आदि दै मीन लौं, राशि चक्र हैं जोय ।
स्थूल शरीर जानो सदा, काल पुरष को सोय ॥ ४ ॥

अंत—ठारह सत बारह जबै, चैत्र मास रविवार ।
द्वितिया तिथि तादिन कियौ अषैराम श्रुतिसार ॥ १४ ॥

इति श्री लघु जातके मिश्र अषैराम विरचितायाँ नष्ट जातक प्रश्न कथनोनाम त्रयोदशोध्याय समाप्तम् ॥ १३ ॥ मिति माघ शुक्ला १४ भौमवासरे संवत् १९२६ श्री शुभमस्तु

विषय—संस्कृत के नष्ट जातक नामक ज्योतिष ग्रंथ का भाषा में पद्यानुवाद ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार अषैराम के संबंध में पहले भी ज्ञात हो चुका है इस बार इनका लघुजातक ग्रंथ का विवरण लिया गया है । ये मथुरा मंडलान्तर्गत सेथरी (?सुबेरी) ग्राम के निवासी गर्गगोत्रिय ब्राह्मण थे और भरतपुर के महाराज सूरजसिंह की सभा में रहते थे । पहले इनके कुछ फुटकर कविता संग्रह और हस्तामलक वेदांत नामक रचनाएँ उपलब्ध हुई थीं । अतः हिन्दी साहित्य में ये कवि, दार्शनिक, वेदान्ती और ज्योतिषी के रूप में दिखाई देते हैं । ग्रंथका रचनाकाल संवत् १८१२ वि० तथा लिपिकाल संवत् १९२६ है ।

संख्या—१ सी. प्रेम रस सागर, रचयिता—अखैराम (बेरी ग्राम, जि०, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार ७ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप् छन्द)—७४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६६ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रेवती रमणजी (रेवती नन्दन मिश्र) , ग्राम—बेरी, डाक०—बरारी, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्रीराधा कृष्णाभ्यां नमः अथ प्रेम रस सागर लिख्यते ॥

दोहा

गुन असंख्य मंगल करन श्री राधा जू को नाम ।
अषैराम के मन बसौ, सदा सहित घन स्याम ॥ १ ॥
एक द्यौसमुष स्वप्न में निकसत राधा नाम ।
अषैराम कौ कृपा करी दई छाप घनस्याम ॥ २ ॥
कह्यौ नाम घनस्याम हँसि तब हिय उपजी आस ।
सुधा सिंधु रस प्रेम कौ तिहि छिन कियौ प्रकाश ॥ ३ ॥

सवैया

प्रेम के जाति न पांति भटू दिन रातिन सूझत प्रेम नवीनौं ।
प्रेम के लाज कौ काज कहा कतला कुलकानि सयांन अधीनौं ॥
जैसे सुधारस सागर तैं घनस्याम जू देवन कौ सुष दीनौं ।
लौं विरहीन कौ रूप सुधारस प्रेम के सागर तैं मथि लीनौं ॥ ४ ॥

दोहा

प्रथम करी घनस्याम जू सौं ब्रज जुवतिन मिलि प्रीति ।
विरह विथा जानी नहीं फिरि ह्वै है विप्रीति ॥ ५ ॥
उरझी सब घनस्याम सौं सुनत वैन की सैन ।
नेह फँसी उकसी नही दुरद पंक जिमि ऐन ॥ ६ ॥
तीन भाँति की नाइका वरन करी इक ठौर ।
सात्विक राजस तामसी जिति बुद्धि की दौर ॥ ७ ॥

अंत—तामसी—स्याम सुजान गये तजि कैं वरनौं अब काहि सनेह भरे से ।
कागद सौक लिषै इततें उततैं सुष पाय दीये न संदेसे ॥
वैरिन स्वास रही घट घेरि कछू अवसेस बसे न बसे से ॥
प्रान बटोहिनि के सजनी अब आय गए दिन दूलह केसे ॥४९॥
गूझाघृत गोकुल हरड कोफी बीरा वेर राई औ भभू वस्त्र आभरन मानियैं ।
करण के विछवा कडेरौ जो गीतांवड़ा सुवीजो टीडी तोलि तोलि याहि याहि तानियैं ।
हरिगुन गाइ गाइ ध्यान हिये लाइ लाइ सज्जनक पाइ पाइ अति सुष मानिए ।
अष्टादश मंजरी करी "अषैराम" नीके निशि दिन गुनि गुनि हिय मांहि आनियै ॥

इति श्री ॥०॥ समत् १८९६ मिति माह वदी १४ रविवार सेस दसषत लाला वसंत के वेरी नग्र मध्ये ॥

विषय—सात्विकी, राजसी तथा तामसी नायिकाओं का कृष्ण विरह वर्णन किया गया है । यह विरह वर्णन बहुत ही करुणोत्पादक है ।

विशेष ज्ञातव्य—श्रृंगार रस के विषय पर यह उच्च कोटि की रचना है । इसके

रचयिता अखैराम हैं जिनके विषय में पूरा वर्णन 'हरिनाम कृत गोवर्धन लीला' वाले विवरण पत्र में किया गया है।

रचनाकाल ग्रंथ में नहीं दिया हुआ है। लिपिकाल संवत् १८९६ वि० है।

संख्या १ डी. कृष्ण चंद्रिका, रचयिता—अखैराम (स्थान, बेरी; जिला, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—१७५, आकार—१२३/४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८५०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८३ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० पन्नालालजी, ग्राम—कठैला, पो०—श्री बलदेव, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गुरभ्यौनमः श्री सरस्वत्वैनमः अथ कृष्णचंद्रिका लिष्यते।

दोहा

प्रथम आदि भागवत में लिष्यौ मंगलाचरण।
पूर्न ब्रह्म परमात्मा ताही की निजु सरण॥ १॥
जै जै आनंदघन सुषदायक प्रभुएव।
विघन हरण मंगल करण गिरिधर श्रीहरदेव॥ २॥
अहो देवि श्रीसारदे सिद्धि वुद्धि दै मात।
'अषैराम' गुण गनन कौं हरि जस कहत न अघात॥ ३॥
एक रदन गज वदन तुव हो गणपति गणराइ।
'अषैराम' हरि भजन तैं कीजौ आनि सहाइ॥ ४॥

अथ कथा प्रथम स्कंध प्रारंभ

जाके अन्वय इतर तें जनम आदि संसार।
ऐसे पूरन ब्रह्म कौं ध्यान हृदय आधार॥ ५॥
ज्यौं जल कूल मरीचिका रविके तेज प्रकास।
झूंठी सौं साँची कहैं मिटै न भ्रम आभास॥ ६॥
ऐसी झूंठी सृष्टि में भूलि रहौ मति कोइ।
साचे श्री बृजराज कौ ध्यान धरतु सब कोइ॥ ७॥

मध्य—

अथ श्री कृष्ण जू की जन्म वधाई

सवैया

आठहू सिद्धि नऊ निधि चौसठि आनि कला विकला छवि छाई।
हीरन की नग लालन की मणिमालनि को वरषा वरषाई।
देव सिहात गुनी विहसात सुजाचिक जात उछीरन पाई।
गोकुल चंद कै चंद भयौ 'अषैराम' कहै चिरुजीवो कन्हाई॥४॥

वृंदावन प्रकास बर्नन

कवित्त

चपला असंख है कि सूर चंद संख है
कि तेज पुंज पंख है कि पावक की जाल है ।
रतनन की पाँति है कि चुंनिनि की भाँति है
कि कंचन की कांति है कि पंचन की झाल है ।
मणि है कि माणिक है मोती बनैं वानिक है
जटित सोपानिक है जानिक निहाल है ।
हीरा है कि लाल है कि पन्नग पराग है
कि मर्कित वराल है कि राजत मराल है ॥ २ ॥

अथ कृष्ण राधिका को विवाह वर्णन

कवित

भई व्याह स्यामा स्याम स्यामा जू उछाह भरे ढरे सुरलोक तैं विरंचि सुष पाइकैं ।
कोरि तेतीस मिलि सुरनि समाज कीनैं गावत बजावत अनेक छवि छाइकैं ।
हीरा मोती लाल मणिमाणिक जटित जाल मंडल विसाल रच्यौ मंडफ सचायकैं ।
मनिनि की वैंदी चारयौं वेद पढ़ि ब्रह्माजू नैंदीनी गाँठि जोरि 'अषैराम' सरसाइकैं ॥६॥
विधि की विधानी लाई कोटिक सयानी साथ भवकी भवानी सषी कोरिकसौं आई हैं ।
सची महारानी कोरि कोरि सुरभामिनि लै दामिनीसी रमकि झमकि सरसाई है ।
धाय धाय सकल जुवति लोक पालनु की गाइ गाइ प्यारी जू की चोटी लै बनाई है ।
कोकिला कलापी कीर सारिका सरस गीत भमर गुंजार 'अषैराम' छवि छाई है ।
भूषण बसन पहराये लै विधरनी जू ने केसरि मिलाइ अंग चंदन लगाये हैं ।
नाग दुहितानि मिलि केसनि सिंगार कीनैं कुसुम कलित माल लाल ललिचाये हैं ।
न्हैंनो न्हैंनो अंजन सुखंजन से नैननु मैं सची नै सचाई 'अषैराम' सरसाये हैं ।

अंत—

प्यारी की कटि वर्णन

चंद की कलासी विकलासीहू न जानी जाइ सिरस के फूल मकरंद हूते नेरी है ।
रूप की सी क्यारी माँझ तिल कौसौ अंकुर कि रेती कौ कनूका केती छविकी सी ढेरी है ।
तिनुका तगासी तूमी याके तार हू तैं छीन वीनि वीनि सोभा सव तैही आनि घेरी है ।
एरी वृषभान की किसोरी यह जंत्र है कि पिय मन मोहिबेकी षीन कटि तेरी है ॥१४॥

॥ कुच वर्णन ॥

जोवन जंजीर जरिदीनै सरकैं न कहूँ तौऊ उठि उँचे अनी पैनी करि देत हठि ।
किधौं रूपसागर कौ सार मथि कीनो गोल बैठै उभै देह धरैं ईस भेस लेत हठि ।
कुंद कलधूत के से गुछहून कहे जात काम के से वटा से कसे षेत हठि ।
एरि प्राण प्यारी भूलि षोलै न उरोजनि कौं जौन परैं फंद तौ निकंद करै चेत हठि ॥१८॥

× × ×

॥ संपूर्ण मूर्ति वर्णन ॥

तारिका सीराजति तरैयनि के संगनि मैं चंद्रिका सीराजति छवीले संग चंद कैं।
आरति मिटाइवे कौं ओषधि लता है किधौं दीपकीसी जोति कामधाम नंदनंद कैं।
दामिनी सी आइ दमकति घनस्याम अंग फूलि वेलि चढ़ति तमाल सुषकंद कैं।
सोनेंकी सलाका किधौं सरदकी राका प्यारी वसौ उर आनि 'अषैराम' मतिमंद कैं ॥५९॥

× × ×

निर्माण काल का दोहा

अठारह सै ग्यारह गनौं संवत्सर रविवार।
कातिक सुदि की द्वादसी रच्यौं ग्रंथ विस्तारि ॥६२॥

× × ×

॥ अथ कृष्ण जू को प्रिया जू कौ सदृस रूप वर्णन ॥

चंद्र जो वताऊँ तौ पै लगत कलंक वाहि कहौं कल्पतरु तौपै तरुन निरंदसौ।
घन जो वताऊँ तौपै उडत अकास जाइ अलि जो वताऊँ फंस्यौ वारिज में मंद सौ।
कहिये अनंग वाकौ वसिवौ कुसंग वास कमल वताऊँ तौपै कंटक को कंद सौ।
नष सष रूप कौ कहाँ लौ 'अषैराम' कहै कृष्ण मुष चंद्र प्यारी तेरे मुखचंद्र सौं ॥६५॥

गोपी विरह वर्णन ग्रीषम रितु

प्रलै के कृसान लै प्रचंड मारतंड धायौ करी षंड षंड लै सुहाग पाक पेझौ हम।
झरि झरि झांकैं चहूं घातैं देह दाहियत मरि मरि जीवति हैं करिकैं समेझौ हम।
विरह के भारन सौं दुष के पहारन सौं ऊधौं नैन धारनि सौं कीनौं कूप सेझौ हम।
ग्रीषम के वीच पंच भीषम से वीतैं द्यौस कीनी 'अषैराम' दिन रैनि काम वेझौ हम ॥१२॥

× × ×

॥ सुदामा चरित्र वर्णन ॥ ब्राह्मणी की पति सौं करुणा ॥

॥ कवित चौतीसा ॥

इक दिन लसि लसि कैं पिय हिय वसि वसि कैं विपति सौं फंसि फंसि कैं हंसि हंसि कहति भई।
ऐहो पिय परि परिकैं दारिद सौं लरि लरि कैं देह सब गरि गरि कैं झरि झरि वहति भई।
चातक लौं चकि चकि कैं रैन दिन जकि जकिकैं हरि हरि वकि वकि कैं सांसति सहति भई।
'अषैराम' लटि लटि कैं उदरनि कटि-कटि कैं चीर तन छटि छटि कैं घटि घटि रहति भई ॥३॥

× × ×

अथ सुदामापुर की सोभा वर्णन

एरे मन मेरे यह नगर हमारौं नांहीं उँचे उँचे सदन गिरिवर हूते भारे हैं।
किधौं आइ निकसे दिनेसनि के देस हम किधौं दामिनी के यै समूह मतवारे हैं।
किधौं उडगण लियैं वसत उडुराज यहाँ किधौं काहू भूत नै मरन फंद पारे हैं।
किधौं 'अषैराम' आजु सुरपुर पधारे हम किधौं फेरि भूलैं द्वारिका ही पगधारे हैं ॥ ८ ॥

× × ×

आह्वांन करि इंद्र कौ सहित बुलायौ नाग।
गिरे उभय गादी सहित सकल लोग थर थाग ॥३३॥
तब ब्रह्मा ने बृहस्पति भेजि दिए तत्काल।
ब्रह्म ग्यान विज्ञान करि समझायौ भुवपाल ॥३४॥
सर्प सत्र पूरन कियौ लियौ ... ...

अपूर्ण

विषय—भागवत का हिन्दी में पद्यानुवाद।

रचनाकाल का वर्णन

अठारह सै ग्यारह गिनौ संवत्सर रविवार।
कातिक सुदि की द्वादसी रच्यौ ग्रंथ विस्तारि ॥६३॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ रचयिता का नाम अषैराम है। ग्रंथ स्वामी के कथनानुसार ये उनके पूर्वज थे और बेरी ग्राम में रहते थे। एक अषैराम पहले भी विदित हुए हैं जो भरतपुर महाराज के दरबार में रहते थे। ये दोनों एक ही हैं या अलग २ यह नहीं कहा जा सकता। दरबार में रहने वाले अषैराम ने अपने कुल और समय का भी वर्णन किया है। ग्रंथ स्वामी का यह भी कहना है कि उनके पूर्वज अषैराम ने भरतपुर और ग्वालियर में अच्छी ख्याति प्राप्त की थी। ग्वालियर से तो उन्हें बेरी ग्राम में स्थित बलदाऊजी के मंदिर के लिए एक अच्छी पूंजी सालाना मिलने लगी थी जो घटती २ अबभी ८) रु० माहवार के रूप में मिलती है। ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १८११ वि० है और लिपिकाल संवत् १८८३ वि०। ग्रंथ भागवत का बहुत संक्षिप्त रूप है, किंतु इसमें कृष्ण चरित्र अत्यंत विस्तार से दिया है। उसके अंतर्गत गोलोक वर्णन, श्री राधा और कृष्ण का विवाह वर्णन तथा आध्यात्मिक वृंदावन वर्णन, जो भागवत में नहीं हैं, अन्य पुराणों से लेकर लिखा है। प्रेम का वर्णन बहुत सुंदर किया है जिससे ग्रंथ का महत्व और भी बढ़ गया है। साहित्यिक दृष्टि से ग्रंथ उच्च कोटि का है। सुदामा चरित्र का मार्मिक वर्णन अत्यंत स्वाभाविक ढंग से हुआ है।

संख्या २. संस्कृत के कुछ पद्य खंडों पर सवैये, रचयिता—बालगोविंद, कागज—देशी, पत्र—७, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीमान् पं० श्री कृष्णजी, स्थान—मु० छपैटी, इटावा।

आदि... ... ...

॥ नैष्कर्म्य मप्यच्युत भाव वर्जितम् ॥

निर कर्महि अच्युत भाव विवर्जित ज्ञान निरंजन सोभित नाहीं।
परिपूरन फेर निरंतर कैसें अभद्र महाशय ईश्वर माहीं।
अति सै जो छ कर्म महा अति उत्तम ताहि कियो सुसमर्प्पन नाहीं।
सर्वोतम भावहि ते भजिये नित बाल गुविंद सदा मन माहीं ॥ १ ॥

॥ के यत्पाद पांशु बहु जन्मतः ॥

जाके पद पदम राग अनुराग ते ध्यावै बहु जन्मलो न पावे योग वलते ।
योगी जन यतीजन ज्ञानवान सज्जन धारैं तौऊ न निहारैं कुशल ते ॥
सोई व्रज व्रज वासिन के नेत्र के निकट देश रहत हमेशभाग इनको सुलभते ।
बालगोविंद कहनो कहा है केवल प्रेम भक्ति सार हरी रीझनो न छल ते ॥ ८ ॥

अंत—

॥ तद्दर्शनाह्लाद विधूत हृद्रुजो ॥

शुभ दर्शन मोद विधूत विथा सु मनोरथ ते श्रुति जो इहि पायो ।
कुच कुंकुम अंकित अंचल वाम विछपति नै परिताप न शायो ॥
हस बोल विलोकन लेश प्रदर्श सित भाव मनोहर जो दरसायो ।
इमि गोपिन को अपनाय तिनै तव बालगुविंद सुधार सप्यायो ॥

॥ अक्षरावतां फल मिदंन परं विदामः ॥

अनुरक्त कटाक्ष घटा चितचोर करोर स सेरुह को रसि तानो ।
पशु चारत वेनु वजाय के बालगुविंद सखान के संग सुहानो ॥
व्रजराज कुमार नखांबुजको अवलोकन ही हिय में अनुमानो ।
हम और नहीं कछु जानति है इन आँखिनको फल एकहि जानो ॥ ४ ॥

विषय—संस्कृत के कुछ पद्य खंडों पर सवैयों की रचना की गई है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ कागज के पृथक-पृथक टुकड़ों पर लिखा हुआ मिला है । ग्रंथ कर्ता 'बालगोविंद' का परिचय इसमें कहीं नहीं दिया है । केवल पद्यों में दी गई छाप से ही इनका पता चला है और ज्ञात होता है कि इन्होंने इस प्रकार के पद्य खंडों पर और भी सवैये लिखे होंगे ।

संख्या ३. बालकरामजी के कवित्त, रचयिता—बालकराम, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—७½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९० वि०, प्राप्तिस्थान—बोहरे रोशनलाल, स्थान व पोस्ट—सुरीर, जि०—मथुरा ।

आदि—अथ बालकरामजी का कवित्त मांडया छप्पय छंद ।

कालिह करै सो आज आज सो अवही कीजै ।
छिन भंगर यह देह राम जपि लाहा लीजे ॥
काया कर्म आधीन कालगति जाइ जाणी ।
अध वीचौ ही रहै काम आरतै प्राणी ॥
ऐसी विधि अव जानि जिय सुमिरन सुक्रत कीजियै ।
कह बालकराम सत संगमिलि जन्म सुफल करि लीजिये ॥ १ ॥

मनहर छंद

जैसे वाँझ कामिनी सूकर्त संग बालक न होइ जोयै वाही माँझ दोष है ।
जैसे कोऊ ऊसर में फेरि फेरि वाहो वीज निपजैन षेत तौ क्रसान सो न रोष है ।

जैसे नींव नाग्र कौ वार वार सींचै दूध ऐसे सठ सुर्ता कौ पोष है।
तैसे येक षेचर के कारन है न ज्ञान कहत वालकराम ताकौ नहीं मोष है ॥ २ ॥
यह धर्म अनात्म देह कौ सुनि ज्ञान ग्रंथ वेदांत कौ।
कहि वालकराम भ्रमे नहीं पेषो एक सिद्धांत कौ ॥ ३ ॥

अंत छप्पय

हिंदू तुरकन भूमि उरक (? तुरक) हिंदू नहीं पानी।
हिंदू उरक (? तुरक) न अग्नि समझविन दुषी अज्ञानी।
हिंदू तुरक न पवन तुरक (? तुरक) हिंदू न अकासा।
चंद सूर त्रिपछि दिन राति करै प्रकासा।
अरु एक आत्माश्रम मही हिंदू तुरकन जानिये।
कहि वालकराम पायो मरम वर्णाश्रम भ्रम मानिये ॥२०॥

× × ×

और शेशनाग वैकुंठ लौ अर्ध उर्ध दशहु दिशा।
चेतनि के आधार सव कहि वालकराम व्यापक इशा ॥२२॥

× × ×

ज्ञान भगति वैराग जोग अंग साँषि विचारा।
इशा समझि सरूप भेष पंथ निसतारा।
वर्णाश्रम कुल कर्म जाति को भेद न कोई।
भगति सों मुकति ज्ञान ताकें उर होई।
अरु जोगी जंगम से बड़ा बोध सन्यासी सेष है।
कहि वालकराम हरि भजन विन सवै कपट कौ भेष है ॥५३॥

इति श्री वालकरामजी के कवित्त संपूर्ण समाप्तं ॥ श्री गोपाल जयति संवत् १८९० मिति वैशाख वदी ५

भेंट का कवित्त ॥ छप्पय छंद ॥

स्वामी दादू साध अधि धर्म हृदय धारयौ।
दयासील संतोष गिरा गोविंद उचारयौ।
ज्ञान षडंग गहि तुरत पिसन पंचो मनमारै।
काम क्रोध मद लोभ मोह दल सवै संघारै।
पुनि अंग जोग गोर्ष जती भगति जोग जोगेस्व नव।
ज्ञान ध्यान सुषदेवजी म वालकराम भणि शेसशिव ॥३१॥

विषय—ज्ञान, वैराग्य और भक्ति का उपदेश वर्णन तथा सामाजिक और धार्मिक ढोंगों का खंडन किया गया है। हिंदू मुसलमान एकता पर भी जोर दिया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार कोई वालकराम हैं जिनका कोई विशेष परिचय ज्ञात न हो सका। ये एक अच्छे महात्मा हो गये जान पड़ते हैं। इन्होंने भक्ति को ही एक मात्र

मोक्ष का साधन माना है। कबीर की तरह सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों का खूब खंडन किया है। तिलक, माला तथा मूर्ति पूजा आदि बातों को ढकोसला मात्र बताया है। छप्पय संख्या तीन से ज्ञात होता है कि ये वेदांत की ओर अधिक रुचि रखते थे। हिंदू मुसलमान वैमनस्य से इनको दुख होता था जैसा कि छप्पय संख्या २० से स्पष्ट है। ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८९० वि० है। लिपिकार के हस्तदोष से कविता में बहुत गड़बड़ हो गई है। ग्रंथ विषय की दृष्टि से तो उत्तम है ही; परन्तु काव्य की दृष्टि से भी रोचक है। यह सभा के लिये प्राप्त हो गया है। कविता कवित्त, सवैया, मांड और छप्पय छंदों में की गई है। ३१वें छप्पय में ग्रंथकार ने दादू की विशेष प्रशंसा की है जिससे मालूम होता है कि ये दादू पंथानुयायी थे।

संख्या ४ ए. षट शास्त्र वेद द्वादश महा वाक्य विचार, रचयिता—वनमाली, कागज—देशी, पत्र—२०, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० वृन्दावनजी उपाध्याय, स्थान व पो०—औरैया, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ षट शास्त्र वेद द्वादश महा वाक्य विचार॥
परमात्मा को कीजै पर नाम। जाकी महिमा चिद घन राम॥
चारि वेद षट शास्त्र कहे। अपनी महिमा में निर्मये॥
मीमांसा वैसिक कहिये। पुन्य न्याय पातंजलि लहिये॥
सांख्य और वेदान्त बखाने। षट शास्त्र षट दर्शन जाने॥
शक्ति अनन्त मंत्र अविनासी। वनमाली सोयं पर कासी॥

॥ प्रथम मीमांसा भेद ॥

मीमांसा प्रति पादय कर्म्म। विन कर्मी सब बातें भर्म्म॥
देही बीच करै सो पावै। मीमांसा ऐसे ठहरावै॥
विन बोये फल कैसे पाय। विन पाये कोई न अघाइ॥
सुभ कर्म्मन को सुभ फल लागे। जे नर मूढ़ ते कर्म्मन त्यागे॥
जे नर असुभ कर्म्म लपटाइ। जैमिन कहै अंत पछिताइ॥

॥ द्वितीय वैशेषिक भेद ॥

वैशेषिक शुभ समय बतावै। समय विना कछु हाथ न आवै॥
जैसे कछु बोवे किरसान। समय विना फल होवै आन॥

अंत—अधर स्वाँस सोहं ले आवे। अधः स्वाँस हंसोले गावे॥
जब मन या साधन सो लागे। सहजे विषय वासना भागे॥
महा अपार माह मिलि जाइ। अमन होइ तब मन न रहाइ॥
चिदाकास में पावे आप। भूले आप साथ ही जाप॥
अति रहस्य कहि प्रकट सुनायो। जो गुरु मुख ताके मन भायो॥
सुने सुनाये समझ न परे। जब लों गुरु की सरन न टरे॥

महा दुखित जो रोगी होइ । ओषद वात दीप की कोइ ॥
वात सुने दुष कैसे जाइ । जब लग वह ओषदि नहिं षाइ ॥

× × ×

हिम जाने अन जाने पानी । सार विचार सार मति ज्ञानी ॥
ज्ञान अभिमान उतारे धोइ । सहजानंदे ज्ञानी होइ ॥
जोरि कहै अज्ञानी दुषी । तो ज्ञानो काहे का सुषी ॥
एक येन अद्वैत वषाने । यह नीतो नाहीं कछु माने ॥
केवल अज अक्रिय अविनासी । सोहं वली सर्व पर कासी ॥
दोय सो येक चौपई करी । अर्थ विवेक जानियो सही ॥

॥ इति श्री चारि वेद षट शास्त्र ॥
॥ सारा सार विचार द्वादश ॥
॥ महावाक्य समाप्तं ॥

विषय—षट् शास्त्रों के नाम और व्याख्या सहित उनका पृथक २ अर्थ । षट्शास्त्र एक विचार, चतुर्वेद का नाम तथा प्रज्ञान, आनंद, ब्रह्म, आब्रह्म, ब्रह्म, अस्मि, तत्, त्वं, असि, अयम् , आत्मा और ब्रह्म नामक द्वादश महावाक्यों का व्याख्या सहित अर्थ । विषय वासनादि का त्याग और ज्ञान द्वारा आत्म विचार करना, त्याग, उत्तम विराग पर दृष्टान्त, साधु संग महिमा, गुरु माहात्म्य, अजपाजाप, और सार विचार वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ "वनमाली" नामक किसी सज्जन की रचना है । इसमें केवल एक ही छंद चौपाई का प्रयोग हुआ है । चौपाइयों पर गणना की संख्या नहीं दी गई है । परन्तु रचयिता का कथन है कि उसमें उसने २०१ चौपाइयाँ लिखी हैं । इसमें उसने सर्व प्रथम षट्शास्त्र के नाम और उनके वर्णनीय विषयों की व्याख्या करके चारों वेदों के नाम कथन किये हैं । इन चारों वेदों में क्रमानुसार तीन-तीन महा वाक्य हैं । इस प्रकार समस्त द्वादश महा वाक्यों का विचार ही इसका प्रमुख वर्णनीय विषय है । ग्रंथ के अंत में साधु संग की महिमा एवम् गुरु माहात्म्य पर जोर देकर सार पर विचार करके ग्रंथ समाप्त कर दिया गया है । ग्रंथ का १७ वाँ पत्र लुप्त हो गया है । उसमें 'वनमाली अनभय सोइ जाने', 'वनमाली मति अपनी भाखी' और 'वनमाली क्षन भंग असार' आदि अनेक स्थल पर अपने नाम की छाप दी है । ग्रंथ का रचनाकाल तथा लिपिकाल अविदित हैं और नाम के अतिरिक्त रचयिता के संबंध में भी अधिक कुछ नहीं ज्ञात होता ।

संख्या ४ बी. द्वादश महा वाक्य विचार, रचयिता—वनमाली, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—श्री नागरीप्रचारिणी सभा काशी ।

आदि—श्री किशोरी रमने जयति ॥ षट्शास्त्र वेद द्वादश महा वाक्य विचार ॥
परमात्मा को किजे परनाम । जा की महिमा चिद घन राम ॥
मीमांसा वैसिक कहिये । पुन्य न्याय पातंजलि लहिये ॥

सांख्य और वेदांत वखाने। षटशास्त्र षटदर्शन जाने ॥ ••• •••
शक्ति अनंत मंत्र अविनासी। वनमाली सोयं परकासी ॥

× × ×

जे नर असुभ कर्म लपटाइ। जैमनि कहे अंत पछताइ ॥

अंत— ••• ••• ••• नी ही हय ॥

हिम जाने अंज्ञाने पानी, सार विचार सार मति ज्ञानी ॥
ज्ञान अभिमान उतारे धोइ। सहजानंदे ज्ञानी होइ ॥ ••• •••

× × ×

केवल अज अक्रित अविनासी। सोहं वली सर्व परकासी ॥
दोय सो एक चौपाइ करी, अर्थ विवेक जानियो सही ॥

इति श्री चार वेद षट शास्त्र सारा सार विचार ॥ द्वादश महा वाक्य समाप्तं ॥

विषय—

१—मंगलाचरण, षट्शास्त्र-षट् दर्शनों के नाम, उनके प्रतिपादित विषयों का वर्णन, ग्रंथ का विषय और उसके पढ़ने से लाभ। चतुर्वेद का नाम, समस्त वेदों की मुख दिशाओं का वर्णन, पत्र १ से ४ तक।

२—द्वादश महा वाक्य विचार सिद्धांतों का महत्व वर्णन, प्रज्ञान का अर्थ, आनंद का अर्थ, ब्रह्म का अर्थ, सो पद ब्रह्म का अर्थ (ऋग्वेद के तीनों पदों का अर्थ), पत्र ४ से ६ तक।

३—यजुर्वेद त्रय-पद विस्तार—हों, होता तथा ब्रह्म का अर्थ, अस्मि का अर्थ, पत्र ६ से ८ तक।

४—सामवेद त्रय पद अर्थ—तत्, असि, त्वं पद का अर्थ, पत्र ८ से १० तक।

५—अथर्ववेद संबंधी त्रय पद का अर्थ—'अयं आत्मा ब्रह्म' का अर्थ, पत्र १० से १२ तक।

६—भक्ति का महत्व—राग द्वेषादि का त्याग और वैराग्य का वर्णन, साधु संग महिमा, गुरु का महत्व, आत्मज्ञान का नियम, ज्ञानी और अज्ञानी का भेद, पत्र १२ से १८ तक।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ वनमाली का रचा हुआ है। इसके दूसरे और तीसरे पृष्ठ लुप्त हो गए हैं। ग्रंथ का मुख्य विषय चारों वेदों में कथित द्वादश महा वाक्यों की व्याख्या करना है। इसका विषय वेदांत से संबंध रखता है। रचयिता ने ग्रंथ में कहीं भी अपना विशेष परिचय नहीं दिया है, किंतु इतस्ततः उसका नाम चौपाइयों में अनेक स्थल पर आया है। समस्त ग्रंथ चौपाइयों में लिखा है जिनकी संख्या २०१ है।

संख्या ५. संग्रह, रचयिता—बनारसी (आगरा और खैराबाद), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—१० × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६७० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० देवदत्तजी, स्थान व पोष्ट—सादाबाद, जि०—मथुरा।

आदि—— ... ... अब जो है ।
तोरे घट अंतर घटनायक अद्भुत विरवा सोहै ॥ ५ ॥
ऊँची डाल चेतना उद्धत व ... ... री ।
ममता वात गात नहि परसै छकवि छाह छत नारी ॥ ६ ॥
उहै सुभाउ पाइ पद चंचल ... ...लै ।
कबहूँ घर कबहूँ घर बाहिर सहज सरूप कलोलै ॥ ७ ॥
कबहूँ निज संपति आकर ... ... परषै माया ।
जब तनकों त्योंनार करै तब परै सौतिपर छाया ॥ ८ ॥
तेरे ही एडा हयो आ ... यह चेरी ।
कहै सखी सुनु दीन दयाली यहै हयाली तेरी ॥ ६ ॥

॥ इति प्रहेलिका समाप्त ॥

दोहा——हिय आँगन में पेम तरु सुरति डाल गुन पात ।
मगन रूप ह्वै लहलहे विना दुन्द दुष ... ॥ १० ॥
भरम भाव ग्रीषम गयौ, सरस भूमि चित्त मांहि ।
देह दसा इक सम भई, यहै सोति घर छांह ॥ ११ ॥

अंत——चौदहनेम—विगै दरवत वोलपट, सील सचित्र नहान ।
दिसि अहार षानह पुहप सैन विलेपन जान ॥ २६ ॥
सीलवंत मंडैन तन अधि पद गहै न संत ।
पिता जात न हने पिता सती न मारै कंत ॥ ३० ॥
देव धर्म गुरु ग्रन्थ मत रतन जगत में चारि ।
सांचे लीजहि परषि कै झूठै दीजहिं डारि ॥

अथ वचनिका——एक जीव द्रव्य ताके अनंत गुन अनंत पर्याय......जीव पिंड की अवस्था याही भाँति । अनंत जीव द्रव्य सपिंड रूप जानने । एक जीव द्रव्य अनंत पुद्‌गल द्रव्य करि संयोगित मानने । ताकौ व्यौरौ । एक जीव द्रव्य जा भांति की अवस्था लियें नानाकार रूप परिन में सो भाँति अन्य जीव सों मिलै नहीं । वाकी और भाँति । याही भांति अनंतानंत रूप जीव द्रव्य अनंतानंत स्वरूप अवस्था लियें वर्तहि । काहू जीव द्रव्य के परिनाम । काहू जीव द्रव्य और सूं मिलै नाहीं । यही भांति । एक पुद्गल परवान् । एक समय मांहि या भाँति की अवस्था धरै । सो अवस्था अन्य पुद्गल परवान् द्रव्य सौं मिलै नांहीं । अनादिकाल के तामें विशेष इतनो जु जीव द्रव्य एक पुद्गल परवान् द्रव्य अनंतानंत चलाचल रूप आगमन-गमन रूप अनंताकार परन मन रूप वंध मुक्ति शक्ति लिएं वर्तहिं ।

राग रामकली

मगन होइ आराधो साधो ।......प्रभु ऐसा ।
जहाँ-जहाँ जिस रस में राचे तहाँ तहाँ तिसमेसा ॥ १ ॥ सा० ॥

वह अपार ज्यों रतन अमोलिक बुध विवेक ज्यों पैसा।
कलपित बचन विलास बनारसि वह जैसा का तैसा॥

× × ×

विषय—नाना विषयों पर कविताएँ तथा वचन (गद्य में) लिखे गये हैं। ये विषय नीचे दिये जाते हैं:—

१—प्रहेलिका, कहरानामा की चाली प्रश्नोत्तर दशा, प्रश्नोत्तर माल, पत्र ५४—५५।
२—अवस्थाष्टक, षट् दर्शनाष्टक, ... पत्र ५५।
३—चार वर्ण दोहा, अजितनाथ के छंद, श्री शान्तिनाथ के छन्द तथा त्रिभंगी, नवसेना विधान, पत्र ५६–५७।
४—मिथ्यात्व वानी, प्रस्ताविक कर्म, चौदह विद्या, छत्तीस पौन, गोरख वचनिका, सप्त मिथ्यात्व दशा, पत्र ५८–६१।
५—वैद्य, ज्योतिषी, वैष्णव के लक्षण, मुसलमान के लक्षण, गब्बर के नाम, हिन्दू मुसलमान एकता और उपदेश, चौदह नेम, पत्र, ६२ से ६३ तक।
६—बचनिका, निश्चय व्यवहार का विवरण, आगम, आध्यात्म स्वरूप वर्णन, निमित्त उपादान, राग, जिन प्रतिमा स्तुति, मूढ़ शिक्षा, रामायण का आध्यात्मिक वर्णन, परमार्थ हिंडोलना तथा प्रस्ताव, पत्र ६३ से ७४ तक।

ग्रंथकार का समय:—वरनयरि षैराबाद मंडल भविय जन मन रंजनी। सोल सै सत्तरि समय आसुनिमास सितपाषि वारसी। वीनवै वैकर जोरि सेवक सिरीमाल बनारसी॥ ५॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अत्यन्त जीर्ण शीर्ण और खंडितावस्था में है। आदि अन्त और मध्य के पत्रे खंडित हैं। ५६वें पत्र में अजित नाथ जी के छन्द के अंत में १६७० वि० सं० दिया हुआ है। ग्रंथकार प्रसिद्ध जैन लेखक बनारसीदास हैं, जो आगरे में रहते थे। इन्होंने उपर्युक्त संवत् के साथ खैराबाद नगर का नाम भी दिया है। ग्रंथ के देखने से इनका पाण्डित्य प्रदर्शित होता है। कबीर आदि की तरह वास्तविक सत्य की खोज में ये भी प्रयत्नशील रहा करते थे। इनका गद्य प्राचीन शैली का द्योतक है। इसमें खड़ी बोली के मुहावरे भी आये हैं यथा, 'जैसा का तैसा' कुछ पदों के देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि अन्य कवियों की रचनाएँ भी इसमें संगृहीत हैं, किन्तु विचार करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि अन्य कवियों के मतों को कवि ने ही उनके नामों के साथ प्रदर्शित किया है। ग्रन्थ सभा को प्राप्त हो चुका है।

संख्या ६. नरसी की हुंडी, रचयिता—बसंत कवि, कागज—देशी, पत्र—१, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० होरीलाल जी शर्मा, स्थान—दिहुली, पो०—वरनाहल, जिला—मैनपुरी।

आदि— ... ... आसन्हाना कर में ग्वेठडि डाल वजा ॥ २ ॥ ग्वें सिव हे सिव हें से ॥ राजन रासिकों तीहरे काजा मोई और कछूना चाहिये मो राधा कृष्ण मिलाये ॥ ३ ॥ धनि नारासि बूधि तिहारि तुम त्रास मगों आती भरि ॥ जाहा कैहे ता बासंत सुनो म्हाजी तीहरे चरन कमाल वालि हारि जी ॥ ४ ॥ अथ सोरठी सुनों मेरि वेटी तुमने षोटी वात विचारी हें ॥ येक पलक में सवा कक्ष करि है ॥ सामलिया गिरधारी हें ॥

अंत—अथ सोरठि—कगद म्हारे आयोक्षे जि समल सहा ॥ टेक ॥ थेई म्हारे मया थेई म्हारे पुजि थेई करे नीरावारा ॥ १ ॥ ससु ननादा दोरनी जीठनि सावा मिली दियों लीपावाय ऊनाकूं दोस कए को दिजें पायोंक्षे मोटो साहा ॥ २ ॥ × × ×

विषय—नरसी की हुण्डी का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ खण्डितावस्था में प्राप्त हुआ है । इसके बहुत से पत्रे नष्ट हो गए हैं । यह देशी कागज पर केवल एक ओर लिखा हुआ है । ऐसे केवल चार पत्रे प्राप्त हुए हैं । यह किन्हीं वासन्त नामक कवि का रचा हुआ है । कवि का विशेष परिचय ज्ञात नहीं हो सका । केवल छाप से उसका नाम विदित हुआ है । ग्रंथ सोरठी और जै जै वंती गीतों में रचा गया है । इसके प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल एवं लिपिकाल नहीं दिए हैं ।

संख्या ७ ए. सगुन विचार, रचयिता—भडली, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हरिमोहन लाल वर्मा बी० ए० साहित्य-रत्न, बड़ा बाजार, दतिया (आर्यभाषा पुस्तकालय के लिये प्रेषित)।

आदि—श्री गनेसाय नमः अथ भडली कृत सगुन ॥ प्रथम छींक विचार ॥ चौपही ॥ प्रथमहु भाषा छींक विचार ॥ सकल सुभासुभ मत अनसार ॥ छींक पीठ की कुसल उचारै ॥ बाईं कारज सबै समारै । सनमुख छींक लराइ मासै । छींक दाहिनी द्रव्य विनासै ॥

अंत—मघा मूल अनुराधा ऐवा ॥ पुष्य पुनर्वस जो सत देवा ।
हाहाकार मचै वृह मंडा ॥ भडल पर है काल प्रचंडा ॥ १८३ ॥ छंद ॥
सनचक्कर की सुनियै वाता ॥ मेषरास कीजै गुजराता ॥
वृष में करै निरोधा चार ॥ भूवै आसू औ गिरनार ॥
मिथुनो पिंगल अर मुलतान ॥ कर्क कासमीर और षु... × × ×

विषय—छींक और राशि के विषय में विचार ।

विशेष ज्ञातव्य—ज्योतिष विषय को सर्व साधारण को ग्राह्य करानेवाले एवं सरल सुबोध शैली में लिखे हुए ग्रंथों का प्रायः अभाव ही है। प्रस्तुत ग्रंथ इसी ओर एक प्रयत्न है ।

संख्या ७ बी. भड्डली सगुनावली, रचयिता—भड्डली, कागज—आधुनिक पीला, पत्र—२३, आकार—९ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२२, पद्य, रूप—प्राचीन, पूर्ण, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—चौधरी जुगुल किशोर, ग्राम—करहला, पो०—वरसाना, जि० —मथुरा ।

आदि—

॥ अथ स्वान विचार ॥

उठा दषिन पग ते स्वान दखिन अंगषुजावही ।
नैन कूषि कर कान, रिधि बृद्धि जइ सुष करै ॥ १ ॥

× × ×

सकुन सुभा सुभ जानि, निकट होय तो निकट फल ।
दूरिसों दूरि वषानि, कहै 'भड्डली' सहदेव जू ॥३२॥

सकुन वासौ—आदितवार चमारघर, ससि दिन नाई वास ।
मंगल दिन काछी घराँ, बुध दिन रजि कनि वास ॥
गुरु दिन ब्राह्मन के वसैं भिरग दिन वइस के थान ॥
सनि दिन वैस्या के भमन वास सकुन को जानि ॥३६॥
दोऊ सुभ मिलैं महा सुभ भाई, दोऊ असुभ महा दुषदाई ॥
सुभ असुभ मिलि मधिम नाषें, सकुनी ज्यों विचार मन राषें ॥४०॥

इति श्री सहदेव भड्डली कृत सकुन विचार ही

॥ छिपकली सकुन विचार ॥

अंत—जुगल जांध पर आव जो परई । धन गुन सकल मनोरथ भरई ॥
परै जांध नर होय निरोगी । पांव परै तन जीव वियोगी ॥
या विधि पली सरिर विचार । कहै भड्डली जोतिष सार ॥
इति भड्डली कृत सकुनावली संपूर्ण ॥

विषय—यात्रा के अवसर पर शुभाशुभ शकुनों का विचार ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ में तीन व्यक्तियों की रचनाएँ हैं—१ सहदेव, २ भांडारिषी और ३ भड्डली । भांडारिषी के नाम केवल एक दो ही छंद हैं । सहदेव के कुछ अधिक हैं और भड्डली के सबसे अधिक । ये नाम सब एक ही व्यक्ति के हैं या अलग-अलग व्यक्तियों के, यह नहीं कहा जा सकता । एक स्थान में एक शब्द आया है । "भड्डली सहदेव जू" इससे दोनों एक ही हैं, ऐसा विदित नहीं होता । रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं ।

संख्या ८ ए. श्री चूनरी, रचयिता— भगौतीदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—९½ × ४¼ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८० वि०, प्राप्ति स्थान—पं० वल्लभरामजी, ग्राम व पोष्ट—मगोरा, जि०—मथुरा ।

आदि—आदि जिनेसर वांदी पइं मण वय काइ त्रिसुद्धि हो ।
सारद पद प्रणमूं सदा उपजै निर्मल बुद्धि हो ।
मेरी सील सुरंगी चूंनड़ी ॥ १ ॥

तुम्ह जिन वर देहि रंगाइ हो विनवइ सषी पिया सिव सुंदरी।
अरुण अनुपम माल हो मेरी भव जल तारण चूंनड़ी ॥ २ ॥
समकित वस्त्र बिसाहिले ज्ञान सलिल संगि सेइ हो।
मल पचीस उतारि कैं दिढिपन साजी देइ जी ॥ मेरी० ३ ॥
देस दया गहि पुरभला जिण सासण धर्म सुजाण हो।
रंग रंगीले छी पिया तिहाँ चारित वसैं सुजाण हो।
मेरी सिधिकधूकी चूंनडी ॥ ४ ॥
दया धर्म के छीं पीया नेम संजम सेल लगाइ हो।
सुमति फटकड़ी पोतीए गुपति सुमांई लाय हो।
मेरी मोह निवारण चूनडी ॥ ५ ॥
पंच महाव्रत कांति सुं हरडै लाइ अनूप हो।
मन मैं दान विछाइ कइ सौंध सुकावहु धूप हो ॥ मेरी ६ ॥

अंत—आकिंचन पुर में षरे अजव फूट सुहाल हो।
क्रीया ते वाणी अमृती बूरा भाव रसाल हो ॥ मेरी० २५ ॥
सीरा सिषिरणि षीर ही दाल भात ए पाँच हो ॥
पंच परम गुरु मंत्र इइ हृदय न टालहु रंच हो ॥ मेरी० २६ ॥
बड़े पकौंड़े सागले काचर पापड़ सोइ हो।
पाँच अणुवृत जांणीए लौंन खटाइ सोइ हो ॥ मे० २७ ॥
दूध दही घीव ईष रस सुनि सिक्षा व्रत चारि हो।
मेवा जाति अनेक जे गुण ग्रंथ विचारि हो ॥ मे० २८ ॥
उपसमरस पाणी चलूं क्षय उपसमरस सींक हो।
क्षायक सुष तंबोल दे छोतिन रहे अलीक हो ॥ मेरी० २९ ॥
वड़ जानी गणधर तहां भले परोसण हार हो।
सिव सुंदरी के व्याह कौं सरस भई ज्यौणार हो ॥ मेरी० ३० ॥
त्रियक श्रेणी मारग भला तिस चाले जिणराय हो।
घातीय कर्म विदारि कैं सिद्धै पहुँचे जाइ हो ॥ मेरी० ३१ ॥
मुक्ति रमणि रंग स्यौं रमैं वसु गुण मंडित सोइ हो।
अनंत चतुष्टय सुष घणां जन्म मरण नहिं होइ हो ॥ मे० ३२ ॥
सहर सुहावै बूडीए भणत भगौतीदास हो।
पढै गुणै सो हृदै धरइ जे गावैं नर नारि हो ॥ मेरी० ३३ ॥
लिषै लिषावै चतुर ते उतरे भव पार हो ॥ मेरी० ३४ ॥
राज वली जहागीर कै फिरइ जगति तस आंण हो।
शशि रस वसु विंदा धरहु संवत सुनहु सुजांण हो ॥ मेरी० ३५ ॥

॥ इति श्री चूनरी समाप्त ॥

विषय—ग्रंथ जैन धर्म से संबन्ध रखता है। इसमें शिव सुन्दरी (जीव) जिन भगवान् के साथ आध्यात्मिक ढंग से अपना विवाह (मिलन) करना चाहती है।

रचनाकाल

राज वली जहागीर कै फिरइं जगति तस आंण हो।
शशि रस वसु विंदा धरहु संवत सुनहु सुजांण हो॥ ३५॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार का नाम भगौतीदास है। ये जहाँगीर बादशाह के समय में वर्तमान थे और जैनमतावलम्बी थे। ग्रंथका रचनाकाल सं० १६८० वि० दिया गया है। लिपिकाल अज्ञात है।

एक भगौतीदास का नाम संक्षिप्त विवरण में भी आया है। उसमें उसका समय सं० १७३२ के लगभग दिया है। इस तरह इन दोनों रचयिताओं के समय में ५२ वर्ष का अंतर पड़ता है।

ग्रंथ विषय की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह सभा के लिये प्राप्त हो चुका है। इसकी भाषा राजस्थानी हिन्दी है। ३३वें छंद के प्रथम चरण में "सहर सुहावे बूड़ीए भणत भगौतीदास हो" आया है। शायद ये भगौतीदास किसी 'बूड़ीए' शहर के रहने वाले थे।

संख्या ८ बी. ब्रह्मविलास, रचयिता—भैया भगौतीदास (आगरा), कागज—देशी, पत्र—२४४, आकार—१२ × ५३/४ इंच, पंक्ति—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३९२, रूप—प्राचीन, पूर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५५ वि०, लिपिकाल—सं० १८५४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, द्वारा—श्री केशवदेव रंजावाले, पुरानी डीग, रियासत—भरतपुर।

आदि—ॐ नमशिद्धेभ्यः अथ वृह्मविलाश लिषेते॥ प्रथम पुन्य पचीसी लिष्यते॥ छप्पै॥

प्रथम प्रणम्य अरिहंत वहुरि श्री शिद्ध नमिज्झै। आचारज उवझाय तासु पद वंदन कीज्झै॥ १॥
साधु सकल गुणवंत संत मुद्रालषि वंदौं। श्रावक प्रतिमा धरण चरण चमि पाय निकरौं॥
सम्यक वंत सुभाव धरि जीव जगत में होहि जित। तितति त्रिकाल वंदित भविक भावसहित शिरनायनित॥ १॥

× × +

आतमा जानना ॥ सवैया ॥३१॥

ज्ञान में है ध्यान में है वचन प्रमाण में है अपने सुथान में है ताहि पहिचानि रे।
उपजै न उपजतु है मूये न मरतु है उपजै न मरण व्यवहार ताहि मानु रे॥
राव सौ न रंक सौ है पानी सौ पंक सौ न है अति ही अटंक सौ है ताहि नीकैं जानु रे॥
अपनौ प्रकास करै अष्टकर्म नास करै ऐसी जाकी रीति भैया ताहि उर आनु रे॥

॥ आतम शिक्षा ॥ सवैया इकतीसा ॥

सेर आध नाज काज आपनौं करै अकाज षोवत समाज सब राजनि ते अधिकैं।
इन्द्र हो तौ चंद्र हो तौ नर नाग इन्द्र हो तौ करत तपस्या जो पैवैठि साधु मधि कैं।
इंद्रनि कौ दम हो तौ दूरि सब तम हो तौ जम कौ नगम हो तौ ज्ञान हो तौ कीध कैं।
लोकालोक भास हो तो अष्ट कर्म नास हो तौ मोष मैं सुवास हो तौ चलतौ जौ सधिकैं ॥१४॥
अंत—अथ ग्रंथ कर्ता का नाम नगर लिख्यते।

जम्बूदीपमै दक्षन भर्त। तामैं आर्य षंड बिसतर्त॥
तहाँ उग्रसेनपुर थान। नगर आगरौ नाम प्रधान॥ १॥
तहाँ वसै जिन धर्मी लोक। पुन्यवन्त वहु गुण के थोक॥
बुद्धिवंत सुभ चर्चा करैं। अषै भंडार धर्म कौ भरैं॥
नरपति तहाँ राजै औरंग। जाकी आज्ञा बहै अभंग॥
इति भीति व्यपै नहीं कोई। यह उपगार नृपति कौ होई॥ ३॥
तहाँ न्याति उत्तम वहु वसै। तामै वोस वाल पुनि लसै॥
तिनके गोत वहुत विस्तार। नाव कहत नहिं आवै पार॥
सबते छोटो गोत प्रसिद्ध। नाव कटारिया रिद्ध समृद्ध॥
दशरथ साह पुन्य के धनी। तिनके रिद्ध बुद्धि अति घनी॥ ५॥
तिनके पुत्र लालजी भये। धर्मवंत गुनगन निर्मये॥
तिनके पुत्र भगौतीदास। जिन यह कीनो ब्रह्म विलास॥ ६॥
जामैं निज आतम की कथा। ब्रह्म विलास नाम है यथा॥
बुद्धिवंत हसियो मति कोय। अलप मती भाषा कवि होय॥ ७॥

× × ×

संवत सत्रह सै पंचावन। ऋतु वसंत वैसाष सुहावन॥ ९॥
सुकल पक्ष तृतिया रविवार। संघ चतुर्विधि के जै कार॥
भैया नाम भगौतीदास। प्रगट होउ तिहि ब्रह्मविलास॥१०॥
वहुत वात कहिये कहा घनी। यह जीव त्रिभुवन कौ धनी॥
प्रगट होई जव केवल ज्ञान। शुद्ध स्वरूप वहै भगवान॥११॥

इति श्री भैया भगौतीदास कृत वृह्म विलास भाषा ग्रंथ संपूर्ण संवत् १८५४ वर्षे॥

विषय—जैन सिद्धान्तानुसार वैराग्य भक्ति और उपदेशादि वर्णन। विषयों का प्रतिपादन वेदांत की शैली पर किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार का नाम भगौतीदास है। इन्हें भैया भगौतीदास भी कहा जाता था। ये शाह औरंगजेब के समय में वर्तमान थे। ग्रंथ का रचनाकाल १७५५ वि० है और लिपिकाल १८५४ वि०। इसमें जैन सिद्धान्तानुसार वैराग्य भक्ति और तत्वों का उपदेश किया गया है जिनका प्रतिपादन वेदांत की शैली पर हुआ है। इससे पता

चलता है कि वेदांत के ब्रह्म ने जैन धर्म को भी प्रभावित किया है। रचयिता ने अपना पूर्ण परिचय दिया है जो इस प्रकार है :—

ये आगरे के निवासी एक वैश्य, वोसवाल जाति के कटरिया गोत्र में दशरथ साह के पौत्र और लालजी के पुत्र थे।

एक बात उल्लेखनीय यह है कि जैन भक्तों ने भी सगुण और निर्गुण भक्तों के अनुसार गीति काव्यों की भी रचनाएँ की हैं।

संख्या ९. अनुभव हुलास, रचयिता—भगवान (सम्भवतः), कागज—प्राचीन देशी, पत्र—१६, आकार—४$\frac{3}{4}$ X ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण(अनुष्टुप्)—१७६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—लाला मानसिंह, (सभा के लिये प्राप्त), स्थान व पोष्ट—व्याना, रियासत—भरतपुर।

आदि—अनुभव हुलास लिष्यते ॥

दोहा—अषंडानंद स्वरूप जो विध्नहरन भजि ताहि।
प्रोक्षपतक्ष द्वै देश तजि, सोइह इह सो आहि ॥ १ ॥
आनन्दघन निति आत्मां, अन सुष दुष की रासि।
काम लुवधि नही लषत सो, फंदत मोह की पासि ॥ २ ॥
विषया नंद सू रत सदा, निजानन्द सुद्धि नांहि।
ते आत्महंता जानि लै तेई नरक बसांहि ॥ ३ ॥
निजानन्द सागर बिना, नैंक न कहूं सिराइ।
सुर्गादिक सुख मरीच जल तिन हित बृथा उपाइ ॥ ४ ॥
काम कर्म प्रतषेद तजि हरि उदेस विधि धारि।
यू अंतः कर्ण सुछ करि, रजल काट निवारि ॥ ५ ॥
सुछ अंतः कर्ण द्रपण मधि निज स्वरूप दरसाइ।
त्रिगुण त्रिपुटी भेद भ्रम लोह समि नही दिषाइ ॥ ६ ॥
रज सोधा ज्यूं रज मही कंचन लेवै बीन।
त्यूं बिस्व व्यापक ब्रह्म है तत बेता सो चीन्ह ॥ ७ ॥

अंत—दृश्य जड मिथ्या असुचि तन भ्रम तैं मान्यौ आय।
साक्षी चेतनि नित शुद्ध सोहं गुरु गमि जाय ॥ १३५ ॥
द्रस्य द्रष्ठा कै आसिरै रजु बिन अहि भ्रम नांहि।
द्रस्य बिन द्रष्टा होत नही बचन थकित भयौ ताहि ॥ १३६ ॥
इह अनुभव हुलास है केवल ब्रह्म विचार।
भोजन कींयें जु त्रिपति की उठत उर उदगार ॥ १३७ ॥

इति श्री अनुभव हुलास संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ ४ ॥

विषय—अनुभव ज्ञान द्वारा ब्रह्म का विचार किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार के नाम का कोई पता नहीं चलता। १२४ वें दोहे में अंत का चरण "यौं भाषै भगवान" है। इससे प्रकट होता है कि भगवान रचयिता का नाम है; किन्तु पूर्व का चरण इसमें सन्देह उत्पन्न करता है:—

अषर्ड ब्रह्म कूं षंडित जे कहिये अज्ञान।
क्षेत्रनि में क्षेत्रज्ञ हूं यौं भाषै भगवान॥

यह 'भगवान' शब्द कृष्ण का वाचक हो सकता है। परन्तु सुप्रसिद्ध परिपाटी उदाहरणों को अलग ही देने की है। यह नाम जो गीता में कहे हुए वाक्य का अर्थ माना जा सकता है अलग कहीं संस्कृत श्लोकों में ही होना चाहिये था। अतः थे रचयिता सुप्रसिद्ध भगवानदास निरंजनी जान पड़ते हैं। ग्रंथ दोहों में है।

संख्या १० ए. जैमिनी अश्वमेध, रचयिता—भगवानदास 'निरंजनी', कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—७३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति—१३, अपूर्ण, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६९, लिपि—नागरी, रूप—प्राचीन, पद्य, रचनाकाल—सं० १७५५, प्राप्तिस्थान—पं० करनसिंह जी हकीम, ग्राम—उदियागढ़ी, पो०—बाजना, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अश्वमेध परब जैमुनि भाष्यत तस्य परिभाषा नाम लिष्यते॥

श्लोक—जयति परासर सूनु सत्यवती नंदनो व्यास।
जस्या कमल गलितंवा ग्यम भजयति॥ १॥

अर्थ दोहा—प्रथम मंगलं चरन करि, कविजन करत वषान।
पारासर अरू सत्यवति, व्यास प्रगट तहाँ जान॥ २॥
सत्रंह सैं पिचावनो दुतिय जेठ परमान।
स्वाति सुकला असुर गुर अरंभ कै दिन जान॥ ५॥
अरजुनदास निरंजनी तास सिष्य भगवान।
पांडव की कीरति प्रगट कहैत बुद्धि उन्मानि॥ ६॥

अंत—जुरासिंध जीत्यो जांवी जाई। तुम्हारी कृपा सवै बनि आई।
अश्वमेध हम करिहै जवै। तुमही पूरन करिहौ सवै॥ ११॥
प्रथम रामजी जग्य करावै। तुम्हारी कृपा हमें जस आवै।
सोई अवैहू है निरधार। तुम्हारौ मंत्र सार कौ सार॥१२॥
हम पै कृपा करत हौ सवै।... ... ...
सरवग्य देव तुमहौ निज ग्यानी। ह्वै है जगि वात हम जानी॥१३॥

× × ×

विषय—जैमुनि पुराण का हिन्दी रूपान्तर किया गया है। रूपान्तर दोहा-चौपाइयों में है।

रचनाकाल

सत्रह सै पिचावनो दुतिय जेठ परमान। स्वाति सुकला असुर गुर अरंभ कै दिन जान ॥

विशेष विवरण—ग्रंथकर्त्ता भगवानदास 'निरंजनी' है। इनके कुछ ग्रंथ पहले भी मिल चुके हैं। ग्रंथ अन्त से खंडित है। रचनाकाल १७५५ वि० है।

संख्या १० बी. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—भगवानदास ब्राह्मण 'निरंजनी', कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—१३ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४२ वि०, लिपिकाल—सं० १८८१ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिवंश लाल जी, ग्राम—आयरा खेड़ा, पोष्ट—राया, जिला—मथुरा।

आदि—सिध श्री गणेसाय नमः ॥ अथ धर्मशास्त्र कार्तिक महात्म लिष्यते भाषा ॥

दोहा—प्रथमहि गुरु गोविंद को, सुमिरन करौं बनाय।
वाकपती गनपति सहित, कविजन भलौ मनाय ॥ १ ॥

× × ×

यह कार्तिक महिमा विपुल, भक्तिधर्म प्रमान।
राम कृष्ण की सुरति सौं प्रगट कियौ भगवान ॥ ३ ॥
सत्रह सै संवत् सर्श बयालीश पुनि मान।
पूस पंचमी सशी सहित आरंभ करन दिन जान ॥ ४ ॥

अंत—ईश्वर वानी वेद है कह्यो भागि भगवान।
पुरान ग्रंथ जो मूल है पुनि गुनतीसऽध्याय ॥
नौसे अरु तेरानवैं भाषा रूपक आय ॥ ५२ ॥

इति श्री पद्म पुराणे कार्तिक महात्मे प्रथुर्नाद संवादे अलक्ष्मी उपाष्याने भगवानदास ब्राह्मण निरंजनी कथिते सकल धर्म निरूपनो नाम गुनतीसमोध्याय ॥ २९ ॥ संवत् १८८१ चैत्र शुदि गुरु वासरे ॥

विषय—कार्तिक माहात्म्य वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार निरंजनी मतानुयायी है। इनका नाम भगवानदास निरंजनी है। ये निर्गुणोपासक होते हुए भी जन साधारण के लिये सगुणोपासना के ग्रंथों का संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद करते थे। इस प्रकार सगुण भक्ति को प्रोत्साहन देते थे। इन लोगों की दृष्टि इस ओर भी थी कि जनता को ही भाषा में उपदेशात्मक साहित्य की रचना हो। इस कारण निर्गुणोपासकों की इस प्रकार की रचनाएँ जनसाधारण के लिये बड़ी उपयोगी हुईं। सहजोबाई के शिष्य करुनानन्द इसी कोटि के लेखक थे जिनका एकादशी माहात्म्य का विवरण पहले आ चुका है।

संख्या ११. प्रश्न ज्ञान, रचयिता—भटोत्पल, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य,

लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६१ वि०, १८०४ ई०, प्राप्ति स्थान—पं० अयोध्या प्रसादजी, स्थान व पोष्ट—भरथना, जिला—इटावा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ प्रश्न ज्ञान लिष्यते ॥

प्रथम रम्य भूमि भाग में ग्रहणि की नक्षत्रनि सहित पवित्र होइकैं पूजा करै ॥ तापीछैं पृष्ण विधान करनो उचित है ॥ पुष्य मणि कनक युक्त फल फूल लैकैं राशि चक्र की अर्चा करि भक्ति तथा विनय संजुक्त प्रश्न करै ॥ उत्तर दाता अद्भुत प्रश्नन की वाटी स्थित पर ध्यान दै कैं तत्काल ताके शुभाशुभ फलनि कौ वर्णन करै ॥ मनसौं प्रीति करि प्रश्न करै ॥ पृष्ण के समय जाजा भाव सों प्रभुता युक्त वस्तुनि कौ दर्शन होइ तैसो ताकौ फलु होइ ॥ गुरु शुक्र बुद्ध आदि के अनुसार हू तैसो फलु कह्यौ जातु है ॥ २ ॥ द्वादश ॥१२॥ सप्त ७ संस्थिता ॥ सौम्य ॥ बृद्धिर्दशम् ॥ चतुर्थ स्थिति तद्वत ॥

अंत—भौम दिवाकर श्रेष्ठ दिवस तापाछैं भृगु औ शशि गुरेग्यासारि तव ॥ सौम्य स्यशनेश्च वषाणि ॥ आधानार्थ प्राप्तौ गमना गमने ॥ पराजये विजये रिपुनाशने च कालं प्रछायं निश्चयं प्रवदेत् ॥ अ क च ट त प ज श वर्गा कवि सित कुज सौम्य जीव शौरीणां ॥ चंद्रस्य च निर्दिष्टा प्रष्णे प्रथमोद्भवः वर्गाः ॥ जाते लग्न जानेते प्रष्ण शुभाशुभ फल कह्यो जातु ॥ वर्ग आदि मध्य पर्गैर्वर्णे प्रष्ण विषमं ॥ राशि लग्नं प्रवदेल्लैषैर्यग्मो कुजग्यजीवानां तसित रवि जय नाहिंन ॥ रवि शशि एक राशि ॥ तासों प्राग्वत्प्रवदेत्प्रष्या समये शुभाशुभं ॥ सर्वकाल के प्रष्ण संबंधी शास्त्रिण को सारलै यह ग्रंथ प्रष्ण ज्ञान भटोत्पलेन शिख्यानुकंश्यारचितं ॥

॥ इति भटोत्पल विरचितं प्रष्ण ज्ञान ॥ समाप्तम् ॥ शुभम् ॥ शुभं भूयात् ॥ लिषितम मिश्र कान्हजी रामनग्र ॥ जलेसर वासी मिती चैत्रवदी ८ शनि ॥ संवत् १८।६१ ॥

याद्दसं पुस्तकं द्रष्टा तद्रसं लिषितं मया ॥
यदि शुद्धिम सुधं वा मम दोसो न दीयते ॥ १ ॥

विषय—प्रश्नों के शुभाशुभ फल-कथन के नियमादि का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ ज्योतिष से संबंध रखता है जिसमें दिन, लग्न, नक्षत्र तथा राशि आदि के विचार से प्रश्नों के उत्तर देने की विधि लिखी गई है । इसके रचयिता के संबन्ध में ग्रंथ के अंत में 'भटोत्पल' का नाम आता है और एक स्थल पर ग्रंथान्त में ही रचयिता "भटोत्पलेन शिष्या रचितं" भी दिया गया है किन्तु यह दोनों ही नाम संस्कृत के मूल ग्रंथ के कर्त्ता के नाम से सम्बन्ध रखते हुए जान पड़ते हैं । ग्रंथ में कहीं-कहीं हिन्दी और कहीं-कहीं संस्कृत की पंक्तियों की पंक्तियाँ चली गई हैं । इससे उसका मूल संस्कृत ही होना अनुमानित है । अक्षर अस्पष्ट और अशुद्ध लिखे रहने के कारण अनेक स्थलों पर उनका समझना भी कठिन होता है ।

संख्या १२ ए. भागवत दशम स्कंध, रचयिता—भीष्म, कागज—देशी, पत्र—११०, आकार—१२ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) —१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१२८,

अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० धर्मानंदजी, मु०—पेलखू, पोष्ट—राल, जिला—मथुरा।

आदि— ... ... ही जगकी कर्म गति जानौ। ऊँच नीच की देह पहिचानौ ॥४५॥
जन्म मरण सत्य कछु नाहीं। सत्य मानयत भ्रम के मांही ॥
जैसे पुरुष सपने की वारा। विविध मनोरथ करै अपारा ॥४६॥
राज मार्ग मैं भूपति देष्यौ। बहुरयौ स्वर्ज निसानतु लेषौ ॥
इंद्र भूति श्रवननि मैं सुनिके। मनसा ध्यान कियौ गुण गुनिकै ॥४७॥

दोहा—अंध भोज के वंस में, उग्रसेन महाराज।
'भीष्म' ताकौ वंदि करि, कंस भौ गयौ राज ॥८२॥

इति श्री मद्भागवते महा पुराणे दशम स्कंधे भीष्म कृत भाषायांप्रथमोध्यायः।

अंत—कौरौ कंस आदि हैं जेता। छिति कौ भार उतारयौ तेता।

दोहा—असुर हते हरि आपही अर्जुन कर करि भूप।
भीषम धर्म वनै जुकरि थरप्यो धर्म अनूप ॥५७॥

इति श्री भागवते महापुराणे दसम स्कंधे द्विजवालक नयनो नाम एक एकननव वतितमो ध्यायः ॥८९॥

॥ शुक्र उवाच ॥

द्वारावती में वसै घनस्याम। सकल संपदा सहित सुषधाम ॥ १ ॥
सोरह सहस एक सत अवला। विलसति श्री हरि संग सुसवला ॥
अष्ट सिद्धि नव निद्धि है जेती। भौन भौन में विराजति तेती ॥ २ ॥
भौन भौन में सरोवरि नीके। प्रफुलित कमल भाम ते जीके ॥

× × ×

विषय—श्रीमद्भागवत दशम स्कंध की कथा का हिंदी में छन्दोबद्ध अनुवाद किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ नष्ट-भ्रष्ट दशा में प्राप्त हुआ है। आदि-अंत-मध्य से खण्डित है। रचयिता का नाम "भीष्म है"। रचना साधारण है। लिपिकर्त्ता ने लिखने में बहुत भूलें की हैं। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या १२ बी. भागवत, रचयिता—भीष्म, कागज—देशी, पत्र—८१९, आकार—१२½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७१९९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८७३ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० पन्नालालजी, स्थान—कठैला, पोष्ट—श्री बलदेवजी, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री सरस्वत्यै नमः श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः ॥
छप्पय छंद—परम ब्रह्म चित्त धारि परम आनंद रूप रस।
करि गुरु लौं निजु ध्यान ज्ञान की जोति होति अस।

संतन कौं कर जौरि रहौं सन्मुष तिहि आगैं।
तन मन वचन प्रणाम करत भय भ्रम सव भागैं।
इहि भांति मंगलाचरण करि भीषम लघुता भाषियौ ॥ १ ॥

× × ×

कर्त्ता की संप्रदा वर्णन—प्रथम अनंतानंद जानि दुतिय भावानंद।
तृतिय सुरसुरीनंद चतुर्थं है जुं सुषानंद॥
पंचम नरहरिनंद षष्ट पद्मावति जानौं।
धना सप्त रैदास अष्ट सैंना नव मानौं॥
दिग सुरसुर एकादस कबीर द्वादस पीपा गुणलये॥
श्री रामानंद भागवत भुव सिषि द्वादस स्कंध भये॥ २ ॥

भाष्य कर्त्ता वंस वर्णनं—भये कबीर कृपातैं नीर जगमध्य उजागर।
नीर दया सौं जंत्रलोक भए गुणके सागर॥
जंत्रलोक कैं ध्यान पीताम्बरदासा।
रामदास गुरु ध्यांण धरि जग भये प्रकासा॥
पुनि दयानंद जिनकैं भये हरीदास सिषितास कौ।
प्रभु स्यामदास उर नित वस्यौ सु भीषम चेरौ तासकौ॥ ३ ॥

अंत—अहो अहो तुलसी कल्याणी। तुम निरषे कहुँ सारंग पानी॥
तुम तौ पूजे हरि के चर्णा। तातें भई जग में अघ हर्ना॥
अहो चमेली सतो गुन झेली। सकल वरन राजति अलवेली॥
करसौं तुम्हें पकरि नंदलाल। कित दुरि रहे बतावहु हाल॥

× × ×

जमुना तीर तरवर हैं जितनें। परमारथ के कारण जितनें॥
तीरथ वासी कठोर जिनि हूजो। नंद कुमार हैं कहु कूजौ॥

× × ×

व्यास देव शुकदेव मुरारी। पिता पुत्र कौं नमनि हमारी॥
जग अजगरनें डस्यौ हो भूप। पल मैं लियौ छुटाय अनूप॥
जो जो जौनि जन्म हूँ पाऊँ। जन्म जन्म हरिदास कहाऊँ॥
जौ पै प्रशण भये जगदीस। क्रपासदा राषौ मम ईस॥२१॥

दोहा—नाम लेत पातक कटैं क्रत प्रनाम दुष हानि।
भीष्म हरि के चरनि कौं नमस्कार उर आंनि॥२२॥
भाषा कृत कीनौं जवै सुरकृत जांन्यौ वंक।
छिमित होहु कवि जन सवै नून अधिक लषि अंक॥२३॥

इति श्री मद्भागवते महापुराणे द्वादस स्कंधे भीष्म कृत भाषायां नाम त्रयोदसो ध्याय॥१३॥ संवत् १८७३ मिति कार्तिक सुदी ७ रविवासरेन्वतायां।

विषय—भागवत का हिन्दी में पद्यानुवाद किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार का नाम भीष्म है। इस रचयिता के नाम से पहले भी भागवत मिल चुके हैं। किन्तु वे सब अधूरे ही प्राप्त हुए हैं। उनसे इनके परिचय के विषय में कुछ विदित नहीं होता। प्रस्तुत भागवत की पूर्ति में केवल पंचम स्कंध नहीं है पर इसके रचयिता के संबन्ध में अनेक बातें ज्ञात हुई हैं जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

गुरु-परंपरा

खेद है ग्रंथ का रचनाकाल अब भी ज्ञात न हो सका। लिपिकाल सं० १८७३ वि० है। दशमस्कंध में रास का वर्णन बहुत ही अच्छा है। इन्होंने रास के अंतर्गत 'तुलसीदास' का भी नामोल्लेख किया है। पता नहीं इस नाम से उनका क्या तात्पर्य था।

संख्या १३ ए. भागवत दशमस्कंध (हरि चरित्र), रचयिता—श्री भोपति कायस्थ (इटावा), कागज—देशी, पत्र—२३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गोस्वामी हित रूपलाल जी, अधिकारी राधावल्लभ मन्दिर, बृन्दावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अति श्री भागवते महापुराने दसम असकन्दे हर चित्रे
भोपत कृतं ब्रिजभाषा लिषते ॥
सुमरूं आदि निरंजन देवा। जिनको देव न जानत भेवा।
जोत सरूप भगवांन विधाता। पुरुष पुराण प्रानन को दाता।
दसम असकंद कथा मन भाई। जामै हरचित्र सुषदाई।

सो अब व्रजभाषा मैं कही। पूरण सुष की साषा लही।

× × ×

॥ असतुत गुरु ॥

अबहुँ गुरु की महिमा कहुँ। जिहि मांथै पूरण पद लहुँ ॥
जिनको "मेघस्याम" सुभ नांम। सुमरत सुनत होत विश्राम ॥
परम प्रवीन पुनीत गुसांई। भगत रीत प्रगटे सब ठांई ॥
तिनके पिता भगत पद पायो। जिन दामोदर नाम धरायो ॥
गंगलभट प्रसिधि वषानै। गुण मंगल सुरगण के जाने ॥
तिनके वंस जनम उन लीनों। वही अंस हर उनकुं दीनो ॥
प्रथम तिलंग देस के वासी। मथुरा वस कैं भगत प्रकासी ॥
हर नागर को नाम सुनावैं। भौ सागर ते पार लगावैं ॥

॥ दोहरा ॥

मेघ स्याम के नाम तैं सुध होत सब काम।
जामै आठो जाम है "भोपत" को विश्राम ॥

वंसावली भोपतराय वरनन

भोपत जिन हर लीला गाई। परम पुनीत सदां सुखदाई ॥
ताहउ नायो "काइथ" जानौं। लेखराज को सुत पहैचानौं ॥
तिनके पिता हरै मन लायौ। वीठलदास नाम जिन पायो ॥
कन्हरदास जो उनके भइया। तिनके मन मैं वस्यौ कन्हीया ॥
जिन ग्रेह करी इटावा माही। रहे आप राजन के पांही ॥
कृष्णदास से सुत जग जानै। जे सब कृष्णदास कर मानैं ॥
कन्हरदास भये बड़भागी। जिनकी मत कन्हर सूं लागी ॥
जिनके वंस जनमधर आयो। भगत अंस मन को अब पायो ॥

॥ दोहा ॥

गुण निधान के प्रेम तैं कीयो वुधि प्रकास।
वहो विधान वानी दई जान आपनों दास ॥

अति श्री भागवते महापुराने दसम असकंदे हरचित्रे राजप्रीछओवाच प्रथम अध्याय ॥ १ ॥

× × ×

अंत—जो नहिं कृपा करत भगवाना। तुम कारन तजिहौं मै प्राना ॥ ३ ॥
जो तुम हो दयाल जगमाहीं। आतमघात करावो नाहीं ॥
कृपासिंधु करुना मन आनो। थोरी लिषियो वोहत करि जानो ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

या विधि पाती बाँच के भोपत प्रभु करतार ।
कुंदन पुर के चलन कौं मन में कीयो विचार ॥

इति श्री भागवते महापुराने दसम असकंदे सुक प्रीछत संवादे रूकमन पाती क्रिसन पास वंचते नाम बावनौ अधियाहि ॥ श्रीराम कृष्णारपनमस्तु ॥ अगुले अधियायि विषै यिह कथत निरूपन होयिगी । श्री क्रिसन जी कुंदनपुर कू ब्रिहमन के साथ जायिगे ॥ श्री रुकमनी जी कौ लावैगै सब राजा न कु जीत कै ॥ इतनी कथा कहीयेगी ॥

विषय—श्री भागवत पुराण का ब्रजभाषा में पद्यानुवाद किया गया है ॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । केवल ५२वें अध्याय तक लिखा गया है जिसमें श्री कृष्ण रुक्मिणि का पत्र पाते हैं । ग्रंथकार ने भ्रमरगीत और रास पंचाध्यायी को बहुत कुछ अपनी कल्पना से लिखा है । भ्रमर-गीत में तो मौलिक परिवर्तन किया गया है । इसमें गोपियाँ उद्धव के पास जाते ही व्यंग्योक्तियाँ सुनाने लगती हैं । उद्धव के मुख से केवल दो चार शब्द ही गोपियों को उपदेश देने के लिये निकलते हैं । फिर सारे प्रसंग भर वह मौन ग्रहण किया हुआ ही दिखाई देता है । रास पंचाध्यायी में राग, रागिनियों और उनके पुत्रों के नाम गिनाए गए हैं ।

ग्रंथकार का नाम भोपति है । ये कायस्थ जाति के थे । पिता का नाम लेखराज और परपितामह का नाम बीठलदास था । बीठलदास जी के भाई का नाम कन्हरदास था जिनके पुत्र का नाम कृष्णदास था । कन्हरदास को कन्हर (?) का मतानुयायी बताया गया है । यह भी कहा गया है कि कन्हर ही भक्तिवश कृष्णदास के रूप में प्रगट हुए । रचयिता ने अपने गुरू का नाम श्री मेघस्याम दिया है जो एक विख्यात वंश में हुए बताए गए हैं । अर्थात् सुप्रसिद्ध श्री गंगल भट्ट के वंश में श्री दामोदर जी हुए जिनके पुत्र श्री मेघस्याम जी हुए । ये तैलंग निवासी थे जहाँ से ये मथुरा आए और भक्त बन गए ।

ग्रंथकाव्य की दृष्टि से उत्तम है । खेद है रचनाकाल तथा लिपिकाल का कोई पता न चल सका; किंतु कागज और लिपि को देखने से हस्तलेख काफी प्राचीन जान पड़ता है । संक्षिप्त विवरण में रचयिता का नाम आया है । उसके अनुसार ये सं० १७७४ के लगभग वर्तमान थे । बाकी परिचय संदेहजनक और अस्पष्ट दिया है । प्रस्तुत प्रति में इनका और इनके गुरू का परिचय स्पष्ट है ।

संख्या १३ बी. भागवत दशमस्कंध, रचयिता—भोपति कवि, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२४, अपूर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—सूरज के रथ में तुरी, कहुधों हैं किहि रंग ।
वनिता सुत उज्जल कहे, गडरु कारे अंग ॥

॥ चौपै ॥

या विधि दुहूँ रार जो वाढ़ी । अैसी होड़ परस्पर बाढ़ी ॥
जिहकौ कह्यौं सांच नहिं होई । वचन हार के दासी होई ॥
गडरू सुतन भेव जव जान्यों । निज माता कौ अति दुष मान्यों ॥
माता तुम कछु भलौ न कीनों । पहले हमैं पूछि नहिं लीनो ॥
कछू उपाई कीजै अव आगे । हम सब जाइ असुन सों लागें ॥
तव वे स्याम दृष्टि में आवें । माता झूठी होन न पावैं ॥
या विधि वचन माइ सों कहे । उहाँ जाइ आपुन लगि रहे ॥
गडरु वनितहि जीति कें, ग्रह कौं गए लिवाइ ।
जाकी रीति अनीति है । तासों कहा वसाइ ॥

॥ चौपै ॥

अैसी भाँति गरुड़ जव जानी । गडरु से बोलत मृदुवानी ॥
मेरी जननि जीति तुम लीनी । प्रगट अनीत रीति है कीनी ॥
तुम कछु कहौ आन सो दीजै । अपनी जननी तब हम लीजै ॥
कही आन अमृत घट दीजै । वनिता सी दासी नहि कीजै ॥
गरुड़ वली ताही छिन धायौ । इक घट अमृत कौ लै आयो ॥

अंत— ॥ दोहा ॥

भोपति प्रभु अति चाइ सौं, भूषन वस्त्र वनाइ ।
गिरि अजान जाने नहीं, कहौ तात समझाइ ॥

॥ चौपई ॥

और जग्य विधि सवै वताऔ । जो तू करौ सुहमैं सिषाऔ ॥
वाल समें मन धरे जु कोई । तब सुधि करै चित्त में सोई ॥
तवै नंद बोले मृदु बानी । सुनो पुत्र सुंदर सुषदानी ॥
इन्द्र हेत वह जग्य जगावें । सर्व दर्व यह ताहि लगावें ॥
ताही ते सुरपति अति हर्षै । वर्षा रुति में हित सों वर्षै ॥
अति सुष देहिं मेह वर्षावें । धेन मनुष्य चेंन सब पावैं ॥
यही रीति गोकुल में पारी । अवहूँ करत जु पाछें करी ॥
सोई विधि नित चित में धरें । जियत रहें तो आगे करें ॥

॥ दोहा ॥

भोपति प्रभु वोले तवै । तात मातु सुनि लेहु ॥
जहाँ जग्य नहिं होत है, तहाँ न वरषत मेहु ॥

विषय—(१) काली नाग नाथन लीला के अन्तर्गत कद्रू वनिता की कथा एवं नाग और गरुड़ के वैर का कारण और काली के यमुना में आवसने का कारण वर्णन । प्रभु का आदेश पाकर काली का पुनः समुद्र को चला जाना और यमुना के जल का पवित्र हो

जाना। (२) प्रलंब नामक राक्षस का छल और उसका बध, दावानल वर्णन, वत्सासुर बध और इन्द्र-कोप तथा गोवर्धन धारण लीला का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ भोपति कवि कृत दशमस्कंध का एक खंडित अंश जान पड़ता है। यह आदि, अंत और मध्य सभी ओर से खंडित है। इसमें दी हुई लीलाएँ प्रायः अधूरी ही हैं।

संख्या १३ सी. भागवत दशम स्कंध, रचयिता—भोपति, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति—(प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लालता प्रसादजी, मुहल्ला—छपैटी, इटावा।

आदि—सूरज के रथ में तुरी, कहुधों हैं किहि रंग।
वनिता सुत उज्ज्वल कहे गडरु कारे अंग॥

॥ चौपै ॥

या विधि दुहूँ रार जो वाढ़ी। ऐसी होड परसपर वाढ़ी॥
जिहि कौ कह्यौ साँच नहिं होई। वचन हारि कैं दासी होई॥
गडरु सुत न भेव जव जान्यो। निज माता कौ अति दुष मान्यौ॥
माता तुम कछु भलौ न कीनों। पहिलें हमैं पूछि नहिं लीनौं॥
कछू उपाइ अब कीजै आगैं। हम सब जाइ असुन सों लागैं॥
तव वे श्याम दृष्टि में आवैं। माता झूंठी हौन न पावैं॥
या विधि वचन माइ सों कहे। वहाँ जाइ अपुना लगि रहे॥
गरुडू वनितहि स्यौ जव ही। कह्यौ साम से दी सत अबहीं॥

॥ दोहा ॥

गरुडू वनितहि जीति कें। ग्रह कौं गए लिवाइ।
जाकी रीति अनीति है। तासों कहा वसाइ॥

॥ चौपई ॥

असी भाँति गरुड़ जव जानी। गडरु सों बोलति म्रदुवानी॥
मेरी जननि जीति तुम लीनी। प्रगट अनीत रीति है कीनी॥
तुम कछु कहौ आन सो दीजै। अपनी जननी तव हम लीजै॥
कही आन अमृत घट दीजै। वनिता सी दासी नहिं कीजै॥
गरुड़ वली ताही छिन धायौ। इक घट अमृत कौ लै आयो॥
जव यह बात देवतन सुनीं। सुयि कें तव उन ग्रीवा धुनी॥

अंत— ॥ दोहा ॥

भोपति प्रभु कांपत मना। जल ते वाहर आइ।
वाल रीति भय भीत अति, लगे माइ उर धाइ॥

॥ चौ० ॥

जसुदा नैनन ते जल ढारै । प्रान प्रानपति ऊपर वारै ॥
मोह न मातु गोत में डस्से रैं । नंद तात अति करुना करि केरैं ॥
नर नारी मन मांह सकानें । वलि जूना अवसर मुसिकानें ॥
नंद राइ कछु भेव न जानें । बुरौ बहुत हलधर कौ मानें ॥
कह्यौ जुवल होते कुल माहीं । तौ इह अवसर हँसते नाहीं ॥
तब हलधर जू बोले बानी । नंद तात जू बात न जानी ॥

× × ×

कालिंद्री जल में विष बाढ़्यो । काली विषधर रिस धरि काढ़्यो ॥
ताके चरित वर्नत जो कोई । तिनके सुनत अंचभौ होई ॥
नंद राय तू भेव न जानौं । पुत्र भाइ हृदय जो मानौं ॥
विधिना यही जु श्रृष्ट कौ । तुम्हरौ पुत्र न होइ ॥
जनम मरन ताकौ नहीं । भोपति प्रभु है सोइ ॥
बोले तवै नंद सुष कारी । जन्म लगन जब गर्ग विचारी ॥
या विधि वचन गर्ग हू कहे । ते सब मेरे मन में रहे ॥
यह बालक ह्वै है जग राजा । जामें विधना के सब काजा ॥
पहिलै रूप धरे ... ...
... ...

शेष लुप्त—

विषय—वृन्दावन में जमुना के भीतर निवास करने वाले काली नाग को कृष्ण भगवान् के द्वारा नाथे जाने का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ 'भोपति' कवि की रचना है। यह खंडितावस्था में उपलब्ध हुआ है। इसके कई पत्रे लुप्त हो गए हैं। इटावे के भोपति कवि ने दशम स्कंध भागवत का पद्यानुवाद किया है। संभवतः यह उसी ग्रंथ का भाग है जो किसी लेखक ने उतार लिया है। ग्रंथ के प्रस्तुत प्रति में न तो कवि परिचय ही पाया जाता है और न रचनाकाल और लिपिकाल का ही उल्लेख किया गया है।

संख्या १४. अलंकार वर्णन, रचयिता—भूप, कागज—प्राचीन देशी, पत्र—१, आकार—$८\frac{१}{२} \times ५\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन—पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शंकरदेव जी, ग्राम—सेई, पो०—छाता, जिला—मथुरा।

आदि—भेद कविनु कहै यथा सवैया—

भानु प्रचंड किधौं जगजारन कौं प्रगट्यौ तन द्वादस लीने।
मानु किधौं गिले प्राची पछा किधौं ह्वै प्रलया नल पुंज प्रवीने ॥
संगर में लषि राम निरंद को "भूप" कहै पर यो भय भीने।
मानस की गति होइन ऐसी ये आवत काल सरूपहि कीने ॥ ४० ॥

अथ रूपक लछनं--॥ दोहा ॥ उपमानरु उपमेय कौ भेद परै नहि जान।
समता व्यंगि रहै जहाँ रूपक ताहि वषानि ॥ ४१ ॥

रूपक लछन भेद—अंग सहित अरु सुद्ध पुनि परंपरित द्वै भाँति।
एक देस कर्ता वहुरि माला रूपक कांति ॥ ४२ ॥

अथ समस्त वस्तु विषै रूपक लछनं—॥दोहा॥ अंग मुष्य रूपक तहाँ परै सबद ते जानि।
सो समस्त रूपक कहत संगत ताहि वषानि ॥ ४३॥

अंत—श्लेष परंपरित यथा ॥ कवित्त ॥

मान वंस मानस के हंस वुध निसाकर देषत ही अरि कवि पूजिक असुर है।
गिरछा के वाम ताके काम धाम रति जाके सुजस अनंत पृथ्वी को पुरंधर है ॥
संगर में हरि है वचन में विरह जाके साहेव समीर जाके मुनी नरवर है ॥
कूरम कलस महाराजा राम सिंह महि सुमन सुपदमाल मेरु धराधरु है ॥४८॥

सुद्ध परंपरित ॥ यथा कवित्त ॥

दारिद दुरद मद मर्द्दन कौं अंकुस है अरिकुल तिमिर विनासन को भानु है ॥ ४८ ॥
षल गिरि द्राहन को भादौ की नदी को पूरि दुनी के गरव रोग हरन निदानु है ॥
कीरति सुरसरि कौ जनम सुमेर फौज मोह के विदारन को हरि पग ध्यान है।
कूरम कलस जयसिंह को नंद महाराजा रामसिंह कर राजत कृपान है ॥ ४९ ॥

एक देस विवर्तिन रूपक लछन
कछुक रूप है सवदते, कछुक अर्थ परमान।
एक देस वरती वहुरि रूपक ताहि वषानि ॥ ५० ॥

यथा कवित्त—उज्जल वसन साज राजैं हरि राधिकारु
तैसियै विमल निसि सरद सुहाई है।
फूलि रही बेली अलवेली अल वेससी'''...............

पत्र की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—अलंकारों का वर्णन किया गया है।

विशेष विवरण—ग्रंथ का केवल एक ही पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें पत्र संख्या ९ पड़ी है। प्रयत्न करने पर भी अन्य पत्र नहीं प्राप्त हो सके। इस पत्र से नाम तक का पता न लग सका। छन्द ४० वें में "भूप" शब्द आने से वही कवि का नाम मान लिया गया है। किन्तु इस शब्द को राजा का वाचक मानना अधिक उचित जान पड़ता है। इस कारण कवि का नाम भी स्पष्ट नहीं ही है। कविता की दृष्टि से प्रौढ़ कवि का परिचय मिलता है।

इसमें रामसिंह का नाम आया है। रामसिंह को कूरम वंशी तथा भानवंशी और जयसिंह नंद कहा गया है। एक महाराज रामसिंह इसी वंश में नरवर में भी हो गये हैं। परंतु प्रस्तुत महाराज रामसिंह उनसे भिन्न जयपुर के जान पड़ते हैं। इनका राज्यकाल सं० १७२३–३२ तक था और इनके आश्रय में, जैसा कि विवरण से ज्ञात होता है, कुलपति मिश्र, लालकवि, चन्द्रकवि और गंगाराम थे। इन्हीं महाराज के समय यह ग्रंथ रचित

होने से रचनाकाल सं० १७२३ से ३२ के ही भीतर होना चाहिए तथा ग्रंथकर्त्ता इसी समय का एक प्रौढ़ कवि होना चाहिये।

संख्या १५. छन्द प्रकाश, रचयिता—बिहारी कवि, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति—१५, पूर्ण, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८२, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री रामचन्द्र राधागोविन्द दसवीसा, गोवर्धन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः अथ छन्द प्रकास लिष्यते ॥

दोहा—श्री गुरु चरण सरोज भज करि कै हृदय हुलास।
स्यामा स्याम चरित्र जुत वरनौं छंद प्रकास ॥ १ ॥
श्री दरबारी जू सुकवि हरिजन सुकमा धाम।
जिनतें पाई रीति सब, तिन पद करौं प्रणाम ॥ २ ॥
गोत्र सुता सुत देउ बुधि मानि हृदय आनंद।
मम मुख सम करौ इला रचौं कल बरन छंद ॥ ३ ॥

अथ छन्द व्याख्या—ओं अनादि तैं आदि लै जत श्रुति सास्त्र पुरान।
तत बपु अषय सुछंद है, बरनत बुद्धि निधान ॥ ४ ॥

छन्द संख्या—त्रिभुवन में विख्यात मात्रा वरन द्विछंद जे।
वरनत हैं श्रुति ज्ञात सुकवि बिहारी चारु ते ॥ ५ ॥
अमर गिरा मैं उड़प तैं कह्यौ भेद अहिराज।
सो नर वानी मैं रुचिर कहिं बिहारी कविराज ॥ ६ ॥

अंत—अथ संख्या संज्ञा वर्णन ॥ अथ एक के नाम ॥ दोहा ॥
आत्मा चंद अवर मही, रवि रथ चक्रहि लेषि।
शुक्र दृष्टि गणपति रदन एते एक विशेषि ॥६७॥

× × ×

अथ एकादश द्वादश के नाम ॥ चौपाई ॥
शिव एकादश सुनहुँ विचार। रवि द्वादश लीजै धार ॥
संख्या एती जानों वीर। भनै बिहारी कवि मति धीर ॥७७॥

इति श्री बिहारी कवि राज विरचिते छन्द प्रकाशे नाम गरुण संवादे गुरु लघु भेद मात्रा वर्ण सप्तक्रम ॥ दग्धाक्षर ॥ गणागण संख्या संज्ञा वर्णनं नाम दुतियो ध्यायः ॥ २ ॥

विषय—प्रथम अध्याय—मंगलाचरण, कविनाम परिचय, छन्द व्याख्या, छंद संख्या, नरगिरा प्रयोजन, ग्रंथ प्रयोजन, ॐ विचार निरूपण, टीः लक्षनं, प्लुतभेद, वर्णनाम मात्रा नाम, वर्ण मात्र उत्पत्ति, अक्षर भेद कथन, स्वर व्यंजन संख्या तथा लक्षण और स्वरूप वर्णन, लघु-दीर्घ स्वर वर्णन, व्यंजन भेद कथन, अंतस्थ उष्मान वर्ण संख्या मात्रा लक्षण, स्वर व्यंजन मिलाप, संयोगी वर्ण लक्षण, उपधावर्ण, संयोगादि वर्ण मात्रा संख्या, संयोगी वर्ण मात्रा संख्या, मात्रा संख्या, द्वादश मात्रा युक्त वर्ण, पंच वर्ण वर्णन, अनुसार

विसर्ग लक्षण और बनावट, स्वर व्यंजन मिलाप, पंच अक्षर भेद, अनुस्वार भेद, रेफगति, ऊ वर्ण बनावट, अक्षर और रूप विचार, वर्ण और रूपके उदाहरण, वर्ण त्रिनाम, पद्धरि छन्द, निसानी छन्द, शिक्षा-पत्र १२ तक।

द्वितीय अध्याय—गुरु लघु भेद तथा उदाहरण, प्रस्तार वर्णन, मात्रा वर्णन, नष्ट, उदिष्ट, मेरु, पताका, मर्कटी वर्णन, गणागण वर्णन, गणागण शुभाशुभ वर्णन, गणागण देवता और उनका फल, संख्या संज्ञा वर्णन, पत्र १२ से ३४ तक।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ कर्ता का नाम विहारी है। इन्होंने किसी दरबारी कवि से शिक्षा पाई थी। ग्रंथ का रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। यह संस्कृत से अनुवादित किया गया है। ग्रंथ स्वामी के कहने के अनुसार रचयिता मथुरा जिलान्तर्गत कोसी कलाँ के रहने वाले थे। ये बहुत प्राचीनकाल के नहीं हैं।

संख्या १६. श्री स्वामी विहारनदेवजी की वानी, रचयिता—विहारिनदेवजी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मंदिर श्री ठाकुर रसिक विहारीजी, वृन्दावन, मथुरा।

आदि—अथ श्री स्वामी विहारन देवजी कृत सिद्धांत की साखी।
प्रथम लडाउं श्री गुरु वन्दन करि श्री हरिदास।
विपुल प्रेम निजुनेम गहि कहि सुजस विहारन दास ॥ १ ॥
सोरठा—ज्यों गुरु त्यौं गोविंद विनुगुरु गोविंद किन लह्यौ।
ज्यौ मावस्या इन्दु त्यौं निगुरा पंथन पावही ॥ २ ॥
गुरु सेवत गोविंद मिल्यौ गुरु गोविंदहि आहि।
श्री विहारीदास श्री हरिदास को जीवत है मुख चाहि ॥ ३ ॥

× × ×

विषई भक्तुन नीदीये साकतु साधु असाधु।
वह निगुसा भौ विमुखई यह सनमुष मुक्त अवाधु ॥ ५९ ॥
जो अनन्य अन्याइयो भजत भजतु भक्ति सति भाई।
साकतु कर्म धर्म करै तुसु उडत विनु वाइ ॥ ६० ॥
अंत—माँग्यौ कछु न दीनौ लैंही। अपने सुष तें औरनि दैंहि ॥ २० ॥
रीझि रहै नागरै रिझाई। सेवत सेवि रहे सुष पाइ ॥
श्री विहारीदास हरिदास लड़ाई। श्री विहारी विहारिनि की वलिजाई ॥

× × ×

विषय—अनन्य रस सिद्धान्त वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम श्री विहारिनिदास है। ये श्री विट्ठल विपुल जी के शिष्य और श्री स्वामी हरिदास जी की शिष्य परंपरा में थे। ये देहली के रहने वाले

शाही दीवान थे। जाति के ब्राह्मण थे। श्री स्वामी हरिदास जी की शिष्य परंपरा में सबसे अधिक वाणी के रचयिता यही हैं। इनकी समग्र वाणी एक बृहद् ग्रन्थ में सम्मिलित है जो मंदिर में विद्यमान है, किन्तु वह किसी को भी देखने को नहीं मिल सकता। मंदिर के हस्तलेख में आठ आचार्यों की समस्त वाणियाँ संकलित हैं। ये आठ आचार्य निम्नलिखित प्रकार से हैं। १—श्री स्वामी हरिदासजी (स्वामी आसधीरजी के शिष्य), २—विट्ठल विपुलदेव, ३—विहारिनदेव, ४—सरिसदेव, ५—नागरीदास (ब्राह्मण), ६—नरहरदेव, ७—रसिकदेव, ८—पीताम्बर शरणदेव, मंदिर के मंत्री के कथनानुसार रचयिता सं० १६०० वि० के लगभग वर्तमान थे। विवरण में अन्य पद्यों के उद्धरण न आने का कारण यह है कि मंदिर के अधिकारी इन पुस्तकों को हवा भी नहीं लगने देते।

संख्या १७. एकाक्षर मंजरी, रचयिता—वीरभाण, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—८¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७९६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रामचन्द्रजी पटवारी, स्थान—व्याना, रियासत—भरतपुर।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ एकाक्षर मंजरी लिष्यते ॥

॥ अकार नाम ॥ श्री परमेसुर ब्रह्म सिव कमठ कंज ग्रहराज।
आमुन रन वरनन कही गोरतु अजित सकाज ॥ १ ॥
सरबंगी पुनि भाव भनि चंद्र वसन परताप।
यह अकार उच्चारियै अवि अकार करिजाय ॥ २ ॥
संम्रत्थ व्यसमय जानियै सीम कोप संतोष।
सम्रत विसम्रत काल चिर लघु वसंत सुष पोष ॥ ३ ॥
और नीर अभ्यास कहि येते कहे अकार।
पुनि इकार उच्चारि हैं पंथ ग्रंथ अनुसार ॥ ४ ॥

ईनाम—भार कुसुम अनुचंद्रिका किरनि कुषि ग्रहकाज।
गिरि की गुहा भुजंगसर अहिमणि कांतिसमाज ॥ ५ ॥
केसरि कंज गिनान गति इंद्र चाप दल कंज।
पुनि लिषमी ईकार कहि रचना ताहि समंझ ॥ ६ ॥

उनाम—षितपति सुचि सुवत्य शिव मुकट कंठ हरि जांनि।
मंगल घट सुरवान कहिरष्या अजर वषांनि ॥ ७ ॥
किंकारज उपगार पुनि वरतारौ सुवकार।
अवऊ कहूँ सुनौ सबै श्रुत पुरांन कौसार ॥ ८ ॥
ससिनर नृप सुत वृछतप अग्रभाग घरजानि।
चन्द्रा भाद्रग गौर ज्याह उकार निंदान ॥ ९ ॥

अंत—ख नाम-खरग सकार उचारि लै स्वार मेय खा जांनि।
आगम दिवस स्वकार पुनि विल्व रमा श्री वानि ॥ ८२ ॥

स्नुगिरि पारस भूमि भनि ह्री लछ्या कौ नाम ।
ह्यौ गत दिवस संभारियै षिमाधरनि कौ नाम ॥ ८३ ॥
षुजि ह्वामूली विषै पुनि संबोधन ठौर ।
ष्या पुनि कहियै सांति कों सवै सुकवि सिर मौर ॥ ८४ ॥
ज्यौं गुरु देष्यौ ग्रन्थ लषि मैं भाष्यौजु विचार ।
चूक वांक कछु होय सो लीजौ सुकवि सुधारि ॥ ८५ ॥
सतसर कौ आदर कर्यौ अभै साहि महाराज ।
अति कविता के काम मैं नाम दाम कौ काज ॥ ८६ ॥
महा कठिन श्रुति सार यह लषिवे मैं श्रम पारि ।
अगम सुगम यातैं करी "वीरभाम" मतिसार ॥ ८७ ॥
जेते अक्षर माल के तामें हरि कौ नाम ।
सो है घृत दधि सार ज्यौं और तक्र कवि काम ॥ ८८ ॥
संमत हरि १० रिषि ७ समझियै भगति ९ राग ६ लषि अंक ।
किसन सप्तमी अश्वनी गुरु माला करी अवंक ॥ ८९ ॥

इति श्री माधवाचार्य कृत वेद क्षर रतन माला भाषा रतन वीरभाण विरचितं संपूर्ण ॥ श्री ॥

विषय—श्री माधवाचार्य कृत वेदाक्षर रत्न माला नामक संस्कृत ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद है जिसमें नागरी वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर का अर्थ दिया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रन्थ के साथ अन्य तीन ग्रन्थ बलभद्र कृत 'सिखनख' केशव दास कृत 'कविप्रिया' और नंददास कृत 'अनेकार्थ मंजरी' भी हैं जो एक ही हस्तलेख में हैं । किसी भी ग्रन्थ में लिपिकाल का संकेत नहीं है । प्रस्तुत ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १७९६ वि० है ।

संख्या १८. जन्मोत्सव बधाई, रचयिता—व्रजदुलहै, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० दुर्गा प्रसादजी शर्मा, स्थान व पोष्ट—इटावा, मुहल्ला—छपैटी, जिला—इटावा ।

आदि—श्री राधाकृष्णोजयति ॥ अथ जन्मोत्सव बधाई लि० ॥

॥ रागराम कली ॥ ताल चपक ॥

एहो आज बधाई श्री गोकुल मैं पुरजन अंगन माये ।
नंद महर जसुधा के मंदिर सुंदर हरि अव जाये ॥ हो ॥ १ ॥
ग्रह ग्रह मंगज चार पताका कदली द्वार सुहाये ।
नगर द्वार तोरन धुज चित्रित वंदनवार बँधाये ॥ २ ॥
द्वार द्वार फल दूब इक्षु दधि अक्षत गंध धराये ।

गंध मिश्रजल वीथिन सिंच्यौं दीपन पाँति जुराये ।। ३ ।।
रतन जटित मणि षचित अजिर मधि मुक्ता चौक पुराये ।
अंकुर पुष्प सुभग चंदन जुत कंचन कलश धराये ।। ४ ।।
वाजैं वीण पणवनों होंवति गति शंख भेर मिरदंगा ।
गौ मुख घुंघुरि दुदुंभि वाजैं ताल तवल मोह चंगा ।। ५ ।।
झिरि झिरि झाँझ झालरी झनकैं डिम डिम डवरु उपंगा ।
मुरज वाव वाँसुरी मौहर मदन भेर धुनि संगा ।। ६ ।।
सारंगी कानूर खंजरी सुर मंडल शुभ जंगा ।
जील सतार घुंघरू घंटा वाजैं नीर तरंगा ।। ७ ।।
अमृत कुंडली साज मंडली गुटकैं नाना रंगा ।
सव मिलि एक सुरन तैं वाजैं नाचैं गोप उमंगा ।। ८ ।। हो० ।।

राग आसावरी ।।

अंत—।। एहो ।। गोप राज महाराज महर घर आनद वजत वधाई ।
पावस प्रवल प्रचुर सव ऋतु मधि जनमे कुँअर कन्हाई ।। हो० ।। १ ।।
वाजैं वीन वाँसुरी मौहर मदन भेर सहनाई ।
धौंसा घोर टकोरा नौहवति दुंदुभि देव वजाई ।। हो० ।। २ ।।
गावत नारि चली सुर भीनी जसुमति मंदिर आई ।
गावैं गोत आसिका दें दें जीवो सुत सुख दाई ।। हो० ।। ३ ।।
सुनि सुनि गोप चले आतुर ह्वै दधि की कींच मचाई ।
धन्य धन्य कहि नंद जसोदा फूले अंग न माई ।। ४ ।।
नाचैं स्वर्ग नटी सिद्धादिक सुमन वृष्टि वरखाई ।
गावैं सुर किन्नर विद्याधर चारन गति चतुराई ।। ५ ।।
शिव ब्रह्मा इंद्रादि देवता आये गोकुल धाई ।
नृत्य कियो प्रेमातुर गदगद भई हमारी भाई ।। ६ ।।
वोलैं सूत भाट मागध जनवंदी जन गुन गाई ।
जसुमति नंद महा मति दोनों वसुधा वहोत लुटाई ।। ७ ।।
कृष्ण कुँवर की करि न्यौछावरि वाँटी वोहोत वधाई ।
आतम जात अजाचक कीन्हे दीन्हें कोश लुटाई ।। ८ ।।
लषि लषि वाल गोपाल लाल कौ भक्तहियौ हरखाई ।
तिन की चरन शरन व्रज दूलहै भक्ति वधाई पाई ।। ९ ।।

।। इति श्री जन्मोत्सव वधाई ।। समाप्तम् ।। शुभम् ।।

विषय—श्री कृष्ण जन्मोत्सव के समय की वधाई ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ व्रज दूल्है द्वारा रचा गया है। इसमें श्री कृष्ण के जन्मोत्सव के समय की वधाई का वर्णन है। ग्रंथकार का परिचय ग्रंथ से उपलब्ध नहीं होता और न उसमें ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल ही दिए हैं।

संख्या १९. स्नेह तरंग, रचयिता—रावराजा वुद्धसिंह, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—१०३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७८४ वि०, लिपिकाल—सं० १८९४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री देवकी नन्दनाचार्य, पुस्तकालय—श्री गोकुल चंद्रमा जी का मन्दिर, कामवन, भरतपुर रियासत।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सनेह तरंग ग्रंथ लिष्यते ॥
सुडादंड उदंड अति चंदकला षुलिसाथ।
विघन हरन मंगल करन जे गज मुष गजनाथ ॥ १ ॥

॥छप्पै॥—मदन मोहक वदन सदन वेताल जाल वृत।
भगन भित्त भंजन अनेक जिन असुर वंसहित ॥
चदाहास कर चंड चंड मुंडादिक हिरमय।
अनल जाल जुत भाल लाल लोचन विशाल जय॥
जय जय अचिंत गुनगन अगम आतम सुष चैहतन मय।
जय दुरित हरन दुरगा जननि राजित नवरस रूप मय ॥ २ ॥

× × ×

दोहा—रूप सुधा रस सरस सों, घरन हंस मीति संग।
नीर जन वरसे रंग करि नेह तरंग तरंग ॥ ४ ॥
रस विभाव अनुभाव अरु, सब संचारी भाव।
भाषा वरण वताइवो ज्यों दरपण दरशाव ॥ ५ ॥
जो में स्थाई भाव रति, सो वरन्यो संगार।
इक संजोग वियोग इक ताके द्वय प्रकार ॥ ६ ॥

× × ×

अंत—इति अलंकार पढ़ें कविराज। लहे सुष संपति साज समाज।
इइन परस पींगल छंद कछु अलंकार वहुरंग।
सुषी पंडित इत श्रम जी के वरन्यो नेह तरंग ॥ ३ ॥
सतर सै चौरासिया नवमी तिथि ससि वार।
शुकल पक्ष माही प्रगट रच्यौ ग्रंथ सुषसार ॥ ९४ ॥

इति श्री नेह तरंग रावराजा श्री वुद्धसीग सुरचिता अलंकार निरूपन नाम चतुरदशे तरंग ॥ १४ ॥ इति श्री नेह तरंग संपूर्ण ॥ श्री श्रीनाथ द्वारमें पोथी श्री लाल जी श्री गो० लशर जी की पोथी''''''श्री सं० १८९४ माहा सुदि ११।

विषय—रस, नायिका भेद और अलंकार वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ नायिका भेद और अलंकार विषय पर लिखा गया है । इसके रचयिता रावराजा बुद्धसिंह हैं जिनका विशेष परिचय ज्ञात न हो सका । रचनाकाल संवत् १७८४ वि० और लिपिकाल संवत् १८९४ वि० दिए हुए हैं ।

ग्रंथ विषय की दृष्टि से उत्तम है । इसका उत्तरार्द्ध बहुत ही भद्दी लिखावट में लिखा है ।

संख्या २०. सुधाधर पिंगल, रचयिता—चंद, कागज-देशी, पत्र—१००, आकार—८ × ६ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५८७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाश नारायण चतुर्वेदी, मुहल्ला—नगरा पाईसा, जिला—मथुरा ।

आदि—···रासेणं रमणे मुद वृज वनं जै जै हितू पारनी ।

॥ सम विषम वृत लक्षण ॥

॥ दोहा ॥ आदि तृतिय दो चतुरथय इक सम इक न मिलाय ।
सम विषम हि वृत ताहि कौं कहैं कविन के राय ॥ १० ॥

॥ मात्रा आदि सम अन्त विषम उदाहरण ॥

सर सर प्रफुल सरोजं तर तर समन यउ भ्रमर भ्रम रोजं ॥
घर घर अति रति चोजं वर नर वर वसहि सुमनोजं ॥ ११ ॥

× × ×

लछमण नरेस मह्रि दूसरो सुरेस कवि चारो वरण नव षंड कौ आभरण ।
अरियां को उथप मित्र थिर थप फिरंगाणादौ साल हिन्द वारणौ ढाल ।
जुधरौ अचल भरत भुजवल रघुवर सौ उदार सुजस सातौ समंदपार ।
नाथाणवंस कुर्मा वतंस लहर समंत प्रभा प्राक्रम बुलंद वरण गुन वषान
पावै कौन प्रमाण ।
सेसहू सहस मुषतैं कहैं तोउ दान किरवान कौ पार ना लहै ॥ ३३ ॥

× × ×

अंत— त्रसर लछन

॥दोहा॥—वसु दस वसु मुनि विरति वर त्रय उपमा तहँ होय ।
त्रसर गीत ताकौं कहैं जे पंडित सव कोय ॥ ३८ ॥
चहूँ दिवाला आणि जै भगण आदि चो शुद्ध ।
आषर यक सत चहुतरेस समझो सही सवुद्ध ॥ ३९ ॥

× × ×

॥ गज गति गीत लछन ॥

विषम चरण चमहुरा मिलै, ग्यारह नव विश्राम।
लघु गुरु अंत हरि गीत मिलि दूजो गज गति नाम ॥ ४१ ॥

× × ×

विषय—१—तृतिय मयूख-सम वृत्यादिक त्रय जाति निरूपणम्, पत्र १ से १३ तक।
२—चतुर्थ मयूख-शुभाशुभ टगणादि गण वर्णन पत्र १३ से १६ तक।
३—पंचम मयूख-मात्रा मात्रागण चवकागण मिश्रित पिंड अंकादि दस प्रकृति निरूपण, पत्र १७ से २७ तक।
४—षष्टम मयूख-प्रत्यय रस विधि निरूपण, पत्र २८ से ३० तक।
५—सप्तम् मयूख-मात्रा छन्द निरूपण, पत्र ३१ से ३३ तक।
६—अष्टम् मयूख-आर्या छन्दादिक प्रत्यय वर्णन, पत्र ३४ से ३८ तक।
७—नवम् मयूख-दोहादि प्रस्तार वर्णन, पत्र ३९ से ५१ तक।
८—दसम मयूख-मिश्रित छन्द निरूपण, पत्र ५२ से ५९ तक।
९—एकादस मयूख-गद्य त्रिविध पद्य, एकादि द्वादशामि प्रस्तार वर्णन, पत्र ६० से ७० तक।
१०—द्वादश मयूख-वृति त्रियोदसानि षट विंशति कार्या नियत पद्य निरूपणं, पत्र ७१ से ७९ तक।
११—त्रियोदस-नियतानियत वर्ण छन्द या दंडकादि छंद वर्णन, पत्र ८० से १०० तक।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत हस्त लिखित ग्रन्थ के आदि के १२ पत्रे तथा अंत के पत्र संख्या १०० से आगे के पत्रे लुप्त हो गए हैं जिसके कारण रचनाकाल तथा लिपिकाल ज्ञात न हो सके। कवि का नाम चंद है जो जयपुर महाराज लछमनसिंह के आश्रित थे।

ग्रन्थ पिंगल विषय का है। इसमें राजस्थानी भाषा के छन्दों के उदाहरण भी दे दिए गए हैं। साथ ही नवीन छन्दों के भी उदाहरण हैं। यह रचना लेखक की प्रौढ़ रचना जान पड़ती है। खेद है कि ग्रंथ पूर्ण उपलब्ध नहीं हुआ।

संख्या २१. अनुराग विलास सम्भवतः, रचयिता—चंद, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति—१६, परिणाम (अनुष्टुप्)—१४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामानंद, स्थान—दौलतपुर, पोष्ट—नोहझील, जिला—मथुरा।

आदि— × × ×

भिराम सु तेरो जयतु है ॥
गनत निमानि मान और अवै लै हरी।
चंद रसिक सुषदान भेटि लै अव हरी ॥ ३४ ॥
लगे परम छवि दैन वैन ऐ बैनिये।
कछु ततरो है बैन बांह मैं बैनये ॥

तजी जगत की लीक जगत गई सब निसा ।
चंद महावर लीक लषत भई सब निसा ॥ ३५ ॥
लषनंद सुत लयौ नंद वकिसा सुनै ।
रही जिवानी रूसि इहब किसा सुनै ॥
चंद कही नही जाय यह बात जेटई ।
नट को छांडत नैन सुहट···जेटई ॥ ३६ ॥
जतन करै हम कौन अतुन करै नाह की ।
छीन भई अव हाय रही अब देहरी ।
चंद चढ़ी नहीं जाय कुंज की देहरी ॥ ३७ ॥

अंत—मोहन मन हरि लेय तव जई हई ठई ।
अब इत पावन देत कठी ईह ठई ॥
उधो हरि पैं जाहु कुवरिया होति है ।
चंद उन्हें सुष करन कुंवरिया होति है ॥ ४० ॥
तब ज हमारे संग न चेरी वसि भई ।
अब हरि आवत ब्रजहि न चेरी धसि भई ॥
कहा··· ··· ··· ···

—अपूर्ण पत्र की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—श्री कृष्ण जी के मथुरा चले जाने पर एक गोपी का विरह वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रन्थ का एक पत्र जिसपर संख्या ६ अंकित है प्राप्त हुआ है । इसके बाएँ हाशिये पर 'अ०' लिखा हुआ है जिससे विदित होता है कि यह ग्रन्थ का पहला अक्षर है । अतः इसी के सहारे ग्रंथ का नाम अनुमान से 'अनुराग विलास' रख दिया है छन्द के प्रत्येक चौथे चरण में चंद का नाम आया है जो रचयिता का नाम जान पड़ता है । प्रस्तुत रचना में शब्दालंकार का सहारा लिया गया है और शब्दों को खूब तोड़ा मरोड़ा गया है । लिपिकार के हस्तदोष से भी बहुत अशुद्धियाँ हो गई हैं । ग्रन्थ के अपूर्ण होने से रचनाकाल और लिपिकाल दोनों ज्ञात न हो सके ।

संख्या २२ ए. हितअष्टक, रचयिता—श्री चंदलालजी हित, कागज—देसी, पत्र—२, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६८ वि०, प्राप्ति स्थान—गोस्वामी श्रीहित रूपलालजी, अधिकारी, श्री राधावल्लभ मंदिर, वृंदावन, जि०—मथुरा ।

आदि—

॥ अथ श्री चंदलालजी कृत हित अष्टक ॥

॥ सवैया ॥

सरद की जामिनी में भामिनी के संग स्याम नवघन दामिनी सी दुति झलकाई रे ।
निर्त्तत ललित गति प्यारीरास मंडल में रीझि मुसिकाई लाल लेत उर लाई रे ।
दंपति के प्रेम कौ सरूप निज दासी जहाँ करत षवासी चित रुचि कौ वढ़ाई रे ।
इनकी कृपा मनाय इनही के गुण गाइ चाहै हित जी कौं हितजी को तू कहाइ रे ॥ १ ॥

× × ×

अंत—भटक्यो महाई दुषदाई जौननि मैं अब सुखदाइ मन भाई निधि पाइरे ।
याही तनही मैं सषी गन ही मैं जाइ मिलै वसि वनही मैं बनही मैं दरसाइरे ।
करि करि नाही प्रेमपंथ फसि नांही और ठौर रस नाही रसि नाही गुण गाइरे ।
सब जुग फीकौ भाव कह्यौ तोसौं नीके ऐपैं चाहै हित जू कौ हितजू कौ तू कहाई रे ।

॥ इति श्री हित प्रार्थना अष्टक संपूर्ण ॥

विषय—श्री हित हरिवंशजी की महिमा का गुणगान किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकर्त्ता चंद्रलालजी हित संप्रदाय में एक श्रेष्ठ महात्मा हो गये हैं । इन्होंने बहुत सुंदर कविताएँ की हैं । इस ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल इसी ग्रंथ में सम्मिलित अन्य ग्रंथ के लिपिकाल के आधार पर दिया है ।

संख्या २२ बी. हितजी के कृपापात्र, रचयिता—चंदलाल हित "चंद", कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१० × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६८ वि०, प्राप्ति-स्थान—गो० श्री हित रूपलालजी, अधिकारी, श्री राधावल्लभ मंदिर वृंदावन, जि०—मथुरा ।

आदि—॥ अथ श्री हित जू के कृपापात्र लिष्यते ॥

प्रथमहि श्री गुरु चरण कौं, निसि दिन करौं प्रणाम ॥
व्यास कुँवर की कृपा वल पाऊँ सुष कौ धाम ॥ १ ॥
जे महल टहल के दास हैं तिनकौं मैं निजदास ॥
उनकी कृपा कटांक्ष तें कटि है मेरी पास ॥ २ ॥

॥ चौपाई ॥

कृपा पात्र हित जी के कहौं । तिनके नाम सुमिर सुष लहौं ॥ १ ॥
भगवत मुदित परचइ करी । रीति प्रीति पद्धति सब धरी ॥ २ ॥
सिष्य प्रसिष्यनि में भए सिद्ध । महल टहल में लगे प्रसिद्ध ॥ ३ ॥
प्रथमहि नरवाहन जू भए । श्री हरिवंश जुगल पद दये ॥ ४ ॥
नाहर मल हित के पग परसे । मान सरोवर दंपति दरसे ॥ ५ ॥

अथ फलस्तुति

अंत—नरवाहनजी व्यास छवीले दास नाहर मल ।
वीठल मोहनदास नवल तुलधार हरी मल ॥

भय जु परमानंद प्रबोधानंद कर्म ठीये।
सेवक काइथ षरगसेन गंगा जमुना जीयं ।।

× × ×

टाट कौ सरावैं षानी माँझ लै गरावै फिरि कागज बनावैं कारीगर सुषकारी है।
चित्र षत पत्र वही पोथी तामैं लिषी जात तिन्हों सब सेवन करत नरनारी हैं।
ऐसे सत संग मिलै नर और रूप होत कोऊ जात होहु याकी महिमा सुभारी है।
चंद हित भक्ति वस होत हैं विहारी यातें जुगल मिलावन के वेई अधिकारी हैं ।।६।।

।। इति श्री फलस्तुति सम्पूर्ण ।। १३ ।।

विषय—श्री हित हरिवंशजी के कृपा पात्रों का वर्णन संक्षेप में किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ श्री भगवत मुदित की परचई के आधार पर निर्मित हुआ है। भगवत मुदित ने 'रसिक' 'अनन्यमाल' ग्रंथ लिखा है जिसमें हितजी के निकटस्थ ३३ कृपापात्रों का वर्णन विस्तार पूर्वक किया गया है। श्री हित उत्तमजी ने भी एक ग्रंथ "अनन्यमाल" लिखा है जो रसिक "अनन्यमाल" के ही आधार पर है। ३९ वें और ४० वें दोहे के अनुसार प्रस्तुत ग्रंथ भगवत मुदित और उत्तमजी के उक्त ग्रंथ के आधार पर है। उत्तमजी के ग्रंथ से तो यह मिलता भी है, देखिए 'अनन्यमाल' के विवरणपत्र के अंत में 'रसिक परचई' भाग। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल दूसरे ग्रंथ के आधार पर जो इस ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में है सं० १९६८ वि० है।

संख्या २३. चंद० (रामचरित), रचयिता—चंद कवि, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—५$\frac{1}{3}$ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९३, पद्य, रूप—प्राचीन, अपूर्ण, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीमान् पं० रघुवर दयाल जी दीक्षित, कटरा साहब खाँ, इटावा, जिला—इटावा।

आदि—...माल भइ चली षास मन कुछु जामै नैक पाव की।
धीवर हिरानौ पक्षि को भौमारि मनमह ह्वेहे.वहीगत दई आज मेरी नावकी ।।३३।।
हुकुम जौ पाऊं तौ बताऊं मैं घाव तोहि दीजो कछू राम मोहि नव निधि भरे हो।
म तो मसकीन दीन सेवग कदीम तरौ कीजैं य मौहि चेरा नाथ नाष जी चढ़े हो।
पाथन तिहारे चंद कावरू के टोना किधौ अधम उधारिवे कौ मंत्र तुम पढ़े हौ ।।
गौतम की घरनी तरनि सुरपुर गई पाथर तिराय क कीरती के ष्याल परे हो ।।३४।।

दोहा—मनसा वाचा करमना, राम कहत हर एव।
जौं तेरी नवका ऊरै, तौ सौने की कर देव ।। ३५ ।।
धींवर सों रघनाथ जी, वहुतै कही वनाय।
गरज वंद की ... ...

अंत—मेरो ही वियोग पाय तात का मरन भयो,
मेराही फीरा का तो कोसुल्या को सताव है।

मेरा ही पर संग पाय सीता को हरन भयो,
मेरे हि तो संग आय लछमन दुष पाव है।
मेरे हि तो संग अब तुमरि अजार पायो,
सेत वंद वाँध हनु जहाँ तहाँ धाव है।
मेरो तो पठाया अंगद वकील रावन के,
पास गयो अपना तो दरद सल मोह अव आव है ॥ २० ॥
राम जू फ·········हनुमान वली सेती लाया है ······ ।
विदेवो चालाकी लगावे ··· लछिमन कुवरहू कै।
भई है देहगा पषान···की सायर के तीर रघुवर···।
वहै नैन नीर यौना नंद···वस वादर पहाड़ को उठाय—
लाय जैसे हाट लाव है हजाम····· ··· ॥ २१ ॥
अंजनी को अंतरीछ अव यो सीता व जोर जो जोराव जात–
प्रात रव सो डरा ··· ··· ··· (शेष लुप्त)

विषय—राम निषाद संवाद, ग्राम वधूटी एवं सीता के प्रश्नोत्तर, पंचवटीवास, शूर्पणखा कुरूप वर्णन, सीता हरण, जटायुवध, सुग्रीव मिलन, सीता हनुमान संवाद, रानी रावण संवाद, अंगदरावण संवाद तथा लक्ष्मण पर शक्ति प्रहार होने पर राम का शोक करना आदि वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में रामायण सम्बन्धी कुछ कवित्तों का संग्रह है। ग्रंथकार कोई 'चन्द' हैं। इनके सम्बन्ध की ज्ञातव्य बातें इस ग्रन्थ से उपलब्ध नहीं होतीं। ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। यह सभी ओर से खण्डित है। केवल ११ ग्यारह पत्रे उपलब्ध हैं। आरम्भ में तेरहवाँ और अन्त में ४७वां संख्या के पत्रे हैं।

ग्रंथ देखने से पुराना जान पड़ता है। लिखावट इसकी अशुद्ध है। इसमें अरबी और फारसी के शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है।

संख्या २४. चन्द्र चौरासी, रचयिता—गो० श्री प्रभु चंद्र गोपालजी (स्थान, वृंदावन), कागज—आधुनिक, पत्र—४२, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गो० यमुना वल्लभजी, विहारीपुरा, वृन्दावन, जिला—मथुरा। (वर्तमान पता—२७ नं० बाँसतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता)।

आदि—श्रीराधामाधवो विजयते ॥ श्री चन्द्र चौरासी जी ॥
प्रारंभ्यते ॥ [सिद्धांत सुधा]

पद—जुगल रस ब्रज निधि वहत अपार।
कोउ चाखै कोऊ पान करौ मिल रसिक शिरोमनि सार ॥
मत्त करत निरखत जिह सर्वस परसत नांहि सुमार ॥

सखी सहेली इच्छा पूरन करिवे कौं अवतार ॥
श्री प्रभु चंद्र गोपाल लाल के जीवन कौ आधार ॥ १ ॥
श्री किशोरी जू कौ पाद प्रसाद ।
निज प्रसन्नता कारन मान्यौ सब भक्तन ने आद ॥
अनुदिन हर्ष बढावत जियकौं मेटत सर्व विषाद ॥
हित वल्लभ भट्ट हरिव्यास हिय रामराय उन्माद ॥
आसुधीर हरिदासी वंशी व्यास सनातन माद ॥
श्री जयदेव अनौखौ गायौ रूप रसायन साद ॥
श्री प्रभु चद्र गोपाल पान कौ एकहि रस निर्वाद ॥ २ ॥

उत्सव सुधासे

अंत—जुगल रस सुधा पान की बात ।
निज वयस्य रूपा हेलिन में कितनी कौन सुहात ।
निरखि मधुरता राधा माधव गौर श्याम सुख गात ॥
श्री ललिता सम होइ कहां कोऊ मेरौ मन हुलसात ।
भ्रमवश बुद्धि भेद उपजायें रस विशेष सकुचात ॥
जासौं सरल माध्व मधुपोषक पावहु प्रेम अंघात ।
श्री चैतन्य चरण अनुरागी सम्प्रदाय पुलकात ॥
श्री गौर पुत्र प्रभु चन्द्र गोपाल सुजुगल लाल वलिजात ॥ ७० ॥ जय गौर ॥

इति श्री मन्मध्वगौडेश्वर सम्प्रदायाचार्य सप्तम पीठाधिष्टित श्री राधा माधव निकुंज मंदिर सेवाधिकारी श्री चित्रा सहचरि स्वरूप श्री प्रभु चन्द्र गोपाल गोस्वामि कृत श्री चन्द्र चौरासी जी समाप्तिमगात् ॥

पत्रे

विषय—१ सिद्धान्त सुधा, पत्र १ से ७ तक । माध्वसिद्धान्त वर्णन ।
२ सेवासुधा, पत्र ७ से २० तक । सेवा भाव वर्णन ।
३ उत्सवसुधा, पत्र २० से ४२ तक । उत्सव-कार्य वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रन्थ से रचयिता का परिचय ज्ञात नहीं होता । रचना-काल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं । लिपिकर्त्ता स्वयं ग्रन्थ स्वामी ही हैं, जो रचयिता के बंशधरों में से हैं । इनका कहना है कि रचयिता गो० श्री प्रभु चन्द्र गोपालजी श्री रामराय जी के छोटे भाई थे । श्री रामरायजी अकबर के समकालीन हुए हैं । नाभादासजी ने भी भक्तमाल में इनका वर्णन किया है । भारतेन्दुजी ने भी एक कुंडलिया में इनका तथा श्री चन्द्र गोपालजी का उल्लेख किया है । यह कुंडलिया ग्रंथस्वामी ने "रामरायजी की आदि वाणी" की भूमिका में दी है जो इस प्रकार है:—

"जगत विदित जयदेव कवि सेवित चरन रसाल ।
वृंदावन विलसत अजहुं श्री राधा माधव लाल ॥
श्री राधा माधव लाल विहारी जी सन्निधि लखि ।
सेवे चंद्र गोपाल रूप सुंदर चित्रा सखि ॥
रामराय सम्बन्ध प्रेम वल्लभ कुल सब सुखि ।
सेवा सात्विक भाव एक दिन हौं देखी चखि ॥
मिले मोहि गोस्वामी श्री व्रज किशोर सेवा लगत ।
दर्शन वृन्दा विपिन फल हरिश्चन्द्र जेही जगत ॥

श्री प्रभु रामराय जी के शिष्य कोई महाराजा भगवानदास थे और श्री चंद्र गोपाल जी के शिष्य वंगदेश के राजा रसिक मोहन राय थे। राजा रसिक मोहन ने जिनको चंद्र सखी का अवतार बताया गया है इस ग्रन्थ के प्रत्येक सुधा के आदि अंत में अपनी कविता जोड़ दी है। इन्होंने "सेवक वानी" भी लिखी है जिसका विवरण प्रस्तुत खोज विवरण में अन्यत्र दिया गया है।

ग्रन्थ स्वामी का कहना है कि महाराजा भगवानदास जी ने गोवर्द्धन में सानसी गंगा घाट और हरदेव जी का मंदिर पक्का बनवाया था। भगवान दास जी को रामराय जी ने उपदेश में 'हितु' पद दिया है। 'भगवानहित' के नाम से जितने पद मिलते है उसमें "हित" न होकर 'हितु' होना चाहिए। अपनी वाणी में रामरायजी ने कितने ही जगह 'भगवान' संबोधन करके उपदेश दिया है। अस्तु श्री प्रभुचन्द्र गोपाल जी श्री चित्रा सखी के अवतार कहे गए है। वे माध्व संप्रदाय के सप्तम् पीठ के आचार्य थे। इनकी वंशावली ग्रन्थ स्वामी ने स्वयं लिख कर दी है। यह वंशावली सुप्रसिद्ध गीत गोविन्दकार के पिता श्री भोजदेव मिश्र से आरंभ होती है। ये लाहौर के रहने वाले सारस्वत ब्राह्मण थे।

वंशावली

लवपुर (लाहौर) निवासी श्री सारस्वत द्विजमार्तण्ड आचार्यों की वंशावली और कृतियाँ

नाम आचार्य	कृतियाँ
श्री १०८ श्री भोजदेवजी मिश्र	श्री जगन्नाथाष्टकम् संस्कृत
,, श्री जयदेवजी कविराज	श्री गीतगोविन्द ,,
श्री कृष्णदेव कविराज	श्री गंगास्तवराजः ,,
श्री गोविन्ददेवजी	श्री यमुना तरंग ,,
श्री मुकुन्ददेवजी	सांख्य तत्वम् ,,
श्री अनन्यदेवजी	लीलारस सुधा ,,
श्री माधवलालजी	
श्री प्रद्युम्नलालजी	

श्री मोहनलालजी

श्री नन्दगोपालजी

श्री गुरु गोपालजी

श्री रामगोपालजी (श्री रामरायजी)

१–वेदान्त दर्शन चतुः सूत्रवृत्तिः
२–श्री स्तवपञ्चकम्
३–श्री मद्भगवत गीता (गौरभाष्य)
४–श्री गौर गीता
५–श्री गीत गोविन्द तत्व दीपिका
६–श्री कृष्ण चैतन्योक्त शिक्षाष्टक
नित्यानन्द भाष्य (हिन्दी)
श्री आदि वाणी जी ४००० पद

भ्राता गृहस्थ—श्री चन्द्र गोपाल गोस्वामी

संस्कृते–वेदान्त दर्शने श्री राधा माधव भाष्यम्
अष्टक चतुष्टयी
हिन्दी–१–श्री चन्द्र चौरासीजी राधाविरह

श्री राधा गोपालजी गोस्वामी — १ सेवा विलास (हिन्दी)
श्री ब्रह्म गोपालजी ,, — अष्टयाम भावना
श्री कल्याण रायजी ,, — पदावली (भाषा में)
श्री चुन्नीलालजी ,, — ,,
श्री नंदकिशोरचंद्र ,,

संस्कृत १—श्री शुकदूत महाकाव्यम्
२—श्री गौर प्रेमोल्लास काव्यम्
३—श्री गोविंद गुणार्णव नाटक
४—श्री राधा विहार चम्पू
५—श्री भागवत दर्पण
६—श्री रासलीला शिखरिणी
७—श्री भागवत टीका बालबोधिनी
८—श्री यमुनाष्टक
९—श्री राधारमणाष्टक
१०—श्री गोविंदाष्टक
११—द्वादस मास प्रबन्ध

हिन्दी १—सेवा निबन्ध
२—श्री शुक पदावली

श्री नन्द किशोर चन्द्र गोस्वामीजी के लघु भ्राता संस्कृत — उद्धव सन्देश व्याख्या

श्री व्रज किशोरजी गोस्वामी हिन्दी — रस निधि

श्री वासुदेव गोस्वामी
श्री प्रियतम लाल गोस्वामी (संस्कृत) श्री राधा कृपा कटाक्ष टीका
सुख निकेतन।
श्री यमुना वल्लभ गोस्वामी नाम महात्म्य टीका
प्रेमोल्लास टीका
वंश प्रदीप
श्री यमुनाष्टक
श्री राधाष्टक
श्री वनमाली प्रार्थनाष्टक
(हिन्दी) श्री रसिक भक्तमाल

संख्या २५ ए. बानी चरनदासजी की, रचयिता—चरनदास, कागज—देसी, पत्र—४, आकार—६ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० परमानंदजी, ग्राम—नोनेरा, डा०—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर।

आदि—जै गुरु भोगी होय तो कृष्ण सम जानिये।
जै गुरु लोभी होय तो बावन मानिये॥
जै गुरु में अभमान तो परसही राम है।
जै गुरु मोही होय तो राजा राम है॥
जै गुरु क्रोधी होय तो नरस्यंघ रूप है।
गुरु नारायन जानि यह बात अनूप है॥
सत गुरु में ये अंग कवहुँ नहीं होयंगे।
भक्ति दिढावन काज मैंने कहे॥
यह मेरे उपदेस हीये में राषियो।
गुरु चरना मन राष सेवा तन गारियो॥
जो गुरु घर के लाष तो मुख नहीं मोरियो।
गुरु सुनेह लगाय सवन सु तोरियो॥
जै सिषसाँचाहोय तो आपा दीजिये।
चरनदास का सीष समझि कै लीजिये॥

॥ कुंडलिया ॥

अंत—त्रेता में तप साधते आसन संजमधारि।
पांचौ इन्द्री रोकते जब मन जाता हार॥
जब मन जाता हार षैंच अनहद में धरते।
कै अपनो ही ईष्ट ध्यान ताही को करते॥
आप विसर्जन होय मुकत निहचै कर पाते।

चरनदास सुषदेव तपस्या चाल दिषाते ॥ १ ॥
द्वापर पूजा वंदना प्रेम सहेत जो होय ।

× × ×

पुजा कहिये दोय जैसी जाके मन भावै ।
धारैं नेम अचार अंत ना चित्त डुलावै ॥
हित करि पुजा कीजिए द्वापर को यहि भेव ।
चरनदास नेहचै करो कहि या गुरु सुषदेव ॥ ८ ॥
कलिजुग हरि गुनगाइये गुंना वाद ही सार ।
भजन करै मन मगन होय भै और सकुच निवार ॥
भै और सकुचनिवार तिरौ कलजुग ही के मांहि ।
सुषदेव कहै चरनदास सौं तारो गह गह वांह ॥

विषय—गुरु तथा परमात्मा की भक्ति वर्णन की गई है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल दूसरे ग्रंथ के लिपिकाल के आधार पर दिया गया है जो इसी के साथ एक ही गुटके में सम्मिलित है ।

संख्या २५ बी. चरणदासजी के पद, रचयिता—स्वामी चरणदास, कागज—देसी, पत्र—१०, आकार—६ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० परमानंद, ग्राम—नोनेरा, पोस्ट—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर ।

॥ राग सीठना ॥

आदि— टुक रंग महल में आव कि निर्गुन सेज विछी ।
जहाँ पवन गवन नहिं होय जहाँ जा सूरत बसी ॥
जहाँ तिरगुन विन निर्वान जहां नहीं सूरज ससी ।
जहाँ हिल मिल के सुषमान मुक्ति की होय हसी ॥
जहाँ पिय प्यारी मिल एक कि आसा दुइनसी ।
जहाँ चरनदास गलतान की सोभा अधिक लसी ॥

अंत— तेरी छिनछिन छीजत आव समझ अजहूँ भाई ।
दिन दो का जीवन जान छांड़ दै गुंमराई ॥
सुन मूरष नर अज्ञान चेतता क्यों नाहीं ।
कहा फुल्या फिरत गंवार जगत झूठे मांहीं ॥
कीयौ काम क्रोध सौं नेह गही है अकड़ाई ।
मतवारा माया मांहि करत है कुटिलाई ॥
तेरो संगी कोऊ नाहीं गहै जब जम वांही ।

सुषदेव चितावैं तोही त्याग दै मचलाई ॥
चरनदास कहै भजि राम यही है सुषदाई ॥
॥ श्री रामजी ॥

विषय—ज्ञान और भक्ति विषयक उपदेश वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—इन पदों के रचयिता श्री सुषदेव जी के सुप्रसिद्ध शिष्य चरनदास हैं । रचनाकाल नहीं दिया गया है । लिपिकाल दूसरे ग्रंथ स्वरोदय के लिपिकाल के आधार पर दे दिया गया है जो इसी ग्रंथ के बाद इस गुटके में लिपिबद्ध है ।

संख्या २५ खी. स्फुट पद और कवित्त, रचयिता—श्री स्वामीचरणदास जी (निवासस्थान, दहरा और दिल्ली), कागज—देसी, पत्र—१५, आकार—५½ × ४¾ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मूलचंद जी, ग्राम—बुखरारी, डा०—छाता, जिला—मथुरा ।

॥ राग काफी ॥

आदि— कोई आन मिलावौरी स्याम सुजांन कूं ।
नंद दुलारो मोहन सोहन अजब अनोषो छैला ।
मदन गुपाल मुकुंद मुरारी मेरो जीवन प्रान री ॥
नैनन नींद न आवै सजनी कलन परै दिन रैना ।
ब्याकुल भई फिरत हौं वौरी भूली षांन और पान री ।
जो कोऊ हितू होय है मेरौ आली लालन की सुध लावैं ।
दरस दिषाय हरैं सब ब्याधा मोकू दै जी दान री ॥
छिन छिन छिनगत और होत है लगो बिरह को बांनां ।
चरनदास की पीर मिटावैं सुंदर सुष के निधान री ॥ १ ॥
लटकरी चाल पै वारी जांदियां ।
रैन दिनां सांनू ध्यान तु सांडौ मन वच कै हूँ दी बांदियां ॥
कुंडल कान मुकुट सिर सोहै सोभा अधक सुहांदियां ॥
अलबेली छवि बांके नैंना निरषत नैंन लुभांदियां ॥
जव बाजी प्यारे तैंडी बंसी षांनपान विसरांदियां ॥
भूल गई घर काज साज सब लाज छांड उठआंदियां ॥
चरनदास हम भई तिहारी फूली अंग न समांदियां ॥
राषसरन सुषदेव पियारे चरन कंवल लपटांदियां ॥

× × ×

अंत —

तारी जो लगाय देषो वेद अर्थ पाय देषौ भक्ति विना अषिल ईस किन्हू नांहि पायो है ।
दसों दिसाधाय देषो तीरथ हू न्हाय देषो भटको सब प्रेम बिना सुमृत यौं गायो है ।

हिवारे तन गार देषो करवत सिरमार देषौ ऐसी ऐसी बातन चौरासी भरमायो है।
भाषै चरनदास सुषदेव के प्रताप सेती आदि पुरुष भक्ति हेत नंद ग्रेह आयो है।
मूंड हू मुंडायदेषौ जटा हू रषायदेषो सेवरा कहाय देषो भेद हू न पायो है।
सरवन चिराय देषो नाद हू बजाय देषौ··· ··· ··· ··· ···

× × ×

—अपूर्ण—

विषय—होरी तथा भक्ति विषयक पद और कवित्त रचे गये हैं।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। विशेष के लिए देखिए, "पद और कवित्त" का विवरण पत्र। प्रस्तुत संग्रह में 'स्फुट पद और कवित्त' संग्रहीत होने से ही मैंने यह नाम रखा है। हस्तलेख में कोई नाम नहीं दिया है।

संख्या २५ डी. मटकी और हेली, रचयिता—श्री स्वामी चरणदास जी (निवास स्थान, दहरा और दिल्ली), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—५½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७, पूर्ण, रूप—पुराना (अत्यन्त जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मूलचन्द जी, ग्राम—बुखरारी, पो०—छाता, जिला—मथुरा।

आदि—श्री ॥ मटकी ॥

पीरा फेंटा तुर्रा ··· ··· ··· ··· बुलाक ··· ···
··· ··· ··· ··· ···
सब तन कक्षैं सजै अ ··· ··· ··· ···
चरनदास देषत मन व्याकुल चट चौपट मटकी पटकी ॥ १ ॥

॥ मटकी ॥

सुन्दर रूप सलौंनी स अषियां तिलक भाल अलकैं अटकी।
मोर मुकुट कुंडलक झलकैं चरनद्वास हिय मैं षटकी ॥
मोतियन की माला मुर······सुध न रही पियरे पटकी।
चित्त चुराय जबही लीन्हौ चट चौपट मैं मटकी पटकी ॥ २ ॥
मुरली की धुन सुन विरह वान लग आय कलेजे में षटकी।
दध भाजन लै धरो सीस पर मोहन देषन कूं सटकी ॥
चरनदास काहु कि न मानें, सास ननंद केतो हटकी।
चार दिरग जब भये स्याम रूप चट चौपट मटकी पटकी ॥ ३ ॥
हस्तादेष मदन मोहन कूं ग्वालन आपन कूं ठटकी।
दौर कन्हैया जाय गही जब पकर चीर कर सूं झटकी।
चरनदास हूँ हाहा करती सुन्दर पायन कूं लटकी।
केतो कहो जु कछू नहीं मानत ले मटकी चट चौपट पटकी ॥ ४ ॥

कहे जसोमत सुनौ ग्वारनी तू आई भूली भटकी।
मेरो कान्ह अति बारो भोरो कहा जानैं फोरन मटकी॥
अधरन दूध नहीं अब सूको बालक बुध वाही घटकी।
चरनदास तू झूठी ग्वारन किन मटकी चोपट पटकी॥ ५॥

अंत—नंद लला की बात हेली।
......नहिं कह सकूं सुक......जी मैं कहुँ री।
अरी हेली मोपै कह्यौ न जात अपनी अटा जो हूँ चढूं री।
अरी हेली सौं ही देषै आय लालच लागौ ही फिरै।
मुरली की टेर सुनाय मोह देष हकध कर हेरी।
अरी हेली गहरे लेत उसास × × ×

× × ×

देखत ही सुष उपजैरी अरी हेली ओट भये दुष होय।
चरनदास हरि की भई नेंन लुभाने दोय॥ २॥

॥ श्री सुषदेव जी सहाय: ॥ श्री॥

विषय—श्री कृष्ण का दही की मटकियों को फोड़ना तथा गोपियों का विरह वर्णन।

संख्या २५ ई. पद और कवित्त, रचयिता—स्वामी चरणदास जी (निवास स्थान दहरा और दिल्ली), कागज—देसी, पत्र—३४, आकार—५½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मूलचन्द जी, ग्राम—बुखरारी, पो०—छाता, जिला—मथुरा।

आदि—॥ राग आरती॥
ऐसैं आरती कर हुलसांवैं। दै परकम्मा सीस नवावै॥
तथ कौ थाल और मन कौ चौमुष ज्ञान ध्यान की बाती लावै॥
भक्त भाव को घी भर तामैं जगमग जगमग जोति जगावै॥
अरध उरध हित सूं कर फेरै रचना रचै फूल वरषावै॥
सुरत मृदंग और निरत तंबूरा झैंगड झैंगड झांझ बजावै॥
ताल बीन सुख वंग संख धुन प्रेम मगन होय हरि गुन गावै॥
सोरन कलसा जल को राषै धूप और अगर सुगन्ध धरावै॥
या विध सों सुषदेव स्याम की गाय आरती को फल पावै॥
जुगल किसोर निरख नैंनन सों चरनदास सषी बल बल जावै॥ १॥

× × ×

॥ राग भैंरू॥
गुरु बिन मेरे और न कोय। जग के नाते सब दिये षोय।
गुरु ही मात पिता और बीर। गुरु ही संपत जीव सरीर॥

गुरु ही जात बरन कुल गोत । जहाँ तहाँ गुरू संगी होत ॥
गुरु ही तीरथ बरत हमार । और सकल धरम दीनें डार ॥
गुरु ही नाम जपूं दिन रैन । गुरु को ध्यान परम सुष दैन ॥
गुरु के चरन कंवल कर बास । और न राषूं कोई आस ॥
जो कुछ चाहैं गुरु ही करैं । भावैं छांही धूप लै धरैं ॥
आदि पुरुष गुर ही कूं जानूं । गुरु ही मुक्त अरूप पिछानूं ॥
चरनदास के गुरु सुषदेब । और न दूजा लागै लेव ॥ १४ ॥

× × ×

अंत— ॥ होरी ॥

सषीरी तत मत लै संग षेलियै । रस हो सरस रस होरी हो ।
निरगुन निज निरधार सरस रस होरी हो ।
सषीरी सील... ... रियै रस होरी हो ॥
दुबधा मांन निवार सरस रस होरी हो ॥
सषीरी रहनी केसर घोरियै रस हो०
बहुरन ऐसो बार सरस रस होरी हो ।
सषीरी सतगुन कर पिचकार ले रस होरी हो ॥
तमरज कै भरमार सरस रस होरी हो ।
सषीरी गर्ब गुलाल उड़ाइयै रस होरी हो ॥
...मटकिया डार सरस रस होरी हो ।
सषीरी री झिल मिल रंग लगाइयै रस होरी हो ।
चंदन चरच विचार सरस रस होरी हो ।
सषीरी निहचल सिंधु समाइयै ॥ रस होरी ० ॥
रिम झिम झमक फुहार सरस रस होरी हो ।
सषीरी सुन्न नगर मैं नृत्तयै रस हो० ॥
अनहद झनक झिंगार सरस रस होरी हो ।
सषीरी सैन सुरत सों स .... ॥

× × ×

चरनदास रमैया रम रह्यौ सरस रस होरी हो ॥
दरसौहै फाग अपार सरस रस होरी हो ॥ ३४ ॥

× × ×

॥ अरल ॥

आतम ज्ञान बिना नहि मुक्ता बेद भेद सब देखा जोय ।
ब्रह्मा सेस महेस पूजकर बसबंह लोक रहत नहिं सोय ॥

जल पावन और भूत भवानी पूज पूज भरमां सब कोय ।
चरनदास ... ... ॥

× × ×

विषय—आरती, झूलना, ज्ञान, होरी और साधु निंदकों पर पद रचे गए हैं ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत हस्तलेख में श्री स्वामी चरणदास जी की नौ रचनाओं का संग्रह किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

१—नासिकेत, २—मनविरक्त करन गुटकासार, ३—पद और कवित्त, ४—दान-लीला, ५—मटकी और हेली, ६—काली मंथन लीला, ७—जागरण माहात्म्य, ८—माखन चोर लीला, ९—स्फुट पद और कवित्त ।

हस्तलेख के दो भाग हैं । पहले भाग में, जिसमें २१८ पत्रे हैं उपर्युक्त प्रथम तीन ग्रंथ हैं । द्वितीय भाग में, जिसमें ५८ पत्रे हैं शेष ग्रन्थ लिखे गये हैं । यह अपूर्ण एवं खंडितावस्था में है तथा सभा के लिये प्राप्त कर लिया गया है । नासिकेत, मन विरक्त करन गुटकासार तथा दानलीला के नामोल्लेख संक्षिप्त विवरण (भाग पहला) में हैं, अतः इनका विवरण नहीं लिया गया है । शेष ग्रंथों का विवरण लिया गया है । प्रस्तुत विवरण उपर्युक्त तीसरे ग्रन्थ (पद और कवित्त) का है । इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । इसमें नाम नहीं दिया है । पद और कवित्तों में रचना होने के कारण ही 'पद और कवित्त' नाम रख दिया है ।

संख्या २५ एफ. तेजविंद्योपनिषद, रचयिता—चरणदास निवासस्थान, डहरा (राजपुताना अलवर), कागज—देसी, पत्र—३, आकार—$७\frac{३}{४} \times ५\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयालजी, मु० व पो०—गोवर्धन, जिला—मथुरा ।

॥ दोहा ॥

आदि—उपनिषद जो पाँचवीं वेद अथर्वण माँहि ।
तेज विन्दु यह नाम है समझि मुक्ति हो जाहिं ॥

॥ अष्टपदी ॥

तेज विंदु के अर्थ की ही यह गुंद है । बड़े ध्यान के तेजहि की यह बुंद है ॥
उसका है यह ध्यान जो सबसे ऊँच है । सबते परे निःरूप सुद्ध और सूच है ॥
हिरदै ही कै मधि और सूछिम महा । और केवल आनंद कि नूं ज्ञानी लहा ॥
अनंत शक्ति तिहिं माँहि निरा अस्थूल है । चौहौत पिंड ब्रम्हंड सबनिका मूल है ॥
ब्रह्म विना परमान गहा नहीं जात है । वाकी तपस्या ध्यान जु कठिन दिषात है ॥
वाका देषन दुर्लभ सुलभ नहि जानना । वह तौ सिंधु अथाह कछू परमानना ॥

× × ×

अंत—परे ता परे जानि लेव ... ... ।
वासे परे ना और विचारयौ जाइना । कहै चरन ही दास कछू वामाहि ना ॥

॥ दोहा ॥

वाकू जाग्रत है नहीं वाकू सुपन न होइ ।
सुवत सुपना है नहीं जाग्रत कैसे होइ ॥

॥ अष्टपदी ॥

दोनों से न्यारा जानि जाग्रत और सुपन सूं । ऐसा कोई नाहिन जाने सत्य हू ॥
सबका जानत मूल जु जानी लोइही । दीरध और परकास जाने सबको यही ॥
जाकूं लोभ न होइ अविद्या होइना । मैं अभिमान कुकर्म जु उनके माहिना ॥
गरमी जाड़ा भूष प्यास व्यापै नहीं । पैये क्रोधनं मोह नेक वामै कही ॥
वाइ न इच्छा होइ न पूरी चाहही । कुल विद्या अभिमान न उनके मांही ॥
मान नहीं अभिमान न मन में लावही । सवसूं होइ निरवृति ब्रह्मको पावही ॥
तेज विन्दु उपनिषद संपूरण भई । गुरु सुकदेव के दास चरन दासा कही ॥
ताहि के सुणे मन मांहि विचारा ही करे । निहचैं होवै मुक्ति जगत में ना परै ॥
कही गुरू सुखदेव ने मेरी कछू न वुद्धि । पढ़ा नहीं मूरख महा मोकूं कछू न सुद्धि ॥
मेरे ही हिरदै विषै भवन कियौ गुरुआइ । वेही विराजत है सदा मेरी देह दिखाइ ॥
जव सूं गुरु किरपा करीं दर्सन दीने मोहि । रूमं रूमं में वे रमें चरनदास नहिं कोई॥

जाति वरन कुल सव गयौ गयौ देह अभिमान ।
मैं मुष सेती क्या कहू जही करै वषान ॥
रहै गुरू सुकदेवजी मैं मैं गई न जाय ।
मैं मैं तैं तैं वही है जो नष सिष रही समाय ॥ ५ ॥

विषय—यह अथर्वण वेद में से तेज विन्दु उपनिषद का हिन्दी में अनुवाद है । इसमें परब्रह्म का बड़ा ही सूक्ष्म विवेचन किया गया है.।

संख्या २५ जी. जोग-शिक्षा-उपनिषद, रचयिता—चरणदास, (स्थान; दहरा, अलवर राजपुताना), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—$७\frac{3}{4} \times ५\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६, पद्य, रूप—प्राचीन, पूर्ण, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० प्रभुदयालजी, मु० व पोष्ट—गोवर्धन, जिला—मथुरा ।

आदि— दोहा

जोग सिषा चौथी कहूँ जामें अद्भुत ध्यान ।
परजा पति ऐसें कही सिष्य सुनो दै कान ॥

॥ अष्टपदी ॥

यामें अद्भुत राह वड़े ही ज्ञान की । कांपन लागै देह कठिन सुनि ध्यान की ॥

जब आवै मन मांहि मोह तन ना रहे । पंचन ही की अगिनि नही हिय में दहे ॥
वाकी विधि अब कहूँ सवै सुनि लीजियै । वैठि इकंतर ठौर जु आसन कीजियै ॥
आसन पद्म लगाइ जु सुष आसन करै । सूधौ राषै मेरु नैंन नासा धरै ॥
दोउपावन के साथ जु हांथ मिलाइये । सब स्वादन कूं रोकि जु मनकूं लाइये ॥
परन वही का जाप जु मनमें राषियै । इस विन और उपाव सवन कूं नाषियै ॥
जाकोऊँ नाम ध्यान ताकौ करै । आठ पहर संग्राम विना षांडे लरै ॥
देह यहो अस्थूल बड़ा घर जानिये । तामें दीरघ षंभ एक पहिचानिये ॥

॥ दोहा ॥

और यामे नौ द्वार हैं, छोटे थंवातीनि । पाँच देवता ताविषैं, लहै साधय परबीन ॥
यह जो घर मैंने कहा, सो मानस की देहु । कहे गुरु सुकदेवजी, चरनदास सुनिलेहु ॥

अंत—

थोड़ा सा यह ध्यान ही में समझाया तोही । परजापति सिष सों कही बड़ा जु निश्चैं मोहि ॥
यह पदवी मोकू मिली इसी ध्यान परताप । जीवन मुक्ता ही रहूँ छूटै आप और धाप ॥
निश्चल होकें ध्यान कूं करै जु कोई और । जगत छुटै आपा मिटै निर्भै ठौर ॥

आनंद ही आनंद जहाँ अवधिन कलह कलेस ।
चरन दास इस ध्यान सूं सवै होत है दूरि ॥
दूरि करन दुष जगत के आन उपायन कोई ।
जोगी कूँ या ध्यान सम, और वस्तु ना कोई ॥
उपनिषद चौथी यही भई समापति एह ।
चरनदास कहे पाँचवी हित चित्त दै सुनि लेउ ॥

× × ×

विषय—यह उपनिषद भी अथर्ववेद से ही अनुवादित है । इसमें उस योग-शिक्षा का वर्णन है जो प्रजापति ने अपने शिष्यों को दी थी । वह योग शिक्षा इस प्रकार है :—योगी बनने के लिये एकांत में जाकर पद्मासन लगाकर दृष्टि को नाक के अग्रभाग पर जमावे । दोनों हाथों को पैरों से मिलावे, मेरुदंड को सीधा रखे । सब स्वादों को छोड़ कर परब्रह्म का जाप करै । आठों पहर दुष्ट इन्द्रियों से हठ पूर्वक युद्ध करता रहे । इस स्थूल देह को एक बड़ा घर समझना चाहिये । इसमें मेरुदंड ही एक बड़ा खंभ है । इसमें नव इन्द्रियाँ नव द्वार हैं सत, रज और तम तीन खंभा हैं । पंच प्राण ही पाँच देवता हैं । इन्हीं बातों की जानकारी एक योगी को होनी चाहिये । जो योगी इस योग तत्व को अच्छी तरह से समझ कर आचरण करता है वह मृत्योपरान्त सायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है ।

संख्या २५ एच. तत्व जोग नामोपनिषद्, रचयिता—चरणदास (निवास स्थान, देहरा, अलवर), कागज—पुराना देशी, पत्र—२, आकार—७$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयाल जी, मु० पो०—गोवर्धन, जिला—मथुरा ।

आदि—तीजी और जु कहूँ अथर्वण वेद की। तत्तजोग जो नाम गुप्त ही भेद की॥
अपने सिष सों कह्यो जो प्रजापति ने। जोग सार कहूँ जु पावै तत्त ने॥
जोगेस्वर कूं लाभ होइ माके कियें। पढ़े पाप भजि जाय सुने राषे हिये॥
निश्चैं होवै मुक्ति यही तू जानियौं। चौथे पद लहै वास साँच करि मानियौं॥
बड़ा जोगेस्वर विष्णु अधिक तप ज्ञान है। जाकी माया गद्य नही परमान है॥
जोगी करके जोग सु जोति निहारि ही। दीपक कीसी लोइ लषै होइ पारही॥
सो वह विष्णु स्वरूप सबनि के मांहि है। घटघटमें भरि पूरि षाली कोई नाहीं है
ऐसी जोति है छोड़ि आन मन लावई। वे नर भोंदू जानिहि जु कूर कहावई॥

॥ दोहा ॥ दूध पियौ जिनि कुचनिसूं तिनि कूं मलि सुष लेत॥
जनम षोइ षाली चले नारिन सूं करि हेत॥

॥ अष्टपदी ॥

अंत—तर्जनि अंगुलि दोइ द्रगन पर दीजियै। मधिमा से दो नाक छेद बंद कीजियै।
अनामिका दोऊ हांथ की और कनिष्टिका। होठन कूं बंद करै जु नीके पुष्टिका।
नासा के दो छेद एक जितही भये। दो भोंहनि के बीच चरनदासा कहै।
निश्चे गहि वनार्शं देह की जानियें। वाही की तौ ओर दृष्टि कूं तानियें॥
महा कुंभक यह नाम इसी विधि साधियै। ध्यान कियें हो मुक्ति यही आराधिये॥
इन्द्रीहिन के मारग कूं जो बंद करै। वाइ विना घर माहि जैसें दीपक बलै॥
होइ घना परगास इसी जो देह में। इसी ध्यान परताप मिलैगा गेह में॥
पावैं सुद्ध चैतन्य किये इस जोगही। कर्मनि कौ हो नास मिटै मन रोग ही॥

॥दोहा॥ उपनिषद पूरी भई नाम जोगही तत्त। अंग अथर्वन वेद की चरनदास कही सत्य॥३॥

विषय—यह उपनिषद भी अथर्ववेद से अनूदित है। इसमें योग क्रिया द्वारा ध्यानस्थ होकर प्रणव जाप से मुक्ति प्राप्त होना कहा गया है।

संख्या २५ आइ. सर्वोपनिषद, रचयिता—चरणदास कृत (स्थान, दहरा, अलवर, राजपूताना), कागज—पुराना देशी, पत्र—३, आकार—७३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयाल जी, मु० पो०—गोवर्द्धन, जि०—मथुरा।

आदि—सर्व उपनिषद भाषा॥
उपनिषद जो दूसरी ताकूं कहूँ × × ×॥
......नाम तिंह जानिये तहि देहुं प्रगटाइ॥

॥ अष्टपदी ॥

पर्जा पति के सिष्य पूछी जो आइकें। बंध मुक्ति के भेद कहौ समझाइ कें॥
कासों कहें बंध मुक्ति कासों कहें। विद्या अविद्या भेद कहौ कैसे लहें॥

जाग्रत सुपन सुषोपति मोहि बताइये। और तुर्या को भेद जु सबई सुनाइये ॥
कोठे पाँच को भेद गुरु वर्णन करौ। जुदे जुदे समझाइ तिमिर दुविधा हरौ ॥
पहला अन सूं भरा दूजा भरा प्राण सों। तीजा मनसूं भरा चौथा बुद्धि राणि सों ॥
पंचमा आनंद भरा मोहि कहि दीजिये। हूंतो चरणहिदास जु किरपा कीजिये ॥
आतम कूं अकर्त्ता कहु कैसे कहै। किन अर्थन से जीव जु याही कों लहै ॥
और याकौं कहै देहं कौ जानहार है। देह का साषी कहै जु कौन विचार है ॥
यैसो यह बंधन बध्यौ कहैं तजनिबंध। अंतर्जामी क्यौं कहैं मोहि बताओ सिंधु ॥
आतम ही कूं क्यों कहैं जीव आत्मा जानि। माया जासूं कहत हैं दूरि करौ अज्ञान ॥

अंत—सर्व समैं सक ठौंर में इक रस नित रहे। तत्व मसी को लर्थ वही तू सत्य है ॥
जब तू करि के ध्यान होइ परब्रह्म ही। आपुनही कूं पाइ जाइ सब भर्म ही ॥
मै तू मिटि जाइ दूसरी बास ही। आदकू व्यापक जाने सुद्ध अकाश ही ॥
और जाने निर्लेप सत्य और ये कहो। तब परमातम होइ रूप ना रेषही ॥
ज्यों रसरी को सर्प भर्म सो मानिये। समझि लषौ जब झूठ माया जानिये ॥
सांचा लगे झूठ झूठ सचना रहे। माया यही सुभाव भर्म अग्यान है ॥
रसरी कूं कहैं सर्प जु अपने भर्म सू। एसेही जड़ कहैं सनातन ब्रह्म कूं ॥

दोहा

झूंठ जगत दीसत रहे दीसे ना सत ब्रह्म।
यही जु माया जानिये, यही तिमिर यहि भर्म ॥
गुरु सुकदेव प्रताप सूं, कही चरनहि दास।
यही अथर्वण वेद की, सर्व उपनिषद भास ॥

विषय—यह अथर्वण वेद के सर्वोंनिषद का हिन्दी अनुवाद है। इसमें विद्या, अविद्या, बंधन, मुक्ति, जगत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुर्य्या, पंचकोष, आत्मा और जीव, माया आदि का प्रजापति और उनके शिष्यों के संवाद के रूप में वर्णन किया गया है।

संख्या २६. भावना सागर, रचयिता—गोस्वामी श्री चतुर शिरोमणि लालजी (स्थान, वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—४०८, आकार—१०½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६३०, गद्य, रूप—प्राचीन, पूर्ण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६८ वि०, लिपिकाल—सं १९६४ वि०, प्राप्ति स्थान—गोस्वामी—श्री हित रूपलालजी, अधिकारी, श्री राधा वल्लभ मंदिर, वृन्दावन, मथुरा।

आदि—श्री हित हरिवंस चन्द्रो जयति ॥ श्री हित राधा वल्लभौ जैति ॥

अथ भावना सागर हित विलास लीला श्री अनन्य सार कुंजन कौ मंगला चरन लिष्यते ॥ वचनिका ॥ प्रथम श्री मुख गिरा

अश्लोक श्री राधा सुधा निधौ ॥

ब्रह्मेश्वरादि सुदरूह पदारविंद श्री मत्पराग परमाद्भुत वैभवाया ॥

सर्वार्थ सार रस वर्षि कृपाद्रिदृष्टे स्तस्या नमोस्तु वृषभानु भुवौ महिम्ने ॥ १ ॥

सो कैसे प्राप्ति होय ॥ ताते कृपा साधि लिषी । सो कृपा कैसें होइ । जब श्री हरि वंश चन्द्र जू अपनाइ शर्ण दें ॥ श्री हरि वंश चंद्र जू कैसें प्राप्ति होई । जब श्री सेवक जू या रस के सुषीया कृपा करि रसिकन को संग देंहि ॥ तहां प्रथम श्री सेवक जू महाराज कों भजै ॥ प्रमान श्री नागरीदासजी की वानी ॥ प्रथम श्री सेवक श्री पद सिर नाऊं ॥ करहु कृपा श्री दामोदर मोपै श्री हरिवंश चरन रति पाऊं ॥ गुन गम्भीर व्यास नंद जू के तुव प्रसाद सुजस रस गाऊं ॥ नागरीदास के तुमहि सहायक रसिक अनन्य नृपति मन भाऊं ॥ १ ॥

अंत—समाप्ति में ॥ होइ पद प्रीति सुराधा ॥ तातें यहाँ हू श्री राधा चरण प्रधानता ही ग्रंथ में गाई ॥ आदि तें अंत तोरो ॥ प्रेम परावधि है । तहाँ श्री मुष वाक्य ॥ भावै सो करहु प्रेम के नातैं ॥ तातैं इन अछरन कौ आसरौ लै वर्नन भयौ ॥ नहीं या तुछ जीव की कहा सामर्थ है । तहाँ याही की साषि सेवक जू लिखी ॥ कै ॥ सहज प्रेम रस सांचे पाक ॥ रांक ईस समुझत नहीं ॥ ताते रस के सब अधिकारी हैं ॥ तातें प्रेम प्रधान है । प्रात्र भेद नहीं ॥ और विवाह उत्सव की भेट में प्रेम लछना भूर में वाँट ही चुकी हैं ॥ तामें दासी कौं हू मिली नित्य विहार ॥ ४ ॥ ससि वसु रस और अट्ट पुन माधव सुक्ला ग्यास ॥ संवत इनसौं जानियै जुगल चरन की आस ॥ ५ ॥

इति श्री गोस्वामी श्री चतुरसिरोमणि लालजी कृत भावना सागर संपूरण कीजे जै श्रीहित हरि वंश चंद्र वरजू ॥ संवत् ॥ १९६४ ॥ पौष वदि दूज ॥ ६ ॥ राधिका शरण उपनाम संतदास ने लिषी ।

विषय—राधा वल्लभजी की प्राप्ति श्रीहित हरिवंश चंद्रजी के अपनाने से या शरण देने से होती है । और उनकी यह कृपा श्री सेवकजी के अनुग्रह पर निर्भर है । श्रीहित हरिवंश के तीन स्वरूप स्थिर किये गए हैं—१—आचार्यत्व का जिससे वह करुणा करके संसार को उपदेश करते हैं, २—मुरली का है जिससे राधा वल्लभजी को प्रसन्न करते हैं, और ३—सहचरी का है जिससे वे राधाजी की सेवा करते हैं ।

इस प्रकार इस ग्रंथ में राधा वल्लभ सम्प्रदाय के अनुसार भक्त को किस प्रकार अपनी भावनाएँ स्थिर करनी पड़ती हैं, वह इस सम्प्रदाय के अनेक कवियों के दृष्टांत देकर वर्णन किया गया है । ग्रंथ रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है :—

ससि वसु रस और अट्ट पुन माधव सुक्ला ग्यास ।
संवत इनसौं जानियै जुगल चरन की आस ॥ ५ ॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ श्री गोस्वामी चतुर शिरोमणि लाल कृत है । इनका विशेष वृत्त इस ग्रंथ में नहीं दिया है । यह ग्रंथ विशेष रूप से गद्य का ही समझा जाना चाहिए । इसके पद्यांश अन्य कवियों के हैं जो केवल दृष्टांत के रूप में लिए गए हैं ।

रचनाकाल १८६८ है। लिपिकाल संवत् १६६४ वि० है।

संख्या २७. अलंकार आभा, रचयिता—मिश्र चतुर्भुज, कागज—आधुनिक, पत्र—११८, आकार—८½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप)—२३८९, पूर्ण, रूप—नवीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९६ वि०, लिपिकाल—सं० १९७७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० मदनमोहनलालजी आयुर्वेदाचार्य, भरतपुर (रियासत)

आदि— श्री कृष्णायनमः

सुभग सजल नील नीरद वरन राम सुथिर तडित राजैं जानकी जू वाम भाग।
अंग अंग भूषण खाचित मणि जाल मंजु गज गणि माल पीत नील पट छवि जाग।
मधुर किशोर तिन्हें सेवै सखी चहूँ ओर ढोरै चौर विजन विथोरैं हंसि अनुराग।
चतुर निहोरैं तहां दुहूँ कर जोरैं मांगै मंगल अनल फल प्रभु पद प्रेम पाग॥

दोहा—सकल अमर शिर मुकुट मणि नीराजित जिहिं नीर।
सो चिद्घना तरंगिणी मो उर वसौ सधीर॥
गणप गिरा श्री गुरु चरण बन्दौ शिश नवाय।
मांगौं इहिवर देहु सव फुरौ अर्थ उरु आय॥ ३॥

× × ×

श्री वलवंत भुवाल के मन रंजन के हेत।
बिरच्यौ ग्रंथ नवीन यह रसिकन हरष निकेत॥ ६॥

॥ छप्पय ॥ मंगल मय शुभ ब्रज सुदेश मण्डल भुव मण्डन।
तहं रजधानी भरथ नगर जग ओप उमंडन॥
वसत जहाँ नृप निज विभूति भूषित बड़ भागी।
नर मुनि अमर सराहत लषि हरिपद अनुरागी॥
वलवंत सिंघ इहिनाम जिहि यदु कुल कमल कलानिधि।
अरि गण वन दहन अनन्त वल संत कमल रवि तप विधि॥ ७॥

× × ×

ग्रंथ प्रयोजन

दोहा—शब्द तत्व पर ब्रह्म है या विधि वरनै वेद।
सो दरशै कवि वचन मैं कवित्त स्वरुप अखेद॥ ११॥
काव्य सारहू शब्द शुभ शब्द सार श्रुचि अर्थ।
अर्थ सार भूषण विशद या विनि सवै निरर्थ॥ १२॥
जिते शब्द के फुरै याहि अनुकूल।
यातें दशहू अंग मैं अलंकार रस मूल॥ १३॥
मैं हूँ यही प्रमानि कै कविजन मति अनुसार।

"अलंकार आभा" इहै, विरच्यौ ग्रंथ उदार ॥ १४ ॥
अप्पय दीक्षित नैं कहै, नये और प्राचीन ।
अलंकार जे अर्थ के तिनही रच्यौ कछू बीन ॥ १५ ॥

अंत—या विधि हो भूषण रचे अर्थ मणि गणन लाय ।
स्वमति कनक कल पत्र लै गुरु पद गुनी मनाय ॥ १ ॥
जाते मेरौ हेतु है ताकौं वरणौं वंश ।
सोमनाथ कवि जिमि कियौ स्वकृत ग्रंथ परशंश ॥

राजकुल प्रशंसा छप्पै—जगत सफल हित भये, प्रथम जदुवंश नन्द नृप ।
तिन घर श्री हरि आय तिहि कुल भाव सिंघ अप ॥
तिनकै प्रगट प्रताप भूप भये वदन सिंघ वर ।
तिन सुत सूरज मल्ल तासु रणजीत विजय वर ॥
वलदेव सिंह तिनकैं नृपति गुणसागर हय सूर मणि ।
वलवंत सिंघ तिनकै सुवन जिन्ह हित इय शुभ ग्रंथमणि॥१॥

कविकुल कथनं—गौतम मुनि कुल तिलक मिश्र भूधर भूधर सम ।
सुकुल अहलुवा अछि रामपद दरश विगत तम ॥
तिनिकै वेद स्वरुप मिश्र भये नंदराम जू ।
तिन सुत तुलसीराम मिश्र गुण गणित ग्राम जू ॥
तिनिके सुत मिश्रखुस्याल रामकृष्ण तिन जस धरन ।
सुत मिश्रचतुर्भुज तासु जो अलंकार आभा करन ॥२॥

६ ९ ८ १
दोहा—संम्वत रस निधि वसु शशि शिशिर मकर गत भानु ।
माघ असित तिथि पंचमी, सुर गुरु समैं प्रमान ॥ १ ॥
श्याम सरोरुह दाम मनोहर अंग प्रभा इन नैनन छावौ ।
माधुरि सो मुसुकानि सुहावनि जानि परौ चित्त चौंप जगावौ ।
दूलह संग सिया दुलही मिलि दै भुज अंश प्रशंसत आवौ ।
दम्पति हू रघुनायक जू पद पंकज मंजुल हीय बसावौ ॥
दोहा—सिया रमण रुकमणि रमण राधा रमण उदार ।
भक्त रमण करुणा रमण सो प्रभु करौ प्रचार ॥

सब गुण धाम पूरण काम मन विश्राम जै श्री राम ॥ इति श्री मन्महाराजाधिराज जदु वंशावतंस श्री मन्नृपेन्द्र वर भूप वलवंतसिंह हेत मिश्र चतुर्भुज कृत अलंकार आभा सम्पूर्णं तामगात् मिति जेष्ठ शुभ १३ रविवार सम्वत १९७७ ता० ३० मई सन् १९२० को पुस्तकालय सरकारी ते नकल करी हस्ताक्षर मिश्र दामोदर लाल वै० भरतपुर मध्ये महाराजा श्री १०८ कृष्णसिंहजी राज्ये शुभम् ॥

विषय—अप्पय दीक्षित के मतानुसार अर्थालंकारों का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया है :—

१—मंगला चरण—आश्रय दाता को आशिर्वाद, ग्रंथ प्रयोजन वर्णन ।

१ २ ३ ४ ५ ६
२—अर्थालंकार वर्णन—उपमा, उपमोयोपमा, प्रतीप, रूपक, परिणाम, उल्लेख,
७ ८ ९ १० ११ १२ १३
स्मरण, भ्रांतिमान, अपन्हुति, उत्प्रेक्षा, रूपकातिशयोक्ति, तुल्ययोगिता, दीपकालंकार,
१४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२
प्रतिवस्तूपमा, दृष्टांत, निदर्शना, व्यतिरेक, सहोक्ति, समासोक्ति, परिकर, परिकरांकुर, श्लेष,
२३ २४ २५ २६ २७ २८ २९
अप्रस्तुतप्रशंसा, प्रस्तुतांकुर, प्रर्मायोक्ति, व्याजस्तुति, व्याजनिंदा, आक्षेप, विरोधाभास,
३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८
विभावना, विशेषोक्ति, असम्भव, असंगति, विषम, सम, विचित्रालंकार, अधिक; अल्पालंकार,
३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६
अन्योन्य, विशेषालंकार, व्याघात, कारणमाला, एकावली, मालादीपक, सार, यथासंख्य,
४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४
पर्याय, परिवृत्ति, परिसंख्य, विकल्प; समुच्चय, कारकदीपक, समाधि, प्रत्यनीक, काव्य-
५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१
अर्थापत्ति, काव्यालिंग, अर्थान्तरन्यास, विकस्वर, प्रौढोक्ति, संभावना, मिथ्याअध्यवसित,
६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ८० ८१ ८२
ललित, प्रहर्षण, विषादन, उल्लास, अवज्ञा, अनुज्ञा, लेषा, क्षुद्रा, रत्नावली, तद्गुण, अतद्गुण,
८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२
अनुगुण, मीलित, सामान्य, चित्र, सूक्ष्म, पिहित, व्याजोक्ति, उन्मीलित, विशेष, गूढ़ोत्तर,
९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १०२
गूढ़ोक्ति, युक्ति, लोकोक्ति, छेकोक्ति, वक्रोक्ति, स्वभावोक्ति, भाविक, उदात्त, अत्युक्ति, निरुक्ति,
१०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८
प्रतिषेध, विधि, हेतु, अनुमान, संसृष्टि, संकर ।

३—राजकुल वर्णन, कविकुल वर्णन, ग्रंथ रचनाकाल वर्णन और समाप्ति ।

रचनाकाल—सम्वत रस निधि वसुशशि शिशिर मकर गत भानु ।
माघ असित तिथि पंचमी सुर गुरु समै प्रमान ॥ १ ॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार का नाम मिश्र चतुर्भुज है । अपनी कुल परंपरा ये निम्न-लिखित प्रकार से वर्णन करते हैं : —

मिश्रभूधर
|
मिश्रनन्दरामजू
|
तुलसीरामजू
|
मिश्रखुस्याल
|

|
रामकृष्ण
|
मिश्र चतुर्भुज (ग्रंथकार)

ये गौतम गोत्रीय शुक्ल अहलुवा अल्ल के थे। इनके आश्रयदाता श्री बलवंत सिंह महाराज (भरतपुर नरेश) थे जिनके लिये प्रस्तुत ग्रंथ रचा गया। शायद, जैसा, ग्रंथ स्वामी का कहना है ये रियासत भरतपुर के ही रहने वाले थे। ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १८९६ वि० है। यह भरतपुर राज्य पुस्तकालय वाली प्रति से ग्रंथ स्वामी के पिता के बड़े भाई द्वारा सं० १९७७ वि० में लिपिबद्ध हुआ।

रचयिता ने इसमें अप्पय दीक्षित के मतानुसार कुवलयानंद के आधार पर केवल अर्थालंकारों का ही वर्णन किया है। किंतु इसकी एक विशेषता यह है कि अलंकारों की विवेचना विस्तृत रूप से गद्य में भी की गई है जिससे विषय स्पष्ट समझ में आ जाता है। गद्य ब्रज भाषा में है। अब धीरे धीरे यह स्पष्ट होता जा रहा है कि रीति ग्रंथों के प्रणयन में जिस गद्य विवेचनात्मक शैली की आवश्यकता समझी जाती है वह कम से कम एक शताब्दी पूर्व ही ब्रज भाषा लेखकों द्वारा व्यवहृत हो चुकी थी।

संख्या २८. श्री गोवर्धन रूप माधुरी, रचयिता—चत्रभुजदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति—६, रूप—प्राचीन, अपूर्ण, लिपि—नागरी, पद्य, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८, प्राप्ति स्थान—पंडित दयारामजी, ग्राम—रामपुर, पो०—छोटीकोसी, जिला—मथुरा।

आदि— ... ... बजाइ।
सुरति सुहाइ बाधि के नेक मधुरे मधुरे गाइ हो ॥ २ ॥
रसिक रसीली बोलनी लाल गिरि चढ़ि गाइ बुलाइ।
गंग बुलाइ धूमरी नेक उंचे टेर सुनाइ हो ॥ ३ ॥
दृष्टि परे जा दिवस ते लाल तवतें रुचे न आन।
रजनी नींद न आवही बिसरयों भोजनपान हो ॥ ४ ॥
दर्शन को नेना तपे लाल वचन सुनन को कान।
मिलवे कू हियरा तपे मेरे जिय के जीवन प्राण हो ॥ ५ ॥
मन अभिलाषा है रहि लाल लागत नाहिन भेष।
एक टेंक देषों भावतो प्यारो नागर नटवर भेष हो ॥ ६ ॥
पूरण शशि मुष देषि कें लाल चित चहट्यो तिह ठोर।
रूप सुधा रस पान दे जेसे सादर कुमुद चकोर ॥ ७ ॥

अंत—कुंज भवन क्रीड़ा करो लाल सुष निधि मदन गोपाल।
हम वृंदावन मालति तुम भोगी भ्रमर गोपाल हो ॥११॥
जुग जुग अविचल राषिये लाल यह सुष शैल निवास।

श्री गोवर्द्धन रूप में वलि जाय "चत्रभुजदास" हो ॥१२॥
वंक सस रस द्रष्टी ते दरसन मन अभिलाष।
पूरण लोक मन्मथ यह रट कुंज भवन जुग वास हो ॥१ ॥

विषय—श्री कृष्ण भगवान् से गोवर्द्धन पर्वत पर युग-युग तक निवास करने की प्रार्थना है।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम चत्रभुजदास है। गोवर्द्धन रूप पर इनकी विशेष आस्था है। जान पड़ता है कि ये 'चत्रभुजदास' अष्टछाप के ही हैं। अष्टछाप के चत्रभुजदास के पिता कुंभनदास गोवर्द्धनजी के समीप जमुनावती नामक ग्राम में रहते थे। इनकी भक्ति भी उसी प्रकार की है। रचनाकाल एवं लिपिकाल अज्ञात हैं। प्रथम पत्र के न होने से ग्रंथ का नाम भी अज्ञात है। विषय के अनुसार ही इसका अनुमान से नाम रख दिया गया है।

संख्या २९. ग्रंथ त्रिपदा या त्रिपद वेदांत निर्णय, रचयिता—चिदात्माराम (संभवतः), कागज—प्राचीन देशी, पत्र—३९, आकार— $४\frac{3}{4} \times ३\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्ण), गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि० (लगभग), प्राप्ति स्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस। दाता—लाला मानसिंह, स्थान, पोष्ट—ब्याना, रियासत—भरतपुर,

आदि—अथ ग्रंथ त्रिपदा लिष्यते ॥

प्रनम्य प्रमात्मानं सद्गुरु चरन नमामिहं। त्रिधापद निर्णयं च बुध्यानुसारं च प्रोक्तं ॥ प्रथम प्रम सुन्यं निरलंभ ॥ बटबीज स्वयं ब्रह्मं अद्वैतां ता ब्रह्म ॥ आश्रिता माया ॥ गुण स्याम माया ते अति सूक्षम है ॥ गुण स्याम माया काहे तैं कहिये ॥ जा विषै तीन गुण समांनि है ॥ से गुण कूंण कौंण ॥ सत गुण रजगुण तम गुण ता माया विषैसमि है तीन गुण ॥ तातैं गुण स्यांम माया कहिऐ ॥ तागुण स्याम माया विषैं ब्रह्म प्रत्यब्यंब्यौ है ॥ ता प्रति ब्यंव सूं ईस्वर कहिये ॥ ताईस्वर का अंस सर्व जीव ॥ ते किन प्रकार कैसैं करि हुये सो कहिएहैं द्रिष्टांत करि ॥ ज्यूं थाली मैं सूरज प्रति व्यंब्यौ है ॥ थाली का चिलका कौ प्रतिबिंब भीत मैं भास्यौ है ॥ थाली दृष्टांत ते गुण स्याम माया ॥ सूरज दृष्टान्त ते ब्रह्म कहिये ॥ ज्यूं सूरज श्रब विषै प्रतिब्यंब्यौ है सर्व कौ प्रकास है। सब तैं न्यारा है ॥ सर्व तैं साक्षी है ॥ सूरज काहू के न्मित प्रकास नहीं करत है सुतः प्रकास है ॥ अब दृष्टांत कहिए है। जैसैं आरसी बिषै सूरज्य प्रतिब्यंब्यौ है ॥ पणि न आरसी कै बिषैं इंछया ॥ अरु न सूरज कै इंछया। दोन्या का सनमंध तैं सुभाई कही अग्नि पड़ी ॥ ज्यौं सूरज अरु फटक मणि सहजैंही अग्नि उपजी ॥ माया जड़ ब्रह्म चेतन ॥ माया ब्रह्म दोन्यां थकी जगत उपज्यौ ॥ ब्रह्म सुतः चेतन सुतः प्रकास स्वयंमेव है। स्वयं प्रकास काहु कौ प्रकास्यौ नांही ॥ अपणौ प्रकास करि प्रकास है।

अंत—॥ श्लोक ॥ पर्मं सुनि पर्मं हंसं परम तत्वं च अस्पदं।
तुरीयातीतं विनिर्मुक्ति मनोबाचा अगोचरं ॥ १ ॥

अजाचं अमलं अजरं अमरं अकरं ।
अकल्पं अचलं अरोग्यं अकाहं मनोबाचा अगोचरं ॥३००॥

इति श्री असी पद निरणै पद स्याम बेद बचन प्रमांण श्री गुरु सिष्य सूं कह्यौ ॥
इति श्री चिदात्मा रांम बिरंचितायं त्रिपद बेदांत निरणयं संपूर्ण ॥ भाषा संपूरण ॥ ग्रंथ ॥ १ ॥

विषय – वेदांत दर्शनानुसार त्रिपद—त्वं, तत और असि अर्थात् माया, ईश्वर और ब्रह्म का निर्णय करते हुए आत्मज्ञान का विवेचन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ की पुष्पिका को देखने से पता चलता है कि चिदात्माराम मूल लेखक थे । ऐसा विदित होता है कि मूल ग्रंथ संस्कृत में रहा होगा जिसका यह अनुवाद है । 'इति संपूर्ण' के साथ "भाषा संपूरण" ॥ शब्द से यही संकेत मिलता है । यदि चिदात्माराम की हिन्दी में यह स्वतंत्र रचना होती तो दुबारा 'भाषा संपूरण' पद न आता । इससे अनुमान होता है कि ग्रंथकार दूसरा ही है जिसने अपने नाम का कोई उल्लेख नहीं किया । रचनाकाल अज्ञात है ।

विशेष के लिये देखिए "भक्ति भावंती" और कबीर के पदों की टीका वाले विवरण पत्र ।

संख्या ३०. चीषा की बारह षड़ी, रचयिता—चीखा (सम्भवतः), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)-१००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७६४ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० सुखदेव शर्मा, स्थान व पोष्ट—शेरगढ़, जिला—मथुरा ।

आदि—॥ छ० ॥ कका केवल नाम अधार किसन गुण गाइये ।
मनुवा जन्म दुर्लभ बहुरि नहि पाइये ।
इह अवसर इह वेर वहुरि नहीं आवसी ।
हरि हाँ चीषा समय जाइगी चूक बहुरि पछतावसी ॥ १ ॥
षषा षेम कुसल जब जांणि नाम गोविंद भजै ।
चलै वेद की रीति कर्म षोटे तजे ॥
जम के त्रासन छुंहि नहीं दुषण वसी ॥ हरि० ॥
जोनी संकट बीच वहुरि नहिं आवसी ॥ २० ॥
गगा गोविंद के गुण गाय जब लगि घट मांहि सास है ।
पंथी वसैं सराय कि वन में वास है ।
कुछ गांठि षरच करि लेहि कांमि तेरें आवसी ॥ हरि० ॥
मारग माहि पिछाणिन कोय पत्यायसी ॥ ३ ॥
घघा घेर रहे जम दूत कि हांधिक माया है ।
निसिदिन ताकत फिरत कि साधें वाण है ॥

राजे राणे राउ कछू न विचारसि ॥ ह० ॥
आय वणैंगा दांव अचानक मारसी ॥ ४ ॥
नाना नाम गुरु प्रह्लाद संकट ते राषिया।
दई असुर बहु त्रास आण नहीं भाषिया ॥
जिनके हरि से साह से क्यों सुष पावसी ॥ ह० ॥
संकट पड़े हजूर की आण छुडावसी।
चचा चिंतामणि क्यों छांडि मूढ़ क्यों ध्याइये।
हरि से हीरा छांडि काच मन लाइये।
जिन पहिरया की लाज काज नहिं आवसी ॥ ह० ॥

अंत—लला लागि तबही जाणीये वसे कलेजे मांहि।
उठत बैठत चालते विसरत मनते नाहि।
जल महि वसे कमोदनी चंदा वसै अकास ॥ ह० ॥
जो जादू तन मन बसै सो ताहू के पास ॥ २५ ॥
न्ह न्हा न्हाइ न जाणीया अव सषि तीरथ न्हाय।
कोइला होय न ऊजला बहुविधि साबणलाय ॥
ऊपरि वाकाध्याइया अंतर धोया नाहि ॥ ह० ॥
मन की दुविधा ना मिटी, जो मिलि रह्यो मनमांहि ॥ २६ ॥
ववा वह दिन विसरया जाइ गरभ महि राषीया।
काठि काठि करतार अधीन हो भाषीया ॥
छाया बूंद सुछवि करि नष सिष घड्या वणाय ॥ ह० ॥
सांइ के दरबार मैं कहा कहोगे जाइ ॥ २७ ॥ २७ ॥

इति श्री चीषा की बारह षड़ी समाप्त ॥

विषय—ईश्वर भक्ति विषयक उपदेश वर्णन। प्रत्येक छन्द के आरंभ में 'क' से लेकर 'ह' तक एक एक अक्षर का क्रम रखा गया है और अन्त में "हरि हा चीषा समय जाइगी चूक बहुरि पछतावसी" पद है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रत्येक छंद के चौथे पद में 'चीषा' नाम आने से ही रचयिता का नाम 'चीषा' मान लिया गया है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल अन्य ग्रंथों के आधार पर, जो इसीके साथ संमिलित हैं, संवत् १७६४ वि० दिया है।

संख्या ३१. कर्म विपाक ४६वाँ अध्याय, रचयिता—चिन्तामणि (संभवतः) कागज—देशी, पत्र—११, आकार—$6\frac{1}{2} \times 4\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सुखदेव शर्मा, ग्राम व पोष्ट—शेरगढ़, जि०—मथुरा।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः अथ कर्म विपाक लिख्यते ॥

श्री शेष उवाच ॥ सोरठा ॥ वात्सायन मुनिराइ, सुना वचन सोंनक नृपति।
विस्मय हिय में लाइ, रिपुहन पुनि मुनि सन कहव ॥१॥

॥ चौपाई ॥ कर्मन की गति कठिन मुनीसा। सो हम सन कहियै सब ईसा ॥
भूसुर सात्वक सुरपुर वासी। कर्म न पायौ तनु मनु जासी ॥
जैसे कर्म जौन गति होई। हम सौं कहियै सौंनिक सोई ॥
जाते हमहू कर्म न जानैं। कहियै आपुन धन्य करि मानै ॥
सौंनिक कहा सुनो नरनाथा। कर्मन की सब कहौं सु गाथा ॥
धन्य धन्य रघुवर के भाई। परकें काज पूछ अस आई ॥
सो अब सुनियें चित इत लायैं। कहों कर्म गति तोहि सुनायें ॥
परधन परसुत परकी दारा। जेनर चोरि करैं उपचारा ॥
सवनदू बाधें तिहि आई। अंध तमिश्र नरक लै जांही ॥
मुदगर लोह हनें तिहि मांथा। आपुन भोगै दुष विनसाथा ॥
सहस वर्ष वीतें तब तेही। सूकर जन्म धरै पुनि देही ॥
तहां दुष भोगै वहुतेरे। तन में पीड़ा सहै घनेरे ॥

× × ×

अंत—चढ़ि जान सोइ जब चल्यौ वह सीष लै नृप वीर तें।
छंद गीतिका—तिहि जात सोभा अति भई वहु रस्मि छूटि सरीर तें ॥
विन ओर चौंर सुहोंन ताके लषै नित्य सुतीर तें।
अस जाय सुर्ग विलास कीनों चरित सुनि कपि धीर तें ॥
दोहा—ताहि देषि विस्मय भयो सवके मनमें आइ।
राम वृहमडन में धरै, रहै सवै सुख पाइ ॥
सोरठा—छूटि चला सो वाजि, गिर कानन सो अति भ्रम्यौ।
चली चमू संगगाजि, चिंतामणि रघुवीर की ॥

इति श्री पदम पुराने पाताल खंडे श्री सेस वात्सायन संवादे हय मुक्त नामै कोन पंचासतमोध्याय ॥ ४६ ॥

विषय—मनुष्य के शुभाशुभ कर्मों का क्या फल होता है, इसका वर्णन किया गया है।

संख्या ३२. उषा अनिरुद्ध विवाह, रचयिता—चिंतामनि गुपाल या जनिगुपाल, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४७, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०२ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिकृष्णजी वैद्य 'कमलेश', श्रीकृष्ण औषधालय—डीग, रियासत—भरतपुर।

× × ×

आदि—

घट घट प्रगट प्रमान अषिल गुर अंतरजामी ॥

पूरन पुरूष पुरान रूप लीला अवतारी।
संपूरन सरवज्ञ निगम आगम मगकारी ।।
अच्युत अनादि गोपाल प्रभु सो चिंतामनि असरन सरन।
हरि हरन सकल संताप के सुजान तहि अनुरुध हरन ॥१२४॥

दोहा—सुनि अस्तुति मुनि सों कहे मधुराधर मुसक्याइ।
तुम तै को बहु जान कहौ षवर समुझाइ ॥१२५॥

॥ नारदौ वाच्य त्रोटक छंद ॥

बल कौ सुतिवान सश्र भुजा। पुर श्रोनति है उतर है गि...॥
तिह की जु सुता अति रूपवती। तिह कौ जु दयो वरु पारवती ॥
हरि कै तिह की सषीलै जु गई। सुनि भूप भयो अति क्रोध मई ॥
तिनको सव सैन्य प्रहार कियो। अनुरुद्धहि जुद्धहि वाँधिलयो ॥

॥ दीपक छन्द ॥

अंत—अति रूप रासि उषा कुमारि। लषि चकित भई पुर ग्राम नारि।
जोरी विरंचि रचियों सुधारि। जल पियहि सासु सव वारि वारि ॥२०९॥

दोहा—दूलह दुलहिन धायकै, लगौ सवनि के पाइ।
उन गहिवर मुष चूमिकै, लीन्हें इंसि उरलाइ ॥२१०॥

छप्पै—हरि विरंचि सुरगुन समाज राजाधिराज सव।
राम कृष्ण वहु भांति विनैकरि विदा करै सव ॥
जेहि भांतिन के जौन तौन जिहि भांतिन मानै।
हरिहर वीर विलास ब्याह सुष लषिहरषानै ॥
जै जै जै उचारि त्रिभुवन किय अनंद मंगल सवनि।
गोपाल चरन पंकज सरन सुकरति जनि गोपाल भनि ॥२११॥

दोहा—कवि कोविद वंदी जनै दीन्हे दान विसाल।
हरषित जोरी जुगल लषि चिंतामन गोपाल ॥२१२॥

इति श्री पुरान पुरषोत्तमाइ र रि द क द भक्ति चिंतामनि गुपाल विरंचताया वान भुज छेदन हर हर जुध उषा अनुरुद्ध विवाह वर्ननो नाम दुतियौ अध्याइ समाप्त सुभ मस्तु ॥ २ ॥ लिषि मंडनराइ मंडिलागढ़ वैठे सं० १८०२

विषय—ऊषा अनिरुद्ध विवाह वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ अपूर्ण है। १५ वें पत्रे से यह आरंभ होता है। इसमें केवल दूसरे अध्याय का अंश विद्यमान है। रचयिता का नाम इसके अनुसार 'जनिगोपाल' या 'चिंतामनि गोपाल' है, जैसा कि २११ और २१२ संख्यक छंदों से विदित होता है। पुष्पिका से भी यही पुष्ट होता है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८०२ वि० है। ग्रंथ रचना, छप्पय, दोहा, तोमर और त्रोटक छंदों में हुई है।

संख्या ३३. चोखन, रचना— प्रहलाद चरित्र, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पद्य, रूप—प्राचीन, अपूर्ण, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान - पं० किशोरी शरणजी, ग्राम—धाढ़, डाकघर—सादाबाद, जिला—मथुरा ।

आदि—

॥ रागनी सोरठे को ॥

गोविंद सरनौ आनिगहौ ।

सरण आए की लाज तुमही कू गिरिसो राषि लिए ।
अग्नि चोट को भय है नाहीं संस्कार आनि जुरो ॥
जब रानी को निद्रा आई सुपनो एक भयो ॥
चतुर्भुज भगवान ही ठाढ़े मुख से यही कहो ।
येक कष्ट है पुत्र तेरे कू जुग जुग राज करौ ॥

॥ रागिनी भैरोकी ॥

अंत—

भोर भयो प्रभु दातुन कीजै मुष मंजन की वारी ।
श्री लक्ष्मीजी चरन पलोटे संग की सषा आज्ञाकारी ॥
रतन जटन की सुंदर चौकी जल भर कंचन झारी ॥
कृपा करि प्रभु दातुन कीजै कारज हो संसारी ॥
प्रहलादहि द्वारे ठाढो दरस को अधिकारी जी ॥

× × ×

अपूर्ण

विषय—राग रागिनियों में श्री प्रह्लादजी का चरित वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम चोखन है । गुरु का नाम बालकराम था । अन्य परिचय अज्ञात है । परंतु अनुमान से इनके गुरु बालकराम दादूपंथी विदित होते हैं अतएव ये भी दादूपंथी ही रहे होंगे । प्रस्तुत रचना का रचनाकाल और लिपिकाल अविदित हैं ।

संख्या ३४. ग्रहभाव फल, रचयिता—दलेलपुरी, पत्र—२०, आकार—९$\frac{१}{२}$ × ५$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, अपूर्ण, प्राप्तिस्थान—पं० रमणलाल जी, मु० पो०—फरैह, जि०-मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ग्रहभाव फल लिष्यते ॥

चौपाई—जन्म समै की लग्न भानु जौ मूरति आवै ।
दीरघ थूल सरीर गमन गजराज चलावै ॥
वाइ पित्त तन पीडनिता प्रति ताहि सतावै ।
भ्रमे देस परदेस नारि सुत दुषी भयावै ॥ १ ॥

परै दूसरे भानु भागि अधिकारी होई।
घोरी महिषी पशू द्रव्य धन धान्य मनोई॥
अति रति नारी प्रीति कुटुम्बी क्रिया विहीना।
मिथ्यावादी चपल क्रिपनता कछु प्रवीना॥ २॥

× × ×

भमन चतुर्थे वुद्ध राजमंत्री अधिकारी।
करता वुद्धि विशेष नारि नृप आज्ञाकारी॥
लेषक लिपिया होइ सवै प्रति उत्तर दाता।
चित्र करम करतार अपर जग में विष्याता॥ ४॥

अंत—अपणै वचण समर्थ और है तेज प्रचंडै।
सब पर रच्छया करै साथ परमाथ मंडै॥
नारी करै अनेक सत्रुवल रहै न एकौ।
"दलेलपुरी" पर उदै राहु जो लगण तटे कौ॥ ७॥
पलचारी परिवार अपच्छी कुटुम्ब कुचाली।
झूठौ वंस विणास दर्वि पालक अरिदाली॥
वंधण संषलहाथ रहै निरभै सठताई।
परैं दूसरै राहु जाणियौ षरौ अढाई॥ ८॥
गणेण भुजवल सिंघवाह वलगणै न हांथी।
सो दर सम जग जीव तेज गुण स्मरथ साथी॥
भागवली परभाउमत्त केहरि सम ... ...॥

विषय—यह ग्रंथ फलित ज्योतिष पर लिखा गया है। जिसमें नव ग्रहों के भावों का फल कथन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ को पढ़ने से रचयिता का नाम दलेलपुरी ज्ञात हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। ग्रंथ अन्त से खंडित है। इसकी एक प्रति बेरी ग्राम (जिला, मथुरा) में पं० रेंवतीनन्दन जी के पास भी मिली है जिसका लिपिकाल सं० १८५५ वि० है एवं जिसका लिपिकार सेवाराम हैं। इससे यह विदित हुआ कि दलेलपुरी ने इस ग्रंथ को उक्त संवत् के पूर्व रचा था।

संख्या ३५. चंडी चरित्र, रचयिता—दयाल, पत्र—६, आकार—$6\frac{3}{4} \times 3\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८९ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० श्रीधर जी, ग्राम—हसनपुर, पो०—जरारा, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ चंडी चित्र लिष्यतेः।

जयंती मंगला काली भद्र काली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवाधात्री स्वाहा सुधा नमोस्तुते॥

× × ×

श्री वाक वानी नमः

दुष कुटब के वसै वनराजा पुछयो जाय सुरतः देवी चित्र अगाध ।
वाक वानी वाक दे उपजै करत किलोलै ।
तव ज सवरनु जो कहै नीरमल वोल अमोल ॥

छं० महा वाक वानी महा जोग माया । महामोह तै चौदहु लोक छाया ॥
तुवै सयन जल मधि जगदीश कीनो । तबै नाभि के कंवल ते ब्रह्म छीन्हो ॥
श्रवन के मल दोउ दैत्य काढे । तिनो नाम मधुकइटभ अति प्रबल वाढे ॥
तिन्हों देषकर ब्रिह्म हिय मैं डरानौ । हिये जोग मायान का ध्यान आनो ॥
छुटी जोग माया महाराज जागे । तहां जुद्ध कू पंचु सहस्र लागे ॥
ब्रह्मफेर जोग माया ध्याई । जोग माया तिसीही समै आई ॥
हार हठ दोउ दयत पाय लागे । आप भगवंत ने मार त्यागे ॥
तहाँ भयो भगवन्त वैकुंठगामी । अहो ब्रह्म देवी सुमरो अंत्रजामी ॥

अंत—सुने निरधन तव धन पावै । अंधा सुनै तव दीग जोत आवै ॥
पुत्र अंच्छया सुनै पुत्र जनमै । अग्यान सुनै हिय मैं ग्यान तन मै ॥
अपंग सुनै तव दिव चालै । छूटै बंदी मुष गुंगा बोलै ॥
सुखा सुने सुरत वाटै । सुम सुनै दान कू हाथ काढै ॥
सुनै रोगी सकल रोग नासै । सुनै भोगी वढै भोग रासै ॥
च्यारो पदारथ महादाता । अषै लोग पालै जय पुत्र माता ॥
नारद वैही ज्यौ ब्रह्मा ध्याई । सोई नारद धु पास गाई ॥
वासदेव मारषंडे नै वरणो । सोई कथा अव दयाल नै वरणी ॥

इति श्री चंडी चित्र संपूरण ॥ १ ॥ संमत १८८६ का अधन वद २ श्रमीश्र

विषय—चंडी महाकाली के युद्धों का वर्णन किया गया है ।

संख्या ३६ ए. केवल भक्ति, रचयिता—दयाराम, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० महादेव प्रसादजी कारिन्दा, स्थान, पो०—बसरेहर, जिला—इटावा ।

आदि—

॥ श्री मते रामानुजाय नमः ॥

केवल भक्ति कृष्ण की कीजै । राम नाम हिरदै धरि लीजै ॥
तासों मुक्ति पिरापति होई । औरु भर्म भूलौ जनि कोई ॥
षोजो चारों वेद पुराना । तहां नाम निकसौ भगमाना ॥
ताते सुमिरि लेहु मन मेरो । होहि सकल सव कारज तेरो ॥
गुरु गोविन्द जन्म नहिं गायो । जोनी संकट वहुरि नहिं आयो ॥
डरु है वाही दिन का भाई । जव रोकेंगे जम धर आई ॥

जमु सौं छलबल नेकुन आवै। पकरैंगे तब कौन छुड़ावै॥
मुग्दनु फोरि हैं हाड़ा। लोगु कुटुम सव देषैं ठाढ़ा॥
थकित भये हरि देषि तमाशा। मिली भर्म पूजी मन आसा॥
ढोलु बजाइ मगन भये ज्ञाना। तिनके सुनि सुनि लागत वाना॥
कल जग मैं आमन सों कहियै। छांड़ि राम मुष और न कहिये॥
और दूसरो दीजै दाना। संकट हरै उवारै प्राना॥
भव सागर है गहिल गँभीरा। सुरतिन परै देषि जल नीरा॥
राम नाम को वाँधौ वेरा। उतरि परो तुम्ह जाउ सवेरा॥
चलिवे कूँ कछु चिंता कीजै। राम नाम को षरची लीजै॥
आगे पंथ विकट है भारी। निवरत नाम न कृष्ण मुरारी॥

अंत—हरि बिनु जन्म षरावा अैसो। अवहू सुमिर देखु मन तैसो॥
न्यारे न्यारे लोक वनाये। तामैं सेवा अधिक सुहाई॥
सव तैं आगर मानस कीन्हा। भोग जोग सव उनको दीन्हा॥
पूरन भाग सदा हरि ताके। हिरदै वसत रहत हरि ताके॥
दाता वुही देतु सव काहू। उन बिनु दीन न होहि निवाहू॥
दोहा—प्रेम प्रिति वाराषरी, लिषै पढ़ै सव कोइ।
दयाराम मन आपने, पढ़ै सो पंडित होइ॥

॥ इति श्री केवल भक्ति॥
॥ सम्पूर्णम्॥ समाप्तम्॥

विषय—कृष्ण की भक्ति और राम नाम माहात्म्य वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ किन्हीं दयाराम का रचा हुआ है। इसमें जम त्रास से बचने और भवसागर से पार होने के लिये कृष्ण की भक्ति और राम नाम का स्मरण मुख्य बताया गया है।

संख्या ३६ बी. केवल भक्ति, रचयिता—दयाराम, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० अयोध्या प्रसादजी, स्थान व प्रोष्ट—भरथना, जिला—इटावा।

श्रीमते रामानुजाय: नम:॥

आदि—

केवल भक्ति कृष्ण की कीजै। राम नाम हिरदै धरि लीजै॥
तासौं मुक्ति पिरापति होई। और भर्म भूलौ जनि कोई॥
षोजौ चारौ वेद पुराना। तहाँ नाम निकसौ भगवाना॥
तातै सुमिरि लेहु मन मेरो। होइ सकल सव कारज तेरो॥
गुरु गोविन्द जन्म नहिं गाया। ज्योंनी संकट वहुरि न आया॥

डरु है वाही दिन का भाई । जब रोकेंगे जम घट आई ॥
जम सौं छल वल येकुन आवै । पकरैंगे तव कौन छुटावै ॥
मुग्दनु मारि फोरि है हाड़ा । लोग कुटुमु सब देषैं ठाढ़ा ॥
थकित भए हरि देषि तमाशा । मिली भर्म पूजी मन आसा ॥
ढोलु वजाइ मगन भये ज्ञान । तिनके सुनि सुनि लागत वाना ॥
कलजुग मैं आगन सौं कहियै । छाँडि राम मुष औरन कहियै ॥
और दूसरो दीजैं दाना । संकट हरै उवारै प्राना ॥
भवसागर है गहिल गंभीरा । सुरति न परै देषि जलनीरा ॥
राम नाम को वाँधौ वेरा । उतरि परौ तुम्ह जाउ सवेरा ॥
चलिवेको कछु चिन्ता कीजै । राम नाम की षरची लीजै ॥

अंत—वेतौ पापी नर्कहि जाहीं । ···औरौ लै जाई ॥

हरि विनु जन्म षरावा ऐसो । अवहू समुझि देषुमन तैसो ॥
न्यारे न्यारे लोक वनाये । तामैं सेवा अधिक सुहाई ॥
सवतैं आगर मानस कीन्हा । भोग जोग सव उनको दीन्हा ॥
पूरन भाग सदा हरि ताके । हिरदै वसत रहत हरि जाके ॥
दाता वुही देतु सव काहू । उन विन दीनन होइ निवाहू ॥

दोहा

प्रेम प्रीति वाराषरी । लिषै पढ़ै सव कोइ । दयाराम मन आपने, पढ़ै सो पंडित होइ ॥

इति श्री केवल भक्ति संपूर्ण समाप्तं

विषय—भक्ति का माहात्म्य और नाम जपने का उपदेश तथा भक्ति होने का उपाय वर्णित है ।

संख्या ३६ सी. केवल भक्ति, रचयिता—दयाराम, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—$५\frac{३}{४} \times ५\frac{१}{३}$ इंच, पंक्ति—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—ला० शंकरलालजी, स्थान—मलाजनी, पो०—जसवन्त नगर, जि० इटावा ।

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः

केवल भक्ति कृष्ण की कीजै । राम नाम हिरदै धरि लीजै ॥
तासौं मुक्ति पिरापति होई । औरु भर्म भूलौ जिनि कोई ॥
षोजौ चारौं वेद पुराना । तहाँ नाम निकशो भगवाना ॥
तातैं सुमिरि लैहु मन मेरो । होहि सकल सव कारज तेरो ॥
गुरु गोविन्द जन्म नहिं गाया । ज्योनी संकट वहुरि न आया ॥
डरुहै वाही दिन का भाई । जव रोकेंगे जमघट आई ॥

जम सौं छल वल येकु न आवै । पकरैगे तव कौनु छुटावै ॥
मुंगदरु मारि फोरिहै हाड़ा । लोगु कुटुम सव देषैं ठाढ़ा ॥
थकित भए हरि देष तमाशा । मिली भर्म पूजी मन आशा ॥
ढोलु वजाई मगन भये ज्ञाना । तिनके सुनि सुनि लागत वाना ॥
कल जगमै आमन सौ कहियै । छाँड़ि राम मुष और न कहियै ॥
और दूसरौ दीजै दाना । संकट हरै उवारै प्राना ॥

अंत—हरि विनु जन्म षरावा अैसो । अवहू समुझि देषु मन तैसो ॥
न्यारे न्यारे लोक वनाये । तामें सोभा अधिक सुहाए ॥
सवतें आगर मानस कीन्हा । भोग जोग सव उनको दीन्हा ॥
पूरन भाग सदा हरि ताके । हिरदै वसत रहत हरि ताके ॥
दाता तुही देतु सव काहू । उन विन हीन न होहि निवाहू ॥
दोहा—प्रेम प्रीति वाराषरी, लिषै पढ़ै सव कोइ ॥
दयाराम मन आपने, पढ़ै सो पंडित होइ ॥
इति श्री केवल भक्ति ॥ संपूरनं ॥ समाप्तं ॥

विषय—श्री कृष्ण भक्ति का उपदेश, भक्ति की आवश्यकता और उससे लाभादि का वर्णन ।

संख्या ३७. दयाविलास, रचयिता—दयाराम (प्रयाग) कागज—देशी, पत्र—१४७, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८२२, पूर्ण, पद्य, रूप—पुराना, लिपि – नागरी, रचनाकाल – सं० १७७९ वि०, लिपिकाल—सं० १९७५ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रामदत्तजी शर्म्मा, स्थान व पो०—बह्मनीपुरा, जिला—इटावा ।

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री राधाय नमः ॥

आदि—

राधा पति पद सीस धरि । सीता पति पद दीठि ॥
जिमि काल ऋषि धरन को । छल वलि वावन षलि पीठि ॥ १ ॥
श्री पति पद उरमें वसौ । भ्रगु पद रमि त्रिपुरारि ।
मधु मर्दन ध्रुव अटल पद । मंगल मुदित मुरारि ॥ २ ॥
अष्ट सिद्धि पद गुन सहित । रमा मुदित विधि नाथ ।
शेष वेद शिव विदित जस । प्रनत कंज पद नाथ ॥ ३ ॥
गणनायक वरनत सदा । दियो देवमति सार ।
सचो सु भाषा सिन्धु सम । रतन जतन उपचार ॥ ४ ॥
सिद्धि करन व्रल चरन जुग । रह्यो सुपद लपटाय ।
रामदूत अनुकूल ते । जल निधि भुजा तराय ॥ ५ ॥

× × ×

अरिल्ल

चतुर वदन ते चतुर वेद विधि आषिओ। नाना तंत्र अनेक रिषिन प्रति भाष्यो ॥
जव मैथुन षट भेद प्रगट गद होहिंगे। परि हाँ हाँ जी कियो ध्यान अनु चिकित्सा जोहिगे ॥

अथ कवि वास वर्णन ॥ हरिसकरी छन्द ॥

वं वं वहत वारि घन अरुन सुकल भव निगम समेतं।
झं झं झं झरत सोतगति पोत अछैवट फल धुअसेतुं ॥
भं भं भं भजत नारि षट कुल इंद्र फणि गण भनि जेते।
फं फं फं फल चढ़त कुसुम दल धूप दीप छिण विधि पद लेते ॥
तं तं तं तं तीर्थ राज सजति प्रान प्राग सत गुन पद चारि।
दं दं दं दया वास जहँ शंभू निरत माधो वपुधारि ॥

संवत्सर का नाम कथन ॥ कुंडलिया ॥

अंत—षंडु दीप मुनि मेदिनी, विक्रम साहि सुजान।
सम्वत् सुनि साके सुनो, सालि वाहिनी नाम ॥
सालि वाहिनी नाम, वेद[४] विधि[४] मुष[६] रस चंदा[१]।
तुलके प्रगट पतंग पछ कहत कहंदा।
दया सुधा सुध ग्रंथ सिद्धि अगुरेवती आषै।
उदित सैनि प्रभु पूजि पितर गुरु लभ सुभ राषै ॥

अपरंचकुंडलिया—चतुर सैन चतुरंगिनी, राजत रजत जहान।
सुरपति सम गम लक्षिमी, दिल्ली सुजस मकान ॥
तिमिरि को वंस तिमिरि हर लक्षन लक्ष प्रकार।
कहत कवि कोट माहिं धरत ए महंमद साहि प्रणाण—
भूपति महिमा कार ॥
दया कवि निक़ौ दासु जासु जस चंद दिवाकर ॥

दोहा—भनि फनि भाषा भवन भरि, सचन वचन प्रति छंद।
षट दस कला प्रसंग वहु, ग्रंथ सिंधु अमि कंद ॥
इति श्री लछी रामात्मजे श्री दयाराम विरचिते श्री ॥
॥ दया विलास ग्रंथे षोडसो नाम ॥

॥ कुंजः ॥ १६ ॥

मंगलं पुस्तका नांच पाठ काणांच मंगलं मंगलं लेखकाणांच।
भूमिभूमि पति मंगलं मंगलं श्रीराम चंद्राय नमः ॥
लिखितं श्री पंडितजी द्वारिका प्रसाद वैद्य वरहो मगंज ॥
भरथनां संवत् १९७५ शाके १८४० मिति चैत कृष्ण १४ रवि वासरे कौ सम्पूर्णम् ॥

विषय—१—मंगलाचरण, कविवास वर्णन, प्रथमस्यधूत चंद्रिका, वचन परीक्षा, नामपरीक्षा, सुरपरीक्षा, सामान्य सगुन परीक्षा, दुष्य सगुन परीक्षा, दुष्टदूत लक्षण, छींक

परीक्षा, काग परीक्षा, दुष्ट काग परीक्षा, वैद्य लक्षण, मुख जीभादि परीक्षा, मूत्र परीक्षा, तैल परीक्षा, असाध्य लक्षण, प० १–६ तक ।

२—तागंध परिभाषा, कलिंग परिभाषा, त्रिगुण चंक्रकथन, पित्त, कफ, अग्नि, क्रोध, धातु पाक, पित्तकफ लक्षण, सामान्य दोष निवारण, वात विशेष निवारण, पित्त विशेष निवारण, कफ विशेष निवारण, तप्तोदक विधि, ओषधि जाचन प्रकार, हर प्रकार के ज्वरों का निदान और चिकित्सा, पत्र १ से १६ तक ।

३— दृष्टिदोष निवारक संबन्धी मंत्र, क्वाथ, चूर्ण, वटिका, लेप, अंजन, धूपादि, प० १७ से २५ तक ।

४—सर्वाङ्ग सुन्दरी रस, विसूचिका चिकित्सा, अनेक क्वाथ रसादि, पत्र २६ से ४३ तक ।

५—खाँसी, अरोचक रोग, हरीतिका वर्द्धमान, पिपासादि रोग चिकित्सा, पत्र ४४ से ४५ तक ।

६—हृदय शूल, नाराच चूर्ण रस, उदर शूल, हिंग्वादिबटी, जलोदर रोग, पत्र ४६–९० तक ।

७—अनोपान, अनेक प्रकार की उपादेय चिकित्सा, दवा आदि, प० ९१ से १४७ तक ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ आयुर्वेद से संबंध रखता है । इसका रचयिता किसी लक्ष्मी राम का आत्मज था, जैसा कि ग्रंथ की पुष्पिका में दिया है जो इस प्रकार है:— "इति श्री लछीरामात्मजे श्री दयाराम विरचिते श्री ॥" यह ग्रंथ पिछले तीन खोज विवरणों में उल्लिखित है, देखिए खोज विवरण (सन् १९०१, संख्या ५०; १९०२ ई०, संख्या ११४; सन् १९०९–११, संख्या ६३) । इनमें से पहला अपूर्ण है और उसमें इसके सन्-संवत् का कोई ब्यौरा नहीं मिलता । दूसरे के आदि भाग में मंगलाचरण न देकर पुस्तक के निकुंजों का विषय संबंधी विवरण दिया गया है । अतएव उसके आदि भाग का उद्धरण न प्रस्तुत ग्रंथ से ही मिलता है और न पिछली खोज में मिले दोनों ग्रंथों से ही । शेष दोनों ग्रथों के आद्यंत के नमूने मिलते है एवं प्रस्तुत ग्रंथ और उक्त ग्रंथों में इस विचार से कोई अंतर नहीं है । हाँ, पिछले विवरणों में जो उद्धरण दिए गए हैं वे परिमाण में कुछ कम अवश्य हैं । केवल आदि अंत के कुछ उद्धरण के देने की रस्म भर अदा की गई है । यदि आगे चल कर उसका ऐतिहासिक तथ्य टटोलने का प्रयत्न किया जाता तो कवि के निवास के संबंध में पूरब-पच्छिम का अंतर न पड़ता । कवि ने अपना वासस्थान इस प्रकार लिखा है:—

तं तं तं तीर्थराज सजति प्रान प्राग सत गुन पद चारि ।
दं दं दं दया वास जहँ शंभू निरत माधो वपुधारी ॥

इसमें स्पष्ट ही कवि ने अपना निवास स्थान 'तीर्थराज प्रयाग' बताया है जहाँ वेणीमाधवजी (शिव) विराजमान हैं । पिछले विवरणों में दिल्ली निवास स्थान बतलाया है जो अशुद्ध है । दिल्ली का उल्लेख तो तत्कालीन बादशाह के परिचय के क्रम में हुआ है । यह परिचय ग्रंथांत में एक कुंडलिया में दिया है ।

संख्या ३८. सदाशिव जी को व्याहलो, रचयिता—दयाराम, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६१५ वि०, प्राप्तिस्थान—बाबू विशन स्वरूप अग्रवाल, स्थान—कोशी इन्द्रगंज, पो०—कोसी कलाँ, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ सदासीव को व्याहलो लिष्यते ॥
निरंकार को ध्यान धरो शदा त्रपुजगणेश।
दया कहै गुर कृपा ते सुमरे सिव जु सुरेश ॥

कवित्त—निरंकार को सुमरौं सव दुनियां को करनहार साहवी अपार ताको पारहुन पाइये।
पूजौ हौं विनायक सिध गौरी रांनी संकर को साकोद रिध सिध मातघट वीच ममनाइये ॥
लागो गुर पाव तासों दाव सव सुदाव होत फेरो सिर हाथ ग्यान मारग वताइये।
ये तुम तो हो ग्यानी मतो कहत हो कुवदया भुल चुक माफ कछु नाह विसराइये ॥१॥
हेमांचल पर्वत येक हेमाचल राजकर अ सोभत वादल कहु दुसरो नीसान है।
सुरन मैं सुरोमालयन भरपूर रहो कंपत हे दुनीआन चंहुक मानी है।
श्रैरापत माते ओर तुरकी वे सुमार द्वार शशि की सी सुरत जो चंद्रावल रानी है।
नारी रय रय झींखत नीश दोस दया ठाकुर की ध्यान सदा धर्मं की नीसानी है ॥ २ ॥
बारह बरस सेवा करी येक चीत येक वोर तीन लोक नायक कों महर वोहत आइहै।
अपनीही वानी तै हुकुम कीयो वीधना कों लोचन सी काढ़ि कली चंपेसी वनाइहै ॥
डारि है गर्भं वीच संकट नो मास सहो रानी चंद्रावल की कूष आन जाई है।
सुनी यह वात जब हेमाचल राजा ने दीनो वोहो दान द्वार नोवत बजाई है ॥ ३ ॥

अंत—आप हाथले जोर दियो महादेव जी सों ओर वार वरदाशहुकरी जो घनेरी है।
आपतो दयाल मोको तुम ही निहाल कियो मेरे नही माल दैई टहल को चेरी है।
हाथी असवाव सव आपके जुवाब बीच कहै "दयाराम" प्रभु राषी लाज मेरी है।
कियो है जु टीको सदाशिव गौरि ही को भयौ काज सब नीको वरात बिदाकर फेरी है ॥४३॥
संग गोरी लैइ महादेव चल्यौ परवत को सगरी बरात कों जु सीषहु दिवाई हैं ॥
कही सब जाओ आप आप असथान हि को अगेले संग हितै गोरी त्रियापाइ है ॥
शिव को वचन सुन के देवता प्रसन्न भये वैठ के विमान वर्षा फुलन वरषाई है।
महादेव गौरा कैलाश को सिधार गये धन्य जाको दया कीरत चलाई है ॥ ४४ ॥

इति श्री सदाशिव को व्याहुलो संपूर्णं समाप्त ॥

विषय—शिवपारवती का विवाह वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—कवित्तों में 'दयाराम' तथा 'दया' शब्द बार-बार आने से ही रचयिता का नाम दयाराम विदित हुआ। कहीं-कहीं "कहै दयाराम" स्पष्ट आया है—"कहै दयाराम प्रभु राषी लाज मेरी है।"

ग्रंथ कवित्तों में रचा गया है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १९१५ वि० है। प्रस्तुत रचना कुछ अन्य रचनाओं—सभा वि०, कवित्त रत्नाकर, सुदामा चरित्र और कवित्त बाँसुरी के साथ एक हस्तलेख में है। अंतिम रचना कवित्त बाँसुरी में उपर्युक्त लिपिकाल दिया है।

संख्या ३९. ओषा हरण, रचयिता—देवीदास, कागज—देशी, पत्र—१२४, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६८, रूप—प्राचीन, पूर्ण, पद्य लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० बाबू शंकर जी, स्थान व पोस्ट—सादाबाद, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री ओषाहर्ण लिख्यते ॥

राग गौड़ी

प्रथम गणाधिपति देव गाइये। याहि के समरन आणद मंगल होत है। अष्ट सिध नव निध्य ध्याइये ॥ प्रथम० ॥ १ ॥

तीन लोक में याहि की सेवा पंचामृत ओर पुष्प चढ़ाइये ॥ प्रथम० ॥ २ ॥
"देवीदास" पन्य कृपा ज्यो कीजे हर तुमहि छाट कीतधाइये ॥ प्रथम० ॥ ३ ॥

अंत—हरिवंश मांहे ओषा हरण छे उत्तम ते कथाय जी।
अडसठ तीरथ त्यांहां वसेने जांहां वंचाय सर्व कथाएजी ॥ ४ ॥
शांषे श्रुणेने गाय सांभलेते हे नादु क्रीत जायजी।
धर्म अर्थने काममोक्ष ए च्यार पदारथ पामे जी ॥ ५ ॥
दीसावाल कुल अवतरोने वीर क्षेत्रमां वास जी ॥
कर जोडीने करे वीनती ना कर हरी नो दास जी ॥ ६ ॥ कडवाँ ४५ ॥

इति ओषा हरणं संपूर्ण ॥ मीती जेष्ठ कृष्ण ॥ ११ ॥ रवि वासरे लिषितं दुवे मनोरथ रामेण माधवपुर मध्ये संवत् १९४७ ॥

विषय—ऊषा अनिरुद्ध विवाह की कथा विस्तार पूर्वक वर्णन की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रारंभ में दिए गए राग के अंतिम पद में 'देवीदास' नाम आया है इसीलिये इसको रचयिता का नाम मान लिया है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १८४७ वि० है। ग्रंथ राजस्थानी भाषा में लिखा गया है।

संख्या ४०. माप विधान, रचयिता—देवीदीन मुदर्रिस (इटावा), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९३८ वि० (१८८१ ई०), प्राप्तिस्थान—पं० लल्लूमल जी महेरे, स्थान व पो०—अछलदा, जिला—इटावा।

आदि—माप विधान ॥ १ ॥ श्रीमत् सकलैश्वर्य्य परिपूर्ण एम केमसन साहिब वहादुर पश्चिमोत्तर देश के पाठशालाधिपति और श्रीयुत मिस्टर लायड साहब इन्स्पेक्टर किस्मत दोम आगरा के आज्ञाकारी देवीदीन मुदर्रिस हलकह वंदी जिलअ इटावा ने श्रीमन् मुंशी प्राणसुख साहिब डिप्टी इन्स्पक्टर जिला की अनुमति से बनाया ॥ सन् १८७३ ई० । प्रकट हो कि यह पुस्तक सब प्रकार के क्षेत्रों की तीनों भाँति की माप अर्थात् (रेखा, धरातल पिंडकी) लिखी है और रेखागणितानुरागिनियों के लिये बहुतेरी रीतों की उपपत्ति लिखी है और ७० प्रश्न चुने हुए अभ्यासार्थ लिखे हैं। आशा है कि विद्यार्थी इससे लाभ उठावेंगे। बुधजनों से निवेदन है कि दया दृष्टि से भूल को सुधार लेंगे।

दोहा—थोड़ा व्यय औहितुघना, लेवौ याहि खरीद।
छेत्र नाम में जान लो, है यह वहुत मुफ़ीद ॥

अंत—(७०) एक घन पदार्थ कुडोल है अर्थात् न गोल न चौकोर न पिण्डाकार न चपटा तो उसके घनफल नापने की युक्ति वताओ।

(उत्तर) एक वर्तन में उस पदार्थ को रखकर वर्तन में पानी भर दो। और जहाँ तक पानी है वहाँ चिन्ह कर लो और जहाँ पानी ठहरे वहाँ चिन्ह कर लो अब घन फल का हिसाब लगाओ।

परिधि के आधे को व्यास के आधे से गुणने से वृत्त का क्षेत्र क्योंकर आता है। उपपत्ति ॥ क प च वृत में न केन्द्र से रेखा खींचकर उसे त्रिभुजों में वाँट लो * अब न च द त्रिभुज का क्षेत्रफल च द भूमि और न फ लंव के गुणन फल का आधा है ऐसे ही न द श आदि त्रिभुजों में, परन्तु सब त्रिभुजों का योग वृत क्षेत्र का फल है और सब आधारों का योग परिधि है इसलिये सिद्धि हुआ कि वृत का क्षेत्रफल आधे व्यास आधे परिधि का गुणन फल होता है ॥ व्यास के वर्ग को ·७८५ वा $\frac{११}{१४}$ से और परिधि के वर्ग को ·०७९६ वा $\frac{७}{८८}$ से गुणने से क्यों क्षेत्रफल आता है इसकी उपपत्ति ॥ व्यास का व और परिधि का प जानो मान लो एक वृत का व व्यास है तो उसकी $\frac{२२व}{७}$ परिधि हुई···

$\frac{व}{२} \times \frac{२२ व}{७ \times २} = \frac{११ व२}{१४} =$ क्षेत्रफल ∴ सिद्धि हुआ कि व्यास के वर्ग को ११ गुणाकर १४ का भाग देने से क्षेत्रफल आता है व $\frac{११}{१४}$ = ·७८५४ इससे गुणा कर दो। दूसरे कल्पना करो कि किसी वृत की प परिध है। ∴ $\frac{७प}{२२}$ व्यास हुआ ∴ $\frac{प}{२} \times (\frac{७प}{२२}$ का $\frac{१}{२})$

$= \frac{७ प २}{८८}$ = क्षे० ∴ सिद्ध है कि परिधि के वर्ग को ७ गुणाकर ८८ का भाग देने से क्ष. फ. आवेगा और $\frac{७}{८८}$ = ·०७९६ चाहो इस दशमलव से गुण कर दो ॥ इति ॥

---

* यद्यपि परिधि का कोई भाग सीधा नहीं हो सकता (३ अ– २ सा. रेखा) से परंतु मान लिया है।

विषय—त्रिभुजों, चतुर्भुजों, बहुभुजों, टेढ़े क्षेत्रों, वृत्तों अंडाकृतियों यष्टि, सूची, आड़ा कृतियों इत्यादि के क्षेत्रफलादि बतलाने की विधियों का वर्णन। रेखागणित प्रेमियों के लिये नियमों की उपपत्ति और उनसे संबन्धित ७० प्रश्नों के उत्तर दिए गए हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ देवीदीन नाम के हल्का बंदी मुदर्रिस (इटावा) ने उसी जिला के स्कूलों के डिप्टी इंसपेक्टर प्राणसुख की अनुमति से रचा है। अनुसंधान से पता चला है कि उक्त डिप्टी इंसपेक्टर जाति के माथुर वैश्य, कागारोल, (जिला आगरा) के निवासी थे और आगरा, मैनपुरी, इटावा आदि जिलों में डि० इन्सपेक्टर रहे थे। ग्रंथ का रचनाकाल सन् १८७२ ई० है। उसमें फागुन सुदी १५ सं० १९३८ वि० तदनुसार संवत् १८८१ और चैत्र वदी २ सं० १९३८ वि० (१८८१ ई०) के दैनिक हिसाब का विवरण है। संभवतः किसी विद्यार्थी ने इसी सन् में किसी छपी हुई प्रति से उसकी नकल की है। जिस समय ग्रंथ रचा गया उस समय यू० पी० शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर एम० के० मसन साहब और किस्मत दोम आगरा (जिसके अंतर्गत इटावा, जहाँ ग्रंथकार अध्यापक था) के इंसपेक्टर मिस्टर लाइड थे। रचयिता अपने को उनका आज्ञाकारी लिखता है। उसने डाइरेक्टर शब्द के स्थान पर पाठशालाधिपति लिखा है। प्रतिलिपिकार ने अपना नामोल्लेख नहीं किया है। ग्रंथ माप विद्या (क्षेत्रगणित) के विद्यार्थियों के लिए बहुत काम का है। इसमें प्रायः सब प्रकार के क्षेत्रों की रेखा, धरातल और तीनों भाँति की माप लिखी है। रेखागणित प्रेमियों के लिये बहुत से नियमों की उपपत्ति पर भी अच्छा विचार किया है। अन्त में चुने हुए ७० प्रश्न और उनके उत्तर दिए हैं। नियमों के जानने के लिए क्षेत्रों की शक्लें और उनके गुर लिखे हैं।

संख्या ४१. गीत शतक, रचयिता—महाराज महेश नारायण की रानी धर्मकुंअरि कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सियाराम जी हलवाई, स्थान व पोस्ट—बकेवर, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ श्री नृप मणिमुकुट श्री महाराज श्री महेशनारायण सिंह धर्म पत्नी श्री महारानी धिरानी श्री धर्मराज कुंअरि कृत धर्म गीत शतक प्रारंभः॥

राग चंचरीक—गणपति गिरिजा कुमार। गावत जस निगम चार॥
ध्यावत मुनि वार वार चारों फल दाई॥ टेक॥
वारन मुख एक दन्त। जाको नहिं आदि अंत॥
पावत सुख सन्त चरण रेणु में लोभाई।
सोहैं शशि पूर भाल। गर विच मुक्ताकी माल॥
भक्तन प्रतिपाल प्रीति मोदक अधिकाई।
उन्दुर वाहन प्रचंड। चंदन सिन्दुर अखंड॥
राम भक्ति कुंडमध्य मंजत हरषाई।

शोक के विनाशकरन । विघन ताप तीनि हरन ।।
दारिद्र दुख हरण गणपति जै जै सुरराई ।
धरम राज कुँअरि आइ । नाथ शरण तुमरि ताकि ॥
चाहत यह घुमरि घुमरि रामभक्ति पाई ।

अंत—होरी खेलत मोहन राधा ।
वरसाने में भीर भई ढफ वाजत धुधुधु धाधा ॥
हो हो होरी होन लगी सब गावत आधे आधा ॥
फिरत सुख नाधा नाधा । वाला मलत गुलाला गाला ग्वाला सकल अगाधा ।।
नारि धन्यो वलवीरन जूकों कीन जवन मन साधा । चीर हरने की दाधा ॥
चुभ कहु दूध दही घृत माखन हे यशुमति के काँधा ॥
पहिरायो चटकीली चुंदरिया नयनन काजर राँधा ।।
कहैं वह तौ कहँ चाँधा ।।
यह कलिकाल यज्ञ जपतप व्रत सव को धरि धरि खाँधा ॥
श्री धर्म्म राज कुमारि सकल तजि हरि पद पदुम अराधा ॥
छुटै भव की सव वाधा ॥ ४९ ॥
तुमकौं मैं लाल वतैहौ ।
साँझ सवार सुनहु मन मोहन अपनी गली जौ······अपूर्ण

विषय—प्रेम तथा भक्ति संबंधी विविध छंदों का संग्रह ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना राजा बाजार के महाराजा महेशनारायण सिंह जी की धर्मपत्नी श्रीमती धर्मराज कुंअरि की है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। विषय रामकृष्ण की भक्ति है। लगभग १०० गीतों का इसमें संग्रह है। ग्रंथ अंत से खंडित है ।

संख्या ४२ ए. रतिबहार, रचयिता—ध्रुवदास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० चन्द्रभान जी, स्थान—कोंकेरा, पोस्ट—सहार, जिला—मथुरा ।

आदि—॥ तिनकी सषी ॥

कुरंगाछी मति कुंडला चंद्रका अति सुषदैन ।
सखी सुचरिता मंडनी चंद्रलता रस अैन ॥ २६ ॥
राजति सषी सुमंदिरा कटि काछिनी सुदेस ।
विविध भांति विंजन करैं नवल जुगल के हेत ।। २७ ॥

॥ चौपाई ॥

चित्रा सषि दुहुनि मन भावै । जल सुगंधि लै आनि पिवावै ॥

जहां लगि रस पीवै के आही। मेलि सुगंध बनावैं ताहि ॥ २८ ॥
जिहि छिन जैंसी रुचि पहिचानैं। तवही आनि करावत पानैं ॥
निसि दिन मनुजु कुवर के चरना। प्रेम उजारी कुंकुम वरना ॥२९॥

॥ दोहा ॥

कुंकुम कैसौं वरन तन कनक वसन परिधान।
रूप चतुरई कहा कहौं, नाहिन कोउ समान ॥ ३० ॥

अंत—॥ चौपाई ॥ सहज रूप के चंद द्वै सषिनि पुंज चहुँओर।
मानो पीवत छवि सुधा, सबके नैंन चकोर ॥ १०४ ॥
अपनैं अपनैं गुनहि दिषावैं। नृतत एक एक मिलि गावैं ॥ १०५ ॥
एक सारंगी वीन सुनावैं। एक मृदंग अनूप वजावैं ॥
तिरपलेत झलकत तन एसैं। वहुत अंग की दामिनि जेसें ॥ १०६ ॥
राग रागनी मूरति धरैं। सषी रूप सेवा सव करैं ॥
कोटिक लय जो यह सुष देषैं। रुचिन घटैं छिन को सम लेषैं ॥१०७॥

दोहा—उद्धुत मींठे मधुर फल ल्याइ, सषी वनाइ।
ष्वावत प्यारे लाल कौं, पहिलैं प्रिया चषाइ ॥ १०८ ॥

॥ चौपाई ॥ रजनी सुषा सोभा अति वाढ़ी। पानिप मैंन दुहुन सुष चाढ़ी ॥
हुलसि हिये आनंद रस भरे। चाह चौंप रति रंग मैं परैं ॥१०९॥
सैन समै की विरिया.....................(अपूर्ण)

विषय—राधाकृष्ण की नाना प्रकार की क्रीड़ाओं में राधा जी की सखियों—चित्रा, कुंडला, चंद्रिका, सुचरिता, मंडनी, चंद्रलता, सुमंदिरा, रसालिका, सुगंधिका, सौरसेनी, मनिनागरी, रामालिका, मंजुमेधा, सुमेधिका, गुनचूडा, वारंगदा, मधुरा, इंदुलेखा, चित्रलेखा मोदनी, मंदिरालसा, भद्रतुंगा, रसतुंगा, सुमंदिला, चित्रांगी, कलकंठी, ससिकला, कमला, मधुरिंदा, सुंदरी, कंदर्पा, प्रेममंजरी, कामलता, सुदेवी, कावेरी, मनोहरा, मंजुकेसी की टहलसेवा करने का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ खंडित है। इसका नाम भी ज्ञात न हो सका। स्थान-स्थान पर ध्रुव नाम आने से ही रचयिता का नाम ध्रुवदास मान लिया गया है। भक्ति श्रृंगार का यह छोटा सा परंतु अनूठा काव्य ग्रंथ है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या ४२ बी. जुगल ध्यान, रचयिता— ध्रुवदास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—५¾ X ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भजरामजी, ग्राम व पो०—राल, जिला—मथुरा।

आदि—

श्री गनेसाय नमेः ॥ अथ जुगल ध्यांन लिष्यते ॥

दोहा

प्रिया वदन छवि चंद मनो, प्रितम वैन चकोर ।
प्रेम सुधारस माधुरी पान करत निसि भोर ॥ १ ॥
अंगन की छवि कहा कहू मनमें रहैत विचारि ।
भुखन भये भुखननि के अति सरूप सुषमार ॥ २ ॥
सुरंग मांग मुतियन सहित सीस फूल सुख मूल ।
मोर चंद्रका मोहनी देषत भूली भूल ॥ ३ ॥
स्यामलाल वेंदी वनी सोभा वड़ी अपार ।
प्रगट विराजत सीसन पर मनु अनुरांग सिंगार ॥ ४ ॥
कुंडल कलि तार्टक चलि रहे अधिक झलकाइ ।
मानो छवि के ससि भानु जुत छवि कमाल नैन मिलि आइ ॥ ५ ॥

अंत—अति सुकमारी लाडिली पिय किसोर सुकमार ।
इकटक प्रेम छके रहे अद्भुत जुगल विहार ॥१७॥
स्यामल चरन गौर वरन सदावसौ मम चित्त ।
जैसे घन और दामिनि एक संग रहे नित्त ॥१८॥
जैसे पलकन सो अधिक पुतरीन सो अतिप्यार ।
ऐसो लाडिलीलाल के छिन छिन चरन सम्हारि ॥१९॥
वरनो दोहा अष्टदस जुगल ध्यान सुष षानि ।
जो चाहत विश्राम ध्रुव यह छवि उरमें आनि ॥२०॥
तारा उद्ग समुद्र के रतन रतन सुरन दरवार ।
तिन हरी के चरन कमल नित वंदो सिर नाय ॥२१॥

विषय—राधा कृष्ण की छवि का ध्यान संबंधी उपदेश। राधा कृष्ण को स्मरण करते समय हृदय में उनकी जिस छवि का ध्यान करना आवश्यक है उसका श्रृंगार पूर्ण वर्णन किया गया है।

संख्या ४३. झूलणा, रचयिता—दीनजी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—$6\frac{3}{4} \times 4\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० घूरेमलजी, ग्राम—राजेगढ़ी, पो०—सुरीर, जि०—मथुरा।

आदि—॥छ०॥ श्री परमेश्वरजी सहाय ॥
॥ अथ श्री दीनजी कृत झूलणा लिष्यते ॥
त्याग तड़ाका कहत हो कठिण कड़ाका काम ।
दीन झड़ाका सबदका भजन भड़ाका नाम ॥ १ ॥
जोड़ झूलणा ज गये तोड़ सकल से तार ।
कांण नरषु कोय की जांण भेष संसार ॥ ५ ॥

अथ झूलना—दीनदेष संसार विचार किया ए संसार तो रेण का सपना है।
जांण वूझ जंजाल में कुण पड़ै तिहुँ ताप की झाल सै तपना है।
जिव वुध्र सै सिव कुं भूलमती इस जुग में कोइ न अपना है।
सांई दीन कहै कह्या मान मेरा जुग जुग जीव मोही षपना है॥
—अपूर्ण

× × ×

विषय—संसार को निस्सार बतला कर शिव में अनुराग करने का उपदेश किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—केवल एक ही झूलना दिया गया है। विदित होता है कि लिपि-कर्त्ता ने यह झूलना रचयिता के किसी ग्रंथ से लिया है। अतः यह अपूर्ण है। इससे रचना-काल और लिपिकाल का कोई पता नहीं लगता। प्रस्तुत झूलना खड़ी बोली में है और उसमें राजस्थानी ध्वनि है।

संख्या ४४. राम अश्व वर्णन, रचयिता—दीन बन्धु कूर्मी (अनिखा), कागज—देशी, पत्र—८, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० रामप्रसाद, स्थान व पो०—उझियानी, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ श्री राम अश्व वर्णन॥ दोहा॥
नमामीश गणधीशके, चरणकमल धरि ध्यान।
सुमिरि सरस्वतिको करूँ, रामाश्ववखान॥
सेवक गण प्रमुदित सजेव, भूषण वसन सुरंग।
युग युग वाग सईस गहि लाये चपल तुरंग॥

॥ कवित्त दंडक॥ देखत वनत छवि कवि न सकत कहि,
नाम जग वन्द रामचन्द्र को तुरंग है।
आनन को छोटे छोटे कानन प्रलम्ब ग्रीव,
पृष्ठ तल हीन झीन कुंतल सुरंग है॥
वक्षको विशाल यत्र जानुन को पत्र पांय,
खीनी कटि पीनी सुरपालन को अंग है।
गुनन को सिन्धु दीन वन्धु वाजि वेष,
धरि काज रघुराज के जो आयो अनंग है॥

अंत—हरि थारी व्यंजन विविध, मधुर मिठाई साक।
परसि सुरुचि जैयें सवै, लखि सिहात रिपु पाक॥
लखि सिहात रिपुपाक, रुचिर तम्बूल जे आनी।
सादर सवै खवाय, मुदित अपने कर रानी॥

कह दीन वन्धु सुख सरिस भयोसिय मातुको कैसे ।
जन्म रंक जनु पाय, मुदित चिंतामणि जैसे ॥२४॥
॥ दोहा ॥ वह सुख समै समाज वह, कहि न सकें कवि कोय ।
दीन वन्धु तिहुँ लोक में, भयो न है नहिं होय ॥
कौर्म वंश औतंश में, जन्म तासु कौ जानु ।
दीन वन्धु अस नाम है, अनिषा में अस्थान ॥
× × × अपूर्ण

विशेष—जनक पुर में रामचन्द्रजी के अश्व की प्रशंसा का वर्णन ।

संख्या ४५. चित्रकाव्य (उदधिवंध), रचयिता—दीन दयालगिरि, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—$18\frac{3}{4} \times 17\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, पद्य, लिपिकाल—सं० १९२४ वि०, प्राप्ति स्थान—चौधरी पुत्तूलालजी रईस, स्थान व पोष्ठ—करहल, जिला—मैनपुरी ।

आदि—उदधि वंध यह रतन मय, छंद तरंग विचित्र ।
विरचित दीन दयालगिरि, कवि मनमोहन चित्र ॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ एक बड़े पत्रे पर एक ही ओर चित्र के रूप में लिखा मिला है। इसमें दोनों ओर ३२–३२ कोष्ट हैं। इस चित्र काव्य में ८ छंद निकलते हैं। उनमें १—अनुष्टुप्, ३ बरवै, १ प्रमाणिका, १ चित्रपदा, १ दोहा और एक रमल छंद है। इसके रचयिता दीनदयाल गिरि हैं और प्रतिलिपिकर्त्ता—पाठक ओरीलाल ने इसे गोरखपुर में रह कर संवत् १९२४ वि० के हिमकाल में लिखा है। चित्र को मोड़ कर कई परतों में रखे रहने के कारण इसके मुड़े स्थलों के अक्षर मिट से गए हैं जो पढ़ने में अस्पष्ट हैं।

संख्या ४६. संग्रह, रचयिता—दुर्गाप्रसाद वाजपेयी, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौ० दाऊदयाल जी, स्थान—मुचैहरा, पो०—जसवन्त नगर, जिला—इटावा ।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री महारानी से अरजी ॥
श्री रानी महारानी खवरि नहिं लीनि हमारी ॥ टेक ॥
राजा राव जहाँ लग रैयत सबकों आस तुम्हारी ।
कौडी इनाम ना विल्ला पावै क्या तकसीर हमारी ॥
द्रवौ क्यों न दीन निहारी ॥ १ ॥
काया अंगद सौं गनि लीजै पाँचौ तत्त्व सँभारी ।
इतने बरस चाकरी कीन्ही षोड़स वर्ष हमारी ॥ गये येक मास करारी ॥२॥
कोई कोई सूर सिपाही कहांवेत कांपरे सरदारी ।

हम निर्गुण जानत कछु नांही है अब आस तुम्हारी ॥
सुनौ यह विनति हमारी ॥ ३ ॥

कहै दुर्गाप्रसाद सिपाही इतनी अरज हमारी।
पिनसन देहु वेगि घर जावैं कृपा कटाक्ष निहारी ॥
॥ हरौ मम संकट भारी ॥ श्री रानी० ॥

॥ भजन राग खम्माच का जीला ॥

अंत—हमारी सुधि नहिं लीनी घनस्याम ॥ टेक ॥
गणिका और अजामिल तारे शिवरी के पधारे धाम ॥ १ ॥
बूड़त ही गजराज उबारे सुरके सारे काम ॥ २ ॥
आप रहे कुवरी गृह प्यारे पाती लिखत विन काम ॥ ३ ॥
दुर्गा प्रसाद कहत मन मेरे सदा वसौ घन श्याम ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

विषय—विविध विषयक कुछ गीतों का संग्रह ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत संग्रह में कुछ खयाल, लावनी, भजन, ठुमरी और प्रभाती इत्यादि हैं। रचयिता किसी रानी के यहाँ नौकर थे। सोलह वर्ष नौकरी कर लेने के पश्चात् इन्होंने रानी से पेन्शन देने की प्रार्थना की। प्रस्तुत संग्रह में इस प्रसंग की भी कविता है। अन्य कविता राधाकृष्ण, गणेश, गंगा जी, शिवजी आदि संबन्धी है। कुछ पुराण संबन्धी रचनाएँ भी हैं और थोड़े से श्रृंगार विषयक गीत भी दिए हैं। रचयिता का अन्य कोई परिचय नहीं मिलता। इनका किसी भगवानदास नामक संत से परिचय था।

संख्या ४७. देवी स्तुति, रचयिता—दुत (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८९० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवती नन्दन जी, ग्राम व पोष्ट—बेरी, जिला—मथुरा।

आदि—भस्म लसत विसाल ससि मृग मीन षंजन लोचनी।
माल वदन विसाल कंचन वचन विघ्न विमोचनी ॥
तुही सिंघ वाहन धनुष धारन कनक केतन सोहनी।
मुंड माल उरोज राजत मुनण के मन मोहनी ॥
तुही एक रूप अनेक टेरे गुनण की गिनती नहो।
कछु ज्ञान जथा सुजान भक्तन भाव सु विनती कही ॥
भर विष्णु लोढाष ईष पर अभव अंकुस धारनी।
परकाज लाज जिहाज जननी जन के हित कारनी ॥
मंद हास प्रगास ससि मृग चंद्र वासन गाइयै।
क्रोध तज अभमान परहर दुष्ट वुद्ध नसाइयै ॥

उठत वैठत चलत सोवत वार वार मनाइयै ॥
चंद्र सूर्ज ओर ग्रंद हुते अधिक आनन्द रुप है।
सर्व सुखदाता विधाता दरस सरस अनूप है ॥
अंत—चितलाय चंडी चरित्र पढ़ै और सुनै सदा।
पुत्र मित्र कलत्र सुष सो दुषन आवै ढिग कदा ॥
भुक्त मुक्ति सुवुध वहुधन धान्य संपत लहै ॥
सत्रु नासक प्रकासनी कै युत आनंद मंगल कहै ॥
॥ इति श्री देवि अस्तुति संपूर्ण ॥

विषय—श्री देवी जी की स्तुति की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—अंत के पद 'सत्रु नास प्रकासनी के दुत आनंद मंगल कहै' में प्रयुक्त 'दुत' शब्द रचयिता के नाम का द्योतक विदित होता है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सुदामा की बाराखड़ी के—जो प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में है—आधार पर संवत् १८९० वि० दिया है।

संख्या ४८. मूल पुरुष, रचयिता—द्वारिकेश, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—४$\frac{3}{4}$ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी,

आदि—

अथमूलपुरुष लिष्यते ॥
॥ रागविलावल ॥

मूल पुरुष नारायण यज्ञ श्रुति अवतार भये सर्वग्य।
साषा तैत्री गोत्र भारद्वाज तैलंग कुल उद्योत द्विजराज ॥ टेक ॥
द्विजराज ते प्रभु आ प्रगटे सोम जग्य कर्यो जवै।
कुंडते हरि कंही वानी जन्म कुल तिहारे अवे ॥
सबही एसी अवली भई कवे ॥
सुनत ही मन हरष कीनो धन्य धन्य कह्यो जवै ॥ १ ॥
चक्रत तछन भये गंगाधर तिनके गगपति सुत वल्लभ वर।
जिनके पुत्र भये गंगाधर तिनके गणपति सुत वल्लभ वर।
श्री लक्ष्मणभट अनुभव टेव शुद्ध सत्व ज्यों श्री वसुदेव ॥ टेक ॥

× × ×

चैन होई फिरि चलें कासी वहुरि यह वन आवही।
अग्नि चहू धोमध्य वालक देषि सनमुष धावही ॥ ३ ॥
मारग दियो जानि जियमाता। लियो है उछंग मोहि दियो है विधाता ॥
तदोरि सुत कंठ लगाये। तिहि छिन मंगल होत वधाए ॥ टेक ॥

मंगल वधाए होत ततछिन देव दुंदभी वाजही ।
जोतसी सो लगन पूछत प्रथम समयोसाधही ॥
धन्य संवत पंद्रहाये तीस माधव मास हे ।
कृष्ण एकादसी श्री वल्लभ प्रगट वदन विलास है ॥ ४ ॥

अंत—महा अलौकिक अग्निकुल यह अलौकिक अष्टछाप है ।
अलौकिक हे भक्त जन जे सरनिलीने आपु हें ।
यथा मति कछु वरनि न जाई जानियो यह दास है ।
"द्वारिकेश" निहोरि मांगत यही फलकी आस है ॥२२॥

इति श्री मूल पुरुष समाप्तं

विषय—श्रीवल्लभाचार्यजी का वंशवृत्त देकर उनके कार्यों का वर्णन किया गया है ।

वंशवृत्त निम्नांकित है:—

मूलपुरुष नारायण
|
श्री गंगाधर
|
श्री गनपति
|
श्री लक्ष्मण
|
श्री वल्लभाचार्य
|
श्री विट्ठलाचार्य

श्री वल्लभाचार्यजी संवत् १५३० वि० में पैदा हुये थे । सात वर्ष की अवस्था में उनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ । उन्होंने चार ही मास में समस्त वेद और शास्त्र पढ़ लिए । ग्यारह वर्ष की अवस्था में शास्त्रार्थ करने लग गए थे । इसी समय दक्षिण की ओर कृष्णदेव राजा की राजधानी विद्या नगर गए । वहाँ इन्होंने मायावाद का खण्डन कर पुष्टि मार्ग का प्रतिपादन किया । इसके बाद ये पुंडरपुर गए और विट्ठलनाथ से मिले । वहाँ से गोकुल आये । गोकुल में भगवान ने प्रकट होकर इन्हें ब्रह्म साक्षात्कार करने का उपदेश दिया । तब से वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्ग का जोरशोर से प्रचार किया ।

विट्ठलनाथ के कहने से इन्होंने अपना विवाह काशी से किया और अपने पुत्र का नाम भी विट्ठलनाथ ही रखा । विट्ठलनाथजी का जन्म संवत् १५७२ वि० में हुआ ।

संख्या ४९. लावनी, रचयिता—साधू गंगादास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बच्चनलाल जी, चकवा खुर्द, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ राग लावनी ॥ छन्द चौपाया ॥

जयति जयति जयति जयति जय जय रामानुज सुकृतपालम्।
जय जग पति जय जय जगदीश्वर जय जग कारण करुणालम् ॥ टेक ॥
दया अस्म देशिक गुरु श्री रामानुज निज जन पालं।
जगत जनमि यति राजयत यकरि कृत सुबोध कृत जग आलम् ॥
जिहि जिहि युग विनसत सुधर्म जग होई अधर्म अघ विकरालम्।
तव तव प्रकट विस्व धर्म थापि अनधर्म उथापि तत कालम् ॥
निज आश्रित तिहि देत उभयपद दुष्ट समूहन कहँ कालम् ॥जयति० ॥१॥
सतयुग में शेषावतार कृत सहस रसन धृत मुखव आलम् ॥
त्रेता में लक्ष्मण लक्षण युत धरि शरीर खल दल मालम् ॥
द्वापर में वलराम धाम खल धरि वपु वहु वलिवल शालम्।
कलियुग मध्य प्रकट रामानुज कृत प्रवर्त शुभ श्रुति चालम् ॥
शाक्त नैन शांकर कपाल मत गज गंहन हरि वालम् ॥ जयति० ॥ २ ॥

अंत—कर त्रिदंड सु प्रचंड अखंडन दंडन पाषंडो वरनम्।

खंडन अघ मंडन भूमंडल पंडित मुख अमृत भरनम् ॥
पाषंड द्रुम खण्ड सघन दावानल होय दाहन करणम्।
चारवाक शठ शैल समहति भाष्य वज्र पतित धरनम् ॥ भूरि० ॥ ४ ॥
भक्त भृंग आनंद करन अति अंवुज सम कोमल चरनम्।
चरम मंत्र उपदेश करत भव भीत जु जन आवत चरनम् ॥
श्रुति विचार आचार निरत अनचार भार ततक्षणहरनम्।
श्री गुरु तुलसीदास पद आश्रित जान्हवीजन पोषण भरनम् ॥ ५ ॥

॥ इति लावनी समपूर्णम् ॥

विषय—श्री रामानुज की विनम्र और प्रशंसा का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत छोटी सी रचना किसी साधु गंगादास की है। यह गंगा दास अपने को किन्ही तुलसीदास का शिष्य बतलाते हैं। रचनाकाल अज्ञात होने के कारण निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि सुप्रसिद्ध मानसकार गो० तुलसीदास जी से इनका कोई संबन्ध था अथवा नहीं। प्रस्तुत रचना में श्री रामानुज की प्रशंसा करते हुए इन्होंने शैव, शाक्त और जैनादि संप्रदायों की निन्दा की है और उन्हें श्री रामानुज द्वारा परास्त हुआ माना है।

संख्या ५० ए. गोवर्द्धन लीला, रचयिता—गंगाधर, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं०—रामदत्त त्रिपाठी, स्थान व पोष्ट—विधूना, जिला—इटावा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गोवरधन लीला लिष्यते ॥

चढ़े देखो दल वादल आवें । दामिनी दमकन कहीं लागें ।
मेघ परलें का वर पामें । भागि अब कहौ कितकू जावें ॥

॥ दोहा ॥ कहौ जी अब कैसी करैं । परयौ इन्द्र सौं वैर ।
कोधौ सब पृथिवी कौ पालक, किस विधि होगी खैर ॥
जतन में कीजै ना देरी, नाथ हम शरणागत तेरी ॥

व्रजे सब इन्दर ने घेरी ॥

कहौ जी तुमने क्या जानी । भेट गिरवर की मन ठानी ॥
इन्द्र भी झूठी सब जानी । निपट है तुम्हारी नादानी ॥

॥ दोहा ॥ गोकुला राजा नन्द जी, तिनके पुत्र कहाय ।
झूठौ वचन होत है तुमरौ, ताकौ करौ उपाय ॥
जुगत हम वहुतेरी कीनी, नाथ हम शरणागत तेरी ।
व्रजे सब इन्दर ने घेरी ॥

॥ दोहा ॥

अंत—वरषत वरषत हारियो, यों जान्यौं जगदीश ।
दोउ कर जोर निवाजे इन्दर, धरौ चरण में सीस ॥
बुद्धि मेरी माया ने घेरी । नाथ हम शरणागत तेरी ॥व्रजे० ॥
अचंभौ याकौ कछु नहीं, इन्द्र तौ लाख कोटि ताईं ॥
वनावै इक पल के माहीं, बुझावै देर कछु नाहीं ॥

दोहा—उत्पति लै संसार की, गिरधारी गोविन्द ।
'गंगाधर' ब्रह्मा इन्द्र सब गावै, नहीं विचार तरंग ॥
नाम ते छूटत पग वेरी नाथ हम शरणागत तेरी ॥
इति गंगाधर कृत गोवर्धन लीला ॥ सम्पूर्णम् ॥

विषय—श्री कृष्ण भववान् की गोवर्द्धन लीला का वर्णन ।

संख्या ५० बी. गोवर्द्धन लीला, रचयिता—गंगाधर, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—चौ० रामप्रसादजी, स्थान व पोष्ट—साम्हो, जिला—इटावा ।

आदि—॥ ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गोवर्द्धन लीला लिख्यते ॥

चढ़े देखो दल बादल आमें । दामिनी दमकत ही लामें ॥
मेघ परलै का वरसामें । भागि अब कहो कित कूं जामें ॥

॥ दोहा ॥

कहौजी अब कैसी करैं, पर्‌यौ इंद्र सों वैर ।
कोप्यौ सब पृथ्वी को पालक, किस विधि होगी खैर ॥
जतन में कीजै ना देरी । नाथ हम शरणागत तेरी ॥
व्रजै सब इन्द्र ने घेरी ॥
कहोजी तुमने क्या जानी । भेंट गिरवर की मन ठानी ॥
इन्द्र की झूठी सब जानी । निपट है तुम्हारी नादानी ॥

॥ दोहा ॥

गोकुल राजा नंदजी, तिनके पुत्र कहाय ।
झूठो वचन होत है तुमरौ, ताको करौ उपाय ॥
जुगल हम बहुतेरी कीनी, नाथ हम शरणागत तेरी ॥
व्रजै सब इन्दर नें घेरी ॥ २ ॥
कहो जो तुम में गुन भारी । पूतना बालक वै मारी ॥
दुष्टिनी माया विस्तारी । आप बनी सुन्दर सी नारी ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

व्रजे तुम्हारी कृष्णजी, इन्द्र करै पैमाल ।
अब कै सताय करो व्रजराजा । करुणा सिन्धु दयाल ॥
शरण सब व्रज वासी तेरी । व्रजै सब इन्दर ने घेरी ॥ ६ ॥
व्रजै जन आनंद में हरषे । इन्द्र तौ कोप कोप वरषै ॥
दामिनी घन घन कै दमकै । उहाँ जल गिरिवर पर दरसे ॥

॥ दोहा ॥

वरषत वरषत हारियो, यों जान्यों जगदीश ।
दोऊ कर जोर निवाजे, इन्दर धरो चरण में शीश ॥
बुद्धि मेरी माया ने घेरी । नाथ हम शरणागत तेरी ॥
व्रजै सब इन्दर नें घेरी ॥ ७ ॥
अचंभौ याकौ कछु नाहीं । इन्द्र लौ लाख काटि ताहीं ॥
बनावै इक पल के माहीं । बुझावै देर कछु नाहीं ॥

॥ दोहा ॥

उत पत लै संसार को । गिरधारी गोविंद ।
गंगाधर ब्रह्मा इन्द्र सब गावै, नहीं विचार तरंग ॥
नाम ते छूटत यम बेरी । नाथ हम शरणागत तेरी ॥
॥ इति गंगाधर कृत ॥

॥ गोवर्द्धन लीला ॥

॥ सम्पूर्णम् ॥

विषय—श्री कृष्ण भगवान् की गोवर्द्धन धारण लीला का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ किन्हीं गंगाधर का रचा हुआ है। इसमें श्री कृष्ण के कहने पर इन्द्र पूजा बन्द करके गोवर्द्धन पूजा किए जाने पर इन्द्र के कोप और प्रलयकारी वर्षा से व्रज वासियों में जब उद्विग्नता उत्पन्न हुई तो श्री कृष्ण भगवान् ने अपनी अंगुली पर गोवर्द्धन को उठा कर व्रज वासियों की रक्षा की। यही प्रस्तुत ग्रंथ का विषय है।

संख्या ५१. रामाज्ञा, रचयिता—गौतमऋषि, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—$५\frac{३}{४} \times ५\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—चौ० मुख्तारसिंह, स्थान—नागरी, पो०—वलरई, जिला—इटावा।

आदि—

१—राम राम घर भोग करै श्रीराम श्रीराम श्रीराम

२—कष्ठ होई बहुत श्रीराम श्रीराम श्रीराम

३—वहुत कार्ज होई श्रीराम श्रीराम श्रीराम

४—जलदीषवरि प्राप्ति श्रीराम श्रीराम श्रीराम

१२३—बड़ो कार्ज सिद्ध श्रीराम श्रीराम श्रीराम
होइवड द्रव्य प्रापति होई श्रीराम श्रीराम श्रीराम

१११—जो मन मैं चीतौ सो पूरी होइगीः इक्ष्या १ पूजैगी तौ ब्रह्मननकूं भोजन
दीजैं तौ कार्ज सिद्धि होइगी।

अंत—३३१—कार्ज परमेस्वर करैगे निह्चै कै दुविधा मति करै ॥ सति कही सो होइगी ॥

३३२—कार्ज होइगो जौला वृह्मा रक्ष्या करै विष्ण रक्ष्या करै सिव रचया करै
कार्ज न होई ॥

३३३—मन मौ चितौ सो होइगी निश्चै कै संदेह नहीं कार्ज वेगि होइगी ॥

॥ इति श्री गौतम रिषि की रामरक्ष्या ॥

विषय—पांसा फेंककर शकुन बतलाना।

संख्या ५२. रसिक शृंगार, रचयिता—गिरधरनाथ 'नाथ कवि', कागज—देशी, पत्र—५, आकार—$८\frac{१}{२} \times ४$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५३, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—× × × लाल पीत छरी में तिहारे हेत घनी धरी।
लै लै कर रोकौ मग जांन जौन पावहीं।
वार वार इनि नाथ गलीनि में गुलचे हैं।

वन में अपनो दाव आज वहरावहीं ॥
भैया मधु मंगल तू लेषे सावधान ह्वजौ ।
तेरेई भरोसे केलि कलह मचावहीं ।
जानतु हैं नीके पै अंगूठाई दिखाइ जैहं ।
कहा करैं झूठैं साचैं गाल तौ वजावहीं ॥ ३ ॥

॥ कवित्त ॥ सूके सूके पात वीनि कागद करि फेंट वाँधी,
षेपटो षुरसि कांन लेषनि वनाई है ।
गिरी कहूँ पाई कजरौटी सोई दौत कीनी,
नाथ लिषधारी है प्रतीति उपजाई है ।
सावधान भये मधुमंगल तिमंगला की,
अधिक तिमंगलौ सवनि मन भाई है ।
कलवंक कल कल सुनि सुनि चौंकि कहै,
विषीया नूपुर वाजैं भैया कोऊ आई है ॥ ४ ॥

अंत—काहि चाउ को है ठाली वैठ्यो जो षवावै वोलै ।
अंगुरी दसन चांप ये हैं गुन माने कें ।
को है मानी वृंदावन रानी फिरि मुसकानी ।
कीयें आना कानी फल लागे पहिचाने के ॥
कैसे फल एसैं जैसे देखति हौ देषें कहा ।
नाथ हम जिये जू सुवेई ढंग जाने के ।
जानति हौ को हैं हम कोहो हम जानति हैं,
राजा नंदगाँवके हो चेरे वरसाने के ॥३१॥
भलो है जू भलो चेरौ जानि चलो डेरा कछू
षाहु कै षवावहु जग ह्वै है जसु जस ।
सुनि नैंन नीचे करि रही अन वोली तव,
गिरिधर नाथ गहि वांह चले रसु रस ॥
गिरि वन कुंज केलि कीनी कंठ भुज मेलि,
गोरस मधुर रस चाष्यौ स्वाद ससमस ।
कोक कला कोविद स्वछंद नाना रतिबंद,
एक एक तें अधिक दोऊ विस्वा दस दस ॥३२॥
इति श्री रसिक सिंगार भाव ॥ ग्रंथ समाप्त ॥ ६ ॥ ० ॥

विषय—(१) प्रथम पत्र लुप्त

(२) कृष्ण का, सखियों के दधि लेकर आने ही वाली होने के विचार से, सब सखाओं से सचेत रहने की प्रार्थना करना, सूखे पत्तों का कागज और लकड़ी की कलम तथा इधर उधर पड़ी कजरौटी की स्याही बना कर पद्य तैयार कर अपने को

अधिकारी प्रमाणित करने का उद्योग, पत्तों के खटके से चौंक पड़ना, उसे नूपुरादि का शब्द अनुमान करना, राधा का उसी ओर निकलना और आँख बचाकर निकलने का प्रयत्न करना, मधु मंगल का जान जाना, घेर कर दान का प्रस्ताव करना, जाने की सिफारिश कृष्ण से करना, सखियों से कथन कि तुम्हारी साधुता देख कर मन में आता है कि कुछ थोड़ा ही ले लें सो मान पूर्वक दे दे,······पत्र २ से ३ तक।

(३) व्रज वनिताओं और कृष्ण का संवाद, सखियों द्वारा प्रस्ताव का विरोध, एकांत वार्तालाप से कलंक की आशंका, अपने को व्यापारी एवं सोंठ, इलायची आदि का विक्रेता न होना तथा कृष्णका नखसिख वर्णन करते हुये प्रत्येक वस्तुओं का व्यापारी सिद्ध करना, मधु मंगल का दान का हिसाब लगाना, पत्र ३ से ७ तक।

(४) सखियों का कहना कि यहाँ की रानी राधा है इस पर सखाओं द्वारा मटुकी छीन लेना, राधा से कृष्ण की प्रार्थना, अंत में शनैः शनैः पर्वतों की गुफाओं में प्रवेश कर क्रीड़ादि करना।

संख्या ५३ ए. इकतालिस शिक्षापत्र टीका, रचयिता—गोपेश्वर जी, कागज—देशी, पत्र—१४२, आकार—११ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३९०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८९ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० ग्यारसीराम जी पटवारी, स्थान व पोष्ट—कुम्हेर, रियासत—भरतपुर।

आदि—श्री कृष्णाय नमः श्री गोपीजन वल्लभाय नमः॥ अथ श्री हरिराय जी कृत शिक्षापत्र ताकी टीका श्री गोपेश्वर जी कृत लिष्यते॥

एक समय श्री हरिराय जी परदेस पधारे। ओर गोपेस्वर जी घर सेवा में रहें। श्री हरिराय जी बड़े भाई श्री गोपेस्वर जी छोटे भाई। श्री गोपेस्वर जी के वहुजी वहुत सेवा में अनुकूल तत्पर भगवद् भाव संवलत हते। सो वहुजी महाराज लीला विस्तारें। तव श्री गोपेस्वर जी को सेवा सेवंधार्थ वहुत ही विरह भयो। सो दिन तीन लौं भोजन नांही किये किये। सो वहूजी के लीला विस्तारे प्रथमही दोय महीनां पहले जानी। तव श्री हरिराय जी मन में विचारे जो श्री गोपेस्वर जी विप्रयोग करि बहुत दुष पावेगें ताते कछु शिक्षा पत्र पहले ते पठाये चाहे। श्री आचार्य जी श्री गुसांई जी की कृपातें जो शिक्षापत्र वाचेगो। ताके सकल दुख निवृत होयगें। हृदय में भगवद् भाव षेयगो। यह विचार सगरे सास्त्र पुरान श्री भागवत सवको सिद्धांत संयुक्त सिक्षापत्र लिषिकें एक पत्र नित्य श्री हरिराय जी अपने मनुष्य हांथ श्री गोपेश्वर जी को पठावते। सो श्री गोपेस्वरजी एक गवाषा में धरि राषते वाचते नाही। जानते जो भाई को स्नेह हम ऊपर वहुत है सो सिक्षा करत हे। सो हम तों भगवद सेवा करत हैं ओर कछू जानत नांही। यह विचारि कें एक गवाषा में धरि राषतें। ऐसे करत सिक्षापत्र ४१ पठायें। सो सव श्री गोपेस्वरजी धरि राषे वाचे नांही। तव श्री हरिराय पूछें अपने मनुष्य सो। जो भाई श्री गोपेस्वर जी पत्र वांचत हें। तव मनुष्य ने विनती करी जो महाराजाधिराज हमारे आगें तो एक गवाषा

में धरि देत हैं वाचत नांही । कुसल पत्र लिषि हमको विदा करत हैं पाछे आप वांचत होय ताको ठीक नांही । हमारे आगे तो नांही वांचत । तव श्री हरिराय जी विचारें जो नाही वात कहे एकतालिस सिक्ष पत्र पठाये सोई बहुत हैं । एकहू पत्र वाचेगो तो सकल दुष निवर्त होयगो । पाछे श्री हरिराय जी पत्र नाहीं लिषे । पाछे कछुक दिन में श्री गोपेस्वर जी जी वहु जी लीला विस्तारें सो श्री गोपेस्वर जी कों बहुत ही दुष भयो । सो तीन दिन लौ भोजन नांही कीये सगरे मिलि कें सुझाय हारे काहू की मानी नाहीं ।

अंत—अव श्री हरिराय जी कहत हे । जो पुष्टि मार्ग में अनेक धर्म हे । अधिकारी के भेद करि जों पाठ गुणगांण गान वार्ता प्रभू को आश्रय श्रवण तिनसवन में मुख्य प्रभू की सेवा हे ताके प्रभु को तत्व सुखत्व हे । सो सेवा विना मुख्य फल कों अधिकार न होय तातें मन में जानना जो कोई प्रभू की सेवा करत हे । तिनको सदा ही कल्याण होय तिनके सकल कार्य पुष्टिमार्ग को फल होनहार हे । यह सर्वोपरि निश्चय सिद्धांत भयो । अब श्री गोपेस्वर जी कहत है । धन्य हरिजीवनदास तुम्हारे हृदय में श्रीहरिराय जी आय मेरे दुःष दूरि कीयो । औंर यह सिक्षा पत्र की टीका मेरी कृत मति जानियों । मेरे हृदय में प्रविष्ट होय श्री हरिराय जी कीये हे । तातें श्री हरिराय जी के हृदय में श्री आचार्य जी महाप्रभू श्री गुसांई जी निरन्तर विराजत हें । ताते यह भाव प्रगट भयो हे सो तुम परम चतुर हो अत्यंत गोप्य यह रत्न राषियो । काहे ते दिपायवे योग्य नांही हे ॥ १२ ॥

इति श्री हरिराय जी कृत सिक्षापत्र ताकी टीका श्री गोपेस्वर जी कृत संपूर्ण ॥ मिति जेष्ट वदि २ संवत् १८८९ वि० ॥

विषय—पुष्टि मार्गीय सिद्धांत तथा उपदेश वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ श्री हरिराय जी कृत मूल संस्कृत रचना इकतालीस शिक्षापत्र (श्लोकबद्ध) का व्रजभाषा गद्य में टीका है । टीकाकार का नाम श्री गोपेश्वर जी है । ये श्री हरिराय जी के छोटे भाई थे । संक्षिप्त विवरण और पिछले खोज विवरणों में हरिराय जी के विषय में जो कुछ लिखा गया है उसमें बहुत सी भूलें हैं । इस बार इनका बहुत कुछ प्रामाणिक वृत्त उपलब्ध हुआ है । गोकुल स्थित महात्मा वल्लभदास जी से जो कुछ विदित हुआ है वह इस प्रकार है :—

ये श्री गोकुलनाथ ठाकुर जी के मंदिरके उत्तराधिकारियों में से थे न कि नाथ द्वारा केमहंतों में से । श्री गोकुलनाथ ठाकुर जी का मंदिर भी नाथ द्वारा में ही स्थापित है । इनकी वंशावली इस तरह है :—
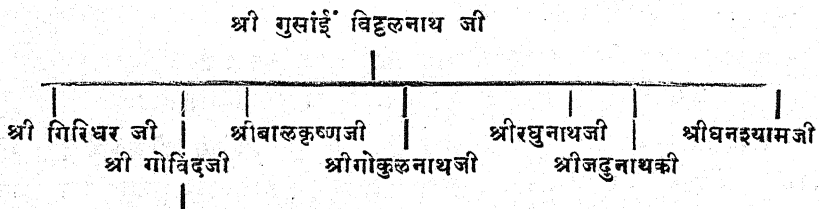
इससे स्पष्ट है कि ये श्रीवल्लभकुल के गुसांइयों के वंशज थे। प्रस्तुत ग्रंथ से इनके समय का कोई पता नहीं चलता। ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १८८९ वि० है। जिस कारण से मूल की टीका हुई है, वह विवरण के आरंभ में दिया है। ग्रंथ सभा के लिये प्राप्त हो गया है।

संख्या ५३ बी. इकतालिस शिक्षा पत्र, रचयिता—(मूल श्री हरिरायजी) भाषा टीकाकार श्री गोपेश्वरजी (नाथ द्वारा), कागज—देशी, पत्र—१६४, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० मथुरा प्रसादजी, स्थान—जतीपुरा, पो०—गोवर्धन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः॥ श्री गोपी जन वल्लभाय नमः॥ अथ श्री हरिरायजी कृत शिक्षा पत्र ताकी टीका श्री गोपेश्वरजी कृत लिष्यते॥

सो एक समय श्री हरिरायजी परदेस को पधारे हते॥ और श्री गोपेश्वरजी महाराज घर सेवा में हते॥ और श्री हरिरायजी बड़े भाई और श्री गोपेश्वरजी छोटे भाई॥ सो श्री गोपेश्वरजी के बहूजी के बहूजी से सेवा में बोहौत अनुकूल तत्पर भगवत भाव संवलित हते।

× × ×

॥ श्लोक ॥ सदो द्विग्न मनाकृष्ण दर्सनाक्लिष्ट मानस।
लौकिकं वैदिकं चापि कार्यं कुर्वन्ननास्थया॥ १॥

याको अर्थ—अब हरिराइजी शिक्षा करत हैं॥ जो लौकिक वैदिक कार्य कें आवेश करिकें श्रीकृष्ण के दर्सन को जाइये॥ सो प्रभू तो आनंद सरुप हैं। सो मनको उद्वेग करिके तथा लौकिक वैदिक कार्य के क्लेश करिके श्रीकृष्ण के दर्सन को जाइये। सो प्रभू तो आनंद स्वरूप हैं। सो जीव को मुख क्लेश लय देखिकें प्रभू उदासीन होय जाय॥ सो तातें लौकिक संसार के कार्य सिद्धि होउ अथवा बिगिर जाउ परंतु मनमें क्लेश न करियें॥ और लौकिक वैदिक कार्य मन में तुछ करि जानीयें॥ और प्रभू के सेवा संबधी कार्य सिद्धि होउ॥ सो तब मन को प्रसन्न राखिये॥

अंत—सो अब ग्रंथ के समाप्त में आधे श्लोक कहत हैं॥ १॥
॥ श्लोक ॥ सेव प्रभूस्ततो भद्र मखिलां भाव सर्वथा॥१२॥

याको अर्थ—अब श्री हरिरायजी कहत हैं॥ जो पुष्टि मार्ग में अनेक अर्थ हैं॥ सो अधिकारी के भेद करिके॥ सो जप पाठ गुणागणां वार्ता प्रभू को आश्रय श्रवण तिन सवन

में मुख्य प्रभू की सेवा है । सो ताते प्रभु तो तत् सुखत्व हैं ॥ सो सेवा विना मुख्य फल को अधिकार न होय सो ताते यह पुष्टि मार्ग में जो कोई वैष्णव प्रभू की सेवा करत हैं ॥ सो तिनको सदांई कल्याण होय ॥ सो तिनको सकल कार्य पुष्टि मार्ग को फल को होनहार हैं । सो यह सर्वोपर निश्चय सिद्धांत भयो ॥ सो अब श्री गोपेश्वरजी कहत हैं । जो धन्य हरि जीवनदास तुम्हारे हृदय में श्री हरिरायजी आप मेरो दुख दूरिकियो ॥ और यह सिक्षा पत्र की टीका में मेरी कृति मति जानीयो ॥ सो मेरे हृदय में प्रविष्ट होय श्री हरिरायजी आज्ञा कीए हैं ॥ ताते श्री हरिरायजी के हृदय में श्री आचार्यजी श्री गुसांईजी निरंतर विराजत हैं। सो ताते यह भाव प्रगट भयो ॥ सो ताते हे वैष्णव तुम परम चतुर हो । सो तुम अत्यंत गोप करिके राखियो ॥ काहूतें ॥ दिखायवे के योग्य यह वस्तु नाहीं हैं ॥१२॥

इति श्री हरिरायजी कृत इकतालीसमो सिक्षा पत्र ताकी टीका श्री गोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ॥४१॥

विषय—एक समय गोपेश्वरजी के बड़े भाई हरिरायजी परदेश गये हुये थे। पूजा का भार गोपेश्वरजी पर था। इसी बीच में इनकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हो गया। इस कारण पूजा में विघ्न होने लगा। यह बात हरिरायजी को ज्ञात हो चुकी थी। अतः वे नित्य प्रति एक पत्र इनके पास भेजते थे। इसे वे भाई का प्रेम समझ कर एक आले में रख दिया करते थे। इसे पढ़ते नहीं थे। एक दिन हरिजीवनदासजी के आग्रह से पढ़ा। उससे उन्हें आनंद प्राप्त हुआ। और नित्य क्रिया विधिवत् करने लग गये। उसी दिन से इन शिक्षा पत्रों की जो संस्कृत में थे टीका प्रारंभ कर दी। ये वल्लभ सम्प्रदाय के थे। इस संप्रदाय में विरक्त होकर साधु होना निषिद्ध है। अतः इसी कारण पत्र भेजते थे कि विरक्त न हो जाँय।

संख्या ५४. सुख दुख वर्णन, रचयिता—गुपाल कवि, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४, पूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौ० प्रसादरामजी, बम्हनीपुरा, इटावा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ सुख दुख वर्णन लिष्यते ॥

पूर्व दिशा के सुख वर्णन ॥ पुरुष वाक्य ॥

॥ दोहा ॥ रूप विसेस विसेस धन, भूमि सुहावन देस।
जाय करै यातें अवै, पूरब को परदेश ॥ १ ॥ कवित्त

ताफता अरु वाफता मुसज्जर श्री साफ मषमल समुकेसी पर नाना सुखदाइये।
सरस कृपान तरकस रु कमान वान जरकसी चीरा हीरा जहाँ जाइ लाइये ॥
सुकवि गुपाल फुलवारी धाम धाम अंबु श्रीफल कर्दंव पौंड़ा पांनन को खाइये।
बड़े होत केस मिलैं तंदुल हमेस प्यारी पूरव के देस में विसेस सुख पाइये ॥२॥

पूर्व दिशा के दुख ॥ स्त्री वाक्य ॥ सोरठा ॥
लगै चोर ठग वाइ, पेट चलै पानी लगै।

कीजै कवहुँ न जाय, पूरव के परदेसकौं ॥ ३ ॥ कवित्त ॥

पानी लगि जात वहु फूलि जात गात पुनि पेट चलि जात कछु खाइजात कवहूँ ।
जादू करि करिकैं संभोग सुख काज पसु पंछी करि राखैं नारी नरनि कौं अवहूँ ॥
ब्राहमन वनिक मीन मास मधु खात तेल हरद लगाइ न्हात नारी नर सवहूँ ।
फाँसि दै कै हाल मारि डारैं ठग जाल यातैं जैयै न गुपाल दिसि पूरव कवहूँ ॥

॥ वृद्धावस्था के सुख वर्णन ॥

अंत—तरुणा पण के जव गए, वृद्ध अवस्था होइ ।
जग के जीवन को तहाँ, तव तितने सुख होई ॥ १ ॥
वड़ो करि जानैं पुरिषान करि मानैं मिलै वैठे खान पाने ताकी सवही सहत हैं ।
करत सहाय दंड देत नहीं ताप मन हरि में लगाइ सुकरम को चलावत हैं ।
सुकवि गुपाल जू कुटुंव सुख देषे सदा कारे महुड़ेते मुख ऊजरौ लहत हैं ॥ २ ॥

दुख वर्णन

हाँथ पांइ थक जांइ, कुटुम कह्यो मानत नहीं ।
वृद्ध अवस्था पाइ, वहुत भलौं नहि जीवनौ ॥ ३ ॥

कवित्त

गात गरे जात सव दाँत झरे जात संग,
सात टरे जात वात सुहात न थापे मैं ।
होतुहै निवल जात रहै वुद्धि वलतन,
अचलु होतु वहु भोजन के धापे मैं ॥
भोग के करे पै रोग दावत है आय औंर,
सुपेदी छाय जाय मन रहतु न आपे मैं ।
सव सुख ढापै रुप रहतु न तापै थर थर,
देह्न कांप्यो करै आवत वुढ़ापे मैं ॥ ४ ॥

इति सुख दुख वर्णनम्

विषय—मनुष्य के सभी अवस्थाओं के एवं चारों दिशाओं के सुख-दुखों तथा विवाह, नशा सूंघना, खाना-पीना, खेल, चौपर, शतरंज, खुशामद, पंच, दलाली आदि का वर्णन है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में सुकवि गुपाल ने स्त्री और पुरुष के व्याज से देशाटन, नशेवाजी, खेल और चारों दिशाओं के सुख दुखों का बड़े मनोरंजक ढंग से वर्णन किया है । लगभग १९ विषयों पर छोटे-छोटे पद्य रचे गए हैं । रचना दोहा, चौपाई और कवित्तों में की गई है । रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । रचयिता का भी वृत्त अप्राप्य है ।

संख्या ५५ ए. प्रस्तार प्रकाश, रचयिता—ग्वाल कवि, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० बालमुकुंदजी चतुर्वेदी, मानिक चौक, मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ प्रस्तर प्रकास लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु वानी सेस जू तिन्हें वंदि सहुलास।
वंदी विप्र सुग्वाल कवि, किय प्रस्तार प्रकास ॥

॥ अथ मात्र प्रस्तार विधि।

सम कल के प्रस्तार में गुरु सब लिखो बनाय।
जहँ विषम तहँ आदि लघु तापर गुरू दरसाय ॥
आदि ही गुरु तरलघु धरौ, पुनि धर सिर कौ अंक।
बचे सु पूरब लेखि गल मत्त प्रस्तार निसंक ॥ २ ॥

॥ छंद ॥ जब लग रुप लघु भेद न आवै। तब लग नर प्रस्तार बनावै।

॥ अथ मात्रा प्रसार स्वरूप समकल अष्ट मात्रा ॥

SSSS १	ISSIS ६	ISIIIS ११	IIISSI १६	IIIIISI २१	IIIISII २६	IISIIII ३१
IISSS २	SISIS ७	SIIIIS १२	SSISI १७	SSSII २२	ISSIII २७	ISIIIII ३२
ISISS ३	IIISIS ८	IIIIIS १३	IISISI १८	IISSII २३	SISIII २८	SIIIIII ३३
SIISS ४	SSIIS ९	ISSSI १४	ISIISI १९	ISISII २४	IIISIII २९	IIIIIIII ३४
IIIISS ५	IISIIS १०	SISSI १५	SIIISI २०	SIISII २५	SSIIII ३०	

अंत—ह झ ध र षं भ-घन आठ ये दग्ध वरन विष्यात।
मानस कविता आदि में देहु न दियें कुघात ॥ ३९ ॥
छंद जु साषा विविध हैं, मूल प्रस्तार विचार।
कह्यौ ग्वालकवि अलप करि, जगदम्बा उरधारि ॥ ४० ॥
इति श्री प्रस्तार प्रकास संपूर्णम् ॥ शुभमस्तु ॥

विषय—१ मंगला चरण, ग्रंथ परिचय, मात्रा प्रस्तार विधि, समकल अष्ट मात्रादि तथा विषम कल, सप्त मात्रा स्वरूप, मात्रा-नष्टादि स्वरूप, मात्रा-मेरु विधि, मात्रा पताका, पत्र १ से ४ तक।

२—षट् वर्ण प्रस्तार, तथा वर्ण नष्टादि विधि, वर्ण मेरु विधि, वर्ण खण्ड मेरु विधि, पत्र ४ से ८ तक।

३—वर्ण पताका, वर्ण मर्कटी विधि, गण फलाफल विचार तथा दग्धाक्षर विचार, पत्र ९ से १५ तक।

संख्या ५५ बी. कवित्त वसंत, रचयिता—ग्वाल कवि (मथुरा), कागज—देशी, आकार—८×५ इंच, पत्र—८, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० सोहनपालजी, ठि०—पं० लक्ष्मी नारायणजी, ग्राम—धनुवाँ, पो०—वलरई, जि०—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ कवित्त वसंत ऋतु के॥

फूलि रही सरसों चहुँ ओर ज्यों सोने की वैस विछायत सांचे।
चोर सजे नर नारिन पीति वढ़ी रस रीति वरंगना नांचे॥
त्यों कवि ग्वाल रसाल के वौरन झौरन झौरन ऊधम माँचे।
काम गुरु भयो फागु सुरु भयो खेलिये, आजु वसंत की पाँचें॥

सरसों के खेत की विछायन वसंत वनी,
तामैं खड़ी चाँदनी वसंत रति कंत की।
सोने के पलंग पर वसन वसंती साजि,
सौन जुही मालै हालै हिय हुलसंत की।
ग्वाल कवि प्यारो पुष्प राजन कौ प्यालौ पूरि,
प्यावत प्रिया कौं करै वातैं विलसंत की।
रागन में वसंत वाग वागन में वसंत फूल्यो,
लाग में वसंत क्या वहार है वसंत की॥

अंत—ऊधो यह सूधो सो संदेसो कहिदीजो जाइ श्याम सों सितावी तुम विन तरसंत है।
कोप पुरहूत के वचाई चारि धारन तैंतिन पै कलंकी चंद्र विष वरसंत है॥
ग्वाल कवि शीतल समीरै जे सुखदहीं ते वेधत निशंक तीर पीर सरसंत है।
जेई विषनागिन तें वरत वचाई तिन्है पारि विरहागिनि में वारत वसंत है॥
वाह वाहै आपुकौं विहारी लाल ख्याल भरे वाला विरहागि तची अवना तचैगी वह।
ग्वाल कवि कंते उपचारन सिंच्याई करी अवलौं सची से सची अवन सचैगी वह॥
वानी कोकिला की विष धारा सी पचायोकरी अवलौं पचीसोपची अवना पचैगी वह।
आयो पंचवान लै वसंत वजमारो वीर अवलौं वची सोवची अवना वचैगी वह॥

विषय—विप्र श्रृंगार वर्णन।

संख्या ५५ सी. होरी आदि का छंद, रचयिता—ग्वाल कवि (मथुरा), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—

१२०, पूर्ण, पद्य, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० सोहनलालजी, ठि०—पं० लक्ष्मी नारायणजी, स्थान—धनुवाँ, पो०—वलरई, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कवित्त होरी विषयक। प्रारभ्यते ॥
आई एक ओर तें अलीन लै किशोरी गोरी आयो एक ओर तें किशोर वा महाल पै।
भाजि चल्यो छैल छड़ी छोड़िपै छवीलिन नें छरीको उठाइ धाइ मारी उरमाल पै।
ग्वाल कवि हो हौं कहि चोर कहि चेरो कहि वीचमें नचायो थेई तथेई ताल पै।
तालपै तमाल पैं गुलाल उड़ि छायो ऐसो भयो एक ओर नंदलाल नंदलाल पै।
मोहन औ मोहनी ने फागुकी लगाई लाग वाग में वजत वाजै कौतुक विशाल है।
केसरि के रंग वहै छज्जन पै छाकन पै नारे पै नदी पै औ विकास में उछाल है।
ग्वाल कवि कुंकुम की चालन रसालन पै तालन तमालन पै फूटत उताल है।
गुंज गुल लालन पै डलन पै ग्वालन पै वाल वालन पै घुमड़ो गुलाल है ॥

अंत—फागु की फैल करी मिलि ग्वालन छैल विशाल रसालन ऊपर।
लाल की लाल मुठी कौ गुलाल पर्‍यो उड़ि वाल के वालन ऊपर।
त्यौं कवि ग्वाल कहै उपमा सुखमा रही छाय सो ख्यालन ऊपर ॥
पंख पसारि सुरंग सुआ उड़्यो डोलौ तमाल को डालन ऊपर ॥

आज नंदलाल संग लै लै गोप ग्वालवाल खेलै ख्याल दै दै ताल गावत प्रसिधि की।
कीरति कुमारी किसोरी गोरी लाखन ले जोरी करी होरी होरी रूप रास रिधिकी।
ग्वाल कवि जुरि जुरि दै दै मूठि घुरि घुरि झेलै रंग मुरि मुरि सीमा नेह निधि की।
केशरि वही सो करै शेष के फनन पीरे उड़िकैं गुलाल करी लाल लटैं विधि की ॥

विषय—कृष्ण और गोपियों की होली फाग का वर्णन।

संख्या ५५ डी. प्रस्तावक कवित्त, रचयिता—ग्वाल कवि (मथुरा), कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० सोहनपालजी, स्थान—धनुवाँ, पो०—वलरई, जिला—इटावा।

आदि—श्री गनेसाइ नमः ॥ अथ कवित्त प्रस्तावक लिष्यते ॥ कवित्त॥
विमल विभूति धारैं चाँहत विभूति फिरै भूत भूत माहिं भूत थापै होत जैसे हैं।
तूंवर रंगीन राखैं तूंवरसे गावै फेरि काहूँ सों कहत मांगि तूमर हमेसे हैं॥
ग्वाल कवि कहै फेरि मनका विकार मैन मनका फिरावे लोभ मनका धरेसे हैं।
सिद्धि तौन सिद्धिपर सिद्ध सिद्ध रूप वनि करै भोग सिद्ध परसिद्ध सिद्ध ऐसे हैं।
जाकी खूब खूबी खूब खूबन में खूबी इहां ताकी खूब खूबी खूब खूबी नभगाहना।
जाकी वद जाती वदजाती इहां चारन में, ताकी वदजाती वदजाती ह्वां उराहना।
ग्वाल कवि एही पर सिद्ध सिद्धिते हैं जग वही परसिद्ध जाकी इहाँ हुआँ सराहना।

जाकी इहाँ चाहना है ताकी उहाँ चाहना है जाकी इहाँ चाहना है ताकी उहाँ चाहना।

अंत—बलमें अपार देख्यो दल कौ सिंगार चारू उथल पहार डारि थल कौन कोटी है।
पुष्ट पुष्ट थंभन से पाये पग चारु सुष्टु पुष्ट पुष्ट बाँसुरी हू तुष्ट वोटी वोटी है॥
ग्वाल कवि जैसे कुंभकान देत तुंड तैसौ तैसी फूतकार औचिघार अति मोटी है।
ऐरे गजराज और साज सब ठीक तेरे पै याद राज देह माहिं आँखि छोटी है॥

गहरे गुलावन के खेतते तजे अचेत,
जाइ जो कमल पै तौ कौन प्रतिबन्ध है।
सेवती न सेई तें न जान्यो वर भेद अजौ,
चंपक तें चप्यो जहाँ हितकौ निबन्ध है।
ग्वाल कवि कहैं ये बबूर के सुमन पर,
जाके भूरि कंटकन छेदी तन संध है।
पीरे पीरे पेखि भयो तीर तीर याके अरे,
मधुकर अँधिया में रस है न गंध है।

विषय—प्रस्तावक काव्य।

संख्या ५६. संग्रह, रचयिता—हरिवख्श विसेन, कागज—देशी, पत्र—४, आकार ८×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) ८, परिमाण (अनुष्टुप्) ५६, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला द्वारिका प्रसाद जी, स्थान—मोढ़ा, पो०—भरथना, जिला—इटावा।

॥ श्री राम ॥

आदि—

सात भरै मदिरा गुरु अंतहु दै लघु और चकोर कहो गुनि।
ताहि गुरू करि मन गयन्द लघू मदिरा शिर मानियो सुनि॥
आठ करोय भुजंगर लक्षप सो दुमिमिला तेहि आभा कहै पुनि।
जाहि सौं मोतिक दाम बनावहु भागन आठ किरीट रचौ पुनि॥ १॥
जो सुख चारि पदारथ में नहिं जो सुख ज्ञान विराग भये ते।
जो सुख चारिहु मुक्त मिलै नहिं जो सुख सातहु स्वर्ग गएते।
जो सब यज्ञ किये न मिलै सुख हेम मई मणिदाम दएते।
सो सुख भाखतु है हरिवख्श सिया पति नाम लएते॥ २॥
दिव्य किरीट सुमस्तक में मकरा कृत कुंडल कानन राजै।
आनन अम्बुज······पर मे च लोचन भृंग की भाँति विराजै॥
सुछाजै॥ मन्द मनोहर हाँस सरूप बिलोकि अनेक रती पति लाजै॥
सो रघुनाथ धरे भ्रुहाथ कृपा करि मेरे हिये में विराजै॥ ३॥

अंत —

॥ दोहा ॥ श्री गणनाथ गुरु गौरि महेश मनाय ।
श्री हनुमत पद वन्दि कै, सिय पति युग पद धाय ॥ १ ॥
भरत लषण रिपुहन चरण, बार बार सिर नाय ।
रामायन शतक बर, बरनत हौं चित लाय ॥ २ ॥
देव रिषी नारद कह्यौ, वाल्मीक मुनिपाय ।
भाषत हौं सम्बाद सोइ, मनसा वाचा काय ॥ ३ ॥

मगण तीनि गुरु होइ, रगण लघु मध्य कहावै । तगण अंत लघु जानि, भगन गुरु आदि वतावै ।

यगण आदि लघु देखि, सगन अंत गुरू सोहावै ।
जगन मध्य गुरु मानु, नगन त्रै लघु वन गावै ॥
मय मंन ये चारो सुखद दरसत जपे दुख दाती ।
कवित्त आदि गन सुखद तजै बुध ज्ञात ॥
... ... (शेष लुप्त)

विषय—राम विनय एवं पिङ्गल वर्णन ।

संख्या ५७. रामाश्वमेध, रचयिता—जन हरिदेव, कागज—देशी, पत्र—२२५, आकार—१०$\frac{1}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३१६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचना काल—१६१६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिवंशलाल जी, ग्राम पच्हेहरा, पो० वाजना, जिला मथुरा ।

आदि —..सुनौ रसषानी ॥३२॥
नाग छत्र पुर नाम सुदेशा, पुहमी पाल समुद सुभ वेसा ।
नृपत एक तहि पर चढि आवा, तहि सन जुद्ध कीन भावा ॥३३॥
तात भ्रात सुत सैन समेता । रन सनमुष झुके भट जेता ॥
भेद भान मंडल रिपुहंता, सूर लोक गे सूर सुमंता ॥३४॥
नृप अकेल मन में विसमाया । देस कोसपुर राज गमाया ॥
पुन गमनेउ वनमाल गल्यानी । पोहचेउ हेम कूट नृप ज्ञानी ॥३५॥
वसै जहाँ वृंदारक वृंदा । सक्तिन सहित लहै सुष कंदा ॥
विमल नाम तीरथ तहि पावन । सेवत ताहि मुनी मन भावन ॥३६॥
तहाँ जाय नृप वर तप ठाना । अतसै उग्र न जाय वषाना ॥

अंत—

॥ दोहा ॥ निध नव निध ससि अंक धरि संवत सर लेउ विचारि ।
फागुन कृष्णा त्रोदसी क्षीर सिन्धु सुतवार ॥२८॥

पूरव व्यास मुनीस कृत सुर वानी सुष कंद ।
सो अब "जन हरिदेव" ये कीनस भाषा वंद ॥२९॥
भूल चूक जो होय तो लीजै सुमति सुधार ।
वड़े लघुन पै हित करैं, ज्यौं गिर सिर त्रिन धार ॥३०॥

इति श्री पद्मपुराणें पाताल खंडे श्री रामाश्वमेधे श्री शेषवात्सायन संवादे जज्ञ पूर्त फल स्तुतो नाम अष्ट सष्टतिमोध्याय ॥ श्री रामजी ॥

विषय—श्री रामचंद्र जी का अश्वमेधयज्ञ वर्णन ।

रचनाकाल

निध नव निध ससि अंक धरि संवतसर लेउ विचारि ।
फागुन कृष्णा त्रोदसी क्षीर सिंधु सुत वार ॥२८॥

संख्या ५८ ए. गोवर्धन लीला, रचयिता—हरिनारायण मिश्र 'हरिनाथ' (बेरी, जिला०, मथुरा), कागज—देशी, पत्र २२, आकार—२ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) १६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १९०८ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रेवती रमण जी, मु० बेरी, पो० वरारी, जि० मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कवित्तनि में गोवर्धन लीला लिष्यते ॥
॥दोहा॥ श्री नंद नंदन स्यामघन, ब्रज भूषण सुषकंद ।
आनंद निधि राधा रमणि जै वृंदावन चंद ॥७१॥
श्री गोवर्धन धाम कौ कछुक कहौ जस गाय ।
कृपा रावरी कीजिये हो गिरधर जदुराइ ॥७२॥
तुलारासि कै भास्कर लषि व्रज वासी एह ।
जुरि समाज उचरत भये पुजहू इंद्र सनेह ॥७३॥
सकल सामग्री कीजिये जो मष लाइक आय ।
याते देव प्रसन्न होइ करहु सोइ चित लाइ ॥७४॥
कहन लगे व्रज जन सबै सामग्री सुभ साज ।
नंद आदि उप नंदहू लगे सम्हारन काज ॥७५॥

अंत— ॥ दोहा ॥

विनय करी अति प्रीति सौं व्रज वासिनु ने नेह ।
करि परिदछिना घर गये, वाढ्यौ अधिक सनेह ॥९२॥
गोवर्द्धन की भूमि कौ, गाइ सकै कवि कोइ ।
सेस महेस सुरेसहू, पारन पावत सोइ ॥९३॥
गोवर्द्धन लीला सु यह सूछम मति अनुसार ।
छिमित होहू कविराज सव चूक्यौ लेहु सम्हारि ॥९४॥

इति श्री गोवर्द्धन लीला समाप्त ॥

विषय—गोवर्द्धन पूजा का वर्णन। नंद गोप आदिकों ने अपनी परंपरा के अनुसार इन्द्र की पूजा करने की तैयारी की किन्तु श्रीकृष्ण ने उन्हें गोवर्द्धन भगवान् की पूजा करने को कहा। इन्द्र ने इस पर रुष्ट हो मेघों को व्रज पर प्रलय की वर्षा करके बहा देने की आज्ञा दी। जब फल कुछ न हुआ तो हारकर भगवान् कृष्ण की शरण में आया। उसका मोह दूर हुआ और भगवान् कृष्ण ने उसको क्षमा किया।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता पं० हरिनाम मिश्र हैं जो ग्रंथस्वामी पं० रेवतीरमण मिश्र के परबाबा थे। ये एक भक्त कवि थे। इस वंश में इन के पहले अभैराम, अखैराम और सेवाराम नाम के तीन प्रसिद्ध लेखक और हुए हैं। इनके नामों से जितनी कृतियाँ पहले मिली हैं वे संभवतः इन्हीं लेखकों की हैं। ग्रंथस्वामी का कथन है कि इन सबकी रचनाएँ उनके पास हैं। इन विद्वानों के समय में बेरी ग्राम बहुत प्रसिद्ध हो गया था। काशी जानेवाले विद्यार्थी प्रायः एक रात्रि यहाँ ठहर कर इन विद्वानों की संगति का लाभ उठाते थे। इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
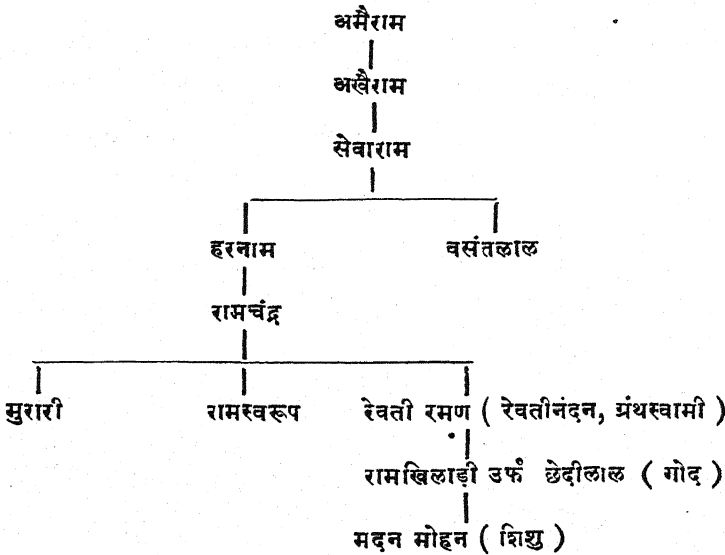
खेद है लेखक ने ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है; किंतु लिपिकाल संवत् १९०८ वि० से कुछ ही पहले यह ग्रंथ निर्मित हुआ होगा। इस ग्रंथ के लिपिकर्त्ता इन्हीं के भाई के शिष्य थे और ये स्वयं संवत् १९३२ वि० तक वर्तमान थे क्योंकि इस संवत् में इन्होंने अपने बाबा अखैराम कृत 'मुहूर्त चिंतामणि' की प्रतिलिपि की है। ग्रंथ दोहा और कवित्तों में रचा गया है।

संख्या ५८ बी. बारहमासी, रचयिता—पं० हरिनारायण मिश्र 'हरिनाम' (बेरी, जि०–मथुरा), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६,

परिमाण (अनुष्टुप्)—६५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०८ वि०, प्राप्ति स्थान—रेवतीरमणजी मिश्र, मु०—बेरी, पो० बरारी, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कवित्तनि में बारहमासी लिख्यते ॥

फूले हैं पलास वन विसद चंपानि जाल मंजुल मराल मोर नाचत सुढारे हैं।
मंजु मालतीन पै मदांध मधु पुंज छाए ठौर ठौर गुंजै सुनि सुषद सुप्यारे हैं।
देषौ 'हरिनाम' सर सरितसरौंज पांति फैलि मकरंद मंद विविहू किनारे हैं।
जैवौना चाहियै चैंत नीकी है वसंत रितु कीजिये न प्यार हमें नैननि तें न्यारे हैं ॥९५॥
चंड मारतंड की किरन भुवमंडल में लागि अति तपनि प्रकास अति छायो है।
ठौर २ छूटैं जल जंत्रकी जमातें चारु घूटे मकरंद भार महल महकायौ है।
फूलनि की सेज हरिनाम सनी चंदन हैं सुषद सुगंध वेस अतर छिरकायौ है।
वालम वैसाष में विदेसन पधारिये जु लीजै षसषाने की लहरि मन भायो है ॥९६॥

अंत—आयो माह मास ऋतु सिसिर प्रवेस भयौ सीतल समीर तीर वेधत वदन है ॥
कोटिक कपाट और चोटन वचत क्यौं हू मानैं नहीं छोट मोट करत कदन है ॥
सरद सवारी चढ़ी घेरयौ विरहमछा दपटि दवाइ लूटे देषिये मदन है ॥
कहै हरिनाम परदेसमति जाओ पति लीजिये वहार जू वसंत की सादन है ॥ ७ ॥

फाग मास आयौ मन भायौ भयौ गौरनि कौ छायौ अनुराग दसौं दिसिमें उमंग सों।
कंचन कमोरी कर झोरी भरें रोरी ही की करैं वरजोरी प्यारी वोरी आय रंग सौं।
ऐसें मास वारह सु प्यारी ने टिकायौ प्यारौ निजु परदेसतें सुनाइयौ प्रसंगतें ॥८॥

॥ इति श्री वारह मासी की कवितनि की संपूर्णम् ॥

विषय—कान्ता अपने पतिको प्रत्येक मास के विछोह से होने वाले दुखों का वर्णन करके परदेश जाने से रोकती है।

संख्या ५९. रसिक लहरी या कीर्तन, रचयिता—गो० श्री हरिरायजी 'रसिक प्रीतम' (सिहाड़, नाथ द्वारा, उदैपुर), कागज—देशी, पत्र—१२२, आकार १० × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पत्र, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं रमणलाल जी, स्थान—राधाकुंड, जिला—मथुरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः अथ श्री हरिराय जी कृत कीर्तन लिष्यते ॥

राग आसावरी— जन्म सुत को होत ही आनंद भयौ नंदराय।
महा महोछो आजु कीजै वाढयौ मनन रहाय ॥ १ ॥
विप्र वैदिक बोलिके, करि स्नान बैठाइ।
भाव निर्मल पहिर भूषण स्वस्तिवच पढ़ाई ॥ २ ॥

× × × ×

सकल ब्रज में भई संपति रमारूप वसाय।

करन लीला रसिक प्रीतम रहे ब्रज में छाय ॥ २२ ॥ १ ॥

राग धनाश्री— जसुमति सुत जन्म सुनि फूले ब्रज राज हो।
बडे वेसघर आयो यह काज हो ॥ १ ॥
छायो ब्रज गाम सिंगारी वसन भूषण साज हो।
देषन को आय जुरे गोप गोपी समाज हो ॥ २ ॥

× × × ×

फूली रोहिणी मान दै सबकौं आदर देत सयानी।
फूल्यो रसिकन भाई भाव मैं जिन यह लीला जनम वषानी ॥ ५ ॥

॥ रागनट ॥

अंत—जसोदा सुतकौ चरित सुनाँऊँ।
ढूढ़िलेत जहाँ तहाँ माखन जो घर माँह दुकाऊँ ॥ १ ॥
कोटि उपाय करैंहु नीके नैकुन पकरि हो पाऊँ।
सुधि करि गहि दृढ़ राषि हृदै मैं नीके हाथ लगाऊँ ॥ २ ॥
देखतही दुकि जात भवन मैं जतन कीये नख खाऊँ।
रसिक प्रीतम लरिकाई कीन्हौं वार वार वलिजाउँ ॥ ३ ॥ ५३० ॥

॥ इति श्री हरिराय जी कृत कीर्तन संपूरणम् ॥

विषय—श्री कृष्ण की बाल लीलाओं एवं वल्लभाचार्य की स्तुति का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ स्वामी गोस्वामी पं० रमणलाल जी वल्लभकुल के अनुयायी और विद्वान् पुरुष हैं। ये इस संप्रदाय संबंधी प्रायः सभी पौराणिक बातों का ज्ञान रखते हैं। हरिराय जी के जन्मस्थान का परिचय इन्होंने ही दिया है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति इन्हीं के बाबा के हाथ की लिखी है।

संख्या ६०. हरिचरित, रचयिता—हरिशंकर, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्) १४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपि काल—१८१८ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० श्री हरिकृष्ण जी वैद्य 'कमलेश', श्री कृष्ण औषधालय, डीग, रिया०—भरतपुर।

आदि— ॥ लिष्यते हरि चरित्र हरिसंकर कृति ॥

दोहा—जदुवंसी जाहिर जगत, सकल सुमति कर पूर।
अविहमय सो कहत है, सुनो मित्र अक्रूर ॥

चौपाई—अक्रूर तुममो मित्र हो। वहु राज काज विचित्र हो ॥
दोऊ नंद सुत इत ल्यावहू। चलि जाऊ गहरु न लावहू ॥
सिर लाई सु फलक सुति चल्यौ। अति कंस डरि थरि थरि हल्यो ॥

गनि नाथ अब रथ मग धरयौ। नृप हुकुम प्रस्थान न्यौ करयौ ॥
दोहा—मति बावरे की सीषते मति वारे पै जात।
मति वारौ जो न कहा मतिवारे की बात ॥ २ ॥

चौपाई

अंत—या कह नंद पंथ पहुँचाए। विलषै बदन गोकुल आये ॥
बूझन महरि जसोमति धाई। किहि ठौहर हलधर दोऊ भाई ॥
नीचौ मुषकर उत्तर दीयौ। फट्यो न कठिन वज्र सौं हियो ॥
वे दो पुत्र देवकी तने। हौहि न महरि तिहारे जने ॥
इतनी सुनत मुरछि गिरपरी। घरी द्वैक कीती सम्हरी ॥
कहत महर सुन महरि अयानी। वे त्रलोक पति सारंग पानी ॥
धनुष टोर उन कुवलय धार्‍यौ। मल्ल मारि फिरि कंस पछार्‍यौ ॥
सौंपो उग्रसेन को राजू। आयो करन सुरन कौ काजू ॥
अवगति गति कछु जानन जाई। मो गरीब को दई बड़ाई ॥
इतनी सुनत ज्ञान उर आयौ। हिरदै आनि हरि दरसन पायौ ॥ ५१ ॥

संपूर्ण सुभ मस्तु अस्व वदि २ बुधे कर सं० = १८१८

विषय—श्री कृष्ण का मथुरा आना और कंस आदि का वध। उग्रसेन को राज्य और अंत में नंद आदि गोपों को गोकुल भेजने का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम हरिशंकर है। अन्य परिचय इनका अज्ञात है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८१८ वि० है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति अशुद्ध लिखी है। अक्षर ठीक-ठीक पढ़ने में नहीं आते।

संख्या ६१. मनोरंजन माला, रचयिता—हरिवंश (स्थान-पचवारो, तह०—मऊ), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६४, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, रचनाकाल—सं० १८५५ वि०, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० हरदास दुवे 'हरिहर' (दतिया), ठि०-गुटैया शुगर मिल, नवाब गंज, कानपुर।

आदि—इष्ट मनोरंजन सदा करू हरिवंश बनाऐ—भक्ति भक्त भगवन्त की, कृपा मिलतु है आइ ॥१॥ मनरे तू हरि जननि में जब लागि बैठ्यो नाहि—तब लग तेरे कर्म विधि लिख्यो कर्म के मांहि ॥३॥ मन यह भव विष वृछमे दो फल अमृत निदांन—हरिजन अरु हरिभगति ये और सकल मृतजान ॥६॥ दुर्लभ मानुष देह जन, देह निमेछन भंग—ताही में दुर्लभ महा हरिदासन को संग ॥११॥

अंत—नारायन भगवान भव नरहरि नवल किशोर। गोपी मंडन रास रचि हृषीकेस दधि चोर ॥१०७॥ चक्रपानि चिन्ता हरन, भारत कृत हृतभार। वृज भूषन दूषन

नशन—जै जै नन्द कुमार ॥१०८॥ मन तौ सौ हरिवंस की विनती वारंवार। माल मनोरंजन सुमिर जो चाहे सुखसार ॥१०९॥

विषय—श्री हरिवंश कृत शांतिरस विषयक १०९ दोहों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—श्री हरिवंशजी की मनोरंजन माला में १०९ छंद हैं। इनके अतिरिक्त द्वादसमासी के १२ छंद, नायिका भेद के ३२ छंद, अर्द्ध नारेश्वराष्टक और फुटकर ३ छंद हैं। जैसा कि प्रस्तुत रचना से विदित होता है श्री हरिवंशजी ग्राम, पचवार, तहसील, मऊ के रहने वाले थे। रचनाकाल और लिपिकाल संवत् १८५५ वि० है। पुस्तक का लेख बहुत सुंदर है।

संख्या ६२. रसमंजरी, रचयिता—हरिवंस टंडन, कागज—देशी, पत्र—२७, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) – ९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६८, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७०९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री देवकीनंदनाचार्य, पुस्तकालय—श्री गोकुल चंद्रमाजी का मंदिर, कामवन, भरतपुर (रियासत)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रसमंजरी लिष्यते ॥

दोहा—कल कपोल मद लोल रस, कल गुंजत रोलंब।
कपि कदंव आनंद कहि लंबोदर अवलंब ॥ १ ॥

छंद—अति पुनीत कवि कलुष विहंडन। साहि सभा सवहिन सिर मंडन ॥
पुलित षग्ग षत्तिय सिर षंडन। जग मगात इकै कुल टंडन ॥ २ ॥
तिहिवंस क्रियो उदोत। कित्त सुरसरि सोत।
छज्ज मल्ल सुभ आनंद। तस नंद परमानंद ॥
कुल कमल मानस हंस। जिसु जित्त जगत प्रसंस।
सदनंद सुअ अवतंस। जय वंस मनि हरि वंस ॥ ३ ॥

दोहा—रसिक राज हरिवंस, तन चंचरीक निज हेत।
भानु उदत्त रस मंजरी, मधुर मधुर रस लेत ॥ ४ ॥

सवैया—निरषे नित उन्नत ज्यो जगती पहिले ही चलै निजु पाइ दिये।
वन वीचि लता दल फूलन तोरत हैं दहनो कर उंच कीए।
सुष सोवत सिंह त्वचारचि सेज सु अंग विभागन पेम पिए।
विहरे तिपुरारि तिहूं पुरयौं छवि सो अरधंग वधूहि लीए ॥ ५ ॥

दोहा—रस रंजन सिंगार रस अवलंवन अभिराम।
प्रथमहि ताते भेद सों, कहत नाइका नाम ॥

अंत— × × ॥त वर्णन

इहा तजिरे चित्त चंचलता जियरा निज लाजिन लोलुप है।
करुना करि नैननि नीर भरो तुमहू न परा पलकै पल है।
सिरि सोहत मोरनि के चँदवा मुरली मधुराधरते मधु है।
नव नीरद सुंदर स्यामल हो सुहहा हरि लोचन गोचर है ॥ ३ ॥

इति श्री रस मंजरी समाप्त ॥ संवत् १७०९ वर्षे अश्विन वदी पुसो में लिखितं ॥

विषय—नायिका भेद वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता हरिवंश हैं जो टंडन जाति के थे। अपना वंश परिचय इन्होंने इस प्रकार दिया है—छज्जमल्ल > आनंद > परमानंद > सदानंद > हरिवंश ।

नायिका भेद विषयक यह उच्च कोटि की रचना है। यद्यपि रचनाकाल नहीं दिया है तो भी लिपिकाल संवत् १७०६ वि० होने से रचना काफी पुरानी है। रचयिता ने साहि सभा का उल्लेख किया है जिससे विदित होता है कि ये तत्कालीन मुगल सम्राट के यहाँ दरबारी कवियों में से थे।

संख्या ६९. अष्टक, रचयिता—हरिवंश अली, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६१/२ × ५ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हृदयराम जी, स्थान—अगरवाला, पो०—छाता, जिला—मथुरा ।

आदि—अष्टक सवैया लिष्यते ॥

॥ सवैया ॥ अति चारू लता मृदु कुंज वनी तहाँ फूल रही चहुँओर कली ।
तहां गान करैं नव कोकिल कीर समीर वहै जु सुगन्ध रली ॥
नितही नव लाल सुवाल लिए रति मानत कोक कलानि भली ॥
तिनके पद पंकज कौ मकरंद सुनित्त लहै हरिवंश अली ॥
विथुरी सुथरी अलकैं झलकैं विच आनि कपोल परी जु छली ॥
मुसक्यात जवै दसनावलि देषि लजाति तवै नव कुंज कली ॥
अति चंचल नैन फिरै चहुँधानित पोषन लाल है भाँति भली ॥
तिनके पद पंकज कौ मकरंद सुनित्त लहै हरिवंस अली ॥ २ ॥

अंत—अंजन लीक रही कछु पीकहू नैंन लजावत कंज दली ।
षंजन मीन कहा समकै रससौं सरसै अरसानि रली ॥
इत लालन के अधरान छवी मखलीक जु शोभित भाँति भली ॥
तिनके पद पंकज कौ मकरन्द सुनित्य लहै हरिवंश अली ॥ ६ ॥
निहाल लियें छकनी जु छकें अवलोकनि है मुसक्यान रली ।
अंगनि सौभगता सरसे लषि लाजत जंघ तटी कदली ।
लाल के प्रान समान सदा सुषदायक है व्रषभान लली ॥
तिनके पद पंकज कौ मकरंद सुनित्य लहै हरिवंश अली ॥ ७ ॥

× × ×

विषय—श्री कृष्ण और राधा जी का शृंगारिक वर्णन करके वंदना की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत अष्टक अंत से खंडित है। इसके रचयिता सखी संप्रदाय के हरिवंश अली हैं। ये हरिवंश अली कौन हैं और कब वर्तमान थे, इसका कोई पता

नहीं चलता। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। काव्य की दृष्टि से रचना अच्छी है।

संख्या ६४. श्री चूनरी, रचयिता—हेम, कागज—सुलतानपुरीकागज, पत्र—२, आकार ९१/२ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० वल्लभराम जी, ग्राम व पोष्ट—मगोरी, जिला—मथुरा।

आदि—श्री जिनवर पद पंकज सदा नमों धरमाव हो।
सोरीपुर सुरपुर बन्यौं अति ही अनोपम ठाम हो।
मेरी सील सुरंगी चूनड़ी ॥ १ ॥
समद विजै राजा तहाँ राज करै वहु भाइरे।
दुषीमन कोई देषीए प्रीतम जन सुषदाय हो ॥ मेरी० ॥ २ ॥
राणी सिवा देवी भली आनन्द चंद समानरे।
सोलह सुपने देषती सुरनर गावै आंन हो ॥ मेरी० ॥ ३ ॥
नेमीसुर जब जन्मीयो करत महौछौ इंद्र जी।
नगर महौछौं अति कियौ जननी मानैं आनंद जी ॥ मेरी० ॥ ४ ॥
दिन दिन बाढै श्री नेम जी बाला तन प्रभु थाइरे।
एक दिवस षेलन समैं राज सभा में जाय जी ॥ मेरी० ॥ ५ ॥

अंत—

पुर सुलतान सुहावनौं जहाँ वसत...लोग जी।
धन परी इन आंनंद स्यौं करहि बिबधि स्यौं भोग जी ॥७१॥
कष्ठ संघ सुहां वणां माथुर गछ अनूप जी।
सील चंद मुनि जानियो सब जतइन सिरभूप जी ॥ मे० ॥७२॥
जास पट्ट जस कीर्तिमुनि काष्ट संघ सिंगार जी।
तास सिष्य गुण चंद मुनि विद्या गुन भंडार जी ॥मे० ॥७३॥
मन वचन काया भाव स्यौं पढ़हि गुनहि नर नारीया।
ऋधि सिधि सुख संपदा तिनघर मंगल चारीयां ॥
इह वैराग हिए धरैं निसि अह अरु निरधार जी।
"हेम" भने ते जांनीए ते पावई भवपार जी ॥७४॥

॥ इति श्री चूंनरी समाप्त ॥

विषय—जैन तीर्थङ्कर श्री नेमचंदजी के वैराग्य की कथा का वर्णन है। श्री नेमचंद्र स्वामी सोरीपुर के राजा समद विजैके पुत्र थे। एक बार वे श्रीकृष्ण और वलरामजी के साथ मल्लस्थल में गए वहाँ से श्री कृष्णजी अपने घर ले गए। वहाँ सब स्त्रियों ने उनके साथ फाग खेला और बातों ही बातों में विवाह के लिये उन्हें राजी कर लिया। उग्रसेन की

कन्या राजुलमती (राजमती) के साथ विवाह करने के लिये जब वे बारात सहित महल में गए तो वहाँ बहुत से पशुओं को बंधा देखा। सारथी ने बतलाया कि विवाहोत्सव में ये सब मारे जाएँगे। नेमजी विवेकी पुरुष थे। उसी समय वैराग्य उत्पन्न हुआ। पशु-पक्षियों को बंधन से मुक्त करा कर स्वयं उसी समय जंगल चले गए। राजमती भी उनके पीछे २ जंगल को चली गयी और उन्हीं के साथ तपस्या करने लगी।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत पुस्तक के अंत में 'हेम' भने ते जानीये ते पावई भव पारजी' पद से विदित होता है कि कोई हेम नामक व्यक्ति ग्रंथ का रचयिता है। इन्होंने अंत के ७१, ७२, और ७३ संख्यक छंदों में सुलतानपुर के कुछ जैनाचार्यों का विवरण दिया है जिससे पता चलता है कि सुलतानपुर में काष्टसंघ के अंतर्गत माथुर गछ के आचार्य (स्यात्) शीलचंद मुनि हुए। इनके पट्ट (प्रधान) जस कीर्ति मुनि थे और जसकीर्ति मुनि के शिष्य गुणचंद मुनि थे। रचयिता ने यह नहीं बतलाया कि उनका संबंध इन मुनियों के साथ क्या था? अर्थात्, वे इनमें से किसी के शिष्य थे अथवा नहीं। जहाँ तक संभव है वे गुणचंदजी के शिष्य रहे होंगे। यह भी स्पष्ट नहीं कि सुलतानपुर स्थान कौन सा है; पर विदित होता है कि यह स्थान कहीं राजस्थान में है, रचयिता की भाषा से ऐसा विदित होता है। ग्रंथ का रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। ग्रंथ में राजस्थानी भाषा का प्रयोग होने से पता चलता है कि रचयिता राजस्थानी था।

संख्या ६५ ए. अनुभव रस अष्टयाम, रचयिता—श्री हित हीरा सखीजी (वृन्दावन), कागज—आधुनिक सफेद, पत्र—६, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७६, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भगवत प्रसाद जी 'ज्योतिषरत्न', स्थान—राधाकुण्ड, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति ॥ मंगल छन्द ॥

जै जै श्री हित वंश चरण रज मैं चहूँ। गाऊं कछू रस सार अनूपम सुष लहूँ ॥ १ ॥
पाऊं भाव अनूप युगल गुन विस्तरुं। प्रेम भक्ति अनुराग धरि भव निस्तरुं ॥
निस्तरुं भव भव मांहि ते जग की न मघ मन में सचै।
सव छांड़ि संगति हरि लगी ह्वै है जोई विधिना रचै ॥
तजहूँ पद अव आपके हिय रूप निशि दिन राखि हों।
हीरा सखि हित नाम कूं रटि हरषि चित अभिलाषि हों ॥ ४ ॥

श्री हित हरिवंशो जयति ॥ अथ श्री हित हीरा सखि जी कृत मानसी अष्टयाम तथा अनुभव रस लिष्यते ॥

अंत—दोहा—याही विधि नित प्रति सखी रहत टहल में जानि।
पिय प्यारी के रंग में रहीं महा सुष मानि ॥ १७ ॥
हीरा हित जो कछु कही अष्टयाम की रीति।
श्री गुरु चरणन की कृपा यही हीयें प्रतीत ॥ १८ ॥

टहल लाड़िली लाल की करत नित्त चित्त लाय।
हीरा हित तजिया सुखहि औरन कछू सुहाय ॥ १९ ॥
रसिकन सौं यह बीनती, सुनौं चतुर चित्त लाय।
माफ भूल कूं राखिये, हीरा हित अपनाय ॥ २० ॥
इति अष्टयाम सम्पूर्णम् ॥

विषय—सखियों द्वारा श्री राधा और श्री कृष्ण जी के अष्टयाम की सेवा का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचयिता श्री हीरा सखि ने श्री रूप सखि जी की वंदना की है, अतः वही उनके गुरू जान पड़ते हैं। ये श्री हित महाप्रभु के अनुयायी थे। प्रस्तुत हस्तलेख में इनका चतुर्थ अष्टयाम भी लिपिबद्ध है। इससे पता चलता है कि इन्होंने ४ अष्टयाम लिखे थे। ग्रंथ स्वामी, जो कि हस्तलेख के लिपिकर्त्ता भी हैं, कहते हैं कि ये चार अष्टयाम हीरा सखि कृत 'अनुभव रस' नामक ग्रंथ के अन्तर्गत हैं। रचनाकाल अज्ञात है।

संख्या ६५ बी. चतुर्थ अष्टयाम, रचयिता—हीरा सखी (वृन्दावन), कागज—आधुनिक, पत्र—६, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७६, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भगवत प्रसाद जी 'ज्योतिषरत्न', स्थान—राधाकुण्ड, जि०—मथुरा।

आदि—अथ चतुर्थ अष्टयाम प्रारंभ ॥
॥ दोहा ॥ श्री गुरु पद पंकज कृपा याचूं वारंवार।
हीरा हित नित युगल निधि चाहत निज रस सार ॥ १ ॥
सहचरि रूप निहारि निज, भाषहिये थिर लाय।
रसिक भक्त कछु करिदया, सुवुध देउ उपजाय ॥ २ ॥
सखी भोर ही आयके सेन कुंज के द्वार।
श्यामा श्याम जगाये हैं सब को यही विचार ॥ ३ ॥
जुरि बैठी मिलि सब अली, गावत बीन बजाय।
ललिता चित्रा द्वै जनी, पहुंची भीतर जाय ॥ ४ ॥
रही बैठ पांयत पलंग तरवा कर सहराय।
हीरा हित गावत रही मधुर सुरनि उपजाय ॥ ५ ॥
॥ प्रभाति ॥ जागिये श्याम सुन्दर अहो नृप दुलारी।
बीत गई रैंन सैंन अब छांडिये रवि को प्रकाश मुख देखिये उघारी।
हमहूं पहिचाने राति रास के उनींदे हौ भयौ श्रम कछुक निशि पौढे अबारी ॥
विनय करि कहत हूँ नैयिन ये दर्शन कूं द्वारे बृज वनितन की भीर भई भारी ॥ ३ ॥
इतनी दोनों सुनत ही उठे झुकि झूमते बैठे सुख सेज पर जम्हात प्यारी ॥ ४ ॥
अंत—मोहन मुरली मधुर बजावै।
राग अनूप भरत ताके विच श्री राधा गुन गावै ॥ १ ॥

प्रेम विवस ह्वै अति नाचत हैं नाना भाव बतावै।
हीरा सखि हित वृंदावन हित नित रसिकन चित हुलसावै॥
अष्टयाम प्रश्न कियो श्री गुरु चरन मनाय॥
हीरा हित अब सुष अधिक भयौ हिये बिच आय॥ ३॥
करि कृपा रसिकन प्रबल दीनौं सुखद रसाय।
हीरा हित लखि दीन अति लीनी अब अपनाय॥ ४॥

चतुर्थ अष्टयाम की जै जै श्री हरिवंश श्री हीरा हित सखी कृत संपूर्णं॥शुभम्॥

विषय—सखियों द्वारा श्री राधा कृष्ण की अष्टयाम की सेवा का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथांत में रचयिता ने हित वृन्दावन का नाम लिया है:—
"हीरा सखि हित वृन्दावन हित नित रसिकन चित्त हुलसावै"

इससे यह शंका हो गई है कि श्री वृन्दावन हित और श्री रूपहित जी में से कौन इनके गुरु थे। श्री रूपहित को इन्होंने सहचरि के रूप में संबोधन किया है। हो सकता है कि गुरु श्री वृन्दावनदास ही रहे हों और श्री रूपहित मित्रों में से हों।

संख्या ६६. सुधानिधि काव्य (भाषा), रचयिता—हितदास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१८०, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०५, पूर्णं, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३४ वि०, लिपिकाल—सं० १८११ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० भगवत प्रसादजी, राधा कुण्ड (राधावल्लभजी का मंदिर), जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति। श्री हरिवंश चन्द्रोजयति। श्री गुरुवैभ्योनमः
अथ श्री मत्सुधानिधि श्रीमदूग···सटीक लिष्यते॥
दोहा—श्री राधा वल्लभ जयति जै श्री हरिवंश उदार।
जय वृंदावन अलीगन जय जमुना रस धार॥ १॥
मंगल निधि आनंद निधि निधि निधि सिद्धि समाज।
श्री गुरु चरण सरोज हित सब विधि पूरण काज॥ २॥

× × ×

मूल श्लोक—यस्या कदापि वसनांचल खेल नोत्थ धन्यति धन्या पवनेनि कृतार्थ मानी।
योगेन्द्र दुर्गम गतिर्मधुसूदनोपि तस्याः नमोस्तम वृषभानु भुवोदिशेपि॥१॥

भाव—जाके कबहूं एक नव खेल महत्युत्सव में सारी के छोर कूं चलाय वाय आई है।
धन्य अति धन्य सोई ताके तन लागत ही मानत कृतार्थं पिय भाग्य की बड़ाई है।
योगी योगेन्द्रनिके ध्यान हों सो दुर्गम सो ऐसे मधुसूदन के हिय सुषदाई है।
ऐसी जो है गोरी वृष भानु की किशोरी भोरी ताकी दिसा वंध दासहितसरसाई है॥

अंत—

संवत सर दस आठ सत गये तीस अरु चार। सावन मास सुहावनो, तीजनको त्यौहार॥४॥
यह रहस्य पूरण भयो, भाषावानी सार। दास वास वृंदा विपिन, पूरन आस हमार॥५॥

• विमुखन सौं कीजो गुपति, अतिरहस्य रसज्ञान । रसिकन मिलि सुख लीजिये, पढ़ि सुनिकर विष्यान ॥६॥

इति श्री मरस सुधानि प्रेम सिन्धु रस सार । भाषा रचि पूरण भई, सुभ मंगलदातार ॥७॥

इति श्री वृन्दावनेश्वरी चरण कृपा मात्र विजंभृत श्री राधा सुधा निधि स्तव श्री हित हरिवंश चंद्र गोस्वामीना विरचित तस्य भाषा भाव श्री भोरी सखी कृपा प्रसाद श्री हितदास कृत संपूर्णम् शुभमस्तु ॥ जेष्ठ शुक्लाअष्टमी संवत् १८४१ वि० लिखि वृंदावन में ॥

विषय—श्री कृष्ण राधा के वृन्दावन लीलाओं का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—यह ग्रंथ सुप्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ सुधा निधि काव्य का व्रज भाषा पद्य में सरस और भाव मय अनुवाद है । अनुवाद कर्त्ता श्री हरिवंशजी के अनुयायी श्री हितदासजी हैं । ये भोरी सखि के शिष्य जान पड़ते हैं जिनकी इन्होंने ग्रंथ के आदि अंत में वंदना की है । इनका निवास स्थान वृन्दावन था । रचनाकाल सं० १८३४ वि० और लिपिकाल संवत् १८४१ वि० है ।

संख्या ६७. ईसख प्रकास (सामुद्रिक), रचयिता—मिरजा ईसख, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, अपूर्ण, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५९ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० हनुमान प्रसादजी, ग्राम—नेरा, पोष्ट—बल्देव, मथुरा ।

आदि— ... ... न जिहि सो अति भोगी होइ ।
लंबे कानन सो कहत मध्यम नर सब कोइ ॥५७॥
बड़भागी जासो कहत वार होइ जि कानु ।
इहि विधि लछन सुभ असुभ सामुद्रीक प्रमानु ॥५८॥
जाको मुख ससि बिंब सम, धरम वंत सोइ होय ।
मृग मूषक कौं सों वदन महा अभागो, सोइ ॥५९॥
टेढ़े भ्यानक वदन तै सदा रहै धन हानि ।
घोरा कोसो वदन जिहि ताहि दरिद्री जानि ॥६१॥
ऊँचे राते कमल दल सम सरि जाके गाल ।
नारी वल्लभ भोग विधि विद्यावंतु विसालु ॥६१॥

अंत—बहुत वार सुभ पदमिनी हस्तिनि थोरे जानि ।
बड़े केस सौं संषिनि कुटिल चित्रनी मानि ॥५४॥
कुच टेढ़े पदमिनि कहो, हस्तिनि टेढ़े अंग ।
दीरघ कुच संषिनी कहो चित्रणि सम सुसमग्र ॥५५॥
पुस्तक सामुद्रीक के देषे बहुत मंगाइ ।
वहै अर्थ भाषा किया लछन फल समुदाइ ॥५६॥
बासुदेव द्विजवर कियो सामुद्रीक वषानु ।
कृपावंत या पर रह्यो सदा निजावतिषांनु ॥५७॥

इति श्री साहि सहरुष वंस अवतंस निजावतषांनंद जगवंद मिरजा ईसष विरचिते ईसाष प्रकास नाम सामुद्रीक संपूर्ण ॥ संवत् १८५९ साके १७२१ वर्षे आश्विन मासे सप्तम्यां बुधे ॥ कामवन मध्ये हरनारायण लेष्यं ॥ सुभंभवत् ॥

विषय—सामुद्रिक विद्या का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ मिरजा ईसख कृत है। इन्होंने अनेक सामुद्रिक ग्रंथों को देखने के पश्चात् इसकी रचना की। ये ईसख निजावत खाँ के पुत्र थे। सामुद्रिक विद्या का अध्ययन इन्होंने वासुदेव नामक एक ब्राह्मण से किया था, जो इन्हीं के पिता के आश्रय में रहते थे। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५९ वि० है। इसके आरंभ के छः पत्रे खंडित हैं।

संख्या ६८. काव्य पीयूष रत्नाकर, रचयिता—जगन्नाथ 'सुख सिंधु (गोकुल), कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—१३ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण अनुष्टुप् ९००, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री युत घुर्रिमल लदूर चंद मोदी, गोकुल, जिला—मथुरा।

आदि— ... ... बोलत तुतरावत।
लै उछंग उरलाय माय हंसि हंसि हुलरावत।
सुखसिंधु जोरि कर सरनगहि वंदन करत नवाय सिर।
लीला अनंत निस द्यौस यह राखहु मम मन में सुथिर ॥ ६ ॥

दोहा–पितृ सु मम गुरू ज्ञान घन श्री व्रजनाथ सुजान।
तिनके पद वंदन करौं नित प्रति अति सुख दान ॥११॥
अथ कविकुल वर्णनं—पितृ पितामह चरण युग वंदन करि सुख रास।
प्रथम कहत कवि कुल सकल सुनि हिय होय हुलास ॥१२॥
दच्छन देस पुनीत अति ग्राम सु कांकर वार।
आदि वास तिहि ठौर किय महत जननि निरधार ॥१३॥
अति उत्तम तैलंग कुल गुन निधि परम प्रशंस।
राम चन्द दीछत भये, कवि कुल के अवतंस ॥१४॥
विविध वेद विद्या विसद पठित पुरान प्रवीन।
परम प्रतापी जगत जस सोम यज्ञ वहु कीन ॥१५॥
श्री हरिहर तिनके तनय ज्ञान निधान यश वान।
सोम यज्ञ तिनहूँ किये दुति दिनेस परमान ॥१६॥
श्री गणेश दीछत भये तिनके सुत सुख कंद।
गुन निधि सुख निधि बुद्धि निधि हरन सकल दुख दंद ॥१७॥
सोम यज्ञ तिन कीन वहु वेद रीति अनुसार।
दच्छिन तें उठि व्रज वसे गोकुल ग्राम मझार ॥१८॥

श्री गोवर्द्धन धरन की सेवा विविध प्रकार।
दई तिने हिय हरखि श्री वल्लभ राज कुमार ॥१९॥

× × ×

वल्लभनंद अनंद निधि श्री विट्ठल सुखदान।
दई सुता जेठी तिन्हे करि अति सै सनमान ॥२१॥
तिनको नाम प्रसिद्ध जग श्री सोभा जी मान।
श्री गोवर्द्धन धरन की सेवा ही में ध्यान ॥२२॥
श्री गिरिवर धर रूप श्री मन मथ मोहन दीन।
श्री वल्लभ को लेख दिय विट्ठल नाथ प्रवीन ॥२३॥
श्री गिरिधर पाछें दिये सवहिन के सिरताज।
विट्ठलेस के पादुका तिंहि सेवन के काज ॥२४॥
श्री गणपति के सात सुत भये विवेकी भूरि।
एक एक तें अधिक गुन कृष्ण भक्ति रस पूरि ॥२५॥
श्री हरपति सबते लघु परम चतुर सुख धाम।
जगन्नाथ तत पुत्र तिन सुत पुरुषोत्तम नाम ॥२६॥
पुरुषोत्तम जू के तनय श्री चिम्मन सुखदाय।
गोवर्द्धन तिनके तनुज तिन सुत केशवराय ॥२७॥
निपुन गान रस तान हिय भक्ति सुदृढ़ मथुरेस।
सेवा सुमिरन में सदां वीतत जाम सुदेस ॥२८॥
पांच तनय तिनके भये श्री हरिभक्त सुजान।
श्री गोपाल किसन बड़े वहुमत अति गुन वान ॥२९॥
गोवर्द्धन तिनकें भये हरिगुन गान प्रवीन।
वाल कृष्ण प्रभू की सदां सेवा रस में लीन ॥३०॥
अति गुणज्ञ दूजे तनुज जगन्नाथ सुख रास।
भक्ति सुललित त्रिभंग की वहु गुग वुद्धि प्रकास ॥३१॥
जगन्नाथ जू के तनय भये एक वलदेव।
तन वलवंत विसाल वुधि निसिदिन प्रभु पद सेव ॥३२॥
तेज वान तीजे तनय वालकृष्ण हरिभक्त।
पुन्यवान गुनवान अति द्वारिकेश आसक्त ॥३३॥
युगल सूनु तिनके भये धरम नीक सुखदान।
जेठे चिम्मनलाल लघु मथुरा नाथ सुजान ॥३४॥
चौथे सुत अति सुद्ध वुद्धि प्रगटे वाल मुकुंद।
विसन भागवत कौ सदां और न दूजो धंद ॥३५॥

× × × ×

श्री पुरुषोत्तम जू भये पंचम सूनु सुदे ।

× × × ×

युग नंदन तिनके भयें कुल अवतंस सनाथ ।
जेठे गोपीनाथ जू छोटे श्री व्रजनाथ ॥४१॥

जेठे गोपीनाथ जू गुन गंभीर सुख रूप ।
पठित वेद कविता सरस हिय हरि भक्ति अनूप ॥४२॥

गुन ग्राहक तिनके तनय वाल कृष्ण सुखदान ।
छोटे श्री व्रजनाथ प्रभु परम धरम के धाम ।
कृष्ण भजन रस में सदां वीतत आठो जाम ॥४४॥

ग्रंथ संस्कृत के घने रोचक रचित नवीन ।
जोतिस कविता सरस अति वेद पुराण प्रवीन ॥४६॥

युग सुरेस तिनके तनय जेठे हरपतिलाल ।
पठित वेद व्याकरण वर बुद्धि रसाल विसाल ॥४८॥

अरु अनेक गुंफित सुगुन सवविधि चतुर सुजान ।
जगन्नाथ सुख सिंधु तिन लघु लघु मति पहचान ॥४९॥

अंत—सांत रस लछन —मेरी सीख मानि तजि कुमति कुसंग रंग क्यों तू निसवासर परयौ है ग्रहधंद के ।

स्वारथ सगे हैं सव सुत पतनी और बंधु वाधक विसद हरि भजन अनंद के ॥
कहे 'सुख सिंधु' पुनित पुरान कांन आनि जिय जांनि कलि जीव मति मंद के ।
चाप चित चरन वसाय उरलाय धाय गाय गुन गोकुल के चंद सुख कंद के ॥४४॥

इति श्री मतैलंग कुलोद्भव श्री गोकुलस्थ त्रिप्रहौ पाइ श्री व्रजनाथस्य कनिष्ठात्मज जगन्नाथ 'सुखसिंधु' विरचिते काव्य पीयूष रत्नकरे भाव विभाव सात्विक भाव संचारी भाव स्थाई भाव, नवरस, और नवरस के स्वामी रंग वर्णनं नाम अष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

विषय—तरंग १—मंगला चरण, कवि कुल वर्णन, १–७ पत्र । तरंग २—संयोग शृंगार, चतुर्विधनायिका वर्णन, ७–९ पत्र । तरंग ३ और ४—स्वकीया परकीया, गणिका आदि नायका भेद, १०–१५ पत्र । तरंग ५—अन्य संभोग दुखिता, गर्विताादि मान भेद, १६ से २३ पत्र । तरंग ६ और ७—स्वाधीन पतिका, उत्तमादि सखी, दूती, नायक दर्शन, हाव, २३–३७ । तरंग ८—भाव, विभाव, सात्विक भाव, संचारी, स्थाई, नव रस, उनके स्वामी, रंग वर्णन, ३७–४० पत्र ।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम जगन्नाथ' सुखसिंधु है । वे तैलंग देश के अंतर्गत कांकरवार ग्राम के रहनेवाले दीक्षित ब्राह्मण थे । इनका वंश वृक्ष इस प्रकार है:—
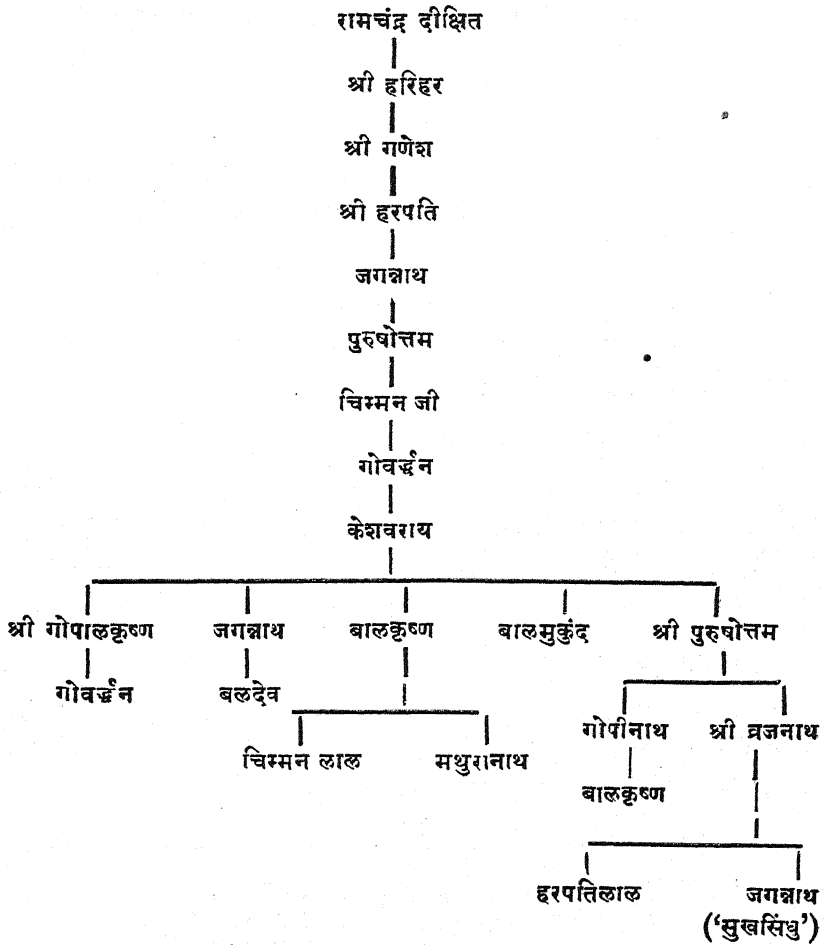
ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। 'इसमें नायिकाभेद संबंधी सभी अंगों का वर्णन किया गया है। रचयिता प्रौढ़ कवि जान पड़ते हैं। इनके पुरखा श्री गणेश जी को श्री गुसांई विट्ठलनाथ जी की पुत्री विवाही गई थी। ये गणेश जी दक्षिण के अपने गांव कांकरवार को छोड़कर गोकुल में आकर बस गए थे।

संख्या ६६. अष्टक, रचयिता—श्री जमुनादास जी, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६८ वि०, प्राप्तिस्थान—गो० हित रूपलाल जी, अधिकारी, श्री राधावल्लभ मंदिर, वृन्दावन, जिला—मथुरा।

आदि—॥ अथ श्री जमुनादास जी कृत अष्टक ॥

सवैया—श्री वृंदावन सुषद मनोहर अलकलड़ी राजत है प्यारी प्रीतम संग विहरंश।
सषियन सभा झमक रही चहूँदिसि उपजत परम प्रेम कौ वंश।

दोऊ प्रीतम अनुराग परस्पर थकित चकित दीयें भुज अंश ।
श्री हित कीरति चतुर शिरोमणि राधावल्लभ श्री हरिवंश ॥ १ ॥

अंत—यह नित आस रहौ नित पास षवासि षवास लडेती ललंश ॥
नहिं साधन और कछू करवे धरवे यह व्रत मन कर्म वचंश ॥
कुंजन के तर श्री जमुना के भर श्री हित षेलत दोऊ भरे उमगंश ।
श्री हित कीरत चतुर सिरोमणी राधा वल्लभ जो श्री हरिवंश ॥ ८ ॥

॥ सोरठा ॥

श्री वन चंद विसाल श्री वृन्दावन धाम है ।
श्री हित कीरतलाल चतुर सिरोमनि नाम है ॥ ९ ॥

इति श्री भेंट कौं अष्टक संपूर्ण ॥ १४ ॥

विषय—श्री राधा कृष्ण की प्रेम क्रीड़ाओं का सरस वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ स्वामी के कथनानुसार यह अष्टक जमुनादास ने बनाकर अपने गुरु हित कीरतलाल को भेंट कर दिया था । इसकी पुष्टि ग्रंथांत के लेख 'इति श्री भेंट को अष्टक संपूर्ण' से भी होता है । अष्टक में जमुनादास का नाम नहीं है । रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल सं० १९६८ वि० है ।

संख्या ७०. शनिश्चर की कथा, रचयिता—जनौल, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—१३ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३३, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२३ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रमणलाल जी, मु० व पो०—फरैह, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ जनोल कृत शनिश्चर जी की कथा लिष्यते ॥

॥दोहा॥ श्री गणेश मन सुमरि कै सारद विनउ तोय ।
कथा कहो शनिदेव की यही सुमति दै मोय ॥
संस्कृत समझौ नही, सरस मूढ़ मति मंद ।
जाकारण भाषा रची, अर्थ चौपई छंद ॥

॥ चौपाई ॥ श्री पति पुरी अवंती एक । भरि सुलक्षण सुमति विवेक ॥
सोभा सरस अधिक छवि जाकी । इन्द्रपुरी नौछावरी ताकी ॥

× × ×

दुज पति कहि सुनो रणधीरा । ऐसे कवहू न वोलै वीरा ॥
हम जानी रूठे करतारू । निहचै मंगल गोदे वारू ॥
फेरि कहौं मति ये वड़ वातै । वड़े देव रवि सुत विष्यातै ॥

अंत—॥ कुंडलिया ॥ यह ग्रंथ रविसुत कौ गायौ गायौ वेद पुरान ।
जो याकूं सीषै सुने सो नर सदा प्रधान ॥

सो नर सदा प्रधान प्रात उठि याकूं गावै।
सदा रहै बलवान विपति सुपने नहिं आवै॥
कहि "जनोल" फल चारि मुक्ति को दाता कहिये।
रवि सुत मोटो ग्रह मन वांछित फल पइये॥

इति श्री स्कंद पुराणे शनि कथा संपूर्ण मि० मा० व० ८ चं० सं० १९२३ लिषितं जुगल किशोर मिश्र फरैह मध्ये॥

विषय—महाराज विक्रम को शनि की अवहेलना करने से बहुत सी विपत्तियों का सामना करना पड़ा। सर्वस्व त्याग कर उन्हें देश-देश मारे-मारे फिरना पड़ा। शनि की स्तुति से पुनः सब कुछ प्राप्त होना आदि का वर्णन है।

संख्या ७१. गोरा बादल की वार्ता, रचयिता—जटमल जाट, (सांबेला), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४, पूर्ण—रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मदनलालजी ज्योतिषी मिश्र, लक्ष्मण जी के मन्दिर के पीछे, भरतपुर, राज्य—भरतपुर।

आदि—॥ छ० ॥

चरण कमल चितलाय कें समरुं सारद मात। मूल अषर मो माय कही सकल चितलाय के ॥१॥
जम्बूदीप मंझार भरथषंड षंडा सिरें। नगर भलो इकसार गढ़ चित्तौर है विषम अति ॥
रतनसेन जिहा राय पाय कमल सेवैं सुधा। सूरवीर सुषदाय राय रजपूत हैं रिद्धि को धणी ॥३॥
चतुर पुरुष चहुँआन, दान मान दोनुं दीयै। मंगत जनकूं मान, आवैं मंगत दूर थें ॥४॥
कवित्त—एक दिवस नृप पास, आस करि मंगत आये, चतुर च्यार बेताल भूपति दिषलाए ॥
दीध बहुत आसीस, वीस दस वीदं सुणाये, नरपत पूछत वात कवण देस थी तुम आए ॥

हम आए संघल द्वीप थें कीरति तुम श्रवणें सुनी।
राजा रतणसेण चहुआण हैं गढ़ चित्तौण केरो धणी ॥ ५ ॥
राव बहुत दीयो मान, पास अपणे बैठाए।
कहु दीप की वात, जिहां थी तुमै चल आए ॥
क्या क्या उपजत हैं तिहां, दीप संगल है कैसा।
सुण हो राजु चित्तलाय कहुँ देष्या है जैसा ॥
उदधि पार अद्भूत नगर, अवर सोभा निसुं गणि।
अईरापति उपजति हैं उहां ओर नार है पदमणी ॥ ६ ॥
पदमावती नारी कैसी, कहो भाट जी वात।
भाट कहै नरपति सुणो च्यार रमण की जाति ॥ ७ ॥
एक हस्तनी एक चित्रणी एक सुंषणी नारि।
उत्तम स्त्री पदमावती तास गुण अपरंपार ॥ ८ ॥
कहो भट पदमावती लक्षण। गुणी सरस तुम वड़े विचक्षण ॥
रूप रंग गुण रति मति दाषो। भाषा सकल मधुर सर भाषो ॥ ९ ॥

॥ कवित्त ॥

पदमावती मुष चंद पदम स्वर वासज आवैं।
भमर भमैं चहुँ फेर देष सुर असुर लोभावै ॥
आंगुल एक सत आठ उंच सा सुन्दर नारी।
पहिली सतावीस ईस चित्त लाइ सँवारी ॥
मृग नयण वयण कोकिल सरसके हरि लंकी कामनी।
अकर लाल हीरे उसण भुअ धनुष गज गामिनी ॥ १० ॥

॥ दूहा ॥

पदमावती तेह गुण सुणी चढी चुंप चित्त लाय।
विण देष्यां पदमावती मोरा जनम अक्यारथ जाय ॥ ११ ॥
वसी अंतर चित्त पदमावती। निसदिन नींद न आवै रत्ती ॥
ईम करतां एक जोगी आयो। राज द्वारै हूऔ धू षायौ ॥ १२ ॥

॥ कवित्त ॥

सिद्ध वड़ो जोगेंद्र देष राजा चित्त हरष्यो।
ज्युं सु वनो जस रांम सूर देषत ही विकष्यो ॥
निस वैठें नृपपास पात्र पंचामृत पोसो।
संतुष्ट हुओ जोगी कहै अब माँगी जो तुझ कछू चाहींइ।
राजा रतन सेन चहुआण कहें एक पदमण मुझ ब्याईइं ॥ १३ ॥
कहें तास्र जोगेंद्र दीप संगल पदमावतो।
राय भगत जो चलै भूप जो मन तुझ भावती ॥
राव कहे करो क्रिया वेग मूझ कारिज कीज्ये।
जो कछु कहो सो नाथ साथ सामग्री लीजें ॥
मृग तछ विछाइ सिध तब पढ्यो मंत्र परि बैठ करि।
उडें संघल दीपनों राजा रतनसेन जोगेंद्र वर ॥ १४ ॥
सुण राउ तव जोगी कहै। राउल का करि वेस।
एक सवदी भिष्या करो एह मां का उपदेस ॥ १५ ॥

॥ कवित्त ॥

दीयो भेष जोगेंद्र कान मुद्रा पहिराई।
कंथा संगी गलै अंग बभूत चढ़ाई ॥
कपिल जटा करि डंडा मोर पंख वीजणा झूलै।
वज्रह छोटो पहिर अलष गोरष मूष वोलै ॥
करि वंक पात्र अनूप ले राजद्वार नृप आईउ।
औ नृप सुता निरष पदमावती तवहुँ राउ मुरझाइउ ॥ १६ ॥

॥ दूहा ॥

मन मोह्यो पद्मावती, देष रूप को राउ ।
कह्यी सषी उहाँ जाउरी राउल छांटो जीअ ॥१७॥

॥ कवित्त ॥

आय उठायो जोग आइ तिहाँ सषि विचक्षण ।
राउल रूप अनूप अंग छत्री से लक्षण ॥
तब पद्मावती हार तोड नाथ पे ल्याइ भिक्ष्या ।
करि जोड गुरु आगै धरें देष नाथ इसो कहै ।
जे जस लायक वहिन में सो तेसी भिक्षा लहै ॥१८॥

चल्यो आप जोगेंद्र चलकें राज ग्रहि आयो ।
देष राय हरषीयो सीस ले चरण लगायो ॥
आज पवित्र मुझ गेह नेह धरि गुरु पधारे ।
आज सफल मुझ काज भलें है भाग हमारे ॥
सुणें आइ पदमावती गुरु चरण ले सिरधरें ।
आसीस देह राघव कहेरे पुत्री तुझकर जसरे ॥१९॥

कहें ताम जोगेंद्र पद्म पुत्री सुषदायक ।
वर प्रापति अब भई नहीं कोउ वर लायक ॥
हुँ लाऊँ वर राउ तुम्ह पुत्री के कारण ।
गढ़ चित्तौड राजान दूष्ट दूसमनां बिडारण ॥
राजा रतनसेन चहुँ आण हें तस सम सुर नही अवर नर ।
परणाय दे पदमावती मान वचन अति हेत धर ॥२०॥

गुरु वचने राजा न मान पूत्री परणाई ।
रतनसेन के साथ भई है भली सगाई ॥
दीनो बहु दायजो लाल मुगताफल हीरे ।
पीतांबर पट कूल थाल भरि कंचन नूरे ॥
राउल कहें राजान कुं अब पदमावती मो कलाइये ।
चित्तौड लोक चिंता करै राजा रतनसेन कुं चलइयइ ॥२१॥

राघव दीनों संग वेग पदमनी चलाई ।
रोंवत माता भ्रात कुंवरी कूं कंठ लगाई ॥
उडण षटोड़ो चढ़ राउ पदमावती योगी ।
राघव दीनो संग उड़वि गढ़ आये भोगी ॥
निसाण वाजैं पंच तूर गोरी मंगल गाइयो ।
राजा रतनसेन पदमावती ले चित्तौड़गढ़ आइयो ॥२२॥

तजे रमण सब उर रहैं पदमावती राते ।
रयण दिवस रहैं पास रहै आणद मदमाते ।
नीर नीम को लीयो विण देष्यां पदमावती ।
महा मोहि वसिथयो रहैं इणि परिभूपति ॥
एक निसा रही जब दोघड़ी तब सकार उद्यम कीयो ।
राजा रतनसेन असवार चढ़ि तव राघव चेतन संग लीयो ॥२३॥

॥ दूहा ॥

वन भीतर में षेलतां त्रिषा वियापि तेम ।
विण देष्यां पदमावती जलपीवण को नेम ॥२४॥

॥ कवित्त ॥

तव राघव चित्तराय सरस पूतरी समारीं ।
त्रिपुर मात करि क्रिपा रूप पदमावती नारी ॥
भाव भेद बहु कीया जंघ परि तिलो बणायो ।
देष राय भयो रोस पाप मन भीतरि आयो ॥
विणरम्यां भाट पदमावती तिलो सो क्युं करि जाणीयो ।
मारूं न भाट काढूं नगर इह रोस मन आणीयो ॥२५॥
घर आयो राजा न भाट कुं दीयो निकालो ।
राघव चलीयो विदेस वेस वयरागी धरया ॥
भगवें वेस सरीर नीर भरि लीयो कमंडल ।
जंत्र वजावे जुगति जोग जुगति रहैं अषंडित ॥
दिली आइ प्रापत भए रहे उद्यान बन षंडसिर ।
पातसाहि तिहां अलावदीन करे राज असुरां न सुर ॥२५॥
एक दिन साह सकार षेलत तिहां आए ।
राघव तिणहिं समें जुगति कर जंत्र वजाए ॥
मृग तजे वनवास पास तव राघव के आए ।
सुणि राघव धर कान साह मृग किहां न पाए ॥
आवीयो तिहां अलावदीन पेष चरित्र अचिरज भयो ।
उतरी तुरंग थी साह तब राघव पासें आवीयो ॥२६॥
रीज्यो राउ सुराग सुणि राघवसुं कहिताम ।
दिली पति तव युं कहै तुम चलौ अमारै धाम ॥२७॥
हम वैरागी तुम ग्रहे तुम प्रथवी को पतिसाह ।
हम तुम केसो संग हैं जेसों चंद कुं राह ॥२८॥
हठ लीनो पतसाह तब राघव आण्यो गेह ।
राग रंग रीझ्यो बहुत दिन २ अधिक सनेह ॥२९॥

॥ कवित्त ॥

एक दिवस नर कोय ससा जीवत ग्रहि लाया ।
पातसाह तब लेय गोद ऊपर बेठ लाया ॥
तापर फेरयो हाथ अधिक कोमल रोमावल ।
हाथ फेर राघव कहै यार्थे कोमल सहस गणि ।
पदमणि देह विप्र ऊचरै तव पातसाह धर कान सुणि ॥३०॥
भाट बोलायो अलावदीन पूछत बात प्रभात ।
सास्त्र विध जानों सकल स्त्री को केती जाति ॥३१॥
राघव कहे नरिंद सुणि त्रीया जात है च्यार ।
एक हस्तनी चित्रणी सुंषणी पदमंनी रूप अपार ॥३२॥
पदमनी के परसाद थें कसतूरी की वास ।
कमल गंध मुष थी चवे भमर तजत नहीं पास ॥३३॥

॥ कवित्त ॥

पदम गंध पदमनी भमर चो फेर भमंते ।
चंद वदन चत रंग अंग चंदन चर चंते ॥
सेत स्याम अर अरुण न अण राजीव विराजें ।
कीर चंच नासका रूप रंभा को राषें ॥
गुण वंत दंत दाडिम कुली अधर लाल अमृत उवण ।
आहार पान कोले अधिक सरस श्रृंगार नव सप्त रचन ॥३४॥
चपल चित्त चित्रणी चपल अती चंचल नारी ।
कोमल ने कटि झीण वेण अति नागण काली ॥
तीन पयोहर कठिन वचन अमृत मुष बोलै ।
जंघा कदली थंभ गंड दगयंवर गज डोलें ॥
संभोग रीत जाणे सकलनित श्रृंगार भीनी रहें ।
अलावदीसुलतांण सुंण चीत्रणी लक्षण कहें ॥३५॥
हेत बहुत हस्तणी केस अति कुटिल विराजई ।
द्रिग देषत मृग मीन चपल अति षंजन लाजई ॥
कनक लता कामनी बीज दाडिम अनावर ।
पोहप वेस पहिरंत कंत अति चित सुहावत ॥
अतिहास अति रंग केल कांम कांमनो करे ।
अलावदीं सुलताण सुणि हस्तणी लक्षणी धरें ॥३६॥
जटा जूट देषतां पदम विकराल अधकें ।
सकर देह सरोस स्वान ज्युं सदा घुरकें ॥
गरधभ ज्युं गतिहीण पयधर जाण पयोधर ।
अलछ तणो अवतार चूल सम तु लभगंदर ॥

अति अघोर नींद आलस अधिक अति अहार गज आघाणी ।
अलावदी सुणताण सुणिये लक्षण अखी सुंषणी ॥३७॥

॥ दूहा ॥

नारी जात सुण पातसाह राघव लीयो बोलाइ ।
दोय सहस मुझ महुल में देष महोल में जाइ ॥३८॥
राघव कहे नरिंद सुण में गहिर महल में जाय ।
छाया देषुं तेल में पीछे नारी दीउं बताय ॥३९॥

॥ कवित्त ॥

हुकुम कीयो पतसाह नार सिणगार बनावें ।
तेल कुंड भर धर्‍यो आप दीदार दीषावें ॥
हुरमां सकल नीहार तब राघव युं भाषें ।
गमणि हंस मृग नयण रूप रंभा को राषें ॥
चित्रणी हस्तणी सुषणी पातसाहजादी घणी ।
सरस त्रीया में सुंदरी नहीं सुलतान घर पदमणी ॥४०॥
राघव सुं कहे साह वेग पदमणी बतावो ।
जिहां होवे तिहां कहो जो कछु मांगो सो पावो ॥
पदमणि सिंघल द्वीप उदधिपें पार पयंणें ।
देष समुद्र सलताण हीया कायर कांकंपे ॥
तारां राघव लीयो प्रस्ताव पातस्याह इंयुं जंपे ।
पदमनी नेडी ठाम राजा रतन सेन चहुआण पें ॥ ४१ ॥

॥ दूहा ॥

सुणव फर्‍यो सुलताण चल्यो सगढ़ चितौड ।
दीया दमामा दलीपतें भई राह पर दोड़ ॥ ४२ ॥
कंपा सघला राण चिहुँ चके षल भल भई ।
षुरसे छाओ भांण जब चोट नगारे थई ॥ ४३ ॥

॥ छंद चालूलो ॥

चढिल चढ़े चिहुँ दिसां साके दिल धरे धीरज कुणां ।
अभिमान आणद अंग उपजत लीइं लगन नासुणां ॥
तेजी सतुर की जोर एरा की सबद नीले रंग ।
कुमेत काले हंसले चलत ओरत बेल सुरंग ॥
केहर असुर रोझे भले पंच कल्याण ।
नाचत पात्रां ज्युं तुरंग मरतन जडित पलांण ॥
लगाम सोबन मुषे सोहें सोहें मद सुपाट ।
असमान मीने कस तंग ताणे लटकणां के थाट ॥

गजगाह घूघर माल घमकें तबलबाजी वणाउ ।
किलंगी भली जर···पाषर भला परषे भाउ ॥
हलके पंचावन सहस हाथी ढलकती पढाल ।
श्रावण मासां मेह झरते झरे मद पर नाल ॥
बग पांति कांति सपेद सुंदर गाजते गजराज ।
पहिराय पाषर साह राषे पवंग उपरि साज ॥
राषीया प्यादा अवर असवार गलि सकें कुणा ।
अमती चले आतसबाजी षलभले त्रभुवण ॥
डेरा परे दोइ कोस तांइ करे जिहां मुकाम ।
आये गढ़ चितौड उतरे दीया डेरा ॥
तिहां ताणें तिहा पंच वर्ण तंबू फरहरै नीसाण ।
फूल फलास वसंत आगम वंधे कवि जन वाण ॥ ४९ ॥

॥ दूहा ॥

गढ़ रोह्यो करि करिकें रह्यो, अलावदीन सुलतान ।
रतनसेन जाणें नहीं चलन गढ़ सूं प्राण ॥ ५० ॥

॥ कवित्त ॥

कहे ताम सुलतान कहो राघव क्या कीजे ।
गढ़ चितौड तौ विषम जोर तो कवहुँन लीजे ॥
राघव कहे सुलताण सुणो एक फंदह कीजे ।
उठायो मुसाफ जेण थी राउ पतीजे ॥
भेज्युं षवास सुलतान तब रतनसेन द्वारि गयो ।
ले हुकुम साह दरवांन ते तव प्रोले भीतरि लीयो ॥ ५१ ॥
कहे ताम सुलताण सुणो एक बात हमारी ।
गढ़ न लीयुं में ताहरो करो अब किसी भलाई ॥
बहिन करूं पदमणी तुझ भाई कर थप्पुं ।
देषुं गढ़ चितौड़ अवर वहु देस समप्पुं ॥
गलि कंठ लाय पहिराय कनि कनि वडकरि बाहुडुं ।
राजा रतनसेन सुलतान कहि पहुर एक गढ़िपर चढ़ु ॥ ५२ ॥
आप उठायो मुसाफ गढ़ सुलतान बुलायो ।
ले साथें उमराउ साह तिहां देषण आयो ॥
मुगल साथे महिमता वीस दश सूर महाभड ।
बहुत कपट मन मांहि गयो सुलताण तिहां चलि ॥
वहु भगत भाव राजा करी साह कहै भाई भलो ।
दिषलाइ पदमनी जाहिं घरि दूरि जन दूष दुरे गयो ॥ ५३ ॥

कहि राजा पद्मावती बहिन करी सुलतान ।
वदन दिषाउ बीर कुं दीयै साह वहुमान ॥ ५४ ॥
चेडी एक अति सुंदरी दीयो अपणो सिणगार ।
वदन दिषायो साह पें तब गयो सीस करि भार ॥ ५५ ॥
राघव कहै नरिंद सुण ए पदमणी न होय ।
कहें देख कहा तुम गडे एही सुन्दरि सोय ॥ ५६ ॥

॥ कवित्त ॥

लाष लहे ढो लीयो सवालाष लहे ठ'''अर्द्धलाष गडूओ । लाष त्रय अंग लगाइ ।
केसर अगरि कपूर सेजे प्रेम लषुं ताऊपर पदमनी रंमे रंग रसखनी ॥
दरसण दीठेयी इंसुष चतुरमन चलावती ।
चंद वदन चंपक वरन राजा रतनसेन मन भावती ॥ ५७ ॥
तव वोल्यो अलावदीन पिकड राउ को हाथ ।
दिषलावत हें अवर त्रीया कपट कीया मो साथ ॥ ५८ ॥

॥ कवित्त ॥

कोप्यो राजा ताम कहें पदमणी प्रतेंइसे ।
मुष देषावो वेग कपट कीउ ते केसें ॥
काढ्यो मुष पदमावती जामबारी के बाहिर ।
निरष गह्यो सुलताण थंभ लीनो तस थाहर ॥
क्षण एक संभारी आंष कूं साह कहे भाइ भलो ।
किसी फते करि राउ की राजा रतनसेन भाई भलो ॥ ५९ ॥
कहे ताम सुलताण पोल पहली जब आये ।
रतनसेन भयो साथ लाष वगसीस दिराये ॥
फेर कहें सुलताण पोल बीजी जब आयो ।
दीया गढ़ पंचासा राउ अति बहुत लोभायो ॥
हम लेवत वगसीस बाहिर राजा ने ले गयो ॥
राजा रतनसेन अति लोभग्रे ग्रहि सुलताण सोषाधीयो ॥ ६० ॥

॥ दूहा ॥

रहि पोल जइ लोक सोर सकल गढ़ में पड्यो ।
राजा ले गयो रोक कपट कीयो सुलतांण तव ॥ ६१ ॥

॥ कवित्त ॥

सदा मरावें साहि रोज कोरड़ा मरावें ।
कहिं दीयो पदमणी जीवत वही सुष थावें ॥
गढ़ के नीचे आन सामा भूपति दिषलावें ।
मारतां राउ कायर भयो कही पदमावती दीउं सही ॥
मारो न मुझ भेजूं षवास ले आवे जब लग अही ॥ ६२ ॥

॥ दूहा ॥

भेज्यो राव षवास बेग ले आयो पद्मनी ।
मुझ जीवन की आस तो विलंवन कर ज्यो एक षिण ॥ ६३ ॥
कहि राणी पदमावती हो रतनसेन राजान ।
नारन दीजे पदमणी तजीइं पीऊ परांण ॥ ६४ ॥

॥ कवित्त ॥

तजीइं पीउ पराण नार अवर कुन दीजें ।
काल न छूटें कोइ सीस दे जग जस लीजें ॥
मत कलंक लगावें मोअ कुं गुंसत षोइ अजांण ।
इम कहें राणी पदमावती हो रतनसेन राजान ॥ ६५ ॥
पान लीइं पदमणी गई बादल पें पास ।
राषणहार न सूझई एक बादल तो आस ॥ ६६ ॥
बार बरसने बादलो हाथ ग्रहै चोगान ।
ले आई पदमणी बादल षावो पान ॥ ६७ ॥
मंत्र कीन मंत्रीण पदमनी दीउ पठायो ।
रतनसेन छोड़ाइयो वोले राणां राउ ॥ ६८ ॥
कहे बादल पदमावती तुम जाउ गोरा के पास ।
पान लियो में सीस धरन करिस चिंत निसवास ॥ ६९ ॥

॥ कवित्त ॥

भई आस जब लीओ पास गोरा के आई ।
अख्यो सांम सकडें करो अब कछु सषाई ॥
मंत्र कीउ मंत्रीण नार पदमावती दीजें ।
छोड़ाइइं नरेस विलंब क्षण एक न कीजें ॥
तारे सरणे आइ हूँ ज्यों भावे सुराइ कर ।
वीड़ा उठाइ कहें जा वाइ तुं बेठ घर ॥७०॥
अब गोरा बादल बैठ कर मनमां करें बिबेक ।
सासाथे केसें लडां लसकर अवर अनेक ॥७१॥
बादल मंत्र उपाइउं सबही आयो दाय ।
एवी बात अब की जीइं तो बोल्या राणां राय ॥७२॥

॥ कवित्त ॥

बादल बोल्यो तांम पांच सें डोली कीजें ।
तिणमां बैठे दोय च्यार के कांधे कीजें ।
तिणमां सब हथियार अश्व कोतल कर आगें ।
कहिं दिआं पदमणी तुरक नेडा नह लागें ॥

कटिइं बंधण राउको भुजबल परदल गाईइं ।
दीजें न मूठ इढ़ पुढ़ धर तोषगसाह सिखाहीइं ॥७३॥
तुरत बोलाए सूथार पांचसे डोली समराई ।
ता ऊपर मुषमले गिलफ आछे पहराए ॥
बेठाए बिच सूर च्यार जिण कांधे दीने ।
तिणमां सब हथियार जरद झूसण आहिणे ॥
एंराकीसाज पहिराइ कें बादल मंत्र उपाइयो ।
वकील एक साह मेलकर पुह पातसाह पठाइयो ॥७४॥

॥ दूहा ॥

राउ देउत पदमणी आज तुझ सुलताण ।
भेट करि वहुभात स्युं षुसी भए सुलतांण ॥७५॥
साह बहुत बगसीस दे सुंणव कील चित्त लाअ ।
बेगले आउ पदमणी बादल सुं कहिं जाअ ॥७६॥
आयो हुकुम तब साह को बादल भये तआर ।
सुणहाराउ ज कांन धर कसी करत हो मार ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम निकसे चक्र डोल तुरंत चढि तुरी धसावो ।
नेजा लेकर मांहि जोर दुरजण सर ल्यावो ॥
जब नेजा तुटई तबही तरवार उठावो ।
जब तूटे तरवार तबही गुरज लगावो ॥
जब गुरज तूटे धरती पडै तब कटारी सम्मुष लड़ो ।
बादल कहि सुंणो राव तांह वैसम काज इतना करो ॥७७॥

॥ दूहा ॥

बादल झूझण जब चल्यो माता आई ताम ।
रे बालक बादल तें क्या कीआ फुरमाण ॥७८॥

॥ कवित्त ॥

रे बादल बालक तुं जीवन है मेरा । मुझ आसरा है तेरा ।
तुझ विन सब जग सुना । तुझ विन सबही अलूणा ॥
तुझ विन न सूझे नयण लें । कुंच विछूटै छाती पडें ॥
छूटत नलगो लातिहां । किम साह सम हर लडें ॥७९॥
बादल कहइ सुणमाइ सत्त तुझ साहस मेरो ।
लडूं साह के साथ करूं संग्राम घणेरो ॥
मारूं सुभट अपार राव के बंधण कटूं ॥
जो सिर गयो तो जाऊं सीस दे जग जस षटूं ॥

जो राम काज हणमंत हुओ करिमार्‍यो रावण एक षि ।
गयवर घोड़ा तोडूं तवल तो साह चलाऊं षग हण ॥८०॥
बालतो परमाण पकड़ पहिल वांप छाडूं । बाल० । निरष कायरां निसाडुं ॥
सामि के वंधण कटुं । गयंद असवार पलटुं ॥
मारूं ज षग सिर साह के गैवर दं तूसल चडुं ।
जणणी लजावुं तुझ कुं जो मोहि वाग पाछो वलुं ॥८१॥

॥ दूहा ॥

माता बालक कूं कह्यौ रोयन मांगु ग्रास ।
जो सिर वाहूँ साह सिर तोकहि जे सरवास ॥८२॥
संघ ज्योन थी निकसते गय घड दिठी जाम ।
तूहि वंगज मस्तक चढ्यौ आय रह्यौ मायतांम ॥८३॥
सीह सीचाणो सा पुरस एनां नेन कहाय ।
वड़े जनावर मारकें छिन मैं लिये उठाइ ॥८४॥
तैंसा बालक तें कह्या इसा कहिन कोय ।
मात मुझ आसीस दे अब तेरी जय होय ॥८५॥
माता घर जब फिर गई बहु अर दी पठाई ।
मेरा राष्या न विरह्या अब तुम रषो जाय ॥८६॥

॥ कवित्त ॥

नवसत्त सजि के वारि नारि बादल पैं आई ।
तो क्युं रमण न विरम्यो चल्यो किम कम्यालड़ाई ॥
अज्यूं न रम्यो मुझ साथ घावनष नह चमक्यौ ।
कुच सचोट तन सही सहीस किम सांगिधमक्यौ ॥
छूंटत तीर तुफक तिहां तुटिव सिर धमउ परै ।
बादल सुं नारी कहै कंता रषे रण देषि दिलसुंदरे ॥८७॥

॥ दूहा ॥

कंता रण में पेसतां मति तुं कायर होय ।
तुम लज्या मुझ में हणो भलो न भाषई कोइ ॥८८॥
कायर केरा मांसकुं गिरधप कवहु न षाय ।
कहा कूपायन मूष करै मरी न दूर गत जाय ॥८९॥

॥ कवित्त ॥

मेर चलेहुँ चले भाण जो पछिम उगै ।
साधु बचन जो चलै पंक जो गिरि लगि पूजै ।
धरणी छंडे धूवल उदधि मरज्यादा छोड़ै ।
अरजन चुके वाण लिषत विधाता मोड़इ ॥

वादल कहे रे नार सुण एतो बोल कबहुँ टलै ।
ना सीन पूठि देउ कदे तो बादल दलथे नह चले ॥९०॥

॥ दूहा ॥

जो मूआ तो अति भला जो उन्या तो राज ।
विंहु प्रकारै हे सषी मादल घुंमें आज ॥९१॥
त्रिया तुझकूं क्या दिऊँ तूं सती होय जे साथ ।
जोडा दिआ तब काढ़ि कें नारी केरे हाथ ॥९२॥
चल्यो बादल त्रिया संतोष करि आणि मन उमेद ।
गढ़ थी डोली ऊतरी साह न पायो भेद ॥९३॥
गोरा बादल दोय जण आप भये असवार ।
आय मिले पतसाह कूं कियो सलाम तिवार ॥९४॥
ले आये सिंघ पदमणी दोउण लागे मीर ।
लाज लागै हम तुमसुं बहुत भये दिलगीर ॥९५॥
साह ढंढेरो फेरियो मतको देषो उठ ।
गरदन मार ताहिं कुं लेउंगो टेरा लुट ॥९६॥
भी फिरि आये साह पें एक करै अरदास ।
रतनसेन कुं हुकुम द्यो तो जायइ पदमण पास ॥९७॥
मिल विछूड़तां संघ पदमणी तुझकुं दीजइ राण ।
साह हुकुम दीयो राउकूं आविध मनमें जाण ॥९८॥
काटी बेड़ी तुरत तिण राय कियो असवार ।
तवल वाज्या तिण ही समैं निकले सुभट अपार ॥ ९९ ॥
रण वाजै रणतूर, मारू गावैं मंगता ।
उमगे चित्त सूर, कायर कै चित्त षल भलै ॥ १०० ॥
ढमके जांगी ढोल, सरणाइयां बाजै सरस ।
घुरे दमामा घोर, सिघुड़ा ढाढ़ी श्रवै ॥ १ ॥
साह कटक में सोर, अवरुं की अवरुं भइ ।
रही पदमणी ठोर, रण आए रजपूत रचि ॥ २ ॥
तीन सहस रजपूत, षाई अमल घूमें षडे ।
पडे कृपणां के सूत राम राम मुष थे रटे ॥ ३ ॥
उडि आये रजपूत, भूत भए कारण भरण ।
परिहरि जोरू पत्र, षित्री आए षित्रीपर ॥ ४ ॥
हबक ग्रहे हथियार, हलके हाथि सजि किये ।
अब छड़ी असवार, पातसाह आयो प्रगट ॥ ५ ॥
गोरा बादल वीर, सिर दोनुं फूल सेंहरो ।
केसर छूट कीया सूर, सूधे भीनासा पुरस ॥ ६ ॥

॥ छंद ॥

जोडि जंग अलसे अंग, गोरा बादल नर ताणां तंग ।
करि पग लीई विहंड वेरी विषंड भुजदंड दिषावै ।
पाड लीई पाषरी उलट आपणे दल आवै ॥
निज स्वामी काज भूपति लड़े काटि काटि ल्यावै कमल ।
गोरल लगावें जिहां षडग तिहांपाडकरे दोनु धडग ॥ ७ ॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

लडै इम गोरल बावन वीर । दाम नीक चोटनि चूकत तीर ।
न चूकत रावण एकण चोट । लड़े गज होत सु लोटा पोट ॥
ग्रहे बरछी जब गोरल राउ । सोना गिण ज्युं नर उडंत षाय ।
फोड़त पाषर सहित पलांण । नासी निकसें दूसरें माण ॥ ९ ॥
तारां तजे बरछी पकडै तरवार । घुडे पुरषांण ते वीजल सार ॥
मेलावत वार उतारत सीस । उठावत एक चलावत बीस ॥ १० ॥
तजे तरवार गरज गरे अ । हु डो बडसाह दुर जण देअ ॥
करें चकचूर गयंद कपाल । कहैं मुष मीर आयो जमकाल ॥११॥
भड़े इम साह अने भूपाल । सारो कटक करे चकचाल ॥
ग्रहे अणदंत वड़े वड़े मीर । नमारूं तो सर गोरल वीर ॥ १२ ॥
पुकारत गोरल गोरल नाम । करई अब बादल सो काम ॥ १३ ॥

॥ कवित्त ॥

सुभट सुभट सब डगप डग जिहां षडग भडा भडा ।
जुडग जुड़ग तिहां जुडग जुडग को अंग न मोडत ।
गहिर गहिर गजदंत भुजे भुपति गयतो तोडग ।
संग्राम राम रावण परें जुडे ज्वान इसे जुगति सल ।
सल्यो सेस सायर सुतन धड़क धड़क कंपे धवल ॥ १४ ॥
चावक चंचल लाय बहुल आपणे दल आयो ।
नेजा तिसका नाग फेर गज हस्ती लायो ॥
नाठो तवही गयंद तोग जडी जव जड़ीया ।
रयण दिवस रह्यौ पास बाल बादल यो लड़ियो ॥
बधूकार बंध चहुवे जूरी तब साहि भेज घरकूं दीया ॥ १५ ॥
भारथ भयो अपार सूर सूरां सिर तूटा ।
मूआ घणा रणमांहि जिनह का किण जगषूटा ॥
बहुत मूए रजपूत तुरक को पारन लहीई ।
चले रूधर के षाल किते लोकन में कहीई ॥
भाजंत सही गज घाट अपछर मंगल गाइयो ।
रण जीत राउ छोड़ाइ कें तब बादल घर आइयो ॥१६॥

॥ बादल की आरती ॥

आय अपछर उतारे, मुगताफल भरि थाल।
भरी सिर उपरि वारै, बहुरेदे आसीस॥
जीवनु कोड वरीसा। सूर वीर वांगडा तुझ गुण गावुं इसा॥
बलिहारी तुझ नाम परि जिण कंत हमारो मेलीउं।
गोरा गरिष्ट बादल विकट धन जणणी जिणें जनमीयो॥१७॥

॥ दूहा ॥

बादल सूं नारी कहै हूं बलिहारी कंत।
तें षग वाह्यौ साहिसर मारे मनिष तुरंग॥१८॥
पीउ सुष पूछत प्रेम स्वुं धन्य बादल भरतार।
बोल वाह्यौ तें आपणो सूर जंपे जैकार॥१९॥
काकी बादल स्यूं कहै थारो काको नाओ कांअ।
भाज मूओ किं भड मूओ सो मुझ बात सुणांअ॥२०॥
गोरा गिर सूं धीर, भड़े नभाजें भूपती।
मार चलाए मीर, मगर चलाए मांणसां॥२१॥
ज्याके लागे अंग, रंग निकासें तेह जडति।
मारे मनिष तुरंग, गोरा गरजे सिंघजु॥२२॥
भला हुआ जे भड भुआ कलंकन लाआ कोइ।
सूंर जंपे ईसा जगत में श्रवण अैसा होइ॥२३॥
रण ढूंढे नारी जिहाँ, साथे सघला लोक।
सीस न पावें तिहां लगें, अंबर वाणी होत॥२४॥

॥ कवित्त ॥

मुष थी छूटा गरज तांम देवांगना पाओ।
देवांगना थी छूट सोइ सिर गंग उडाओ॥
गंगा से लाओ संभू रुंडमाला में जड़ीओ।
सो गोरल भरतार सो सो गोरो सिवपुर गयो॥
नारी ई वाणी इसी सुणी पीउकी पघड़ी हाथ।
सती भई आणंद सुं सिवपुर कीनो साथ॥२५॥
गोरा बादल की कथा पूरण भई है ताम।
गुरु सरसती प्रसाद थें कीउ धरम परनांम॥२६॥

॥ कलस ॥

आणंद उछब होत घर २ देषता नहीं सोक।
राज तिहां अलीषांन तुंषांन ना सुर नंद॥
सकल सरदार पठाण माहें अजुन नषत्र मां चंद॥

धरमसींहु नंद नाहर जाट जट मरु नाम।
कही कथा बणाय कें विच सांवेला के गाम॥
कहतां थकां आणंद उपजत सुणत सब सुष होइ।
जटमल हों गुणी अणां विघन न लागे कोइ॥२७॥

इति श्री गोरा बादल की वार्ता सपूर्ण॥ श्रेय मंगलं संपूर्ण प्रतिलिपि।

विषय—इतिहास प्रसिद्ध रानी पद्मनी के लिये अल्लाउद्दीन द्वारा चित्तोड़ पर चढ़ाई कर देने के अवसर पर गोरा बादल ने जो वीरता दिखलाई थी उसका अत्यंत चित्ताकर्षक वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। हस्तलेख की अत्यंत जीर्ण शीर्ण दशा देख कर तथा अक्षर प्राचीन लिपि में होने के कारण ऐसा अनुमान होता है कि यह विक्रम की सत्रहवीं शती के उत्तरार्ध अथवा १८ वीं शती के ठीक प्रवेश काल के लगभग लिखा गया होगा। यह हस्तलेख भरतपुर के साहित्य सम्मेलन में प्रदर्शनार्थ रखा गया था जिसकी चिट अभी तक इसमें विद्यमान है। ग्रंथ स्वामी का कहना है कि उपर्युक्त अवसर पर श्रीमान् गौरीशंकर हीराचंदजी ओझा ने इसे मांगना चाहा था; किंतु उन्होंने नहीं दिया। ग्रंथ संपूर्ण रूप में लिपिबद्ध कर दिया है।

संख्या ७२. धर्म चरित्र, रचयिता—जवाहिर लाल (राजाबाजार, जौनपुर), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९३५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० सियाराम जी हलवाई, स्थान व पोष्ट—वकेवर, जि०—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ धर्मराज कुँअरि कृत धर्म चरित्र लि०॥

५ ३ ९ १
छप्पै—शर गुण नन्द चन्द अब्द विक्रम को जानों।
पूनो शुक्र कुवार वार भृगु पूरवा मानों॥
मणिकर्णिका समीप तरंग सुगंग निहारी।
द्वौं कर जोरि ध्यान करत हरिहर मति भारी॥
तजि देह नेह भौ भीर सब चढ़ि विमान मन भायको।
वर भूप महेश नरायण सिंह निरषि हरषि नृप नायको॥ १॥

॥ कवित्त॥ कमल कोक कोकी संत कवि जन गुणी जन,
को अथये ये भानु इन्हें मोदको बढ़ावेंगे।
दीन को दरिद्र दमन समन शत्रु सेना को,
प्रजा प्रति पाल भुमि भाव को मढ़ावेंगे।
लेवो कछु नाहीं दान देत हरषाहीं नित,
केवल सियाराम अब कौन जग गावेंगे।
आजु नृप महेश जू महेश में प्रवेश भयो,
अब को नरेश जो कलेश को छुड़ावेंगे॥ २॥

अंत—भरम की निशानी धरम राज कुँअरि रानी,
सुनो अरज जवाहिर करत जोरि पानी को।
ज्ञानी हौं न ध्यानी पै अभिमानी कूर कायर हौं,
करत नदानी कों न बोलो शुद्ध बानी को ॥
अबलौं सिरानी उमरि यों ही गयत मूल,
काल आइ नगचानी न ठेकानो जिन गानी को।
शंकर भवानी चक्र पानी तोहिं नींको राखे,
अब न छुड़ाओ मातु मोहि राजधानी को ॥ ५६ ॥
दोहा—भलो बुरो निबहै सबै, महत पुरुष के संग।
चन्द सर्प जल अग्नि ज्यौं, बसत शंभु के अंग ॥ ५७ ॥

श्री रामार्पण मस्तु ॥ इति श्री नृप रानी चरित्रे परम पवित्रं कवि कुल पंकज मित्रे संपूर्णम् ॥ शुभ मस्तु ॥ जवाहिर लाल शर्मा अध्यापक राजा बाजार जौनपुर कृत ग्रन्थ समाप्तम् ॥

विषय—राजा बाजार के महाराज महेश नारायण सिंह की पत्नी धर्मराज कुँअरि के धर्म चरित्रों का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता कोई जवाहर नामक व्यक्ति हैं। इसमें राजा बाजार (जौनपुर) के राजा महेश नारायण सिंह जी की धर्मपत्नी श्रीमती धर्मराज कुँअरि के धार्मिक कार्यों का वर्णन किया गया है। उक्त महाराज सन् १८७८ ई० के पश्चात् स्वर्गस्थ हुए थे। उनकी रानी गद्दी पर बैठी और उन्होंने जीवन पर्यन्त राजकाज बहुत उत्तम और धार्मिक रीति से चलाया। उन्होंने अनेक दान पुण्य के कार्य किए जिनसे चारों ओर उनका यश हुआ।

संख्या ७३, कवि सर्वस्व, रचयिता—जयगोविन्द बाजपेयी, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—१०×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४५६, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७६५ वि०, प्राप्ति स्थान—श्री देवकी नंदनाचार्य, पुस्तकालय श्री गोकुलचंद्रमाजी का मंदिर, कामवन, रियासत—भरतपुर।

आदि—श्री इष्टदेवो जयतु ॥
पगनि नषनि के मिस पर्‌यौ, टूक टूक ह्वै इन्दु।
पैचि दुहु कर तिन सुधा पियत बालगोविन्द ॥ १ ॥
इंद्रहु सों जाकी कृपा विन कछु कर्‌यौ न जाइ।
मोहू सों सब होय जो गनपति होइ सहाइ ॥ २ ॥
कवितु करैं कीरति बढ़ैं सुनत परम सुख होई।
सो कहियतु संक्षेप तें सिगरे ग्रंथ विलोइ ॥ ३ ॥

वचन रीति प्रगटै जुरसु कवित्त वहै जिय जानि ।
उत्तम अरु मध्यम अधम सो पुनि त्रिविध वषानि ॥ ४ ॥
उत्तम सो जहँ मनुहरै, व्यंग विसेष प्रधानु ।
अलंकार कै वस्तु कछु कै रसादि यह जानु ॥ ५ ॥
चमत्कार जिन आषरनि अद्भुत होत कछूरु ।
तिनसों कहत कवित्व है विनहु रस कोऊक ॥ ६ ॥
उत्तम ही काव्य को पंडित धुनि कहत हैं ।

अंत—चूंकि कह्यौजु कछू तिहि बीच अनै सौ कहेतें नहो रिस पाऊँ ।
पैं जु कहूँ कछू नीकौ कह्यौ तहाँ होतिहिये मैं कैह्यौ हौ रिझाऊँ ॥
वैसिहूँ ठौरन रीझत दोसतैं सूल उठै तिहि कें जु तहाँऊँ ।
तौ वह पूरब पापनि ताकैं लिलार लिष्यौ दुष कैसैं मिटाऊँ ॥

इति श्री मत्पद वाक्य पारावारीण महामहोपाध्याय महा महिम महा कवि श्री मंडन तनयेन जयगोविन्देन वाजपेयिना विरचिते कवि सर्वस्वे शब्दार्थों भयालंकार निरुपणो नाम दशमः परिछेदः ॥१०॥ समाप्तोयं कवि सर्वस्व नामा ग्रंथः संवत् १७६५ वर्षे ॥ आसाढ मासे कृष्ण पक्षे ॥ सप्तमांतिथौ ॥ पतंग वासरे मध्ये ॥ गढ़ पहरा मध्ये ॥

विषय—१—परिच्छेद—काव्य प्रयोजन, १–७ पत्र ।
२—परिच्छेद—रस स्वरूप, पत्र ७–११ तक ।
३—परिच्छेद—नायिका भेद, पत्र ११–२३ तक ।
४—परिच्छेद—नायिका अलंकार, पत्र २३–२९ तक ।
५—परिच्छेद—रसादि निरूपण, पत्र २९–३६ तक ।
६—परिच्छेद—काव्यदोष, पत्र ३६–४५ तक ।
७—परिच्छेद—गुणनिरूपण, पत्र ४५–४७ तक ।
८—परिच्छेद—शब्दालंकार निरूपण पत्र ४७–५० तक ।
९—परिच्छेद—अर्थालंकार, पत्र ५०–६३ तक ।
१०—परिच्छेद—शब्दार्थोंभयालंकार, पत्र ६३–६४ तक ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ जयगोविन्द वाजपेयी का रचा हुआ है । इसमें रस, अलंकार, ध्वनि, गुण और काव्यदोषादि का विस्तृत वर्णन है । इसकी विशेषता यह है कि इसके प्रत्येक लक्षण और उदाहरण गद्य में भी समझाए गए हैं । ग्रंथ की पुष्पिका द्वारा विदित होता है कि रचयिता महाकवि मंडन के पुत्र थे । रचनाकाल नहीं दिया है पर लिपिकाल संवत् १७६५ वि० होने से ग्रंथ काफी पुराना है । इसमें प्रयुक्त गद्य के कारण इसका महत्व बढ़ गया है ।

संख्या ७४. काव्यरस, रचयिता—राजा जयसिंघ (जयपुर संभवतः), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—८½ × ५ इंच, पंक्ति—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिकृष्ण जी वैद्य 'कमलेश', श्री कृष्ण औषधालय, डीग, राज्य—भरतपुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः दोहा लिष्यते रस काव्य राजा जै सिंघ की भाषी ॥२६॥

नवी नाइका है कही भानु दत्त निरधारि ।
प्रवत्स भर्त्तिका नाउ धरि काढयौ भेद विचारि ॥ २७ ॥
तेही रीतिन सोधि हम दसई बादि और ।
आगछत पतका कही सो जनाइ इहि ठौर ॥ २८ ॥
मिलै पीउ दिन दोक मै आवत सुनियौ वाम ।
आगछत पतका कही सुषुस रीति है धाम ॥ २९ ॥

कही है प्रमान अष्ट नाइका भरत मुनि भानदत्त कहो रसमंजरी बनाइकै ।
पीउ चलिवे कौ होइ जाकौ परदेस कौ नवीं प्रवत्स भर्तिका दइ है सो गनाइकै ॥
आई चुकयौ नहीं घर आवतु सुन्यो है कंतु दसई कहत जयसिंह समुझाइकै ।
आगछत पतिका कहावैं इन रीतिन सों नवी मानौ त्यौही दई दसई जनाइ कै ॥३०॥

आगछत पतिका को उदाहरन

मोहन विदेस गये राधिका को कल नाहीं दिन दिन छीन मीन जल विन जोइ है ।
भूषन वसन फूल भावै नहीं मूलही ऐ जमुना के कूल सूल बाढ़ विरहा दहे ।
जयसिंघ सावन की आवन में सुषदाई आवनि को वात मन भावनि अली कहै ।
वाल हाल हौ निहाल मिले लाल प्रतिपाल दुतिया के चंद सम दीपति महान है ॥३१॥

अंत— अश्लेष अलंकार को लछन

॥ दोहा ॥ वात कहत ही एक के अर्थ लगै वहु ठौर ॥
ताह कहत अस्लेष हैं इह तै नहीं और ॥

यथा—सतौ दीप नव षंड वर वंड भुज दंड मल षंडवे की ऐंड मैउ देषी अवही ।
अति ही प्रचंड करैं संडन के ठंड झुंड सुंड परे डुंडह से षग्ग गह्यौ जवही ।
मारतंड सौं अषंड डंडतु अषंडन कौ मंड राष्यौ धर्म जय सिंघराम सवही ।
सुनर कराये अरु प्यार के करावही जैसे आगि वारिदये बरै वुझै तव ही ॥२४॥

अथ चित्र अलंकार

॥ दोहा ॥ जह जुरावतें वर्न के सोभा अति अधिकाइ ।
चित्र कवित्त तासौं कहै जाकौ है यह भाइ ॥ २५ ॥

अंतर लापिका

× × × (अपूर्ण)

विषय—ग्रन्थ के अनुसार कवि ने दसवीं नायिका 'आगत पतिका' का अन्वेषण किया है । ग्रन्थ प्रधानतः दो भागों में है, रस और अलंकार । रस प्रकरण में शृंगार रस के अन्तर्गत दो अध्यायों में आगत पतिका के भेदोपभेदों का वर्णन है ।

१—चतुर्थ अध्याय—आगत पतिका के उदाहरण, गर्विता लक्षण मय उदाहरण, मान, चार प्रकार की नायिकाओं का वर्णन, पत्र ५ तक ।

२—पंचम अध्याय—दूती लक्षण उदाहरण, षोड्स श्रृंगार, द्वादस आभरण, अत्यन्त संभोग दुखिता, अनुराग, मान, उराहनादि, पत्र ५—१२ तक।
३—भाव, हाव, हास्यादि रसों के लक्षण उदाहरण, पत्र १२—२४ तक।
४—अलंकार विषय—वक्रोक्ति, अनुप्रास, श्लेष, चित्रालंकार आदि, पत्र २६ तक।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रन्थ अन्त से खंडित होने के कारण अपूर्ण है। आरम्भ में चतुर्थ अध्याय है फिर पंचम और उसके पश्चात् अध्यायों का क्रम छूट गया है। रचयिता का नाम जयसिंघ है। इनके नाम के पहले आरंभ में राजा शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'ग्रन्थ-राजा जयसिंघ की भाषी' इससे विदित होता है कि ये कोई राजा थे। परन्तु ये कहाँ के राजा थे ? यह विदित नहीं होता। इन्होंने इस ग्रन्थ में हिन्दी के दो कवियों का उल्लेख किया है। एक मंडन का और दूसरा जयगोविन्द वाजपेयी का। मंडन की 'रस रत्नावली' से रस लक्षण का एक उदाहरण उद्धृत हुआ है:—

कवित्त सुने नाटक सुने हिय में हर्ष जु होइ।
कवि मंडन तासौ कहे रीझ रहै मन भोइ ॥ ४ ॥

जयगोविन्द के 'कवि सर्वस्व' से भी इसी विषय का एक उदाहरण दिया है:—

कारन कारज जे जगह सहकारी समुदाई।
रत्यादक थाईन के कवितन में आई ॥ ५ ॥
ते विभाव अनुभाव अरु द्वै विभचारी भाव।
प्रगटनिथाई सहित हो आनंद कै भरिपाव ॥ ६ ॥
ताही सों रस कहत है जो उपजै इहि भाँति।
कविवर वरनै ग्रंथ में अति ही बाढ़ै कांति ॥ ७ ॥

प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल उसके साथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध 'ऊषा चरित्र' के आधार पर सं० १८०२ वि० है।

संख्या ७५ ए. ब्रह्मस्तुति, रचयिता—ज्ञानीजी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० उजागरलालजी, स्थान—लुधियानी, पो०—वकेवर, जिला—इटावा।

आदि—
अति लौह लीनंत चीन्हंत ग्यानी।
शब्द सरूपी सनाकाश वांनी ॥
विना देव शंभू निरालंब जानी।
जानै जनावै कहा वैन देवा ॥
ऐसा तंत पूजै पूजावै लगावै न सेवा।
सदा ध्यान धारी अषंडी निराशा ॥
सदा सिद्धि पीवै न जाय पियासा।
परम धाम धीरा उदासी अकेला ॥

लौहौं लीन जोगी गुरु ग्यान मेला।
मिलंता चलंता रहंता अपारे ॥
अैसा इष्ट देषौ अनंतो विचारे।
चिदा चित चितवंत चितवंत सूरा ॥
अैसा ष्याल षेलंत बूझंत पूरा।

अंत—

हूँ नही तूं नही, बंधो न भाई।
निराधार आधार रंको न राई ॥
गावै न धावै न हेली न पेला।
नारी न पुरुषो षेली न षेला ॥
महीं पेट पुष्टी न पायो न माथा।
शेषो महेशो गनेशो न दां···॥
··· ··· ··· ··· (शेष लुप्त)

विषय—ब्रह्म की स्तुति।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ और 'शब्द पारखी' एक ही लेखनी और एक ही स्याही से एक ही आकार के पत्रों में लिखे गए हैं। इनमें 'ज्ञानी' की छाप होने से वही दोनों का रचयिता मान लिया गया है। 'शब्द पारखी' में इन्होंने अपना गुरु कबीर को माना है।

संख्या ७५ बी. शब्द पारखी, रचयिता—ज्ञानीजी, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० उजागरलालजी, स्थान—लुधियानी, पो०—वकेवर, इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ शब्द पारखी ग्यानीजी की लिक्षते ॥
अदेष देषे शब्द विचारै। आप तरै औरन कूं तारै ॥
पषा पषी की पषन झालै। लोक वेद सें उलटा चालै ॥
आतम तंत का करै विचारा। कहै ज्ञानी सो गुरू हमारा ॥ १ ॥
अंजन माहिं निरंजन ध्यावै। अंतरगति मैं लै मन ल्यावै।
सत गुरु शब्दै लागा रहै। काम क्रोध में देहना दहै ॥
आशा तृष्णा सूं रहै न्यारा। कहै ग्यानी सो गुरू हमारा ॥ २ ॥
वहौ चेला का संग निवारै। साँचा साहेब हिरदै धारै।
आया डर दुब्ध्या सब षोवैं। शब्द देष्य घट अंतर जोवै ॥
देषा नहीं धर्‍या आकारा। कहै ग्यानीं सो गुरू हमारा ॥ ३ ॥
एका एकी अरु वहु संगी। सदा उदासी अरु वहुरंगी ॥
ग्रह सें रहित वनषंड वासा। अहंवाद काजा घट नासा ॥
नासो दूरी नासो नीरा। जन ज्ञानी का गुरु कबीरा ॥ ४ ॥

ममता मार विभूति चढ़ावै । शब्द अनहद सींगीं बजावै ।।
मन मन साकी मुद्रा करै । काम क्रोध दोउ अजरा जरै ।।
इंगला पिंगला सुषमन भोगी । कहै ग्यानी सो साँचा जोगी ।। ५ ।।
जंत्र मंत्र टौणां नहीं करै । नाटक चेटक सब परहरै ।।
आनंदशा संगै नहिं जाई । मन पवन ले सहज समाई ।।
सो जोगी निर्भै रहै भाई । जन ग्यानी ताकूं लगै पांई ।। ६ ।।
मूनीं सो जे मन मैं रहै । को किसी की बीच न कहै ।।
उन मुनीं तारी रहै लगाई । घर छाड़ी बाहर नहीं जाई ।।
शब्द अनाहद लावै धूनी । कहै ग्यानी सो सांचा मूनी ।। ७ ।।
पांचूं इंद्री का करै प्रहारा । सत शब्द गुरु ग्यान विचारा ।।
सब प्रकृती का करै ओहारा । निर्बल होइ तजी अहंकारा ।।
एका एकी रहै उदासी । कहै ग्यानी सो सत सन्यासी ॥ ८ ॥

अंत—

दास जु सब सौं दीन ।
हरि के नाम रहै आधीन ।।
दशा तन में रहै समाया ।
कहै ग्यानी सो दास कहाया ।।२२।।
अंतरंग की जानै सार ।
ता घट ज्ञान बौहौत विचार ।।
या घट कूं षोजै जौ कोई ।
कहै ग्यानी ताकूं आवागमन न होई ।।२३।।

इति श्री शब्द पारषी ज्ञानीजी की संपूर्ण ।

विषय—गुरु, योगी, मुनि, सन्यासी, जंगम, पंडित, ब्राह्मण, जन, हिन्दू, शेख, मुसलमान, मुल्ला, पीर, सैयद, ग्रही, भक्त, भक्ताभाव और दास एवम् मुक्त शब्दों की व्याख्या और विवेचन किया गया है ।

संख्या ७६. रुद्र मालिनी छन्द, रचयिता—मुं० ज्वाला स्वरूप, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयाल शर्मा, स्थान—सिरसा, पो०—इकदिल, जि०—इटावा ।

आदि—आज्ञानुकूल मुंशी लछमन स्वरूप रहीस सिकंदराबाद के संवत् १९२५ मा० शु० १२ ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री रामाय नमः ॥ पोथी रुद्र मालिनी छन्द मुंशी ज्वाला स्वरूप कृत ॥ ओं शिवाय नमः ओं ॥ अथ रुद्र स्तवराज मालिनी छंद ॥ सिकन्दराबाद मुन्सी लछमन स्वरूप रईस के आज्ञानुकूल संवत् १९२५ मा० शु० १२ ॥ निगम उदधि मुक्ता स्वच्छ सौंदर्य सोहै । कवित्त सुमति पाणी व्यासवाणी पिरोहै ।।

धरत हृदय पत्री प्रेयसी मुक्ति वाला। शिव शिव शिव शूली शंभु की नाम माला ।। १ ।।
सलिल इव महाब्धी विश्व संकीर्ण क्रांती। सुर नर पशु पक्षी एक सत्ता न भ्रांती ॥
बहुरि अखिल योनी मोह मिथ्या दुखारी। अति पुरुष प्रमाता मोह माया पसारी ॥ २ ॥
नखलु विपुल शोभा संपदा बुद्धि बानी। न खलु जगत गर्भा वल्लभार्यौं भवानी ॥
वानी विगत इतर इच्छा एक ज्यौं स्वच्छ शक्ती। शशिधर उर पत्री पद्मिनी भक्तभक्ती ॥३॥
वपुष उदधि योनी हास ज्यौं चन्द्र कांती। उडवर मणि मूर्द्धा ज्यौं श्रवै सोम शांती ॥
विधु वदन भवानी अंग आभर्ण सोहै। शशिधर शशिमाली देख देवेश मोहै ॥४॥
परसि चरण पत्री शेष को सीस टूटै। शिरसि शिखर लागै भांड ब्रह्मांड फूटै ॥
वपुष दलित काष्टा नष्ट ह्वै ह्वै जहाँ लौं। वृष धरयश देखो बाढ़ पावै कहाँ लौं ॥५॥
कुसुमित ज्वल केसू में घड़ौ सूर पै यौं। सुरभि सुखद शोभा वामहू दामिनी ज्यौं ॥
शिरसि मुदित मंथी पाणि को दंड धारी। मधु रितु क्रिम वर्षा काल के मन्मथारी ॥६॥

अंत—चर…णलक्ष्मीला भट जानी विधाता। अपर परम स्वामी विष्णु ब्रह्मांड त्राता ॥
शिव इव गुण पाये सर्वदा सच्चिदात्मा। निज मुख शिव भाखे एक तीनो महात्मा ॥२५॥
धनद वरुण वज्री देखि दंडी उषारी। यदपि प्रथम धाये सो न ले शूल धारी ॥
वसत सुहृद मानो अंध कागार कैसे। अनहित हित हितकारी एक ईशान ऐसे ॥२६॥
कहत सुभग सेवा अंग आरोग्य इच्छा। त…दधि जन्मा वारिधी दक्ष शिक्षा ॥
इ……अधिक प्रशंसा ऊन सोमेशली……हरत विपत श्रेणी कीर्तिक……॥

× × × (अपूर्ण)

विषय—शिव जी की गुणावली वर्णन के साथ ही साथ उनकी स्तुति की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ मुंशी ज्वाला प्रसाद जी ने रुद्रमालिनी नामक संस्कृत के मनोहर छंदों में रचा है। इनके संबंध में इस छोटे से ग्रन्थ से कुछ भी पता नहीं चलता। हाँ, ग्रंथ के आरंभ में यह अवश्य लिखा है कि मुं० लछमन स्वरूप रईस सिकन्दराबाद की आज्ञानुसार उन्होंने यह ग्रंथ संवत् १९२५ की माघ सुदी १२ द्वादशी को बनाया। सिकन्दराबाद नाम का एक स्थान युक्त प्रांत (अब उत्तर प्रदेश) के बुलन्दशहर जिले में विद्यमान है। संभवतः मुं० लछमन स्वरूप इसी नगर के रहनेवाले थे। हो सकता है, रचयिता भी इसी नगर के रहे हों।

संख्या ७७ ए. कबीर का एक खंडित ग्रंथ, रचयिता—कबीरदास, कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—६¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३२, खंडित, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ सतनाम ॥

कि हुकुम सजो दासा मोही। मोह अओ लोभ कि काली घटा घन बरष ही।
मलिन चंदा छपाही ॥ सील संतोष गुरु अत्र पर ऐ कुमति की चाहना हि बाहर खाही।
सत्या संसै ए भई ॥ सारा सत गुरु लाई ॥ कहै कबीर सत लोक जाई ॥३०॥

तप पंडित धंनेस कल निरपति बने । भकत सुपच विनु भई संसा ।।
भीलनी भया चारषाने नहि । षावए फल धरि प्रभु हेतु पासा ।।
वहुत वाते तजो प्रीति उरमें भजो वेद का वंदनार रे दास दासा ।।
वही सरै चीन्ही साहब परैऐ । परम आनंद वड़ भाग सोई ।।
वड़ि मरजाद पाषंड कि जगत में सांच को कहै जग फल होई ।।
सांच अओ झूंठ को रेष दिव्याद्रीष्टिते जानि जौहरी भाई ।।
काचु के महाभयेभूकि कुता मुआ । आपनी छाह को आप धाई ।।
आप अपनी प्रतिमा देषि के केहरी । कुदी सीरा प्रान षोई ।।
कहै कवीर एह भ्रम है दूसरा । कहा मानै नहीं अंध लोई ।।२१।।

अंत—न ओ नारी ।। ऊता हुहुल होअ ।। त्रीकुटि परये अवाज
गंगन गुफा मह ज्ञांन समाए ।। इन्द्रि पहुच ऐऋह ये भंग ॥
काल आवत वदहि न अंग ॥ थर थर थिर पौन वाम नोर ॥
वूझह संत जीवन ओर पाँच तत्तु

निघट न लाग ॥ चंदवान
घलेअ ॥ पारथ चिला
चले तन कसये भावा ।। व
मथुर ।। झूठ कु सिस जौ र ह ये
ये अग्र तेज सह जहि भयो देव
न वं धाम न दम कपास ।। दवों दसति
जपुरक वास ।। पंडित चतुर विवेकि
आ ।। साधु सरन छांडि गति कहां हुआ ।। ऊधे
— शेष लुप्त

विषय—पृ० १ से १४ तक लुप्त ।

(१) मोह और लोभ की मलिनता से चंदा छिपा है । शील सन्तोष और कुमति का अन्तर, भक्ति के विना संशय की उत्पत्ति का होना, सब तजकर प्रीती से उसके भजन का आदेश, इसमें वेद की बंधि न होवै । सत्य झूठ का निर्णय जौहरी ही कर सकता है । शीशे में अपना प्रतिबिंब देखकर और उसे दूसरा कुत्ता समझ कर भौंकते ही भौंकते कुत्ता मर गया । इसी प्रकार सिंह अपनी प्रतिमा को देख कर भ्रम में पड़ गया । इसी प्रकार यह शरीरादि का मोह भ्रम है, अन्धे हुए मनुष्य उसे नहीं जानते । पाँच तत्व और तीन गुणों की गूदरी को सुरति के तार से सीकर चित्त में प्रेम को चौबंद किया, गले में अलख और सिर पर गुरु ज्ञान का टोप, अकल की कलँगी और हृदय में सुरति की साधना, तत्वों का तिलक और जप माला हर दम हृदय में रखकर कबीर फकीर बना । शब्द का महत्व और उससे वहिश्त की प्राप्ति । शब्द का भेद कोई जौहरी ही जानता है । जिस साहिबने तुझे सब कुछ दिया है उसी की वन्दना कर । सत नाम का महत्व वर्णन, पत्र १६ से १८ तक ।

(२) पत्र १९ से ३० तक लुप्त ।

(३) जो कुदरत देख कर नहीं भूलता वही सच्चा दास है, गुरु ज्ञान से ही अलख लखा जा सकता है, पाँच तत्व, पच्चीस प्रकृति, छै चक्र, छओं नाड़ी, चौंसठि कोठा, बहत्तर कोल, ७ उयाल, दो शून्य, छत्तीस राग, छओं रस, एक स्वंभ, वारह तेज,···दस द्वारे आदि के वर्णन के पश्चात् गगन गुफा में जाने की विधि तथा अनहद वर्णन, पत्र ३० से ३४ तक ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के आदि के १४ पत्रे लुप्त हो गये हैं। मध्य से भी १९ से ३० संख्या तक के १२ पत्रे गायब हो गए हैं। इस प्रकार २६ पत्रे तो आदि भाग के ही नहीं मिले। इसके अतिरिक्त ३१ से ३४ तक के उपलब्ध पत्रे इस प्रकार फट गये हैं कि उनका विषय पूर्णतया जानना कठिन हो गया है। ३४ के पश्चात् के पत्रों के संबंध में नहीं कहा जा सकता कि कितने पत्रे नष्ट हो गए। ग्रंथ के नाम के संबंध में भी कुछ नहीं कहा जा सकता। प्रत्येक पत्रे के ऊपर 'सतनाम' का उल्लेख है और प्रत्येक छन्द में कबीर की छाप भी है।

संख्या ७७ बी. कबीर का एक खंडित ग्रंथ, रचयिता—कबीरदास (काशी), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान-पं० रामचन्द्र शर्मा, स्थान—न० कन्हाई, पो०—भरथना, जिला—इटावा।

आदि—॥ सतनाम ॥

कि हुकुम सजो दासा मोही। मोह अओलो भकि कलि घटा घन वरषही ॥ मलिन चंदा छपाही ॥ सील संतोष गुर अंत्र षरए कुमति की चाह माहिं वाहर षाही ॥ सत्या संसैए भई। सारा सत्त गुरु लाई ॥ कहै कवीर सत लोक जाई ॥ ३० ॥
तव पंडीत घने सकल निरपति वेने भकत सुपच विनु भई संसा ॥ भीलनी भया—
चारषाने नहि ॥ षार्वए फल धरी प्रभु हेतु पासा ॥ वहुत वातें तजो प्रीति ऊर में भजो
वेद का वंदनार ऐ दास दासा ॥ वही सरै चीन्ही साहेव परे ऐ ॥ परम आनंद वड़भाग सोई
वड़ि मरजाद पाषंड कि जगत में सांच को कहै जग काल होई ॥ साच अओ झूठ कों देष दिव्याद्रीं ॥ स्टिते जान जौहरी भाई ॥ काचु के महा प्रेभु कि कृता मुअ ॥ आपनी छाह आप धाइ ॥ आप अपनी प्रतिमा देषि कै केहरी ॥ कुदी सीरा प्रान षोई ॥ कहे कवीर एह भ्रम है दुसरा ॥ कहा मानै नहीं अंध लोई ॥ ३१ ॥

अंत—वहु विधि प्रगटे आऐ ॥ जवते तिसकों जाप करये तव राषये अपनाए ॥ तें तारि कवीरी कहऐ गुर गंमि कोई कोई जान ॥ तालिम होए सो पावए मतलवको पहचान

× × ×

काक कि नाऐत जाहि में, कादिर ताके पास। कुदरति देषिन भूलए, सोई कहावइ दास ॥ काक करो मति आपु में। परगट देष विचार। करता का अधिक संग जर्‍यो कोई पावएपार ॥

× × ×

.......। जब बिसाल का आसा धरै, तब पावए ओहे जाऐ। लाम अलिफ लाताकिकें, आलिफ आकिल देष आदि अलिफ चीन्हए बिना, भटकि मुया सम भेष ॥ हमजा हमजा तुम छोड़ि कएना--

अछर गहो बनाऐ ॥ नीह अक्षर गमितें पावए, तबहिं अलष लग.........॥

अलष घटलितर उजिआरा ॥ पाँचु ततु पचिस प्रकृति छओ चक्र ओ नारी ॥ चौंसठि कोठा बहत्तरि कोल ॥ सात ज्याल दुई सुन छत्तिस राग छओ रस एक खंभ बारह तेज बिसत्री...

॥ जगु का हंस के ध्यान ॥

तीनि चक्र के ऊपर के पहिला सम गुन ॥ दोसर रज गुन तीसर सतगुन। दुई बेधिजे ऊपर जाए गगन गुफा में जाय समाए ॥ सत्या भक्ति ॥ गुर सत गुर मांही समावा जाए ॥

निज धाम बहुरि नहिं...........॥

जो जोग जो गावहु, जीवन छाँड़हु भोरा। मगन मन सत नाम पुकारए ॥
दया समाऐ कर पूज ॥ हिदैए राखहु सेसमये ऐते बिस्वासा ॥ राघवा नद गुरु
रामानन्द को... ... ...
ऊताहुल होअ ॥ त्रीकुटि परये अवाज गगन गुफा मँह ज्ञान समाऐ ॥
इन्द्री पहुचऐ कहए भंग ॥ काल आवति वदहिन अंग ॥ थर थर थिर पौन
वाम जोर ॥ संझह संत जीवन ओर ॥ पांच तत्तु ... ...
साधु सरन छांड़ि गति कहां हुआ ॥ ... ...
... ...

(शेष लुप्त)

विषय--सत नाम की महत्ता, गुरु माहात्म्य, सच्चे दास की पहचान, पाँच तत्त्व और तीनों गुण, छापे तिलक आदि काहे के हों ? संसार की निस्सारता और साहिब के स्मरण की महत्ता, प्रभु का निराकार तत्त्व, जाप किनाअत में, कादिर, पाँच तत्त्व और २५ प्रकृति का वर्णन। सर्वोपरि नाम ही होने का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य--प्रस्तुत ग्रन्थ कबीर रचित कोई खंडित ग्रन्थ है और वह इतनी बुरी तरह दीमक ने बिगाड़ा है कि ३१ से ३४ तक के पन्ने नष्ट हो गए हैं। फलतः उनके सम्बन्ध में कुछ जानना असंभव हो गया है। इसके अतिरिक्त १४ पन्ने आदि से, १२ मध्य से और न जाने कितने अन्त से गायब हुए हैं। प्रत्येक पन्ने पर "सतनाम" लिखा हुआ है। इसमें अधिकतर गुरु, ज्ञान, भक्ति और ब्रह्मज्ञान का ही वर्णन है। भाषा में अर्बी फारसी के शब्दों का प्रयोग भी स्वतन्त्रता से हुआ है। ग्रंथ के नामादि का पता नहीं चलता।

संख्या ७८. सुदामा चरित्र, रचयिता—कलीराम (मथुरा), कागज—स्यालकोटि, पत्र—७२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी मिश्रित नागरी, रचनाकाल—सं० १७३१ वि०,

लिपिकाल—सं० १७३१ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० बालमुकुन्दजी चतुर्वेदी, मानिक चौक, मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि— × × ×

दोहा—सो चरित्र "कलिराम" पढ़ि होय प्रेम सुख भीर।
जहि भाँति सुदामा मित्रकों कृपाकरी जदुवीर॥

कवित्त

आदि हि बिसाल गुन भाषी वेद व्यास मुनि जैसी जैसी भाँति हरि मिले द्विज मीत सों।
दास हू ते दास गुन पास ह्वै कें कलीराम सेवालाल गिरधर कीनी सुष रीत सों।
और हू कहाँ लौं कहौं रीझि स्याम साँवरे की कियो विप्र आप सर प्रेम की प्रतीत सों।
तैसे ही सकल विधि बानी सुधा कवि रस पढ़े हैं कवित्त तुम सुनो साधु प्रीत सों॥
भाग को सरद रितु माया के नक्षत्र ह्वै कै उनये सकल विधि बानी सुष क्षेम की।
गरजि गरजि आयो हरि गुन 'कलीराम' घटा प्रेम प्रीत घन घनी उर नेम की।
बरसन लागे बात बात की रसीली बूँदें कोमल अलोम ताइ रसना रस नेम की।
कहवे कूं वामनजी सुष कौ सिवाती भयो सुनिवे को वांभनी पपीहा भई प्रेम की॥

दोहा—बोल उठी तिय कंत सुनि मित्र कियो जदुवीर।
तो प्यासे क्यों मरत हौं सुधा सिंधु के तीर॥

अंत—गहौं नाम हिय हेत कै और नहीं मोहि काज।
चरन सरन 'कलिराम' कौ राषि लेहू ब्रज राज॥

इति श्री सुदामा चरित्र लिख्यो छै मिति मगसिर सुदी १२ संवत् १७३१।

चतुरवेद माथुर विदित मधुर मधुपुरी धाम।
सुकविन कौ सेवक सदा, कलीराम कवि नाम॥
चरित सुदामा कौ रच्यौ हौ निज मति अनुसार।
भूल चूक होवै कछू लीज्यौ सुकवि सुधारि॥

विषय—सुप्रसिद्ध सुदामा चरित्र का वर्णन दोहों और कवित्तों में किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के प्रारंभ के तीन पत्रे लुप्त हो गए हैं; किंतु कथा पूर्ण है। रचयिता मथुरा के माथुर चौबे थे जिनका नाम कलीराम था। इनकी प्रस्तुत रचना काव्य दृष्टि से सुंदर है। रचनाकाल यद्यपि नहीं दिया है तथापि लिपिकाल के बाद अपना परिचय देना यह साबित करता है कि यही लिपिकाल रचनाकाल भी है और लिपिकर्त्ता स्वयं कलीराम ही हैं। इस दृष्टि से ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति मूल प्रति है जो महत्वपूर्ण है।

संख्या ७९. कृष्ण और शिव का अर्द्धाङ्ग स्वरूप वर्णन, रचयिता—काशी गिरि, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ४½ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौबे दाऊदयाल जी, स्थान—मुचैहरा, पो०—जसवन्त नगर, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री कृष्ण और शिवजी का अर्द्धाङ्ग स्वरूप वर्णन ॥

शिव गौरा को सब कोई कहते ये दोऊ हैं एकी अंग ।

कृष्ण शिव हम कहते अर्द्धंग भला, आधो शीश पर जटा औ आधे लटकेला काली । आधे शिव आधे वन माली जी भला ॥ आधे मुख वे दाँत और आधे वेद की ध्वनि आली ॥ करै आपस में बोला चाली भला ॥ दोहरा ॥

कहै गौरजा सुनो लक्ष्मी देखो पति का रूप ।
ऐसा रूप नहीं देखा था । सो देखो आज स्वरूप ॥

आधे शिर मुकुट आधे शिर गंग भला, आधे शीशपर चन्द्र, और आधे चंदन का है खौर । इधर मुरछल और उधर हो चौंर भला । आधे मुख माखन और आधे धत्तूरे का है कौर ॥ आधा अंग श्याम आधा अंग गोरा भला ॥ दोहरा ॥

आधे अंग में भस्म लगी, आधे अंग लगी सुगंध ।
आधा अंग है क्रोधवन्त, और आधा अंग अनंद ॥

आधे अंग वस्त्र आधा अंग नंग भला । आधे मुख मुरली वाजै आधे मुख नाद । न उनका अन्त न उनकी आदि भला । आधे मुख अमृत और आधे हलाहल का है स्वाद ॥
दूरि करैं क्षण में विघ्न विषाद भला ॥

अंत— ॥ दोहरा ॥

अर्द्ध स्वरूप है महाकाल और आधा पालन हार ।
काशी गिरि ये कहे है उनकी, महिमा अगम अपार ॥
देख सुर नर मुनि हो गये दंग भला ॥

॥ इति श्री कृष्ण और शिव जी का अर्द्धाङ्ग स्वरूप वर्णन सम्पूर्णम् ॥
॥ शुभम् भूयात् ॥

विषय—शिव और कृष्ण का अर्द्धाङ्ग स्वरूप वर्णन ।

संख्या ८०. गणेश कथा, रचयिता—केशरी कवि, कागज—देशी, पत्र—८, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० घनश्यामदासजी, स्थान—उदीअन्तरी, जिला—इटावा ।

आदि—श्री गणाधिपतये नमः अथ गणेश कथा लिख्यते ॥

सुमिरन करि गनेस को, और सरसुती मात ।
तुम्हही दाता बुद्धि के, कहैं केसरी बात ॥
एक समै कैलास पै, बैठे थे हरिनाथ ।
पारवती जू हैं तहाँ, कहैं परसपर गाथ ॥ २ ॥
महादेव स्नान कहँ, गये तबै तिहि वेर ।
नारद मुनि आये तबै, पारवती ढिग मेर ॥ ३ ॥
नारद मुनि पूछै तबै, पारवती कौ बात ।
मुंड माल प्रभु के गरे, सो तुम जानति सात ॥ ४ ॥

नारद मुनि कहि गये, आये शिव तिहि वार।
मन मलीन शिव देखि तहँ, बूझत गवरी सार ॥ ५ ॥
शिव जू सौं गवरी कही, मुंडमाल तुवहार।
सापति हैं हम सौं कहौ, प्रभुजू वात अपार ॥ ६ ॥
तुम जनमें जितने जनम, तिनकी है मुंडमाल।
हम सोई पहिरैं गरै, तुम नहि जानत वात ॥ ७ ॥
शंकर कौ पूछौ गवरि, एक जन्म तुव देव।
मेरे जनम अनेक हैं, तासौं कहियै भेव ॥ ८ ॥
वीर्ज मंत्र हम जानहीं, तुम नहि जानो सोइ।
जनम वही है हामरो तुमहि अनेकै होइ ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

अंत—वर हम दीना की कही, होमन की विधि सोइ।
मन वाँछित फल पाइ है जोर करैं नर कोइ ॥
भादौ विधि कैंतु है, वा छुद्दा नील वहु मूल।
उतसौ सबै मिलाइकै, होम करौं निजु मूल वातै ॥

अस्त्री वश्य होय ॥ पुरुष सिधि कार्जु होम करै करि करि केसरी पूरन दुःष भाजैं ॥ दूपहरी कौं फूल लैकै करौं क वार मैं सो घ्रत सावोहिमिलाइ कै तोर सिद्ध सव होइ। कति कारे उरद लै दयी घ्रत मैं सो तीनों वस्तु होमिकै सर्व सिद्धि होइ ॥

मारग सिर मकर मकर मुसाषाहुली कूंट लैले ॥ अधाहूली सौ मुघ्रत मिलें कहि फलु हो अवस्य होइ सवैर सवै ॥ कहतु केशरी सो मम मन वाँछित फल पाइहै ॥ पौष होम यह जानि ॥ यत्र वास के छल मिलि मन मैं साँचो मानि ॥ रारजापूजा वस होई ॥ मार मैं नोन सामरि घ्रत में मिलै करि होंम करि नर जो न वस्य होइ ॥ राजा प्रजा ॥ फागुन रूई मँगाइ किरवारे कीनौंन घीउ सा मोहन हुवाइ ॥ मीठौ विधि सौं होम यह चैत्र विजौरौ घीउ होम करै जो वाज त्रिय, पुत्र होहु सुष पीउ सर्व सिद्धि पावै ॥ पहिलै सुनि कथा वसानै नहि जौइ, मनै उपजीय तिहि पर पुत्र···

विषय—श्री गणेश व्रत कथा, उसका वृत, फल और होमादि की विधि का वर्णन।

संख्या ८१ ए. गंगा की कथा, रचयिता—खगपति कायस्थ, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०७ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रामचंद्रजी शर्मा, स्थान—न० कन्धाई, पो०—भर्थना, इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्री गंगा की कथा लिष्यते ॥

॥ चौपाई ॥

श्री गणेश गणपति गुण गाऊँ। होहु दयाल अक्षर सुधि पाऊँ ॥
अलख निरंजन सुमिरौं तोही। जेहिते मोक्ष मुक्ति मोरि होई ॥

दुर्गा देवी तोहि मनाऊँ। देहु बुद्धि गंगा गुण गाऊँ॥
सहजहि डिल्ली पति कीन्हों। बड़ विस्तार विद्या ताहि दीन्हों॥
सब कपि तन कौ विनय हमारी। जहँ चूकौं तहँ लेहु सम्हारी॥

॥ दोहा॥

संवत् सत्रह सै दिवोत्र, चंद्र सुरज गुन लीन्ह।
खग पति कवि भारत सुत कथा, प्रघट जिन्ह कीन्ह॥
भदौं सुदि पाँचैं तिथि भली, कथा पवित्र जुगत मैं चली।
गंगा स्तुति सुनौ रे भाई, जन्म जन्म कौ प्राछत जाई॥
भागीरथ मन मौं कछु आई, मातहि मैं कछु पूछौं जाई॥
सुनौं मांतु मैं पूछौं तोही, पुरुषन मुक्ति कौन विधि होई॥
सुनौं पुत्र ऐसी को करई, गंगा होय तौं पुरुखा तरई॥
इतनी सुनि भागीरथ, मन मैं कियौ विचार।
गंगा भागन पाइये, लिखी जो होय लिलार॥

अंत— एक राम तो सत्य है, और सकल सब धंध।
कोई काम न आवही, मातु पिता सुत बन्ध॥
जो गंगा स्नान करि आवै, मोक्ष मुक्त दोऊ फल पावै॥
जो गंगा का दरसन करई, जन्म जन्म के प्राछत हरई॥
जो गंगा की पूजा करई, बे कलंक वैकुंठाई तरई॥
जो गंगा अस्तुति पढ़ै, निश्चै स्वर्गहि जाय॥
चारि पदारथ वह लहै, जो गंगा गुन गाय॥

इति श्री गंगा कथा समाप्तम्॥

विषय—राजा भागीरथ का अपनी माता से अपने पूर्वजों के मुक्त होने की विधि पूछना। भागीरथजी का तपस्या करना और गंगाजी को ले आना। राम भजन, गंगा स्नान, गंगा स्तुति, दर्शन, पूजन आदि फल वर्णन।

संख्या ८१ बी. गंगा की कथा, रचयिता—खगपति कायस्थ, कागज—देशी, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पत्र—४, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० वैजनाथजी, स्थान व पोष्ट—जसवन्त नगर, जिला—इटावा।

आदि अंत—८१ ए. के समान।

संख्या ८२. महेश्वर महिमा, रचयिता—किंकर कवि, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० ब्रजनारायण जी शर्मा, स्थान—चकवा, पोष्ट—इटावा, जिला—इटावा।

आदि—कैलासी के वासी अज अविनासी सेवग सरन सदा चरनन की।
आपनों जानि कृपा कीजै अभय दान दीजै प्रभु मेरे सकल सिष्ट के अघहारी।

भक्त मन रंजन भो भंजन भव सुभ कारी।
ब्रह्मा विष्णु सुरेस सेस मुनि नारद आदि करैं सेवा ॥
जिनकी इक्ष्या पूरन कीनी आदि सनातन हैं देवा ॥
भक्ति मुक्ति दाता भूतेश्वर त्रिपुरारी।
भोलानाथ दीनदयाल कृपाल काल रिपु अलष निरंजन शिव जोगी।
मंगल रूप अनूप छविले अषिल भुअन के तुम भोगी।
वायें अंग रंग रस भीनी उमा वदन की छवि न्यारी ॥
पशुपति अजर अमर अमरे सुर गोपेश्वर शिव गोस्वामी ॥
ब्रषभारूढ़ गूढ़ गुन गिर पति गिरिजा वल्लभ निहकारी ॥
असुर निकन्दन सुर नर वंदन वेद बषानै जग जानैं।
रुंड माल गल व्याल भाल ससि नीलकंठ जिय मन मानै ॥

अंत—तुमही दिनकर ससिधारी ॥
मैं अजान तुम निपट सयाने।
मेरे औगुन जिन गिनियो।
सब अपराध छिमा करि शंकर किंकर की विनती सुनियौ।
तुम तौ जग के कल्प तरोवर मैं तौ प्रानी संसारी।
महिमा इष्ट महेश्वर जी की पढ़ि सुनि अस नित गावै।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि सुष संपति सो प्रानी इछया पावै ॥
श्री व्रज भूषन प्रसन भये जब कृपा करैं तब हर धावैं।
भक्त मन रंजन भव भंजन भव सुभकारी।

विषय—श्री महेश्वर जी की महिमा का वर्णन।

संख्या ८३. अष्टक, रचयिता—श्री कृष्णदास जी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१० X ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६८ वि०, प्राप्तिस्थान—गो० श्री हित रूप लाल जी, अधिकारी—श्री राधावल्लभ मन्दिर, वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री कृष्णदास जी कृत अष्टक ॥

॥ कवित्त ॥ भूतल विराजै पै राजै सब लोकनि पर,
फूल्योई रहत सदा सेव निगम बानी कौ।
छाई रही कंचन की अवनि प्रितिविंव किधौं
आरसी मैं देषत मुष सुंदर सुषदानी कौ ॥
विगसत है थलज जलज, अलिगन सुगंध अंध,
त्रिविध पवन गवन खन खानी कौ।
कोकिल कलनाद कीर कृष्णा के तीर देषि,
झलमलात वृन्दावन वृन्दावन रानी कौ ॥ १ ॥

अंत—नांहि मोहि साधनि अराधनि सुष तीन लोक,
नांहिं मोहि लीन रवन संपति रजधानी कौ।
नाहिन मोहि चाहन अवगाहन जस आनि आनि,
नाहि मोहि वानि दरस परस षान पानी कौ॥
कृष्णदास जोपै प्रभु सींवा तजि वाहर होई,
तऊ हौं न जांऊं यहै सांची मनमानी कौ।
रहौ कुंज द्वार दोऊ षेलत सुकुमार जहाँ
झलमलात वृन्दावन वृन्दावन रानी कौ॥ ८॥

इति श्री कृष्ण दास जी कृत अष्टक सम्पूर्ण॥ सं० १९६८॥
विषय—श्री राधा जी की भक्ति का वर्णन।

संख्या ८४ ए. विनय निवेदन, रचयिता—पं० केवलकृष्ण "कृष्ण कवि" (कुरावली मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—११ × ८३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८२ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० भवदेव जी शर्मा, स्थान व पोष्ट—कुरावली, मैनपुरी।

आदि—"ओऽम" ॥ विनय पत्र॥

श्रीयुत विज्ञप्ति विज्ञ परमोदार मान्यवर्य्य श्री महा प्राप्त मोहनलाल विष्णुलाल, पंड्या जी मंत्री श्रीमती परोपकारिणी सभा स्थान उदयपुर योग्य नमस्ते।

महाशय आपने श्री १०८ मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य भारतोद्धारक श्री १०८ श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्थापित वैदिक यंत्रालय प्रयाग के लिये एक वेद वत्सल धर्म भीरु महोत्साही परिश्रमी मेनेजर की आवश्यकता का ज्ञापन विदित किया है कि जो १ देवनागरी लिखना पढ़ना बहुत अच्छी तरह जानता। (२) हिसाब किताब में प्रवीण हो। यदि अंग्रेजी उर्दू और संस्कृत में से एक या दो या तीन जानता हो तो और भी अच्छा हो। (३) जिसकी कोई ऐसा आर्य समाजी सिफारिश करे जो कि स्वामी जी कृत नियमों और उपनियमों को मानता और तदनुसार आचरण करता हो। अभिलाषको (उमेदवारों) को चाहिये कि प्रशंसा पत्रों के सहित निवेदन पत्र (दर्खास्त) को ३० जून से पहिले २ मंत्री श्रीमती परोपकारिणी सभा के पास उदयपुर भेजें। योग्यतानुसार ३०) से ५०) रुपये तक मासिक मिलेगा॥ इति॥ महाशय विनय निवेदन यह है कि यह अकिंचन उक्त प्रशंसित विषयों में स्वीकार होने के लिये निम्नलिखित आशय यथा क्रम से उक्त पद की प्राप्ति के लिए अभिलाष वान होता है कि योग्यतानुसार मासिक पर वैदिक यंत्रालय प्रयाग का मैनेजर नियत कीजियेगा। इसकी विनय समस्त विज्ञापनानुसार यह अकिंचन भी आज्ञानुसार कार्य को परिपूर्ण कर सदैव सन्ध्योपासना के पश्चात् धन्यवाद पूर्वक आपके चतुवर्गैश्वर्य्य वृद्धि के लिये सदैव परमेश्वर से प्रार्थना करता रहेगा।

अंत—पत्र मेनेजर शमर्थ दान योग्य।
आगे आप निम्नलिखित पुस्तकें देना।

नाम पुस्तक	मूल्य	डाक महसूल
संध्या भाषा	।)	)॥
स्वामी नारायण मत खण्डन	=)	
	———	
	।=)॥	

ता० १० अगस्त सन् १८८२ ई०

उपर्युक्त पुस्तकें आगई एक सत्यनारायण से स्वामी नारायण मत खण्डन १ संध्या भाषा प्रताप नारायण इंस्पेक्टर डाक के मुंशी समर्थ दान योग्य

निम्नलिखित पुस्तकें भेजना

संध्या भाषा संस्कृत १	≡)
वेदान्ति ध्वांत निवारण १	=)
आर्यो दिश्य रत्नमाला १	—)॥
	——
	।=)॥

धर्मार्थ पुस्तकें	डाक महसूल
सत्यार्थ प्रकाश १	—)॥
ऋग्वेद भाष्य का नमूना अंक १	)॥
गौतम अहिल्या कथा	)॥
	——
	=)॥
	——
	॥)

॥) आठ आने का टिकट भेजा है दो टिकट —) सब ॥—)

ता० ४ । ९ । ८२ ई०

विषय—कृष्ण कवि के भेजे कुछ पत्रों का संग्रह ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ में केवल कृष्ण शर्मा उपनाम 'कृष्ण कवि' ने अपने भेजे हुए उन पत्रों की नकलें की हैं जो उन्होंने अपने कुछ मित्रों और नौकरी आदि के संबंध में लिखे हैं यथा—मोहन लाल विष्णुलाल पंड्या को (नौकरी के लिये), स्वा० दयानन्दजी और पं० भीमसेन जी शर्मा आदि को। इन पत्रों को पढ़ने से कवि के विषय में बहुत सी बातें विदित होती हैं जैसे, १—वह सुजरई, खिमसेपुर, मैनपुरी, कुरावली और रिजौर (एटा) के राजाओं से पंडिताई-पुरोहिताई का संबंध रखते थे । २—राजा लक्ष्मणसिंह (कुरावली) के पुरोहित थे। ३—संस्कृत और हिन्दी के कवि थे। ४—स्वामी जी कृत वेद भाष्य के ग्राहक संख्या ३५५ थे। ५—सुजरई तअल्लुके में मुख्तारआम रहे थे। कुरावली बाज़ार के राजमार्ग पर एक आर्यसमाज का भवन बनवाया जिसमें अलग से

आगन्तुकों के ठहरने का भी प्रबन्ध किया। ७—स्वामी जी कृत समस्त वैदिक पुस्तकें इनके पास थीं। ८—कुरावली में आपने ही आर्यसमाज की नींव डाली थी। ९—अबला शिक्षासार नामक ग्रंथ विविध छन्दों में रचा। १०—यह अंक गणित बीजगणित, रेखा गणित, माप विद्या आदि अनेक विषयों के ज्ञाता थे। ११—कुरावली आर्यसमाज के प्रधान भी रहे। १२—स्वामी दयानन्द जी तथा पं० भीमसेन से इनकी घनिष्ठता थी। १३—स्वामी जी के शरीर त्याग के पश्चात् उत्तरकाल में वैद्यक यंत्रालय प्रकाशित रखने या न रखने के संबन्ध में आर्यसमाज ने इनकी भी संमति ली। १४—इनके अनुज रामदयाल ने शमशाबाद (फर्रुखाबाद) में आर्यसमाज की और स्वामी जी के आज्ञानुसार गोरक्षा प्रबन्ध में २५०००० दो लक्षपचाससहस्र पुरुषों का हस्ताक्षर कराके भेजे थे और इस विषय में स्वामी जी ने प्रसन्न होकर दो पत्र भी दान किये थे। इससे प्रकट है कि इनका समस्त कुटुम्ब आर्यसमाजी था। १५—देहरादून के अधिवेशन के लिए उन्हें उम्मेदवार नियुक्त किया था। १६—मथुरा, दाऊजी, नागपुर एवं अनेक स्थानों पर इनके भ्रमण के भी उल्लेख पाये जाते हैं। यह सकीर (एटा) के आर्यसमाज की ओर से स्थापित कन्या पाठशाला और कुरावली के जैन कन्या पाठशाला के अध्यापक भी रहे थे।

संख्या ८४ बी. देवी अष्टक, रचयिता—केवल कृष्ण शर्मा 'कृष्णकवि', कुरावली (मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६८, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेवजी शर्मा, स्थान व पोष्ट—कुरावली (मैनपुरी)।

आदि— ... ... कल्याण कर है और सुरथ वैश्य को वर दीना है और त्रिलोक की रक्षा करी है ऐसी जो श्री देवीजी हैं तिनको ध्यान करनो चाहियै॥ इन्ह हो श्री देवीजी की परम भक्ति और कृपा से श्री चौधरी लक्ष्मण सिंह साहिब राज पदवी को प्राप्त भये हैं॥ १॥

सुजरै रजरै रमरैर्वृता कृत मिदं कृपया।
वरनि इग इष्टिता भवदीय मयीति सदैव॥
मीक्षित मिदं सुतदा भवतु तथा॥ २॥

अस्यार्थ—फिरि श्री देवीजी ने अपनी कृपा दृष्टि करि कैं सुजरै गांउ को अजर अमर में करके अर्थात् देवता गन्धर्व करकें आवृत करि दीन्हों है सो अब हमारी प्रार्थना श्री महादेवीजी से यह है कि हे महादेवीजी आपु ऐसी ही कृपा दृष्टि से इस सुजरै ग्राम राज्य स्थान को सदैव अवलोकन करती रहो तो यह और भी परम रमणीक स्थान हो जावै सो यह निश्चय है कि आपु की कृपा दृष्टि सदैव रहैगी काहे सो कि महाराज की इष्ट देवी आपु ही भक्त वत्सला हो॥ २॥ श्री देव्यै नमः॥

कायेन वाचा मनसा क्रिया दिना। श्री राज राजेन्द्र वहादुरं सदा।
संतोषितं तेन पदंहि दत्तं॥ भूपस्य वैं श्री लक्ष्मणसिंह कं च॥ ३॥

अस्यार्थ—श्रीयुत राजेन्द्र गवर्नर जनरल वहादुर को श्री चौधरी लक्ष्मण सिंह ने अपने शरीर वाणी मन से और अनेक प्रकार करिकैं कार सिरकार यथोचित करि कैं संतुष्ट यानी प्रतौर्दत्त पदं लक्ष्मण सिंह राज्ञे (दत्तं पदं तने सुतोषितंतरा) प्रसन्न विधि पूर्वक कीन्हें हैं सो वे श्री महाराज से खुश होकर श्री चौधरी साहिब राठौर वंश भूषण को राज सिंहासन देते भये और सब जगत में यह बात विदित करते भये ॥ ३ ॥

अंत—संप्रार्थ्यते खलुजनैःजंगदीश्वरो, हित्वं वै कुरुष्व नृपतिं परमायु षंच ॥

ता वच्च जीवित मिदं वर मे स्मदार्थं स्स्याद्दष्य राज्य ममलं शुभं नीति युक्तम् ॥ ७ ॥

और इसको आदि दै महाराज की प्रजा सब ईश्वर से यह प्रार्थना करे है कि ईश्वर इने श्री महाराज की बड़ी आयुर्वल करो और महाराज सदैव को अटल करो क्योंकि हम सब को जीवन मरण इस ही राज्य में हो वै तो ही सफल जन्म है काहे सैं कि यह राजनीति उत्तम करिकैं युक्त है ॥ ७ ॥

तस्यापि पती वर वंस जातीका सती सुशीला पति भक्ति तत्परा ॥
देवालये चैव जलाशये हि करोति दानं हरि भक्ति हेतवे ॥ ८ ॥

और श्री महाराज की पत्नी अर्थात् महारानी जू कैसी है कि श्रेष्ठ वंश गुसहरि में जन्म लेकर उस वंश को शोभित किया है और सती है पति आज्ञानुवर्तिनी है और शील स्वभाव सुन्दरता करिकैं युक्त है और पतिभक्ति में अति तत्पर है सो महारानी जू श्री देवतानु के मंदिर में और सुंदर रमणीक सरोवर में स्नान करके ब्राह्मणनि कौं द्रव्य देवे है इसलिये कि श्री नारायण की भक्ति की वृद्धि होवै और मनोरथ परिपूर्ण होवै ॥ ८ ॥

इति केवल कृष्णजी राय णितं । नृप नीति युतं भव भीति हरम् ।
नृप लक्ष्मण सिंह यशां सहितं युतं । पठवाष्टक मद्भुत कं श्रुणुवा ॥ ९ ॥

यह केवल कृष्ण की वाणी करिकैं कहा यह अद्भुत अष्टक राजनीति युक्त है और संसारिकी भय का हरने वाला है ॥ और श्री महाराज लक्ष्मण सिंह देवजू के यश पराक्रमादि करके युक्त है सो इस अष्टक को सज्जन पुरुषों को पढ़नो सुननो योग्य है ॥ ९ ॥

श्री देव्यै नमः ॥

सरलोचन खण्ड शशि प्रमितौ वरवत्सरे फाल्गुण मास सिते दसमी सुखींद्र युते दिवसे, नृप लक्ष्मण सिंह पदंह्य भवत् ॥१०॥

विषय—श्री राजा लक्ष्मण सिंहजी के राज्य सिंहासन प्राप्ति के समय कहे हुए देवीजी के अष्टक की व्याख्या ।

विशेष ज्ञातव्य—मूल ग्रंथ (श्लोक बद्ध) संस्कृत में है जिसकी स्वयं कवि ने हिंदी में गद्य-बद्ध व्याख्या की है । राजा लक्ष्मण सिंह राठौर वंशी श्री चौधरी स्वरूपसिंहजी के पुत्र थे और उन्होंने कुरावली के समीप सुजरै नामक स्थान में सर्व प्रथम नवीन राज्य की स्थापना की थी । जान पड़ता है इससे पूर्व यहाँ केवल जमींदारी मात्र थी और यहाँ के भूस्वामियों को 'चौधरी' का खिताब मिला हुआ था । सर्व प्रथम चौ० लक्ष्मण सिंह को

ही ब्रिटिश राज्य की ओर से राजा की पदवी प्रदान हुई थी। मैनपुरी के तत्कालीन कलक्टर मि० कालिवन ने आपको यह पदवी गवर्नर जनरल की स्वीकृति से गजट द्वारा प्रकाशित कराई थी।

संख्या ८४ सी. पनिहारिन वर्णन, रचयिता—कृष्णकवि (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—११३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—भवदत्त जी शर्म्मा, एकाउण्टेन्ट रियासत-सुजरई, पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी।

आदि—सुरति में पनिहारिन क्या वनी चली जल भरने को पानी ॥
कूप का पनिघट है भारी ॥ रात दिन रहता है जारी ॥
उहाँ इक आई सुघर नारी ॥ धरे सिर सोने की झारी ॥
ओढ़ि रही झूमा अरु सारी ॥ कुए पर आई सुघर नारी ॥
कुए दा पनिघट है भारी ॥ कु० ॥
एजी पानी का कर बहाना चली लड़ाने नैन ॥
काहू रसिया की नजरि लगी हो नहीं विरह दा वैन ॥
एजी हम पर पड़ि गई हो मौनी ॥ सुरति० ॥ १ ॥

अंत—एजी कैसा लफ चखना आगू ढ़कना औरु दखिन की सारी ॥
एजी कौन खांप का लहँगा लेदूं चूनरि झालरि वारी ॥
एजी गहना तुजकूं सवीटकादों गोटा धनस किनारी ॥
मति करै देर जानि जाति है आहु गले लगि जारी ॥ सु० ॥ १० ॥
एजी कैसा गले लग जाना इक वकना तू मुजको फुसलावै ॥
द्रव्यों की कुछ कमी नही है क्या लालच दिखलावै ॥
मैं बरजों तू मानि सासरे घर वारी तोरी बुलावै ॥ सु० ॥ ११ ॥
कमरि से फटा चीर बांधा कि ओढ़िलई झूना औरु सारी।
सजन सों काहीं चलो डेरे कि पाछे आवति हों तेरे ॥
एजी साजन के घर जाइ के सवी रंग लूटा।
सासुलि वाकी जौं उठि वोली घड़ा कहाँ फूटा ॥
वहू तू हमने पहिचानी ॥ सुरति० ॥ १२ ॥

विषय—पनिहारिन बनी हुई किसी नायिका की प्रेम कथा का वर्णन।

संख्या ८४ डी. उपदेशावली, रचयिता—केवलकृष्ण शर्म्मा (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेव जी शर्मा, स्थान व पोस्ट—कुरावली, मैनपुरी।

आदि—ओ ३ म् ॥ उपदेशावली ॥ विचार ॥

आप विचार करौ नर एही । किहि कारण पाइउ तुम देही ॥
पोरुष देषि चाह कौ देषौ । इनके योग्य भाव को पेषौ ॥
तव खुलि जैहै इच्छा जीकी । आज्ञा मिलि है नारंग फीकी ॥
जित वोलहु मति करन विचारो । जव तक वातहि कसि नहिं डारो ॥
पहिले जांचौ मिलिहै वाको । जो सिद्धी तुम पकड़ौ ताकौ ॥
घर से हानि होइ लज्या की कोसो । और पाछितावन भेटैं तोसों ॥
रंज वनावै घर निज कोरे महि । देहिं लगामन नर स्व जी महि ॥
वोलत वचन निडरता लीन्हे । ... ...
फँसे मूर्खता ताहि विचारे । विन सोचें जे वचन उचारे ॥
जैसे जल्दी भागो जात नर । जाकर कूदै खाई ऊपर ॥
गिरे अवश खंदक में आछें । विन देखो जो है वा पाछे ॥
अकस्मात् डूवत नर कैसे । विना विचार कार करि जैसे ॥

विना विचारे करहु जिनि, कोई अपनो काज ॥
तो नर मूरखता निकट, आवे नाहीं लाज ॥

॥ लज्या ॥

कोहै ए नर इसे जान तू । समझत निज को बुद्धि मान तू ॥
गप मारत है अपने आपहि । संपति को पैदा करो आपही ॥
यह तो षग बुद्धि जानो को यह । जो समुझत निज को अज्ञानह ॥
यदि समझो जो वाहि वचन को । मूरष न चीने दूजे जन को ॥
तजो घमंड को मूरख ताको । बुद्धिवान मैं हूं तजि याको ॥
ज्यों साधारण वस्तुहिं धारहिं । शोभित अधिक कांति वर नारिहिं ॥
त्यों शुभ चलन अधिक तरनीको । आभूषण है बुधिवानी को ॥
लज्जित तन की व्याख्या जैसी । साचहि चमकावति है जैसी ॥

अंत— कोमल साफ बदन है ताको । ढीले वस्तु बुलावत साको ॥
नैनन में चंचलता वाके । हिरदे में लालच है ताके ॥
करति इशार निज अंगुलिन से । मोहनि डारत है चितवन से ॥
मधुर मधुर अपनी बोली में । घूमि फिरति है निज टोली में ॥
अहा भागो इन धोखन से । जादू वचन सुनि कानन से ॥
कपटी नैन से जो मिलि है । मधुर वचन जो वांके सुनि है ॥
आलिंगन जो तोकों करि है । प्रेम जंजीरन तू वांधि है ॥
निश्चिय लज्जित तव हुइ है । रोगी अवश औ दीन कहइ है ॥
फिकिर वहुत चित में धरि है । और पाछिताव उमरि भरि करि है ॥
प्यार करै को वल हीना । काम वोलि मति वारो दीना ॥

आलस वदन को कामल करि है । हाँथ पैर तांकी तहँ रहि है ॥
पुष्टी तोर जायगी जर से । हाथ धोइगो निज उम्मर से ॥

॥ दोहा ॥

वा थोड़ी सी उम्र में, मान हानि बहु पाव ।
क्लेश अधिक तोकों मिलै, दया हीन हुइ जाव ॥
... ... (शेष लुप्त)

विषय—विचार, लज्जा, ईर्ष्या, दूरदर्शिता, धीरता और संतोष एवं संयम सम्बन्धी उपदेशों का वर्णन ।

संख्या ८४ ई. कृष्ण कवि का संग्रह, रचयिता—केवल कृष्ण शर्म्मा (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—११ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भवदेव जी शर्मा, स्थान व पो० – कुरावली (मैनपुरी) ।

आदि—सुन्दर सी मूरति की छवि छिति छाइ रही,
छपाकर छटाके छका छटत निहारे ते ।
कच घुंघरारे अतिकारे छुटकारे सीस,
मीन मृग हारे चारु नैंन रतनारे ते ।
मत्त गज हारे कवि सत्य गति मंद देखि,
मदन शत हारे शशि वदन निहारे ते ।
श्री गुपाल प्यारे हम हारे हेरि वाट तेरी,
पीत पटवारे क्यों न आवत गुहारे ते ॥ १ ॥
अरी मेरी वीर मैं तो निपट अधीर भई,
त्रिविध समीर तीर कैसी पीर आरतु है ।
सूर सुता नीर तीर विकल सरीर भई,
चीर की न धीर रही अहीर हतें डारतु है ।
छवि में न ऐसी मैं न एसी लखी मूरति है,
सत्य कवि वैन सुखदैन से न कारतु है ।
मोहन लतान के वितानन्नु में तान ताते,
कुसुम कमानु कैसे तानि वान मारतु है ॥ २ ॥
कोटि घन श्याम दाम कामना विराम लहै ।
सुखमा दुकूल रूप हरै रघुराज को ।
कमल पतोना जल भोंना मृग छोना लखि,
लोचन सलोना लजे खंज किमि काज को ।
मत्त गजराज लाल पात गौन देखत ही

मृदु मुसिकानि भुज भाल ते दराज को।
सत्य कवि जौन इह रूप हिय माहिं प्यारो,
सकल विगारो तन धारो कौन काज को ॥ ३ ॥

अंत—मूरति अलख ऐसी सूरति ना व लखहू में।
लखत लखात कहे अवला लाख वाज में।
जीन की सवारी जाकी खास महाराज प्यारी,
कदम को देखि कदम चूवें वाज ताज में।
कृष्ण कवि अनोखे खेल खेल में वनेन।
लेख देखही वनें जेते राजै गुण वाज में।
सुजरई के वाज राज वाजन में सिरताज,
वाज सी झपट दपट पटेवाज वाज में ॥
तोरे हेत छोड़े रास रंग तो विहारी लाल,
चलुत लाल वाल कहा धरी मौन है।
तेरो सम्मान करैगी निदान कान्ह,
मेरी कही मान मान त्यागि करु गौन है ॥
कृष्ण कवि प्यारे की दुलारी प्राण प्यारी तू,
तोसी ना रसीली छवीली छति भौन है।
नाहक गुमान ठानि वैठी यहाँ गुणवान,
गाहक गुलाव का गमारि गांउ कौन है ॥ १ ॥
कवि की रसिक वात कविता की सुनी नाहिं,
छन्द के प्रवन्ध मध्य वुद्धि होति मौन है।
भेदों भेद रस के श्रृंगार के न जाने कछु,
छवीली भटियारी के सुने कवित श्रौन है।
कृष्ण कवि ऐसिनु को सुनावै तू वीर रस,
जिनके भाव सुनि के तन काँपै ज्यों पौन है।
छोड़ो वानि यश के सुनाने की क्रूरन को,
गाहक गुलाब का गमरि गांउ कौन है ॥ २ ॥

॥ इति ॥

विषय—वीर रस के कुछ छंद, जानु और कटि वर्णन, धर्म, नीति, कर्मफल, होनी, नागनाथन, सामाजिक दृष्टिपात, रावण मन्दोदरी संवाद, घोड़े की प्रशंसा, ऋतु आदि वर्णन।

संख्या ८४ एफ. रचना—पदों का संग्रह, रचयिता—केवल कृष्ण 'कृष्ण कवि' (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—९$\frac{1}{3}$ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—मुं० सुघर सिंहजी, मुख्योपाध्याय, वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल, करहल, मैनपुरी।

आदि— ओ३म्

२२ भजन ॥

रागनी धनाश्री ताल तीन

कोनु धराये धीर है जगदीश्वरजी कौन धराये धीर ।
लाख चौरासी घूमत घूमत जीअरा भयो है अधीर ॥
हूँ अति कुटिल महा खल कामी अवगुण भरो शरीर ॥
तव यश गावत गावत उधरे तुलसी सूर कवीर ॥
इसी हेतु से नाम रटत है तुमरो दास अमीर ॥ १ ॥

२३ भजन ॥ रागनीषट–ताल ३

मोसम कौन कुटिल खल कामी ।
तुमसे कहा छिपे करुना निधि सवके अंतरयामी ॥
जातन दियो ताहि विसरायो ऐसे नमक हरामी ।
फिर फिर बिरोध विषय मेधावल जैसे सूकर ग्रामी ॥
मन सत् संग होत जिय आलस विषयन संग विश्रामी ।
पापी पतित अधम अपराधी सव पतितन में नामी ॥
सूर अधम करुणा कीजै सुनलो जगपति स्वामी ॥ २ ॥

अंत— आरती

जय देव जय देव जय त्रिभुवन कर्त्ता ।
सबके आश्रयदाता भय संकट हर्त्ता ॥ जय देव० ॥
जड़ चेतन सव जेते महिमा तव गावें ॥ जय देव० ।
राजा परजा सवही तुमको शिर नावें ॥ जय देव० ॥
अतुल तुम्हारी महिमा वरणी नहिं जाई ।
मंगल कीर्ति तुम्हारी गगन गगन छाई ॥ जय देव० ॥
तुम चेतन परमेश्वर तुम परिपूरण स्वामी ।
पुण्य पाप मम देखो प्रभु अंतर्यामी ॥ जय देव० ॥
अटल ज्ञान की चहुँ दिसि तुम जोति विस्तारी ।
निरख निरख हो चकृत जगके नरनारी ॥ जय देव० ॥
है अनन्त तव शक्ति वर्णन किमि कीजै ।
करो गर्व प्रभु चूरण निज आश्रय दीजै ॥ जय देव० ॥
भिक्षा यही हमारी है मंगल देवा ।
निशि दिन हो उत्साहित करें तेरी सेवा ॥ जय देव० ॥

विषय—इस पुस्तक में भक्ति सम्बन्धी तथा शान्त (निर्वेद) रस सम्बन्धी कुछ गीतों का संग्रह किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत संग्रह कुरावली निवासी पंडित प्रवर केवल कृष्ण शर्मा 'कृष्णकवि' द्वारा तैयार किया गया है। खेद है यह भी अपूर्ण है। इसमें सूर, तुलसी, अमीर और अमीचंद आदि के भक्ति विषयक गीतों का संग्रह है। अमीचंद के गीत अधिक हैं। उनमें भक्ति के अतिरिक्त सांप्रदायिकता की भी झलक मिलती है। यह बात संग्रहकर्त्ता की रुचि की परिचायक है। वे स्वयं आर्यसमाजी थे, अतः उन्होंने अमीचंद के उन्हीं भजनों को लिया है जो आर्यसमाज के अनुकूल पड़ते थे। गीतों के नामों और तालादि का यथा स्थान उल्लेख कर दिया है। अंत में आरतियाँ दी हुई हैं।

संख्या ८४ जी. संग्रह, रचयिता—पं० केवल कृष्ण जी (कुरावली, मैनपुरी), काग़ज—देशी, पत्र—६, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भवदेवजी शर्मा, स्थान व पोस्ट—कुरावली, मैनपुरी।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥

मंद मंद चलत गयंद गति जीतें लेति।
पाइन में नूपुर अनेक धुनि पूरि आं।
सोहै कटि किंकिनि पहुँची हाथ लालनके,
तारी देत वाजतीं जसोमति की चूरिआं॥
देखि देखि मेरो मन मोहतु है मेरी सखी,
अंग अंग लिपटीं सुहाई शुभ धूरिआं॥
राति द्योस लोचन अघात नहीं एरी भटू,
सुंदर कपोलनु पे लटकें लटूरिआं॥ १॥
सुन्दर वरन चित हरन चारु नूपुर,
रतन ज्योति देखत·········मटुरिआँ॥
नंदन जसोदा जू के अंगनु में खेलत है,
भैरव भ्रमत और नाचत नटूरिआँ॥
देखि देखि लोचन सिहात दुख मोचन को,
लोचन कहत मुख माखन चटूरिआँ।
अटके जु रदन खटके जु खंज के मटके,
महके कमल नैंन लटके लटूरिआँ॥ २॥

अंत—स्याम घन तन पर विज्जुले दसन पर,
माधुरी हँसन पर जोति जगी रहै।
खौरि वारे भाल पर लोचन विशाल पर,
उर वन माल पर खेलति खगी रहै।

जंघ जुग जान पर मंजु मुरवान पर
श्री पति सुजान वंत प्रेम सों पगी रहै ।
नूपुर नखन पर कुंज से मँगन पर,
आनँद घन मगन मेरी लगनि लगी रहै ॥ ५५ ॥
जमुन न्हाइवे को प्रात जब जाति प्यारी,
दुरत चकोर मोर भौंर भीर हालसी ।
कोक की कलासी विमला सी चपलासी चारु,
चंपक लतासी मैंनकासी मैंन बालसी ।
गोकुल गैल गोरी ग्वालिनि गुमान भरी,
गह गहे गात गति लोचन मराल सी ।
सौतिन को साल सी विसाल साल माल सी,
प्रवाल रवि वाल सी है उदित मसाल सी ॥५६॥
साँझइ वार सुने पिय आवत, सुंदरि जाइसिंगार वनायो ।
............(शेषलुप्त)

विषय—इस संग्रह में कवि ने विविध कवियों के कवित्तों और सवैयों का संग्रह किया है ।

विशेष ज्ञातव्य—यह संग्रह केवल कृष्ण शर्मा 'कृष्णकवि' द्वारा संपादित है । इसमें यद्यपि उनके नाम का उल्लेख नहीं हुआ है तथापि यह उन्हीं का है इसमें सन्देह नहीं । इसकी लिखावट उसी प्रकार की है जैसी कि उनके अन्य ग्रंथों की ।

संख्या ८४ एच. संग्रह, रचयिता—केवलकृष्ण शर्मा 'कृष्ण कवि', कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—१३$\frac{3}{4}$ × १०$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४७६, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदत्त जी शर्मा, एकाउण्टेन्ट, रियासत—सुजरई, पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि— ॥ ओ ३ म् ॥

तजि मोह चलन की करो फिकिर क्षण पलक में गाड़ी आती है ।
दूर देश से सीठी मीठी दे दे सजग कराती है ॥ १ ॥
अंजन की धुनि मुनि मन रंजन शक्ति निरंजन भाती है ।
तहां वाबू तार खवर गाड़ी की वहुत सु आती जाती है ॥ २ ॥
नाय शील स्टेशन मास्टर धर्म राज संघाती है ।
जिनके डर कोई निकट न आवै दूरि दुरत उत्पाती है ॥ ३ ॥
गार्ड निरंतर रक्षक तिहि पर परम चतुर सोई साथी है ।
काम क्रोध मद मोह लोभ ठग तिनकी कछु ना चलती है ॥ ४ ॥
लैंन निकट पर पुलिस विकट भट रक्षा विकट लखाती है ।

नाना रंग ध्वजा मारग में जल थल भूमि बनाती है ॥ ५ ॥
टिकट लैंन की बाजै घंटी फौरन लैले गाती है ।
धर्म दान दे दाम टिकट ले चढ़ो सपदि नहिं जाती है ॥ ६ ॥
यहां जाति नाम कुल गाँव ठाँव कुछ पूंछी नाही जाती है ।
गज रथ वाजि राज क्षण भंगुर कुल परिवार न साथी है ॥ ७ ॥
जप तप ध्यान धर्म की विल्टी कीन्ही तो संग जाती है ।
दया दान जगदीश ईशकी सेवा चरन सँघाती है ॥ ८ ॥
मनोभीष्ट धामन पहुँचाती पुनरपि आती जाती है ।
धर्म टिकट लखि निकट न आवै राजदूत बहु भाँती है ॥ ९ ॥
आँधी • शीत घाम पुनि वर्षा उपल प्रवल संपाती है ।
इन्द्र कृत विघ्नकदापि व्यापे घोर जोर से जाती है ॥ १० ॥
मैया गोद सदृश सुख सैय्या सब के मन सुलुभाती है ।
राति दिवस षट ऋतु अनुतार सुख विविध भाँति सरसाती है ॥ ११ ॥
मारग सुख थल नाना विधि के चित्र विचित्र दिखाती है ।
माघपक्ष के मारग तिन को घटिकनु में पहुँचाती है ॥ १२ ॥
ऊपर देय विमान सदृश श्रेणी स्वर्ग कहाती है ।
"केवल कृष्ण" ईश माया की जगतन ढंग लखाती है ॥ १३ ॥

अंत—भारत निजारत पानलाभ काम हानि आत मूलते,
नशात धन धाम हूँ नहीं रहै ।
पूरो पुरुषार्थ सो अधूरो दरशात जात,
रात दिन कीजै काज छीजै हूं नही रहै ।
कृष्ण कवि प्यारे कहा कीजै काहि दीजै दोष,
वद किस्मती से पार वह स्मती नहीं रहै ॥ १ ॥

पाय मधुपान मधुप पंकज के कोश विधि,
करत विचार चारु चित्त में प्रमाणिये ।
रातके व्यतीत भये होय गो प्रभात मीत,
भानु के प्रकाश से विकाश कंज मानिये ।
आवें सुख सानुकूल जावेंगे कुशूल शूल,
हाय आनि भंजे कुंज कुंजर नेत दानिये ।
कृष्ण कवि भूले हू न फूल फूल फूल न पर,
वद किस्मती की गति याही विधि जानिये ॥ २ ॥

सुख के समाज साज देखें दुख दूरि होत,
तिन्है दे दे कठिन कलेश देश देशनु भ्रमाति है ।
राजसी प्रवन्ध स्वच्छन्द आनन्द करे,

तिन्हैं कोटि हीन दीन भाव छिन में दरसाति है ।
कृष्ण कवि हारे सारे करके उपाय भारे,
प्यारे धीर वीरनु की नैंक ना वसाति है ।
विस्मृती करति जगदीश चरणारविन्द,
श्रीमती सी उन्नती वद किस्मती न साति है ।

विषय—श्रीकृष्ण कवि के कुछ कविताओं का संग्रह ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत संग्रह कृष्णकवि के हाथ के लिखे हुए अस्त-व्यस्तरूप में पड़े कुछ कागजों को एकत्रित करके लिखा गया है । इसमें काटाकूटी काफी की गई है । पहले एक शब्द जो लिखा था उसको काटकर उसके स्थान पर उससे अच्छा फबता हुआ शब्द लिखा गया है । इसमें कुछ धनीमानी राजा रईसों पर कहे हुए छंद हैं । कुछ छंद शांत रस के और कुछ शृंगार के भी हैं । इसमें उल्लिखित बहुत से राजा और रईसों का तो कुछ पता ही नहीं चलता कि वे कौन थे और कहाँ के थे । कुछ का पता स्पष्ट दे दिया है, यथा:—

'पारना के राउ विजयबहादुर सिंह' । 'पारना' आगरा जिला की वाह तहसील में अवस्थित जमुना तट पर एक ग्राम है आदि ।

संख्या ८४ आइ. संस्कृत के काल, रचयिता—केवल कृष्ण कवि, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० लालता प्रसादजी, स्थान—इटावा, मुहाल, छपैटी, जिला—इटावा ।

आदि— ॥ ओ३म् ॥

संस्कृत में १० काल होते हैं ।

सं०	नाम काल	लकार	अर्थ तथा उदाहरण
१	वर्तमान काल	लट्	जो हो रहा है और समाप्त नहीं हुआ है । उसे वर्तमान कहते हैं, यथा "राम गच्छति" राम जाता है । गच्छति वर्तमान काल की क्रिया हुई ।
२	अनद्यतन भूतकाल	लिट्	जो व्यतीत आधी रात से पहले बीता हो उसे अनद्यतन भूतकाल कहते हैं । 'शूद्र कोऽमुह्यत' अर्थात् शूद्र ने मोह किया । इसमें 'अमुह्यत' अद्यतन भूतकाल की क्रिया है ।
३	अनुज्ञा काल	लुट्	जो किसी को किसी कार्य करने आदि की आज्ञा दी जावै अथवा प्रार्थना की जावै तो अनुज्ञा काल होता है । यथा 'नराः गच्छन्तु' अर्थात् मनुष्य जावें । इसमें गच्छन्तु अनुज्ञा काल की क्रिया है ।

विषय—संस्कृत के दस कालों की व्याख्या सहित परिभाषा एवं उदाहरणों का वर्णन है ।

संख्या ८४ जे. संस्कृत व्याकरण, रचयिता—केवल कृष्ण शर्मा (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, आकार—९ × ५½ इंच, पत्र—२, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भवदत्त जी शर्मा, एकाउन्टेन्ट, रियासत सुजरई, पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि— ॥ ओऽम् ॥

॥ भूमिका ॥

१—जिन शब्दों इत्यादि के द्वारा किसी देश के मनुष्य अपने मन की बात को एक दूसरे पर प्रकाशित करते हैं, उसको उस देश की भाषा कहते हैं ।

२—पृथ्वी पर अनेक भाषा बोली जाती हैं । उनमें से एक संस्कृत भी है जो किसी समय इस आर्य्यावर्त देश में बोली जाती थी परन्तु जो अब केवल पुस्तकों इत्यादि में ही दिखाई पड़ती है ।

३—शुद्ध लिखना अथवा पढ़ना किसी भाषा का विना व्याकरण के नहीं आता इसीसे संस्कृत विद्या का विद्यार्थियों को सुगम रीति से बोध कराने को यह संस्कृत व्याकरण लिखा जाता है ।

अंत—२६—व्यंजन वर्णों में क् को आदि लेम पर्यन्त २५ वर्णों को स्पर्श करते हैं । य र ल और व अन्तस्थ और श ष स और ह उष्मा ॥

२७—स्पर्श संज्ञक वर्णों में ५ वर्णों का एक एक वर्ण होता है और प्रथम वर्ण से ज्ञात होता है यथा—क च ट त प यथा क ख ग घ और ङ का क वर्ग और च छ ज झ ञ का च वर्ग ।

२८—व्यंजन वर्णों के आगे कहे हुए ६ भेद भी जानने के योग्य हैं ।

... ... (शेष लुप्त)

विषय—इसमें संस्कृत व्याकरण का विस्तार से वर्णन है ।

संख्या ८४ के. पंचरत्न, रचयिता—केवल कृष्ण कवि (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१२½ × १० इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भवदेवजी शर्मा, स्थान व पोष्ट—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि—॥दोहा॥ काव्य मनोहर विशद यश कहत सुकवि मति दौर ।
वर्णत केवल कृष्ण तिमि, मन्दन में शिर मौर ॥ १ ॥

एहो भूप ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह,
कीरति कलित नित जगत जगी रहै ।
साम दाम दंड भेद न्याय नृप नीति रीति,
कार उपकार सिरकार उमँगी रहै ।

कृष्ण कवि वार वार आशिश देत बहु,
प्रकार कवित कवीश मति अमित जगी रहै।
प्रेम जगदीश नेम क्षेम ऋद्धि सिद्ध माहिं,
धैर्य्य धर्म काम मोक्ष करतल लगी रहै ॥ १ ॥
धीर वीर परम प्रतापी अरि तापी जग,
प्रवल प्रचंड भुज दंड दंड झारिकें।
भूमि नव खण्ड में अखण्ड है प्रताप ताप,
नृपति समाज में विराजै ताज धारिकें।
वड़े वड़े भूप रूप देखत कुरूप होत,
दोऊ कर जोरि सीश नाइतेज कारिके।
श्री पति नरेन्द्र भूप ईश्वरी प्रसाद सिंह,
कौतुक करत रण वीर उपचारि के ॥ २ ॥

अंत—॥ दोहा ॥ पंच रतन यह वीर रस, सूर वीर सुखकार।
भूषण दूषण सहित है, कविजन लेहु सम्हारि ॥ १ ॥

विषय—भूप ईश्वरी नारायण सिंह की वीरता से संबंधित पाँच कवित्तों का संग्रह।

संख्या ८४ एल. पंचरत्न (गुरुसाहब की प्रशंसा), रचयिता—केवल कृष्ण शर्मा, पत्र—२, आकार—१३¾ × १०¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदत्त जी शर्मा, एकाउण्टेंट, रियासत—सुजरई, पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी।

आदि— ओ ३ म्

तत्सद्ब्रह्मणे नमः ॥

काव्य मनोहर विशद यश, कहत सुकवि मति दौर।
वर्णत केवल कृष्ण तिथि, मन्दन में शिर मौर ॥ २ ॥
एहो श्री नरेन्द्र ग्रूस साहब बहादुर वीर,
कीरति कलित नित जगत जगी रहै।
साम दाम दंड भेद न्याय नृप नीति रीति,
कार सिर कार उपकार उमगी रहै।
कृष्ण कवि वार वार आशिष देत बहु प्रकार,
कवित कवीश मति अमित रंगी रहै।
प्रेम जगदीश नेम क्षेम ऋद्धि सिद्धि माहि,
धर्म अर्थ काम मोक्ष करत लगी रहै ॥ १ ॥

अंत—पंचरतन यह वीर रस, सूर वीर सुख कार।
भूषण दूषण सहित है, कवि जन लेहु सुधारि ॥ १ ॥

विषय—ब्रूस साहब की प्रशंसा सम्बन्धी पाँच कवित्तों का संग्रह ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना और इसके पूर्व की रचना में केवल नाम का ही अंतर है । कवित्त सब एक से ही हैं ।

संख्या ८४ एम. ब्रह्मोपासना, रचयिता—केवल कृष्ण (कुरावली मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—११ × ८¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२४, अपूर्ण, पद्य, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेव शर्मा, स्थान व पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि— ॥ ओ ३ म् ॥

॥ नमः परमात्मने ॥

॥ भूमिका ॥

प्रगट हो कि ब्रह्मोपासना विषय अर्थात् परब्रह्म प्राप्ति का साधन परम पावन संस्कृत देव वाणी में मुमुक्षु पुरुषों के लिये महर्षियों ने अनेक सद् ग्रन्थों में निरूपण किया है कि जिनके पठन पाठन तथा तदनुसार योगाभ्यास करने से विद्वान तथा उनके सत्संगी धर्मात्मा मनुष्यों को भी विज्ञान प्राप्त द्वारा सर्वोत्कृष्ट मोक्षानन्द प्राप्त होते हैं । परंतु कठिन कराल काल चक्र के परिवर्तन से तथा वेद विद्या विमुख निज मताग्रही अनेक विदेशीय राजाओं के राज्याधिकार का प्रवलानुसासन के प्रचार से इस देश में प्रायः संस्कृत विद्या के पठन पाठन का प्रकार तथा ब्रह्मज्ञान का विचार अत्यन्त न्यून हो गया तिसपर विज्ञान कांड तथा योगाभ्यास ने ऋद्धि सिद्धि प्रद साधन विशेष कर एवं लुप्त होकर दुर्लभ हो गये कि जिनके प्रभाव से यह आर्यावर्त देश समस्त भूगोलस्थ देशों में शिरोमणि गिना जाता था ऐसी दशा पर हुआ कि जिसका नाम निवासियों तक के सहित वदल गया अर्थात् आर्यावर्त का नाम हिन्दुस्तान तथा आर्यों का नाम हिन्दू हो गया । × × ×

सर्वनियंता सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर सब के हृदय में परम रुचि प्रगट करे कि जो वे इस ब्रह्मोपासना द्वारा चतुर्वर्ग फल प्राप्त करने में तत्पर होवैं ।

अंत—

नियम दूसरा पंच प्रकारा । शौच तथा संतोष सुधारा ॥
तपस्वाध्याय ईश्वर प्रणि धाना । ये उपासना अंग प्रधाना ॥
बाहर भीतर करहु सु शुद्धी । होउ पवित्र शौच प्रसिद्धी ॥
भीतर शुद्धी धर्मा चरणा । विद्या भ्यास सत्यगीः धरणा ॥
सत्संगादि श्रेष्ठ गुण धारण । भीतर शुद्धी के ये कारण ॥
बाहर शुद्धी वारि स्नाना । खान पान वस्त्रादि स्थाना ॥
इनसे शुद्धी बाहिर करिये । तदुपरि उपासना चित धरिये ॥
दूसर है संतोष विधाना । सदा धर्म मार्गा नुष्ठाना ॥

तन मन से अति करि पुरषारथ। रहो प्रसन्न पाय परमारथ ॥
आलस वस पुरुषार्थंही छोड़े। सो संतोषन है मुख मोड़े ॥
ब्रह्मचर्य सेवन से पावत। ये इन्द्रिय गण वस में लावत ॥
वालापन तरुणाई ताईं। ब्रह्मचर्य सेवन सुखदाई ॥
करै यथा वत दो फल लहही। तनु वल धी वल आनंद लहही ॥
अपरिग्रह को फल अत्र सुनिये। विषया सक्ति त्याग सुजनिये ॥
रहत जितेन्द्रिय ये सवकाला। तिनके मनहै शुद्ध मराला ॥
करै विचार वुद्धि मन वलसे। सिरता पाय वुद्धि निर्मलसे ॥
... ...

[इसके आगे का अंश लुप्त है]

विषय—इस रचना की भूमिका गद्य में है। इसमें संध्योपासना आदि पंच यज्ञ विधि, सृष्टिविद्या विषय, ब्रह्मोपासना और मुक्ति का वर्णन किया गया है।

संख्या ८४ एन. दमयन्ती नल की कथा, रचयिता—केवल कृष्ण "कृष्ण" (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेव शर्मा, स्थान व पोष्ट—कुरावली, जिला—मैनपुरी।

आदि— ॥ सोरठा ॥

सुनि सीता धरि ध्यान, दमयंती नल की कथा।
हुइ है वर विज्ञान, विपिन वास मिटि है विथा ॥

॥ चौपाई ॥

वीरसेनि नृप निषध सुदेशा। तासु सूनु वल वीर नरेशा ॥
अति सुन्दर गुण मंदिर चारू। राजनीति रत धर्म प्रचारू ॥
साम दाम अरु दंड विभेदा। पालहि प्रजा दूरि कर भेदा ॥
दस दिसि कीरति सुन्दर छाई। कवि कोविदन यथा मति गाई ॥
देश दिशि कीरति सुंदर छाई। कवि कोविदन यथा मति गाई ॥
देश विदर्भ भूपति रणधीरा। भीमसेनि जग विदित सुनीरा ॥
ताके ग्रह दमयंती कन्या। भुवन मोहिनी नहिं जग अन्या ॥
रूप माधुरी जग छवि छाई। सुनि गुण शील नृपनु मन भाई ॥
नल प्रति कहे जासु गुण ग्रामा। दमयंती से नल यश धामा ॥

दोहा

भये परस्पर प्रेम वस, सुनि गुण गण यश धाम।
निसि दिन सुमिरत जगत पति, निज हित कहि अभिराम ॥
भीम सेनि निज तनया देखी, भई वर योग्य सुभोग विशेषी ॥

बोलि सचिव सन मंत्र विचारा, करहु स्वयंवर नीति प्रकारा ॥
पठवहु दूत सकल दिशिमाहीं, आवहिं नृपति सकल इहिठाहीं ॥
नृप आज्ञा धारि सचिव तुरंता, पठये सहित विविध बलवंता ॥

अंत—

दोहा

कहैं परस्पर दुष्ट यह, नारि संग नित हांनि ।
जो मिलि है हमको अधम, अवसि हनैं निज पानि ॥
तिनकौ संग त्याग सुकुमारी । चली सुवाहु नगर दुख भारी ॥
राज भवन तट लखी कुमारी । नृप तिय कही दासि तू जारी ॥
वेगि लाउ यह सुन्दर वाला । मेरे मन भाई अति आला ॥
दासी जाइ कहै मृदु वैना । चलि रानी ढिग सुन्दर नैना ॥
गई राज मंदिर जहँ रानी । पूछी वात कहत सकुचानी ॥
देश कौन जहँ तोर निवासा । कौन हेत तुम कीन्ह प्रयासा ॥
विविधि गति वाम कही नहिं जाई । पति सुत आदि कुटम अधिकाई ॥
भयो वियोग सकल से माई । विरह सोक वस यह चलि आई ॥

दोहा

रहौं कछुक दिन निकट अब, जोकि करौ अनुराग ।
असन वसन भूषण क्रिया, करहु सदा वड़ भाग ॥
दासी कर्म निपुन में माता । करिहौं सकल एक सुनु बाता ॥
भोजन भाजन कबहूं झूंठे । नहिं छुइहौं चहिं होइ अनूठे ॥
सुनत वचन रानी मुसक्यानी । सुखसे रहो सदा सुख खानी ॥
नलकी गति सुनि भीम नरेसा । पठये दूत विपुल सव देसा ॥
नगर सुवाहु लखी दमयंती । नृप जाइ कही दुख मंती ॥
शिविका भेजि लीन्हि बुलवाई । करुणा करि जननी उरलाई ॥
दमयंती सुखसे पितु गेहा । रहै सदा पति विरह विदेहा ॥
भूषण वसन असन सुख सामा । पति हित त्यागि भजे हरि बामा ॥

दोहा

× × ×

विषय—नल और दमयंती की लोक प्रसिद्ध कथा का वर्णन ।

संख्या ८४ ओ. युवती धर्म, रचयिता—कृष्ण कवि (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—$८\frac{३}{४}$ × $५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भवदेव जी शर्मा, स्थान—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि—ओऽम ॥ युवती धर्म ॥

सुमिरि सच्चिदानंद पद, जो दायक फलचार ।
करहुँ यथा मति पढ़नहित, अवला शिक्षा सार ॥ १ ॥
जिहि पढ़ि कैं जग की सुता हुइहैं परम प्रवीण ।
मर्यादा कुल कर्म्म की लहिहैं, सकल कुलीन ॥ २ ॥
काव्य मनोहर विशद यश वर्णत कवि मति दौर ।
कहत सु केवल कृष्ण तिमि मंदन में शिरमौर ॥ ३ ॥
कथा मनोहर नीति मय, सुनहुँ सकल वर नारि ।
पारवती सादर कही, लक्ष्मी से हितकारि ॥ ४ ॥
परम प्रिया की सुरति करि, रमा उठी हर्षाय ।
तुरत ही गिरिजा भवन को चली प्रेम वर्षाय ॥ ५ ॥
एक समै लक्ष्मी महरानी । गिरिजै मिलने की उर ठानी ॥
सखिन सहित करि विविध श्रृंगारा, भूषण वसन अनेक प्रकारा ।
कछुक दास दासी संग लीन्हें । सिविका चढ़ि प्रयाण शुभ कीन्हे ॥
सपरि धाइ गिरि तट पर पहुँची । दूरिहि से गिरिजा ने परची ।
अति संभ्रम उठिकर कछु चलिके । ले आनी निज ग्रह कर गहिके ॥

अंत—नारिनु के तनु रोससे, पुत्र प्रसूरे किन होय ॥
वंध्या मृत वत्सा रहै । काक सुवन्ध्या कोय ॥
प्रदर रोग बहु नारिन होई । पुष्प रहित युवती जग कोई ॥
गर्भ श्रावणी नारी होवे । पुत्र प्राप्ति हित धन बहु खोवै ॥
औषधि मूरि एक नहिं करही । पुत्र कामना हित भ्रम परही ॥
यदि सद्वैध औषधि पावै । रोग हरै सुत कौ सुख पावै ॥
सो तजि नारि करै प्रतिकूला । रोग बढ़ै फल मिलै न मूला ॥
स्याने भगत फकीर बुलावै । साधू खाखी बाबा आवै ॥
सुत हित करैं उपाय अनेका, सफल न होय करैं अविवेका ॥
नाना विधि के करे उठाने । कहे सुने देखे मनमाने ॥
मंत्र यंत्र टुटिका पुनि टोना । गंडा खाक तवीज दिठौंना ॥
पूजै भूत जखैया सेवै, मियाँ मदार पुत्र को देवै ॥
तीरथ व्रत उपवास घनेरे, छीन होय तनु वल वहुतेरे ॥
देवी देव अनेकन पूजे । कहै सुनै पति को नहि बूझे ॥
यह विधि जन्म गवावै नारी । सुख मिले न दुख कर हारी ॥
व्यर्थ उपाय करै वहु भारी । किस विधि होय परम उपकारी ॥
सब तजि ईश्वर को आराधो । औषधि रोग हरण को साधो ॥
अवसि पुत्र मिलि हैं दो चारी । सत्य भाव करिये नर नारी ॥

जो सर्वज्ञ कृपाल प्रभु, हरतु चराचर पीर ।
सिद्धि करै मन कामना, ध्यान धरो धरि धीर ॥

... ... (शेष लुप्त)

विषय—युवतियों के धर्म और आचरण योग्य व्यवहारों का वर्णन । कुविचारों, फरेब और व्यर्थ के पाखंडों से बचने का उपदेश । त्रियाओं के योग्य आभूषणों का वर्णन और रोगों के हरण करने तथा भूत पूजादि की विडंबना का वर्णन ।

संख्या ८४ पी. ईसाई धर्म वर्णनसार, रचयिता—केवल कृष्ण, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—८½ X ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेव जी शर्मा, स्थान व पोष्ट—कुरावली, जिला—मैनपुरी ।

आदि— ॥ ओ ३ म् ॥

ईशा धर्म वर्णनसार ॥

॥ दोहा ॥ सुमिरि सच्चिदानंद को, यथा बुद्धि व्यवहार ।
कहों सर्वहित जगत के, ईसा वर्णनसार ॥ १ ॥
ईसाई बाँधव भए, छुटे मातु पितु भ्रात ।
रहैं शोक व्याकुल सकल, निशि दिन बहु विलषात ॥ २ ॥
दुःख न कोई कठिन है, स्वजन वियोग समान ।
सो ईसाई धर्म गुरु, देत जात मन मान ॥ ३ ॥
दया न जिनके उर रही, महा कठोर मलीन ।
केसर हिन्द प्रताप की, भय न करत मति हीन ॥ ४ ॥
जिनकी अनुसासन प्रवल, रहो जगत में छाय ।
करै धर्म स्वच्छन्द सव, प्रभुता करी न जाय ॥ ५ ॥
ताहि भूलि निन्दा करैं, राम कृष्ण अवतार ।
सुनत सकल भय भीत हैं, गौर रंग असिधार ॥ ६ ॥
पुनि नाना विधि लोभ दै, स्ववस करे नर नारि ।
हित की कहि अनहित करे, छूटे सव परिवार ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

जाने नहिं कोउ भेद, यीशू को है किनि भये ।
नहिं पावो अव खेद, सुनों मसी के सकल गुण ॥ ८ ॥
मरियम जिसकी मातु, पिता गुप्त जाहर नहीं ।
पिता वही कहि जातु जननी जाहि वतावही ॥ ९ ॥

अंत—

जय जय जय जगदीश कृपाला। मोर पाप अति घोर कराला॥
क्षमव चूक प्रभु दीन दयाला। आरत हरण प्रणत तत काला॥
ईसाई गुण वर्णन दोषू। क्षमव क्षमा निधि करि परितोषू॥
तुम सर्वज्ञ सच्चिदानंदा। काटो घोर मोर अघ फंदा॥
यथा अपराध दंड को देकर। शुद्ध हृदय करिये करुणा कर॥
सर्व शक्ति युत पूरण कामा। मेरे हृदय वसो अभिरामा॥
अब न करौं इमि पातक भारी। त्राहि त्राहि मैं बहुत उचारी॥
दुर्लभ मनुज शरीर कृपाला। हरो मोर अघ दीन दयाला॥
एव मस्तु भई गगन सुवाणी। सुनि हिय हर्ष न जाइ बखानी॥

ऐसे प्रभु को छोड़िके, भ्रमत सु नाना पंथ।
ते पापी पामर पतित, कहत वेद सत ग्रंथ॥

इति

विषय—ईसामसीह की जन्म कथा, ईसाई धर्म की निस्सारता और ईसाई हो जाने पर दुःखों का वर्णन आर्यसमाजी मतानुसार किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना कुरावली (मैनपुरी) निवासी केवल कृष्ण शर्मा उपनाम 'कृष्ण कवि' की है। आप राजघरानों के गुरु और पुरोहित थे। प्रारंभ में इन्होंने शिव, कृष्ण और अन्य देवी देवताओं के संबंध में अनेक छंदों की रचनाएँ कीं। परंतु पीछे जब स्वामी दयानंदजी मैनपुरी गए और वहाँ भाषण दिया तो इन पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा और वे आर्यसमाजी हो गए। प्रस्तुत रचना इन्होंने आर्यसमाजी हो जाने के पश्चात् लिखी है।

संख्या ८४ क्यू. ईश धर्म प्रकाश, रचयिता—केवल कृष्ण कवि (कुरावली, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—५$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२, रूप—पुराना, पूर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयाल जी शर्मा, शर्मन प्रेस, इटावा।

आदि—॥ यीशू धर्म प्रकाश ॥

एकान्तात यांतमाय शिशुता कान्ताज्ञया यौवनं।
हन्त प्रान्तव वयोपि शान्त विधिना नान्तम्मनाङ्नीयते॥
आदे हान्त मयोप्यम्ब दान्त कमला कान्तन्नितान्तन्तम्भज-
क्रोधाक्रान्त कृतान्त सांत्वन विधेर्नस्वान्त यत्नान्तरम्॥ १॥

॥ दोहा ॥ सुमिरि सच्चिदानन्द को, यथा बुद्धि अवकाश।
कहो सर्वहित जगत् के, यीशू धर्म्म प्रकाश॥ १॥

× × ×

पुनि नाना विधि लोभ दे, स्ववस करे नरनारि।
हित की कहि अनहित करे, छूटे सव परिवार ॥ ७ ॥

अंत—संख्या ८४ पी के अन्तवाले अंश के आगे इतना और है—

नर तन है यह मुक्ति नसैनी। पाइ चढ़ौ क्षण भंग नसैनी ॥
ईश्वर चिंतन चित चिन्तामणि। अपार कांच सव तजत शिरोमणि ॥
अहो भाग्य जे नर तन पाई। पढ़ै वेद सव, भेद विहाई ॥
दुर्लभ सुलभ होत है तिनको। परम प्रवल पुरुषारथ जिनको ॥
उदर भरण की विद्या वहु है। इन्द्री गणके पोषक चहुँ हैं ॥
मंत्र जंत्र तंत्रादिक सवरे। है परतंत्र स्वतंत्र झिगरे ॥
ज्योतिष विद गणना गृह देखे। अँगना वालक खेलत देखे ॥
कविवर कविता छन्द प्रवन्धा। उदर भरण के सव जग धंधा ॥
लेखक लिपि है पर सन्तोषी। परमारथ की लिपि नहि कोषी ॥
पत्रा पत्र तत्र वहु देखे। भरणी भद्रा वहुपति लेखे ॥
स्वारथ अन्धे बहु विधि नाचै। धन देकर परचो को जाचै ॥

× × × (शेष लुप्त)

विषय—ईसाई धर्म के अवगुणों का वर्णन और उसमें दीक्षित होनेवाले भारतीयों को चेतावनी दी गई है।

संख्या ८४ आर. नीति पचीसी, रचयिता—केवल कृष्ण शर्मा (कुरावली, मैनपुरी), पत्र—२, आकार—८ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भवदेवजी शर्मा, स्थान—कुरावली, जिला—मैनपुरी।

आदि— ॥ ओ३म् ॥

अथ नीति पचीसी लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

जगदीश्वर के सुमिरि गुण, वार वार शिर नाय।
नीति पचीसी यथा सुमति, वरणों गुणा समुदाय ॥ १ ॥
विद्यालय सु प्रवन्ध पति, भूमण्डल विख्यात।
तिनके गुणपुनि नीति कछु, सार रूप दरसात ॥ २ ॥
गुण सागर के गुणन को, कोकहि पावत पार।
केवल कृष्ण सुमन्द मति, कहै यथा कवि व्यवहार ॥ ३ ॥
यश प्रताप आतंक पुनि, न्याय नीति व्यवहार।
साम दाम कहि दण्ड पुनि, भेदादिक सुविचार ॥ ४ ॥

इत्यादिक गुण अधिपके, शासन प्रजानुकूल ।
ते गुण कवि वर्णन करत, यथा योग्य सुख मूल ॥ ५ ॥
जस जस दीनन पर ढुरत, तस तस यश विस्तार ।
पुष्पक गिरा कवीश चढ़ि, पहुँचे जल थल पार ॥ ६ ॥
वर स्वकीय कृत कार्य्य से, विमुख रहें ये लोग ।
ते प्रताप शासन भये, वहु विधि कार्य्य सुयोग ॥ ७ ॥
नाना भाव विचार से, वहु विधि शिक्षित कीन ।
अपर भये आतंक लखि, कार्य स्वकीय प्रवीण ॥ ८ ॥
पर स्वकीय को पक्ष तजि, होत सदा सत न्याय ।
जिमि मराल जल क्षीर मय, नीर क्षीर विलगाय ॥ ९ ॥
परहरि के कपटी कुटिल, नियत किये सु प्रवीग ।
नृपति नीति भय भीत हुइ, भये अपर लव लीन ॥१०॥
विद्या शक्ति स्वकार्य रत, तिन्हें दिये परितोष ।
यह व्यवहार विचार करि, करे काम करि तोष ॥११॥
शब्द मनोहर मधुर ध्वनि, साम अंश दरसाय ।
सुनिकर सज्जन कार्य रत, भये परम हरषाय ॥१२॥

अंत—इस प्रकार की नीति पर, कछुक काल चलि जाय ।
सपदि होयंगे सर्व के, सकल मनोरथ आय ॥१९॥
देश काल के भेद से, नीति ईति सरसाय ।
शीत काल के मेघ जल, उपल भीति दरसाय ॥२०॥
यदपि कठिन समुझत कठिन, कठिन नीति कहि जात ।
उद्योगी के सामुने, नहिं कछु कठिन दिखात ॥२१॥
विद्या वोई तामसन, मेवरदल परिपाल ।
करी हृटने लहलही, सींची दीन दयाल ॥२२॥
पंडित दीन दयालजी, दीन दया श्रुति सार ।
तव नामाङ्कित क्यों न हो, तदनुकूल व्यवहार ॥२३॥
धर्म अर्थ कामादि सुख, जीवन मुक्ति रसाल ।
देवे दीन दयाल को, जो जग दीन दयाल ॥२४॥
नहिं विद्या नहिं चतुरता, काव्य प्रवन्ध न एक ।
भूल चूक करिये क्षमा, कवि जन सहित विवेक ॥२५॥

॥ इति श्री नीति पचीसी ॥

॥ समाप्तम् ॥

॥ शुभम् ॥

विषय—नीति संबन्धी २५ दोहों का संग्रह ।

संख्या ८५. योगोभ्यास मुद्रा, रचयिता—कुमुटीपाव, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१० X ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य-गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री मोतीराम जी, ग्राम—पलेसां, पो०—गोवर्द्धन, मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः।

उर्द्ध मुखं च द्वादस दल पुंडा उर्द्धकं षोडस दल कमलं उर्द्ध मुषं च द्वादस सदषि लयप्ते उर्द्ध द्वेदल उर्द्ध मेव च सहस्र दल कमलं प्राप्तं चौंसटि दल तत्र उर्द्धकं सत्यं सत्यं च पार्वती ॥ तस्य कमलं च विकस्मिते अठोतरंत दल कमलं भवर गुंजारं उच्यते, असंषि दल कमलं प्राप्ते योगी पर्म सून्यं च रम्यते। पार्वह्म भेवलीनं सो योगी योग लक्षनं श्रुणु देवी पार्वती इस्वर कथितं महाज्ञानं इति महादेवे पारवती संवादे वैराट पुराणे योग शास्त्रे योगाभ्यास चतुर्थो पटल ॥ ४ ॥

अथ षट चक्र के नाम प्रवक्षामी

प्रथमे आधार चक्रं स्वाधिष्ठान चक्र द्वेतियकं त्रितियं च मनि पूर चक्रं अनहद चक्रं ब्रह्मरंध्रं सप्तमं चक्रं भवे जापं सत्यं सत्यं च पार्वती अर्थ सर्व चक्र भेर प्रमाण प्रथमे आधार चक्र गुदां स्थानेवसें चतुर्दल कमल पद्म रक्त वर्ण प्रभा कमल मधे श्री गनेस देवता विद्या गुणं सिद्धि वुधि सक्ति चत्वारि प्रखर (? अषर=अक्षर) वं सं षं सं अजपा संख्या षट सत स्वासा ६०० प्रवर्तते इति आधार चक्र जाप, प्रमान वोलीये आधार चक्र पर स्वाधिष्ठान चक्रं लिंग स्थाने वसें।

मध्य—प्रभा कमल मध्ये श्री अलेष देवता अलेस्वरि सक्ति योगेंद्रो गुफा स्थाने अजपा जपंती महामुनि इति ब्रह्मचक्र जाप प्रमान बोलीये ब्रह्मचक्र ऊपर गुह्य चक्र सीस मंडल स्थाने वसें इकईस ब्रह्मांड वोलीयें असंष्या दल कमलं अनंतं सूर्यं पति का सं प्रभा कमल मध्ये श्री अचंत्यनाथ देवता अव्य सक्त सक्ति पर्म सुंन्य मर्गे इति गुह्य चक्र जाप प्रमान बोलीये इकईस ब्रह्मांडते परम सुन्य स्थान वसे परम सून्य स्थान उपर जे न विनसे न आवै न जाई योंग योगेंद्र हे समाई सुनो देवी पार्वती इस्वर कथितं महाज्ञानं।

अंत—इति कुमुटीपाव विरंचते सत् गुरु प्रसादं प्रोक्तं इति श्री महादेव पार्वती संवादे वैराट पुराणे योगसास्त्रे पटते हरयायं श्रुत्वा मोक्षदायकं योगारंभ भवे सिद्धि आवागमन निवर्तते अवसठि तीर्थ भवे पुन्यं गंगा स्नान दिने दिने इति श्री महादेव पार्वती संवादे वैराट पुराणे योग सास्त्रे योगोभ्यास मुद्रा षष्टमो पटल समाप्त संवत् १८९७।

विषय—हठयोग विषयांतर्गत षट्चक्र और पंच मुद्राओं का वर्णन है तथा चौरासी आसनों के नाम भी गिनाए गए हैं।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ का रचयिता कुमुटीपाव है जिसने विराट पुराणांन्तर्गत योगोभ्यास मुद्रा का हिन्दी में अनुवाद करने का प्रयास किया है। अनुवाद की भाषा विशुद्ध

हिन्दी न होकर संस्कृत-हिन्दी का मिश्रण है, किन्तु हिन्दी के जो शब्द आए हैं वे प्राचीन खड़ी बोली के रूप लिये हुए हैं। इस दृष्टि से यह ग्रंथ उपयोगी है। हिन्दी के शब्द और वाक्यावली रेखांकित हैं।

नाम के अतिरिक्त रचयिता का और विशेष वृतांत विदित नहीं है। परन्तु यह योगमार्गी या गोरखपंथी विदित होता है। ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया हुआ है। लिपिकाल सं० १८९७ वि० है। ग्रंथ सभा के लिये उपलब्ध हो गया है।

संख्या ८६ ए. गंगा नाटक, रचयिता—कुसल (ज्यौंधरी), कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२६ वि० (१६९१ शालि० संवत्), प्राप्ति स्थान—पं० हरिवंशलालजी, ग्राम—पच्हेरा, पो० बाजना, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गंगायै नमः ॥ अथ श्री गंगा नाटक लिख्यते ॥

दोहा

हरि गुरु चरन सरोज दृढ़ मन मधुकर लिपटाय।
श्री गंगा नाटक कहूँ सुनत पुन्य अधिकाय ॥ १ ॥
शंकर गवरि गणेश गुरु तिनके चरन मनाय।
वरनू गंगा विसद जस हो सारदा सहाय ॥ २ ॥

× × ×

इक्ष्या दास सुवैष्णव कही कुशल सुष देहु।
श्री गंगा नाटक सुधा वरषि विमल जस लेहु ॥ ६ ॥
गंगा नाटक करण कूं वढ़्यो कुशल उत्साह।
दत्त दयानिधि कृपा ते सहज ही होय विवाह ॥ १० ॥

अंत—अष्टा दस शत अरु छवीसा। संवतसर विक्रम अवनीसा ॥ ४ ॥
एक अंक षट भूमि समीते। शाके शालि वाहना बीते ॥
फागुन सुदि त्रोदसि भृगुवारा। तादिन पूरण भयो प्रकारा ॥ ५ ॥
नगर ज्यौंधरी उत्तम थाना। सकल लोग तहँ चतुर सुजाना ॥
जदुकुल अजवसिंह सुत जान्यौं। ठाकुर अनरुधसिंह अमानौ ॥ ६ ॥
हरि की भक्ति विप्र पद प्रीती। धरै नहीं पग भूलि अनीती ॥
जासु बचन पाहन की रेषा। वन्धु प्रजापति पाल विशेषा ॥ ७ ॥
धर्म शील युत तीनों भाई। करै ज्योंधरी की ठकुराई ॥
सिंह दलेलु बंधु वड राजै। पुरिषं तनु ता सीस विराजै ॥ ८ ॥

लघु भ्राता अति शुद्ध सरीरा। दयाराम गुण ग्राम गंभीरा ॥
अति प्रवीन सव जनु सुखकारी। सकल काज को सो अधिकारी ॥ ९ ॥
वहु विधि विप्र ... ... (अपूर्ण)

विषय—गंगा की कथा का वर्णन। पुस्तक में निम्नलिखित अध्याय हैं :—

प्रथमो अध्याय—		रातनीति वर्णन,	पत्र १ से ५ तक।
द्वि०	,,	धर्म संवोधन,	पत्र ५ से ११ तक।
तृ०	,,	वलि छल वर्णन,	पत्र ११ से १७ तक।
च०	,,	सगर सुत वर्णन,	पत्र १७ से २२ तक।
पं०	,,	नृप अंशुमान वैराग्य वर्णन,	पत्र २२ से २९ तक।
ष०	,,	शिवस्तुति, नृप वरदान वर्णन,	पत्र २६ ते ३३ तक।
स०	,,	कृत युगादि धर्म वर्णन,	पत्र ३३ से ३९ तक।
अ०	,,	भगीरथ कुटुंब उद्धार वर्णन,	पत्र ३९ से ४८ तक।
न०	,,	धनुष भंग वर्णन,	पत्र ४८ से ६१ तक।
द०	,,	रामचंद्र परशुराम संवाद,	पत्र ६१ से ७० तक।
एका०	,,	राम,लक्ष्मण,भरत,शत्रुघ्नविवाहवर्णन,	पत्र ७० से ८२ तक।
द्वा०	,,	रामचंद्र अवध आगमन, कवि परिचय तथा आश्रयदाता का वर्णन,	पत्र ८२ से ८८ तक।

रचनाकाल

अष्टादस शत अरु छवीसा। संवतसर विक्रम अवनीसा ॥
एक अंक षट भूमि समीते। शाके शालि वाहना वीते ॥
फागुनि सुदि त्रोदसि भृगुवारा। तादिन पूरण भयो प्रकारा ॥

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम कुशल है। इनके गुरु का नाम इच्छयादास था। ये ज्यौंधरी के रहने वाले थे और इनके आश्रयदाता उसी गाँव के यदुकुल वंशी कोई ठा० अनुरुद्ध सिंह थे। रचनाकाल सं० १८२६ है। लिपिकाल नहीं दिया है। इस ग्रंथ में नाटक का कोई लक्षण नहीं है। काव्य की दृष्टि से भी उत्तम नहीं।

संख्या ८६ बी, गंगा नाटक, रचयिता—कुशल कवि, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—६$\frac{1}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सोहनपाल जी, न० अनियाँ, ठि०—पं० लक्ष्मीनारायण जी पटवारी, स्थान—धनुआँ, पो०—वलरई, जिला—इटावा।

आदि—श्री गनैस जी नमः ॥ अथ गंगा नाटक लिष्यते ॥ दोहा ॥
हरि गुरु चरन सरोज दिढ़, मनु मधुकर लपटाय।
श्री गंगा नाटक कहूँ, सुनत पुन्य अधिकाय ॥ १ ॥

—शेष संख्या ८६ ए. के समान।

संख्या ८६ सी. गंगा नाटक, रचयिता—कुशल कवि, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रतनलाल जी शर्मा, स्थान व डाकघर—अछलदा, जिला—इटावा।

आदि-अंत ८६ बी. के समान।

संख्या ८७. भजन, रचयिता—लछिमनदास उदासी, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रभुदयाल जी शर्मा, संपादक—सनाढ्य जीवन, इटावा।

आदि—॥ राग विलावल ॥

जै जै जै गुरुवर निरंकारी।
मंगल करन अमंगल नासन पाप समूह दै टारी ॥ १ ॥
ऋद्धि सिद्धि नव निद्धि के दाता कालू अजिर विहारी ॥ २ ॥
करुणा सिन्धु सील के सागर जन की कर रखवारी ॥ ३ ॥
लछिमन शरण परो जग कर्त्ता राखिये लाज हमारी ॥ ४ ॥

॥ राग भैरवी ॥ २ ॥

तर्ज—वहुतेरो समझायोरी लखनवाँ।

गुरुवर तन धरि अयोरी जग हित कार।
पाप मिटावन पुण्य बढ़ावन जनका दुःख मिटायोरी ॥ १ ॥
वार वार वलिहारी चरण की अद्भुत खेल रचायोरी ॥ २ ॥
नाम जपो अघनाश कियो सब निर्मल चित्त करायोरी ॥ ३ ॥
लछिमन ऐसो समझ गुरुवर दृढ कर प्रेम लगायोरी ॥ ४ ॥

॥ राग भैरवी ॥ ३ ॥

ध्यान गुरु पद लगावो जीतकर विकार। काम क्रोध मद लोभ हटाकर—
—भक्ति चित्त वसायो ॥ १ ॥
ओंकार का जाप जपायो द्विविधा सकल मिटायो जी ॥ २ ॥
भटकत फिरत करत वहु तीरथ ज्ञानचित्त वसायो जी ॥ ३ ॥
लछिमन कहत भजो गुरु नानक जिन जग पंथ चलायो जी ॥४॥

॥ कौवाली ॥ ९७ ॥

अंत—गुरु नानक को भूले हो जमाना खाक सारी है।
रहा न कोई इस जग में जिन्हों का नाम जारी है ॥ १ ॥
न गुरुवर नाम को त्यागो अगर रंजो अलम होवे।
भजन कर तू सदा गुरु का कि दुनियाँ जिस रचारी है ॥ २ ॥

नाम ओंकार को रोशन पड़ा वानी के अन्दर जो।
करी जग में जिन्हों भग्ती नाम उनका जारी है ॥ ३ ॥
निहारो जो दया करके गुरु नानक निरंकारी।
मिटा दो दुःख जहां के सब शरण लछिमन तुम्हारी ॥ ४ ॥

॥ कवित्त ॥ ९८ ॥

श्री गुरु नानक शरण सुख देव हार,
विष्णु समान उर धीरता अपार है ॥ १ ॥
सुर गुरु के समान विद्या में महान,
ऋषियों के समान बहु तप में उदार है ॥ २ ॥
करुणा धाम जन पूरण करत काम,
सुन्दर सरूप निज जन के उबार है ॥ ३ ॥
मम शिर ईस सोई दीनी है अशीश,
उनकी कृपा से हम करत उचार है ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु नानक सुयश ये, जे नर करि हैं गान।
मन वांछित फल पावहीं, लहैं मुक्ति स्थान ॥
श्री गुरु नानक शरण मम, जो थे विष्णु सरूप।
उनकी कृपा कटाक्ष ते, भाषों ग्रन्थ अनूप ॥

॥ इति ॥

॥ लछिमन दास उदासी कृत भजन समाप्तं ॥

विषय—श्री लछिमन दास उदासी द्वारा गुरु नानक के संबंध में रचे गए सौ पदों का संग्रह है।

संख्या ८८. गुटका के पद्मावत की टीका, रचयिता—चतुर्वेदी लक्ष्मीदास (करहल, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२४, रूप—प्राचीन, पूर्ण, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३३ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० भवदत्त जी शर्मा, एकाउण्टेण्ट, रियासत सुजरई, पो०—कुरावली, जिला—मैनपुरी।

आदि—श्रीयुत विज्ञाति विज्ञ राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द (३) की आज्ञानुसार और जनाव मौलवी जमीलुद्दीन साहिब डिप्टी इंस्पेक्टर तथा पं० गोपीनाथ सब डिपुटी इंस्पेक्टर और अपने अध्यापक श्री सुन्दरलाल मुदर्रिस की प्रसन्नतार्थ चतुर्वेदी लक्ष्मीदास करहल निवासी कृत गुटका के पद्मावत की टीका लिख्यते।

इस पुस्तक को शेख मलिक मुहम्मद जायसी ने शेरशाह सूर के समय में अर्थात् सन् ९४७ हिजरी जिसके सन् १५४१ होते हैं बहुत मनोहर और मीठी भाषा बोली में

पद्मावती का हाल जो चित्तौड़ जिसे मेवाड़ और उदयपुर कहते हैं, के राजा रतन सैनि की रानी थी उसका हाल बयान किया है। पर यहाँ उस पुस्तक का वह खंड है कि जब यह राजा हीरामन नाम एक तोते के मुँह से पद्मावती की खूबसूरती की प्रशंसा सुन जोगी होकर सिंहल द्वीप को चला गया था। तब उसकी पहली रानी नागमती राजा के वियोग में विलापी थी।

नागमती चित्तौर पंथ हेरा। पिउ जोग ये फिर कीन्ह न फेरा॥

नागमती ने चित्तौर में बहुत राह देखी कि सौहर यानी पिया जब से जोगी होके निकला फिर न आया।

नागर नारि काहू बस परा। तेइं विमोह मोसों चित हरा॥

किसी चतुर स्त्री के वस में पड़ा है और उस पर मोहित होकर मुझ से उसका दिल फिर गया है।

अंत—

साजन–सज्जन–प्रिय–प्यारा।
सेत–श्वेत–उजला–धौला–सफेद।
संदेसरा–संदेस–समाचार–वृत्तांत।
संवरही–याद करना।
सिंगार–शृंङ्गार–शोभा–प्रथम रस।
सिंदूर–इंगुर, लाल चूर्ण विशेष।
सांठनाठं–पूंजी–सरमाये–संपत्ति–दौलत।
सांसा–स्वास–सांस–प्राण।
हरि पर प्यारे–हरियल–कपोत–नवीन।
हस्त–हाँथ–कर–नक्षत्र–दस्त।
हहल–कंप–काँपना–हलना।
हिया–दिल–मन–हृदय।
हिवंचल–हिमालय।
हेवंत–जड़काला, अगहन फूस का महीना।
हाँसा–हाँस्य–हाँसी–कौतुक।

इति

॥ सम्वत् १९३३ विक्रमी ॥

॥ सन् १८७६ ई० ॥

विषय—राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' के गुटके में दिए गए जायसी कृत पद्मावत की टीका और पर्यायी शब्दों का वर्णन।

संख्या ८९. हिताष्टक, रचयिता—हित ललित 'दीन', कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० हृदयरामजी, ग्राम-अगरवाला, पो०—छाता, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री राधा बल्लभो जयति ।। अथ हिताष्टक लिष्यते ।।

।। कवित्त ।।—श्री हित जू उदार दीन जाचत है वार वार,
तुमारे पद रति होय ऐसो याहि कीजिये ।।
चाहत कमल पद छूजिये दयाल आजु,
जाचत है दीन याहि करुणा करि दीजिये ।।
तुम हौ कृपानिधान यह है कंगाल दीन,
जानत है हिय गति कहां लौ कहीजिये ।।
हित जु तिहारौ यह निपट करि दीन चेरो,
सुधि न विसारो याहि अपनो करि लीजिये ।। १ ।।
तुम्हरो मन ध्यान होइ कोउ कृपा करौ ऐसी,
तुमरो गुन ग्राम नाम श्रवन सुनीजिये ।।
तुम्हरो नव रूप दरस परस तुव चरननि कौ,
तुमरी निज टहल सेवा हाथनि करीजिये ।।
तुम्हरौ उछिष्ट पाई जाई भय सकल याके
होइ निर्भय अजु ऐसी कृपा कीजिये ।।
हित जु तिहारौ यह निपट करि दीन चेरो,
सुधिन विसारौ याहि अपनौ करि लीजिये ।। २ ।।
लीजिये निकारी याही दीन भवधार परयौ,
नाथ निज पद नौका सोई याहि दीजिये ।।
तुम्हरे कंज चरननि सरन लई है आइ ह्वै हैं,
को सहाइ आजु विचारि तुम्ही लीजिये ।।
और नहिं चाह कछू दीजै अनुग्रह करि,
तुव मुष माधुरी कौं देषि देषि जीजिये ।।
हित जू तिहारौ यह निपट करि दीन चेरौ,
सुधि न विसारौ याहि आपनौ करि लीजिये ।। ३ ।।

अंत—तुम्हारौ उदार रूप कहाँ लौं वषाने जस,
याकी अति मंद मति कैसे कै कहीजिये ।
हित जू यह भलौ बुरौ तुमरौ कहायौ,
आहि लाज सब भाँति तुमें मन करि गहीजिये ।

अपनौहि पात्र जानि अज्ञा 'हित ललित'
कीजै 'हित कीरति' के सुत कौ अभय पद दीजिये ।
हित जू तिहारौ यह निपट करि दीन चेरौ,
सुधि न विसारौ याहि अपनौ करि लीजिये ॥ ८ ॥

दोहा

चतुरक्षर हरिवंश के पद प्रारथना कीन ।
अष्टक करि वरनों यह अर्पों करिके "दीन" ॥ ९ ॥

विषय—आठ कवित्त और एक दोहे में हित हरिवंश जी की वन्दना की गई है ।

संख्या ९०. लोचन प्रकाश, रचयिता—लोचनसिंह कायस्थ (राजमहल), कागज—देशी, आकार—११$\frac{1}{2}$ × ८$\frac{1}{2}$ इंच, पत्र—३८, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० तुलाराम श्रीचन्दजी चतुर्वेदी, स्थान—घाटी बाहल राय, मथुरा ।

आदि—......मन ही कोऊ पावै । वतिस महिना में यह जा .. ..

× × ×

कतिग अगहन पूस गिनौ जू । माघ मास फागुन जु भनौ जू ॥ ३० ॥
इनमें नहिं होवै मलमासा । समझि लेहु पंडित सुषरासा ॥
भान मकर पै आमै जबही । बढ़ैं दिवस जानौ तुम तबही ॥ ३१ ॥
॥ दोहा ॥ तीस चारि घटिका बढ़ै पल सोरह परमान ।
षट महीन दिन वढ़न के मिथुन अंस दस जान ॥ ३२ ॥
इन षट महीना जोतिसी उत्र आवै भान ।
चैत्र महीना छांडिके शुभ कारज कौ मान ॥ ३३ ॥

× × ×

अथ विचार आयुर्वल मनुष्य ॥ चौवोला ॥
कलियुग में जो प्रानी जन्मे तिनकी आयु वताऊं ।
सौ और वीस वरस दिन पाँचय स्वासा रीति जताऊं ॥
बीस एक हज्जार सु छः सै स्वासा निस दिन चालै ।
पूरन आयु होति या विधि सों फिर आवत है कालै ॥ १०४ ॥
स्वास त्रानवै कोटि लाष इक तीसा वीस हजार वताऊं ।
वीतैं सौ और बीस वरस में ग्यान सरोदा गाऊं ॥

× × ×

जो नर परम विवेक मय कमी चलावै स्वास ।
आयु वढै परमान तें आयु स्वास के आस ॥ १०९ ॥
जौ प्रमान तै कमी चलै तिती वढै नर आयु ।
जिती स्वास बढ़ती चलै तिती आयु घटि जायु ॥ ११० ॥

इति श्री लोचन प्रकास नाम कवि लोचन सिंह कायस्थ वंसोद्भव राजमल मध्ये विरचितायाँ ऽस्त्री कर्मादिक धर्म गर्भ धारन क्रपा तथा मूल विचार तथा वस्त्र भूषन नवीन धारन तथा सूर्य चन्द्र ग्रहन फलं तथा उतपात तुलादान विचार छायादान विचार षट रसदान विधि तथा हजामति वस्त्र धोमन सर्प दरसन अंग फरकन विचार दान विधि गुरु अस्त फल गुरवादित्य तथा पंचक विचार दीपघात पेढो दुर्गापाठ विचार तथा आयुर्वल विचार नाम पंचमो सर्ग ॥ ५ ॥

अंत—॥ अथ दिसा के स्वामी विचार ॥

कवित्त—पूरव सूरज अग्र भृगु सुनि स्वामी जु मंगल दछिन कै।
राहु नई रितु अकीय पछिम वाइव चंद्र विचछन कै ॥
उत्तर के बुध स्वामी सुजानि ईसान गुरु सुनि लछिन के।
यह भाँति दिसान के ईस कहे कवि लोचन सिधि दगछन के ॥

अथ चक्रम

× × × (अपूर्ण)

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ सात सर्गों में है। जिनमें शुभाशुभ शकुन विचार एवं फलित ज्योतिष का वर्णन है।

१—प्रथम सर्ग—मलमास तथा खंजन शुभाशुभ वर्णन, पत्र १—८ तक।
२—द्वितीय सर्ग-स्त्री और स्त्री जाति के पशुओं के संतान जनने के शुभाशुभ वर्णन, पत्र ८—१० तक।
३—तृतीय सर्ग—छींक, छिपकिली, गिरगिट, काक शब्द स्यारी शब्दादि के शुभाशुभ वर्णन, पत्र १०—१७ तक।
४—चतुर्थ सर्ग—चन्द्रदर्शन, मातम पुरसी, वृक्षरोपन कूप आदि निर्माण, पलंग, गर्भप्रश्ण, बालक प्रश्ण, कार्य प्रश्ण, रोगी और पिरोजानग विचार, पत्र १७—२१ तक।
५—पंचम सर्ग—स्त्री कर्म, वस्त्रभूषण धारण, चन्द्रग्रहण, तुलादान, छायादान, षटरसदान, हजामत, वस्त्रधोवन, सर्प दर्शन, अंगस्फुरन, पंचक, गुरु आदि नक्षत्र विचार, पत्र २१—२८ तक।
६—षष्टम सर्ग—बाग लगाना, धर्म सामुद्रिक शास्त्र, भद्रा आदि विचार, पत्र २८—३१ तक।
७—सप्तमसर्ग—दिसा, काल, तिथि, संस्कार, संवत् सर, योग विचार, राज्य अभिषेक आदि का वर्णन है। पत्र ३१......

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण एवं जीर्ण शीर्ण दशा में पाया गया है। पहला, सत्रहवाँ और चालीसवें के बाद के पत्रे नष्ट हो गए हैं। ग्रन्थकार का नाम लोचनसिंह कायस्थ है। इन्होंने यह ग्रंथ राजमल नामक गाँव में रचा था, जैसा छठवें सर्ग की पुष्पिका में लिखा है :—

"इति श्री लोचन प्रकास कवि लोचनसिंह विरंचतायां राजमल ग्राम मध्ये..." संभवतः ये इसी गाँव के रहनेवाले थे। नाम के पहले जो कवि शब्द जुड़ा हुआ है उससे ज्ञात होता है कि ये काव्यकार भी थे। खेद है ग्रंथ के खंडित होने से रचनाकाल और लिपिकाल का पता न चल सका। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उपयोगी है। इससे रचयिता की कवि प्रतिभा का भी परिचय मिलता है। रचना विविध छंदों—दोहा, चौपाई, चौबोला, कुंडलिया, तोमर, त्रोटक, छप्पय, गीतिका, कवित्त, मोतीदाम, सोरठा और सवैया आदि में हुई है। इसकी विशेषता यह भी है कि इसमें जो यंत्र और चक्र दिए हुए हैं वे गद्य में लिखे गए हैं जो विषय को बहुत स्पष्ट कर देते हैं।

संख्या ९१. क्षेत्र भास्कर, रचयिता—लोकमणिदास चतुर्वेदी (मैनपुरी), कागज़—देशी, पत्र—३९, आकार—९$\frac{१}{२}$ × ६$\frac{१}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४९६, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३४ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० महादेव प्रसादजी, स्थान व पो०—जसवन्त नगर, जिला—इटावा।

आदि—क्षेत्र भास्कर के ११५ मिश्र प्रश्न उपपत्ति और रीति सहित; लोकमणि चतुर्वेदी मैनपुरी निवासी साविक ओवरसियर रचित लिख्यते ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ सम धरातल सम्बन्धी मिश्रित प्रश्न ॥

(१) एक समकोण त्रिभुज की भुज और कोटिक्रम से १५ और ८ हैं तो करण का मान बताओ।

(१ अ ४७ सा०) से $(\text{अ} - \text{इ}^{२}) + (\text{इ उ}) = (\text{अ उ}^{२})$ वा $(\text{अइ}^{२}) = (\text{अउ}^{२}) - (\text{इउ}^{२})$ वा $(\text{इउ}^{२}) = (\text{अ उ}^{२}) - (\text{अ इ}^{२})$

इससे यह रीति निकली कि

$$\sqrt{(\text{कर्ण}^{२})} = \text{भुज}^{२} + \text{कोटि},$$

$$\text{भुज} = \sqrt{\text{कर्ण}^{२} - \text{कोटि}^{२}} \text{ और कोटि} = \sqrt{\text{कर्ण}^{२} - \text{भुज}^{२}}$$

$$\therefore \text{कर्ण} = \sqrt{१५^{२} + ८^{२}} = \sqrt{२२५ + ६४ = २८९} = १७$$

उत्तर १७

(हस्ताक्षर पं० ईश्वरी प्रसाद चतुर्वेदी मुदर्रिस सन् १८८१ ई०)

अंत—एक वृत्त का व्यास = ५० है केन्द्र से दोनों ओर व्यास की समानान्तर रेखाओं की दूरी २२ है और एक दूसरे से ८ फिट बड़ी है। तो उनकी लंबाई और केन्द्र से अन्तर बताओ। मानो कि मन व्यास = ५० अइ—जक = ८ और ग केन्द्र है और

चप=२२ उवः कचे$= \frac{\text{अइ} - \text{उक}}{२} = \frac{८}{२} = ४$

$\therefore$ उव : : ४ : २२ वा २ : ११ (८६ प्र.) से $\text{कव}^{२} + \text{वस}^{२}$

$= \text{मन}^{२} - (\text{अव}^{२} \text{उव}^{२}) = ५०^{२} - (२२^{२} + ४^{२}) = २५००$

$- (४८४ + १६) = २५०० - (४८४ + १६)$

$= २५०० — ५०० = २००० $ (३ अ० ३५ सा०) से

अव $\times$ सव $=$ कव $\times$ उव $\therefore$ (६ अ. १६ सा.)

सव : वक : : उव : २ : ११. $\therefore$ सव $= \frac{२}{११}$ कव $\left(\frac{२}{११} \text{ कव}^{२} \right) +$ कव$^{२} = २०००$

वा $\frac{४}{१२१}$ कन^{२} $+$ कव$^{२} = २०००$ $\frac{१२५ \text{ कव}^{२}}{१२१} = २०००$ $\frac{\text{कव}^{२}}{१२१} = \frac{२०००}{१२५} = १६$ $\frac{\text{कव}}{११} =$ ४कव

$४४ - ४ = ४०$ गप $\sqrt{\text{उम}^{२} - \text{वप}^{२}} = \sqrt{\left(\frac{५०}{२}^{२} - \frac{४८}{२}^{२} \right)} = \sqrt{२५^{२} - २४^{२}} = \sqrt{६२५ - ५७६}$

$= \sqrt{४९} = ७$ गच $=$ पच $-$ गप $= २२ - ७ = १५$

उत्तर जीवा ४८ और ४० और केन्द्र से अन्तर ७ और १५

विषय—क्षेत्रभास्कर के नं० १ से ११७ तक प्रश्नों की उपपत्ति और रीति।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ मैनपुरी निवासी पं० लोकमणिदास जी चतुर्वेदी की रचना है। इसमें उन्होंने प्रायः क्षेत्रमिति संबन्धी १५२ प्रश्नों का उनकी उपपत्ति और रीति सहित वर्णन किया है। परन्तु ग्रन्थ की प्रस्तुत प्रति में ११७ ही प्रश्नों का हल है। ग्रन्थारम्भ में इन प्रश्नों को मिश्र प्रश्न कहा है। इसका अर्थ यही जान पड़ता है कि इसमें माप विद्या संबन्धी अनेक प्रकार के प्रश्न हैं जिन्हें उत्तम रीति से हल किया गया है। माप विद्या और रेखा गणित का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी विचार से लेखक ने प्रमाण में रेखागणित के अध्यायों और साध्यों की क्रम संख्याओं का उल्लेख भी यथास्थान कर दिया है। फलतः ग्रंथ उत्तम है और माप विद्या के जिज्ञासुओं के लिये उपयोगी है। रचयिता ने अपने को ओवरसियर लिखा है। ये मैनपुरी के निवासी थे। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति किन्हीं ईश्वरी प्रसाद चतुर्वेदी की लिखी हुई है जो किसी पाठशाला के अध्यापक थे। लिपिकाल सन् १८८१ ई० (संवत् १९३८ वि०) है। रचनाकाल अविदित है।

संख्या ९२. नरसिंह लीला, रचयिता—माधोदास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८ $\times$ ४$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२३ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० गोपालदत्त जी, शीतलाघाटी, मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि— × × ×

उपज्यो क्रोध साप तव दीनो असुर होइ संसार ॥ २ ॥
॥ व्यापक विष्णु हरी ॥

कमल नैन घन स्याम आनि दरसन जव दीनो।
अति प्रसन्न मुष निरषि प्रनाम चारिहुन कीनो ॥
करि प्रनाम प्रभु सौं कह्यौ क्षमादेव अपराध।
तम गुण हमहि न वूझिये प्रभु गति अगम अगाध ॥
॥ व्यापक० ॥

कृपासिन्धु हँसि कह्यौं भली सिछा तुम दीनी।
साधन को अपमान मंद मेली गति कीनी ॥

करहि अवज्ञा साधकी क्यों न अधम गति जाहि ॥
करि विरोध जग जन्म तीसरे तव मोहि मिलि हो आइ ॥ ४ ॥ व्यापक० ॥

अंत—धनि माता धनि पिता धनि दिनु छिनु नछत्र धनि ।
धनि गृह धनि सोइ ठौर स्वामी समरथ धनि ॥
धनि धनि जीवन जगत महि, राम भक्त जो होइ ।
धनि धनि तिह लोक जस, कुलहि उधारे सोई ॥४३॥ व्यापक० ॥
सुर विवान अस्तुति करे पोहोप वर्षैं जै जैकार ।
भक्ति हेत वपु धरत अहो, अवगति अनन्त अपार ॥
तुम्हरो गति तुम्हही भले जानो निर्गुण सगुण विलास ।
श्री नरसिंह के रोम रोम पर वलि वलि माधोदास ॥४४॥ व्यापक० ॥

सं० १८२३ चैत्र वदि ७ लिषते भो·········स्वपठनार्थ ॥

विषय—नरसिंह लीला का वर्णन किया गया है ।

संख्या ९३ ए. वड़ी ओनम, रचयिता—माधोदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० महादेव प्रसाद जी कारिन्दा, स्थान व पो०—वसरेहर, जिला—इटावा ।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः अथ वड़ी ओनम लिख्यते ॥
गुरु गोविन्द के चरण कमल उर अन्तर धरियै ।
करि साधुन सत संग भर्म भव सागर तरियै ॥

अविनासी गुरुदेव सदा जन के रषवारे । अवत ॐ अंकाल अषंड अलष उजियारे ॥
इक्षा तै आकास रचो मन बुद्धि पसारो । पाँच तत सै विस्तु लष्यो नहिं सिरजन हारो ॥

आदि अन्त जाको नहिं पावत, थकित भयो मुनि देव ।
और सिव सेस सारदा, तिनहू लष्यौ नहिं भेव ॥
साधु संत गुरु जीव उवारन इनहू के हुइ रहिअै ।
जे मारग हरि भक्त वितावै सत संगति सुख लहिअै ॥
दास दीन चरनन अनुरागी विषय कल्पना नासी ।
तहाँ वसै हरि जी मीसे गुरु चरन उपासी ॥
तन मन धन सन्तन को अर्पैं क्षिमा दीनता जाकौ ।
परमारथ पर स्वारथ चीन्हौ सदा दयाल हरि ताकौ ॥
आपा मैटि अमल विसरावै राग रहित जन सोई ।
अनुरागी अनुभौ पद परसै दुविधा कुमति विगोई ॥
राम सनेह प्रेम रस पागे सुरति सुहागिल पास ।
छके रहत हरि नाम रसायनि और न दूजी आसा ॥
केवल राम सुधारस राच्यो पीवत संत विवेकी ।
सत गुरु कृपा ज्ञान पन पूरन जिन गुरु अवगत देषी ॥

अंत—दोहा—निरमल ज्ञानी गुरु मुखी, पियत सुधा रस एन ।
मन वुधि स्थिर ज्ञान सौं, बोलत अमृत वैन
चौ०—हहा हरि हीरा लिषि पाऊं । सुमिरन भजन आनन्द बढाऊं ॥
हरि जस कहत सुनत सुख होई । प्रेम प्रीति आरत जन सोई ॥
जानि पै विषै कालहि. नसि जाई ।
हिरदै धरि गुरु चरन कौ राषौ वीजु जमाई ॥
॥ दोहा ॥ सदा राम गुरु अघ हरन, निजु करि हृदै धारु ।
ॐ नमः अक्षर भाषियौ, माधौदास विचारि ॥
जो जह ॐ नमः गाइहै, बाँचै चितु लगाइ ।
सो पूर्ण पद पाइ है, भोग भक्ति विलास ॥
इति श्री माधोदास कृतौ ॥ वड़ी ओनम संपूर्ण ॥ समाप्तं ॥

विषय—भगवत भक्ति, भजन, स्मरण, गुण कथन, आत्मज्ञान, राग द्वेष आदि का वर्णन ।

संख्या ९३ बी. बड़ी ओनम, रचयिता—माधौदास, कागज—देशी, आकार—६ × ५½ इंच, पत्र—५, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९९ वि, प्राप्ति स्थान—पं० अयोध्या प्रसादजी, स्थान—भरथना, जिला—इटावा ।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ अथ बड़ी ओनम लिषते ॥
गुरु गोविन्द के चरन कमल उर अंतर धरियै ।
करि साधुन सत संग भर्म भव सागर तरिये ॥

अंत—

दोहा

जो जह ओनम गाइ है, बाँचै चित्तु लाइ ।
सो पूरण. पद पाइ है, भोगै भक्ति विलास ॥
इति श्री माधौदास कृत बड़ी ओनम संपूर्ण समाप्तं ॥

दोहा

कवि कोविद ज्ञानी गुनी, सवनि कहौं कर जोरि ।
अक्षिर घटै सुधारियै, मोहिन दीवी खोरि ॥

मिती भादौ शुक्ल पक्षे तिथौ १० दसंम्य बुधबासरे संवत् १८९९ सनि १२४९ ॥ लिषतं विंद्रावनदास काईथ कसबा पेखे १ अस्थान श्री श्री श्री रामलाल जू स्वामी की निकट गंगा प्रसाद भक्त हलवाई पोथी कुंज मनिमिश्रा की ॥

॥ दोहा ॥

जौ लौ सुमिरे ना हरी, जे भक्तन के मीत ।
ता दिन लेषे मैं नहीं, गये बृथा सब बीत ॥ १ ॥

विषय—ब्रह्म निरूपण, नाम माहात्म्य, गुरु महिमा, और भक्ति एवं सत्संग की महत्ता का वर्णन।

संख्या ६४ ए. ध्रुव चरित्र, रचयिता—मधुकरदास, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—८ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७८२ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० भजनलालजी, स्थान—सौंख, पो०—सौंख, जिला—मथुरा।

आदि—श्री रामकृष्णाय नमः अथ ध्रुव चरित्र लिष्यते ॥

प्रथम वंद श्री राम काम पूरण सुषदायक।
द्वितिय वंद गुणषान जानकी सदां सहायक॥
तृतिय वंद गुरुदेव भेव जानत जग नायक।
बहुरि वंद सब संत जंत उधरे जस गायक॥
यह भाँति मंगला चरण करि मधुकर ग्रंथ बखानियै।
अनेक विघन जबही मिटै ध्रुव राम भक्ति मन आनियैं॥

चौपाई

आदि अनादि जगत कौ स्वामी। सब घट घट कौ अंतरजामी॥
सिरजनहार जगत कौ सोई। अलष निरंजन और न कोई॥
जहाँ लग जीव जंत जग मांही। सब ही की सुधि बिसरत नांही॥ ४॥
आप नाभि तैं कमल उपायौ। ताहि मध्य ब्रह्म उपजायौ॥ ५॥
जग नायक सुखदायक सो है। मानस मैथुन कारन जो है॥ ६॥
स्थिर चर की प्रन जीव अपारा। मेरु समुद्र सूर्य ससि तारा॥ ७॥
दिन और रैन धूप और छाँही। कीनी धरती स्वर्ग तहाँही॥ ८॥
देव सुदैत्य जछ अरु प्रेता। पसु पंछी जल थल जिव केता॥ ९॥

अंत—श्री वृज नाथ प्रतापतै "मधुकर दास प्रवीन"॥
भक्त राज ध्रुव राज कौ चरित्र यथा मति कीन॥२६॥
यह कलिजुग मैं सार है, सौतिन कौ जस गान।
अति प्रसन्न हरि होत है, सुनि के श्री भगवान॥२७॥
जे हरि भक्त सुजान है, तिनकी हौ सरनाय।
करौ विचार विचार कै, अरु लीजै अपनाय॥२८॥

इति श्री ध्रुव चरित्र संपूर्ण॥

विषय—ध्रुव चरित्र का वर्णन किया गया है।

संख्या ९४ बी. ध्रुव चरित्र, रचयिता—मधुकर दास, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—७ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७८२ वि०, लिपिकाल—सं०

१८९६ वि०, प्राप्ति स्थान—श्री लक्ष्मी प्रसादजी, दुकानदार, ग्राम—अगरयाल, पो०—शेरगढ़, जिला—मथुरा ।

आदि—अंत संख्या ९४ए. के समान । पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री ध्रुव चरित्र कथा संपूरणम् ॥ शुभं मस्तु ॥ मिति वैशाष वदी १० भौम वासरे ॥ संवत् १८९६ शाके १७६१

संख्या ९५. तीरंदाजी रिसाला, रचयिता—ख्वाजा महम्मद फाजिल, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशनारायण चतुर्वेदी, मोहल्ला—नगरापाईसा, मथुरा ।

आदि—इन सार कहिये फतेके देनेवाले वोच सन छै सौ सत्तावन हिजरी में बुजरग इस वंदे के हिरात विलायत से हिन्दोस्तान में आये । रसाले का वनानेवाला ख्वाजा महम्मद फाजल कहता है अपने घराने का किसब तीरंदाजी का करना वा निजात का वास्ता समझना सदा से मुझको सौक तीरंदाजी का रहा । पहिले तो लेजम का षैंचना नबाव इफतषारषां साहब जौनसे उस्ताद वखत के थे उनसे सीषा । फेर जहाँ कहीं तीरंदाज सुनता उनकूं अपने पास बुलाकर या उनके पास आप जाकर काम कायदे तीरंदाजी के वा तोड़ तीर का देष कर सीषता था । रात दिन इसी शुगल में रहता था । एक दिन अहवाल बयान करता हूँ १४वीं तारीष महीने सावान की रात में तीरंदाजी से फराकत हासल करके आराम किया । सुपने में तीरंदाज तूरान के रहनेवाले को देषा । तीर लगा रहे थे । मैं उनके पास दिल के शौक से गया उनमें से दो शखस कूं उस्ताद सबका समझा वह ऐसी तीरंदाजी का सब हुनर कायदे से करते थे जो मैंने आगे किसी कोन हीं देषा था । मुझको बड़ा अचंभा पैदा हुआ । मैंने अपने दिल में विचार किया जो ये दोनों तीरंदाज उस्ताद मुझको मेहरवानगी करके तीरंदाजी के नुषते सीषावें तो मेरा तीर सबसे अच्छा लगे । यह विचार कर उस फिरके में से एक शषस से पूंछा वे दोनों साथ कौन हैं । उसने कहा हम सबके तीरंदाजी के सिखानेवाले हैं । जो तुझको शौक तीरंदाजी का है तुझको मैं मिला दूँगा । मैं सुनकर राजी हुआ । इसने मुझको अपने साथ ले जाकर उन दोनों उस्तादों से मिलाया ।

अंत—॥ अथ वाव चौवीस ॥

समझना भेद तीरंदाजों के जो कि कई भांत के होते हैं । तीरंदाज छः तरह के होते हैं । पहला तीरंदाज कुभकरन कहते हैं । यह तीरंदाज चालीस पचास मुरग के अंडों को बराबर कतार की तरह जमीन में राषे ऐसा तीर सफाई का लगावे जो सब अंडों में सुराख करता हुआ निकस जाय । अंडे जगह की जगह धरे रहे । ऐसा तीरंदाज कितावों में ही लिषा देषा । आंषों देषा नहीं । दूसरा तीरंदाज वह है जिसका तीर सखत व नरम जगह एक सा लगेगा निसान दूर नजदीक का चूके नहीं ।

× × ×

छटा तीरंदाज शेषी झूठी करनेवाला हांथों से कुछ काम निकसे नहीं अपने घर में तो तीर अच्छा भी लगावे पर मजलस यारों की में व लड़ाई में तीर परषाना करे या टूट जाय। इसी वास्ते लाजम है तीरंदाज को जो शेषी की वात मुँह से करे नहीं काम अपना कर दिषलावैगा व सब देषने वाले तारीफ करेंगे सेषी करने वाला सदा सरमिंदा रहता है। किसव वाला मुराद कूं पहुचता है।

अथ वाव पच्चीसवां घोड़े के ऐव सवाव व इलाज में सालोत्तर की किताव मसहूर है सो वड़ी है सो न्यारी कर लिषी है। इति ख्वाजा महम्मद कासम का फरजंद ख्वाजा मुहम्मद फाजिल जिसका बनाया हुआ तीरंदाजी रिसाला संपूर्णम्॥ सं० १८९६ श्रावन सुदी २ दितवार को षेमकरन जी के बेटा चीमा जी किताब लिषी॥

विषय—तीर कमान की पहचान उनका बनाना, चलाना, चालकों के भेद आदि का वर्णन २४ चौबीस बाब (अध्यायों) में किया है। अन्त के पच्चीसवें बाब में घोड़े के संबंध की बातें लिखी हुई हैं:—

१—बाब पहला—लेखक का वृत्त तथा वंश परिचय और ग्रंथ परिचय, पत्र १—४ तक।
२—बाब दूसरा—कमानों के भेद और बनाना, पत्र ४—५ तक।
३—बाब तीसरा—पहिचान कमान, पत्र ५—६ तक।
४—बाब चौथा—कमान के अनुसार तीर की पहिचान, पत्र ६—६ तक।
५—बाब पाँचवाँ—समझने तौल व रेसम के चिल्ला, पत्र ६—७ तक।
६—बाब छठवाँ—चांक करने कमान व सीधा करने तीर का, पत्र ७—७ तक।
७—बाब सातवाँ—जो पहिचान भले बुरे जहगीर में, पत्र ७—८ तक।
८—बाब आठवाँ—तीरों की किस्म के बयान, पत्र ८—८ तक।
९—बाब नवाँ—तारीफ तीरों की व पहिचान भले बुरे तीर की, पत्र ८—९ तक।
१०—बाब दसवाँ—बनाने भाल तीर की व वस्ल करने उसका, पत्र ९—१० तक।
११—बाब ग्यारहवाँ—पहिचान परों का, तीर के वास्ते कौनसा पर ठीक होता है, पत्र १०—१० तक।
१२—बाब बारहवाँ—तालीम तीरंदाजी, पत्र १०—१२ तक।
१३—बाब तेरहवाँ—बयान कब्जे और उनका पकड़ना, पत्र १२—१३ तक।
१४—बाब चौदहवाँ—कमान के खैंचने की राह, पत्र १३—१५ तक।
१५—बाब पंद्रहवाँ—तीरफ समझने कायदे तीरंदाजी के व कायदा, पत्र १५—१५ तक।
१६—बाब सोलहवाँ—तीर के खैंचने की राह व समझना छ तरफ ऊपर की, पत्र १५—१६ तक।

१७—बाब सत्रहवाँ—पहिचान तीर के लगाने की, पत्र १६—१७ तक।
१८—बाब अठारहवाँ—कंद देने के भेद, पत्र १७—१८ तक।
१९—बाब उन्नीसवाँ—अभ्यास करना तीर लगाने का, पत्र १८—१९ तक।
२०—बाब वीसवाँ—शागीर्द को अदब में लाना तीरन्दाजों की मजलस में, पत्र १९—२० तक।
२१—बाब इकीसवाँ—तीर कूं अवाज के ऊपर लगाना जिसको सबद भेदी कहते हैं, पत्र २०—२१ तक।
२२—बाब बाइसवाँ—तीर का अन्दाज, पत्र २१—२२ तक।
२३—बाब तेईसवाँ—बनाने गजों के मय पहिचान, पत्र २२—२३ तक।
२४—बाब चोबीसवाँ—भेद तीरन्दाजों के, पत्र २३—२३ तक।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ में प्रथम दो पत्रे नहीं हैं। परन्तु इसमें विषय का पूर्ण प्रतिपादन है। जो पत्रे लुप्त हो गए हैं उनमें ग्रन्थकार ने मंगलाचरण एवं संभवतः आश्रय-दाता का परिचय तथा रचनाकाल आदि दिया होगा, ऐसा विदित होता है। जिस पत्रे से ग्रंथारंभ होता है उसमें रचयिता ने कुछ अपना एवं अपने वंश का वृतान्त भी दिया है। किन्तु खेद है रचनाकाल विदित न हो सका। रचयिता के पिता का नाम ख्वाजा महम्मद कासिम था। इन्होंने तीरन्दाजी किसी नवाब इफतखार खां से सीखी थी। यह पेशा इनका वंशजात था। यद्यपि ग्रंथ की भाषा उर्दू है तथापि वह बहुत सरल और स्वाभाविक है। अनेक शब्द विशुद्ध हिन्दी के भी प्रयुक्त हुए हैं। विषय की दृष्टि से ग्रंथ बड़ा महत्व का है। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल संवत् १८९६ वि० दिया है।

संख्या ९६. ज्ञान चालीसी, रचयिता—म० महेश नारायण सिंह (गढ़वार, राजा बाजार), कागज—देशी, पत्र—२, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ९$\frac{1}{2}$ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० सियारामजी, स्थान व पोष्ट—वकेवर, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ महेश नारायण कृत ज्ञान चालीसी लि० ॥

॥ स्तुति ॥

सिय तुम कहँ न जन दुख हरी।
जवहिं जन जव परे व संकट तवहिं तव औतरी ॥
प्रवल खल जो लंक नायक सुरन वन्दिह करी।
राम कर निज हरणके मिस असुर कुल संहरी ॥
सहस आनन असुर भट जो भार भुवि वहु भरी।
तासु सिर तुम सहस काटेव पानि निज असि धरी ॥
पतित पावनि अघनसावनि दीन दारिद दरी।
नाम जस जग विदित तेरो जननि जन उद्धरी ॥

नृप [महेश जो परेव संकट मातु करुणाकरी।
वेगि करि अव क्यों न काढ़त पाय पै करपरी ॥ १ ॥

हनुमत अरज मो पहुँचाय।
जनक नंदनि जगत अम्बे मातु सिय ढिंग जाय ॥
पौन पूत सपूत अंजनि भक्त श्री रघुराय।
तुमहि सम नहि और प्यारो राम जानकी माय ॥
नांघि सिंधु जो मारि अच्छहि लंक पुरहि जराय।
कुशल लै फिरि मातु सिय की आनि हरिहि सुनाय ॥
पैठि कै जो पताल पुर में देवि रूप वनाय।
मारि कै महिरावनहिं भट राम लखनहिं ल्याय ॥
लषन के लखि शक्ति भीनों विकल भो रघुराय।
आनि मूरि सजीवनी तुम तुरित तिनहि जिआय ॥
दीन वन्धो नाम तेरो ग्रंथ आदिक गाय।
याहि ते संबंध मेरो दीन नातो भाय ॥
पतित पावन यस तिहारो लोक तिहुँ रह छाय।
पतित दीन मलीन मति किमि वरनि मो पह जाय ॥
जवहिं जेहि जहँ परेव संकट वेर नहिं कहुँ लाय।
मेरि वेरी देर क्यों कर वन्दि छोर कहाय ॥
नृप महेश जो परेव संकट मातु पितु नहिं भाय।
वेगि कै सिय हुकुम लै अव वन्दि मोचहु आय ॥ २ ॥

अंत— ॥ छप्पै ॥

घरिय घरिय घहरात घेरि घन घूमि घमंकहिं।
दशहुं दिशा दुति दौरि दीह दामिनि दमंकहिं ॥
झरन बून्द बहु वारि वारि दै वरषहिं।
पवन जोर झकझोर झूमि झुकि द्रुमैं लरखहिं ॥
नृपहरित चिनन जल पूरि महि पन्थ अपथ समसूझि हैं।
सुनि पिय विदेश पावस चलन कोउ नयक डग वूझि हैं ॥३९॥

॥ कवित्त ॥

मैं न साँच के ढराके ऐन शील वो सुधाके,
तजि जाके रूप कंजऊ लजाके एक पाके हैं।
नृप त्यौं रति रामा के चित श्याम के चुराके,
उर डाके गढे मान सौतिके पराके हैं।

हरिनान शिशुजाके वन माहिं तन ढांके,

मीनहूँ डुवाके मुख वारि में छिपाके हैं।

नभ मंडल फिराके से उड़ाके देखि खंज,

चारु चंचल चलाके नयन बांके राधिकाके हैं।

इति श्री ज्ञान तीसी

विषय—श्री सीताराम तथा राधा कृष्ण के प्रेम और आमोद प्रमोद संबन्धी कुछ गीतों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ राजा बाजार के राजा महेश नारायण का रचा हुआ है। इनकी रानी धर्म कुँअरी भी हिंदी की कवियित्री और लेखिका थीं। यह दम्पति राम-कृष्ण-भक्ति विषयक पद अधिक लिखते थे।

संख्या ९७. माणक पदावली, रचयिता—माणकदास, कागज—देशी, पत्र—२३, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० श्यामसुन्दर जी, स्थान व पोष्ट—नन्दगाँव, जि०—मथुरा।

आदि—श्री राम कृष्णाय नमः॥

राग विभास

अति मोद पावत जगावत है माई॥ टेक॥

जागो अब नन्दलाल द्वार आये गोबाल ठाढ़े तेरे काज सब देखे क्यों न भाई॥ १॥
कमल कुसुम फूले भंवरसो आय झूले अब तो प्रभात भयो उद अरुणाई॥ २॥
कोकिला बोलत मोर वीलोना को होत सोर गोपी तेरे गुण गावै सुण क्यों न जाई॥ ३॥
जागो मेरे प्यारे नन्दराय के दुलारे "माणक" सुनत वेन जागे सुखदाई॥ ४॥

राग परतु

राम कृष्ण राम कृष्ण राम कृष्ण कहोरे।
जीवन की जगत मांहि जो भलाई चहोरे॥ १॥

जीवन फल नाम लाहा कुं लहोरे छार कीवेगार भार काहे कुं वहोरे॥ २॥
संसार सिंधु को नाव कूं गहोरे पापन को पुंज नाम पावक दहोरे॥ ३॥
भली बुरी कहे वाकी सर्वही सहोरे "माणक" भजन मांहि लागकें रहोरे॥ ४॥

अंत—भटकि भटकि मन थाकि रह्यो जब हरि पद आय अटकानो रे।
जेसें काक जहाज को जल में भटकि कें लेत ठिकानो रे॥ १॥
झटक झटक सब देख लीयो जग सार कछू नहिं जानो रे।
सार को सार विचारि राम को रूप सोई उर आनो रे॥ २॥
त्रिविध ताप जर्यो मन मेरो हरि चरणनि लिपटान्यो रे।
मन गयंद भव दव सूं दाड़े हरि सर में गकीनो रे॥
"माणक" अब निकसो ... ... (अपूर्ण)

विषय—भक्ति विषयक गीतों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—काव्य की दृष्टि से ग्रन्थ उत्तम है। इसका प्रस्तुत हस्तलेख कागज और लिखावट की दृष्टि से काफी पुराना विदित होता है।

संख्या ९८. सगुनावली, रचयिता—मोहन (जैनालय, कुम्हेरीपुर), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७८ वि०, लिपिकाल—सं० १९२९ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० केवल राम, ग्राम—भरतपुर, पोष्ट—सौंख, जिला—मथुरा।

आदि— श्री रामजी ॥

ॐ लंबोदर अनुक्रोसकरि अभिवादन शिशुवाम।
अंघ्रि गहि यह जानके, विघ्न विडारन नाम ॥ १ ॥
सोहर विंदु इंदु चत्रभुज गणपति अति प्रसन्न मुष।
कनक नील मणि जड़्यो मुकुट कटि किंकणि पद नूपुर लष ॥
चारु चचर चहुँ ओर छत्र छवि कवि करोर वरनत सुष ॥
तुम प्रसाद गज वदन प्रभु संकट कटि आई सकल दुष ॥ २ ॥
सगुनावली समारि सुमति तथा "मोहन रची"।
लीजो चतुर विचारि भूल चूक कछु होय जो ॥ ३ ॥
मंत्र जप वरसात गनु जा प्रष्ठ आव तव।
पुनि पांसो ले हाथ तीन चार गेरे पहुमि ॥ ४ ॥

अंत—द ज ज—पुजवै मन की आस सिद्धि काज जानो परौ।
साँच गहो विसवास चित्त चिंता परही करौ ॥१३॥
द अ व—तो मन उपज्यो सोय जो ते पूछी हेत करि।
दई करै तो होय यह हम कौं ऐसे लषे ॥१४॥
द व ज—जो तैं चितयो आज सिद्धि जोग पंडित कहैं।
सफल होय तो काज उर मैं हरि को ध्यान धरि ॥१५॥
द द व—जो तैं चितयो काम यासों तेरो वस नहीं।
लंबोदर लै नाम काहे कूं भटकत फिरै ॥१६॥
सगुनावली कमनीय जैनालय कुम्हेरिपुर।
जो उर उपजी धीय 'केसब' सुत मोहन रची ॥१७॥
अष्टादस अठत्रंसमह ... ...

(अपूर्ण)

विषय—पासा डाल कर सगुन का वर्णन करना।

संख्या ९९. बुद्धि विलास, रचयिता—मोहनदास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—५¾×३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भजरामजी, ग्राम व पो०—राल, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ बुद्ध्य विलास लिखितं ॥

॥ दोहा ॥

विघ्न विनाशत भै हरन, सुष करन दुष दूर।
गौरी नंदन ध्यान ते, होत काज भरिपूर ॥ १ ॥

चौपाई

एक दिन वुधि मन सो वोली। तेरी मुरषता अन मोली ॥
जहाँ जहाँ ते मोहि भटकाई। तहाँ तहाँ मैं वहु दुष पाई ॥ २ ॥
याते कह्यो मांनि तू मेरो। नातर नास करूंगी तेरो ॥
दीनन कू तु वहुत सतावै। ज्यों चाहे ज्यों नाच नचावै ॥ ३ ॥
महानीच नीचन के संगी। देषत दीन रूप वहु रंगी ॥ ४ ॥
तव मनुवां वहुतै डर पांनहु। हाँथ जोरि चरनन लिपटानहु ॥
अहो देव तुम रोस न कीजै। दास जानि सिक्षा मोहि दीजै ॥ ५ ॥
मैं तो औगुन कछु न कीनो। तुमने दोस कहाँ ते दीनो ॥
जों तुम मेरो औगुन जानो। तो तुम मोसों क्यो न वाषानो ॥ ६ ॥
तव वुधि वोली सुनि मन भाइ, तेरे औगुन दैहु वताइ ॥ ७ ॥
हरि चरननि चित्त कवहु न दीना। विषै वासना के रंग भीना ॥ ८ ॥
पर दारा के लोभ लुभांनो। मात समांन कवहु नही जानो ॥ ९ ॥
नाना विधि के भोजन कीने। तृपति मान कवहु नहि लीने ॥१०॥

अंत—

सोरठा

संत जनन सों प्रीति नित प्रति अति वढ़ो नई।
जिनसो पाइ यह रीत मन मोहन के मिलन की ॥
भूल चूक जो होइ लीजो संत सुधारि कर।
दास जानि कर मोहि, यह कृपा मोपर करो ॥

इति श्री बुद्धि विलास संपूर्ण ॥

विषय—बुद्धि की प्रेरणा से मन सन्मार्ग का अवलंबन करता हुआ उच्च कोटि का भक्त बन गया और अंत में उसका कृष्ण रूप में मिल जाने का वर्णन।

संख्या १००. रामायण की घटनाओं का तिथि पत्र, रचयिता—मोहनलाल समाधिया (कुल पहार), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० छोटेलालजी रासधारी, ग्राम—मुखराई, पोष्ट—राधाकुण्ड, जिला—मथुरा से प्राप्त कर का० ना० प्र० सभा में वर्तमान है।

आदि—

दोहा

गुरु गनपत विधु संभु श्रुति कवि कोविद पद वंद।
वरन चरित फल चार प्रद किये जि रघुकुल चंद॥ १॥
मोहनलाल समाधिया कुल पहार तिहिवास।
तुलसी कृत की कृपा तैं भयौ राम कौ दास॥ २॥
संवतु विगत उनीस सै पुनि तेरह कौ साल।
भादौं वदि की द्वादसी पुष्य नषत ससिवाल॥ ३॥
अग्नि वेस हय मेध पुन पक्ष पुरान विचार।
मिति वार रामाइनैं मोहन विरच सुचार॥ ४॥
सुकल पक्ष मधु मास तिथ नौमी मोहनलाल।
जन्म लियौ रघुवंस मनि दसरथ भए निहाल॥ ५॥
भाद्र कृष्ण की पंचमी मुनि माँगे रघुनाथ।
सकुच सहत सौंपे नृपत कह वसिष्ठ श्रुति गाथ॥ ६॥
रघुवर पंद्रह वरष के भये गये मुनि साथ।
सरन करन लीन्हे धनुष कठ तठ कस वर भाथ॥ ७॥
कृष्ण पछ भादौं दसैं धाई वांम अजान।
प्रवल ताड़िका देष कैं हरैं प्रान हरि वान॥ ८॥

अंत—

मांघ सुक्ल पूनौ दिवस छोडिउ राम तुरंग।
लषन सत्रुघन पवन सुत लगे वीर सव संग॥९५॥
जेठ सुक्ल पूनौ दिवस सीय अवध पुर आइ।
चरन कमल रघुनाथ के हर्ष सहित सिर नाइ॥९६॥
सुदि अषाढु की पंचमी प्रभु मष पूरन कीन।
सकल मुनिन सनमान कैं दान विविध विधि दीन॥९७॥
यह चरित्र जो जन सुनैं करैं लाय मन पाठ।
रघुपति पद रति होय उर षोलन कपट कपाट॥९८॥

इति श्री राम चरित्र मानसे सकल कल कलुष विध्वंसने अवरल हर भक्त संपादनो नाम सप्तसोपान समाप्त।

विषय—राम चरित मानस में वर्णित घटनाओं की तिथियाँ दी गई हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ अन्य ग्रंथों के साथ एक जिल्द में है जिसमें प्रेमलता (चौरासीपद हरिवंशजी कृत), रास पंचाध्यायी रासधारियों की और रासविलास (चौबीस छद्म-वृन्दावनदासकृत) नाम के तीन छपे ग्रंथ हैं। इनके पश्चात् उसी में निम्नलिखित रचनाएँ हस्तलिखित रूप में हैं:—

१—निंवार्क संप्रदाय से संबंधित संस्कृत रचना, पत्र १८ तक।
२—कवित्त आदि विभिन्न कवियों के, पत्र ३० तक।
३ - व्यास आदि के दोहे, पत्र ३१ तक।
४—सरसमंजावली (सहचरि शरण कृत), पत्र ३५ तक।
५—फुटकर छंद और दोहे (भगवत रसिक कृत, तुलसी, नागरी, रसनिधि आदि के), पत्र ४८ तक।
६—रामायण की घटनाओं के तिथिपत्र, पत्र ५३ तक।
७—रागमाला, पत्र ७० तक।

संख्या १०१. चित्रगुप्त की कथा, रचयिता—द्विजकवि मोतीलाल, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—ला० रामगोपाल जी, स्थान—बेला, डा०—भरथना, जि०—इटावा।

आदि— ... ...

हरि को नाभि कमल ते राजा। चतुरानन उपज्यौ सुष साजा॥
सहस एक दस वृष भुआरा। मूलें उतप नहिं ग्यान सँभारा॥
अर्धं उर्धृ लै फिरत सुधावा। कमल नाल कर अन्तु न पावा॥
वहुतक काल उहाँ चढ़ि देखा। चारिउ दिसा रहै पल पेषा॥
देषत हियै मनहि विधाता। गयहु पराहि जेहि थल जाता॥
वाय संध्या मै तव वर वानी। चिंता करहु मति तजि आपानी॥
सुनि प्रभु करहि विचारा। कहा करौ कछु जानिन पारा॥
॥ दो० ॥
वहुरि गिरा जल मध्य में, सुनहु समुद यह वात।
चारि वेद में सव कहेउ, निज मुष कर विष्यात॥
वहुरि सिष्टि उपजाहू ताता। तबहू न चेतेहु विधि अग्याता॥
वाइ मध्य मै पुनि हित वानी। सोइ उच्चरित भयौ विधि ज्ञानी॥

अंत—सुनि कै भीषम भयेउ विसोका।
चित्र गुपित्र पहुँचे निज लोका॥
सौनिक भगति करहु मन लाई।
जाते समन पुरी कहि लाइ नहिं जाई॥

व सूत की उतपति सुहाई ।
पद्म पुरान मते सब गाई ॥
पुनि कह सुत सुनु रिषिराई ॥
कोई कोई भक्ति करै मन लाई ॥
धन दारा सुत संपति होई । निरुज सरीर रहै सुनि सोई ॥
जुयामन आई उ नरा जीवै । चित्र गोपीत्र की रमि जल पीवै ॥
जेनर करिहैं भक्ति विशेषी । अंत समै जमपुरी न देषी ॥
विष्णु पुरी पाई पुनि वासा । वेद वचन यह कथा प्रकासा ॥

॥ दोहा ॥

सुत पौरानिक सुनि कथा·········रसाल ।
जथा बुद्धि भाषा रची, कवि दुज मोतीलाल ॥

कवि कीकराज हरषि ति···रा । करहित ता दुज मति धीरा ॥
नौवस्तातेहि राम को नामा । हरि कृपा सकल सुषधामा ॥

इति

विषय—चित्रगुप्त की कथा एवं कायस्थों की उत्पत्ति का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रन्थ में चित्रगुप्त की विवाहादिक संबंधी कथा के साथ ही साथ कायस्थों की उत्पत्ति का भी विवरण है । इसके रचयिता द्विजकवि मोतीलाल हैं । इसमें एक कवि कीकराज का नाम आया है, परन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि प्रस्तुत रचना या इसके रचयिता से उनका क्या सम्बन्ध है । हस्तलेख अशुद्ध लिखा है ।

संख्या १०२. श्रृंगार सार, रचयिता—मुरलीधर, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवतीनन्दन (रेवतीरमण) जी मिश्र, स्थान—बेरी, डा०—बरारी, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशायन्मः

सिद्धि बुद्धिदायक सदा गुन नायक गनईस ।
वने ग्रंथ कीजै कृपा चरन नवावत सीस ॥ १ ॥
निरषि ग्रंथ रस मंजरी मन में कियौ विचार ।
लक्षिण नायक नाइका कहिये मति अनुसार ॥ २ ॥
समुझ होय जाके पढ़ें रस सिंगार की रीति ।
याते सार श्रृंगार यह धर्‌यौ नाम करि प्रीति ॥ ३ ॥
जो या सार सिंगार को समुझि लेइ चित्तलाइ ।
ताकौ भेद तियान कौं सबही समुझ्यो जाइ ॥ ४ ॥
त्रिविध नाइका कही मैं ग्रंथनि मैं करि प्रीति ।
तिनके लक्षण कहतु हौं रस मंजरी की रीति ॥ ५ ॥

॥ दंडक छंद ॥

सलज सुकीया जाकौ प्रेम निजु नायक सौं प्रेम पर नायक सौं परकीया जानियैं।
गनिका गनहु ताहि धन दियैं आवैं पास इनि में स्वकीया सो त्रिविध उर आनीयैं ॥
मुग्धा मध्या प्रोढ़ाइनि तीनिंहू के न्यारे न्यारे लछिन कहत सुप्रमान करि मानियैं।
आगम मनोज मुग्धा लाज काम सम मध्या प्रौढा जामै काम केलि पूरण बषानियैं ॥६॥

अंत—॥ दंडक छन्द ॥

केलि समैं आपस मैं मोहिवौ सुहेला लीला भेष कौ पलटिवौ ललित सोभा लहिवौ ॥
समै पै सरम तैं न वोलिवौ विहित किल किंचित सुएकौ वार सरोस रहिवौ ॥
गरव तैं मन विलसै विलास विभ्रम सौं भूषन कहूँ के कहूँ पीयैं दोष गहिबौ ॥
मोटाइत भूषन अनादर कीवौ केलि में कलह सोई कुट्टमित्त गहिवौ ॥ ४१ ॥

॥ दोहा ॥

ऐसें औरो हाव है दंपति के संजोग।
इनि कौ काहू कविन नैं वरन्यौ नाहिन योग ॥ ४२ ॥
यह सिंगार रस मार की पोथी रची विचारि।
भूल्यौ होहु जहाँ तहाँ लीजौ सुकवि सुधारि ॥ ४३ ॥

इति श्री मुरलीधर कृते श्रृंगार सार संपूर्ण श्री कृ०

सवत् अठारै सै छानवा माघ वदी भृगुवार।
षष्टी पुस्तग पूर्न कियौ लेषक नाम सुकुमार ॥ १ ॥

दसषत मिश्र वसंत के ॥

विषय—यह नायिका भेद का छोटा सा ग्रंथ है जिसमें निम्नलिखित विषय प्रतिपादित हैं:—

१—मंगलाचरण, स्वकीया, परकीया, गनिकादि त्रिविध नायिका तथा इनके प्रत्येक के मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा भेदों का वर्णन, पत्र १—२ तक।
२—मुग्धाभेद, मध्याभेद, प्रौढ़ा भेद, पत्र २—३ तक।
३—जेष्ट-कनिष्ठा भेद, परकीयांतर अन्य भेद, अनुसयनादि भेद, सामान्य भेद, मान वर्णन, पत्र ३—४ तक।
४—रसाभास, अष्टनायिकाभेद, तथा प्रवस्यत्पतिका, आगत्-पतिका और पति आगतादि, दिव्य, अदिव्य, दिव्यादिव्य, आदि नायिका भेद, पत्र ५—६ तक।
५—पद्मिनि, चित्रनि, संषिनी आदि नायिका भेद तथा दूती लक्षण, पत्र ६—७ तक।
६—नायक भेद, अनुराग लक्षण, श्रृंगार भेद, भावलक्षण, हावलक्षण, पत्र ७—१२ तक।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता ने संस्कृत ग्रंथ रसमंजरी को देखकर यह ग्रन्थ बनाया है जैसा संख्या २ के दोहे में दिया है। नायिका भेद के विषय में संक्षिप्त ज्ञान प्राप्त करने के लिये यह अच्छी कृति है। रचयिता के विषय में नाम के अतिरिक्त कुछ ज्ञात नहीं हुआ। रचनाकाल भी नहीं दिया हुआ है। लिपिकाल संवत् १८९६ वि० है। अषैराम के 'प्रेम रस सागर' (यह प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही ह० लि० गुटका में है) से ऐसा मालूम होता है कि अषैराम ने अठारह मंजरियाँ बनाई हैं, जैसा नीचे के कवित्त में दिया है :—

"अष्टादश मंजरी करी है अषैराम नीकैं निशिदिन
गुनि गुनि हिय मांही आनिये ॥"

शायद है, ये रचनाएँ नायिका भेद पर की गई हों जिनको प्रस्तुत रचयिता ने देखे हों। लिपिकाल १८९६ वि० है। कविता केवल कवित्त और दोहों में की गई है। ग्रंथ उपयोगी है।

संख्या १०३ ए. विविध विषय के कवित्त, रचयिता—महाराज सावँतसिंह 'नागरीदास' (कृष्णगढ़ और वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भूपदेवजी शर्मा, स्थान—सिहाना, डाकघर—भरना खुर्द, जि०—मथुरा।

आदि— ॥ अथ लगन के कवित्त ॥

भए लोभीमन सुनि दौरि दौरि जातहूँ तौ रूपकौ लुभायौ समुझायौ हौ दरद मैं।
देत हौ न चैन बस कीनें आप नैन परयौ अधिक वधिक पानि आनि मैं न मद मैं।
अब फल पायौ मुसक्यानि मैं फंसायौ भौंह कसनि कसायौ लै मिलायौ रंग रद मैं।
मारि कैं कटाछिन सौं बेधि तांषे कोइन सौं चूरि करि लोइन सौं डारयौ नेह नद मैं ॥ १ ॥

× × ×

॥ अथ दान लीला का कवित्त ॥

नंद के गेहन षैवै कौं है तुम ओरन के धन ही पर डोलत।
भान सवैं सनि कादि है ऐंठ यौं दान कौ मागि कै देह कौं तोलत ॥
हार तौ गूंगची के हैं हीये कटि पीरौ लता छिनकौं नहि पोलत।
मोर की पूंछ सो मूंड धरैं अहा ऐसे सिंगार पैं ऐंठ सौं बोलत ॥ १ ॥

अंत— कवित्त

ह्वै गयौ अचानक उजास वन गहवर,
घिर आये पंछी मृग भूलेगोन गेहरी।
छाइ गई सोर भयौ धाई चली अलि सेना,
नाचि उठे मोर महा आनंद अछेहरी।

आगम कौ होतही लतानि मैं निहारि कोऊ,
डारि गई हीयै हाय मौहनी को मेहरी।
काहा जानौं कौन ही कहाँ तैं आई कितै गई,
घन से बसन तामैं दामिन सी देहरी ॥

तेरे नैंन मेरे मैंन मेरे नैंन तेरे नैंन और ठौर चलवे,
कौं दीठे कै न पग है।
तेरी प्रीत मेरी प्रीत मेरी प्रीत तेरी प्रीत,
प्रीत की प्रतीत दुहुँ ओर वैठि लग है।
तेरे प्रान मेरे प्रान मेरे प्रान तेरे प्रान,
तेरे मेरे एक प्रान जानैं सब जग है।
तेरो मन मेरो मन मेरो मन तेरो मन,
मेरो मन ठगबे कौं तेरो मन ठग है ॥२३॥

इति संपूर्ण

विषय—निम्नलिखित विषयों पर कविता की गई है :—

१—लगन के कवित्त,	पत्र ४० से ४१ तक।
२—दान लीला कवित्त,	पत्र ४१ से ४२ तक।
३—रास के कवित्त,	४२ तक।
४—वर्षा के कवित्त,	
५—वैष्णव भोजन के कवित्त,	पत्र ४२ से ४४ तक।
६—रास के कवित्त,	पत्र ४४ से ४५ तक।
७—विविध कवित्त,	पत्र ४५ से ५० तक।

संख्या १०३ बी. रीझ चतुर, रचयिता—महाराज सावंत सिंह 'नागरीदास' (कृष्णगढ़ नरेश), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भूपदेवजी शर्मा, स्थान—सिहाना, डाकघर—भरना खुर्द, जि०—मथुरा।

आदि— अथ रीझ चतुर लिष्यते ॥

आवैं घरी ज्यौं भरी ही घरी घरी देषत रूप रहैं उधरी हैं।
मूंदि मुदै नहीं रूंदै ही मारत वावरी रीझ कैं रंग भरी हैं।
टारी टरैं न डरैं न कहूँ ए परैं उररानि अमानी षरी हैं।
जातन ही रषीयाँ सषीयाँ अँषियाँ रिझवारनि पैंडै परी हैं ॥ १ ॥
देषत हैं ब्रज लोग षरौ हटकी अति ये नट सौं न टरी हैं।
जौ हूँ घरीक न देषैं हरी तौ षरी अंसुवान की होत झरी हैं।

मोहू की ह्वै करिं मोसौं सषी न रहैरी रषी अरि ह्वैकैं अरी हैं।
जात नहीं रषियाँ सषीयाँ अँषियाँ रिझवारनि पैंडे परी हैं ॥ २ ॥

अंत—

घूमरे नैंन घुरैं इतरान सौं तैसी कढैं अधरान तैं तानैं।
फेरि चितैं हँसि जात हैं मो दिस चोट महा यह को पहिचानैं।
ताछिन तैं चित्त चैन नहीं अब मोमन की गति मोमन जानैं।
क्यौं हौं छुटैं न छुटैं उरझान मैं प्रान परैं मुसक्यान के पानैं ॥ १ ॥

× × ×

तरफैं छबि साँवरी देषैं विनां जु छुटी जल ज्यौं थल मैं झषियाँ।
पल चैंन न देत षरी विषरी औ कछू मृदुहास चषी चषीयाँ।
अरवीली अनोषि उचाट भरी मतवारी महान रहैं रषीयाँ।
दुषचाय भरी अररानी परैं अति वैरनि वावरी ये अँषीयाँ ॥ ५ ॥

इति रीझ चतुर

विषय—श्री कृष्ण प्रेम में रीझी हुई गोपिका की दशा का वर्णन।

संख्या १०३ सी. गोवर्द्धन समय के कवित्त, रचयिता—महाराज सावंतसिंह 'नागरीदास' (कृष्णगढ़ या वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पत्र—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भूपदेव जी शर्मा, स्थान—सिहाना, डाकघर—भरनाखुर्द, जि०—मथुरा।

आदि—अथ गोवर्द्धन समय के कवित्त ॥

जानैं री वलैया कित वरषैं प्रबल पांनि,
कित परैं ओला कित मेघ माला अनी की।
पायौ प्रान पीतम निहारैं छ्वि गिरधरैं,
चंदहि चकोरी जिमि नेह चितवनी की।
नीरी मुष वीरि देत लेत रूप नैन सुधा,
पगि रहे वातनि परम हित सनीं की।
सात द्योस रैन कभू चैन मैंन जांनि जात,
घनी घन बरिषा मैं बनी बनां वनी की ॥ १ ॥

मत्त मोर चंद्रिका रतन पेच पगिया पैं,
सुंदर सुमन गुछ सोभा नव भाल की।
घूर्नित नयन वंक भुव मुष मंद हासि,
परसत पौन जुग अलक सुचाल की।

ठाढ़ौ ह्वै त्रिभंगिन सौं गिरराज कर धरैं,
तैसी झुकि झूलनि ललित वन मालकी ।
होत मद भंग मनमथ राज सुरराज,
देषि सषि देषि आज छवि नंदलाल की ॥ २ ॥

अंत—कुँवरि किसोरि कहूँ दरसी कुँवर कान्ह,
ताछिन तें मिलिबे की मति यह ठानि है ।
गोपिन की मति फेरि मघवा की बल मेटी,
वरष्यौ पुरींद तब प्रलै पौन पानि है ॥
छूटि गई सहजैं विपत मांझ लोक लाज,
राषी गिरधारी नीरैं राधा रससानी है ।
विषम उपाय करि सींचि हित वेलि ऐसैं,
लगन लगै की हेली अकथ कहानी है ॥ ३ ॥

जामैं तोहि श्रम ऐसे जसहू कौ कहा करैं,
वारी फेरि मईया तेरे चैन ही की भूषी है ।
और वै जे गोप तिन दीनौं है सहारौ नांहि,
चीकनैं चिकनि यान अंग गति रूषी है ।
कैसो गिर धारयौ इन कोमल करन लाल,
सात द्यौस चिंता ही मैं मेरि मति सूषी है ।
आनंद की रलीराम कीनी सव भली,
अैपैं तेरी कहूँ अरे वेटा वांह तौ न दूषी है ॥ ४ ॥

इति गोवर्द्धन लीला समाप्त ।

विषय—गोवर्द्धन लीला का वर्णन किया गया है ।

संख्या १०३ डी. गोकुलाष्टक, रचयिता—महाराज सावंत सिंह 'नागरीदास' (स्थान—कृष्णगढ़ तथा वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भूपदेव शर्मा, स्थान—सिहाना, डा०-भरनाखुर्द, जि०—मथुरा ।

आदि—अथ गोकुलाष्टक लिष्यते ॥

॥ सवैया ॥

जाऊँ कहाँ जितही निकसौं तितही लषिये अति उधम भारौ ।
गावत गालि ठठोल ठगी सुत नन्द कौ छन्द भरयौ है धुकारौ ।
हाथनि मैं पिचकारी लियैं भरि देत भटू वस नाहिं हमारौ ।
औरहु गाँव सषी बहुतैं पर गोकुल गाँव कौ पैंडो ही न्यारौ ॥ १ ॥

× × ×

गावत और धमारि धमारीरु ग्वारन कें मुष धुंध धमारौ ।
लेत है नाम बुरे उघरे ब्रज माच्यौ है फागउ दंगल भारौ ॥
धूर औ छार की मार बढ़ी नहिं सूझै कछू मचि गौ अँधियारौ ।
औरहु गाँव सषी वहुतैं पर गोकुल गाँव कौ पैंडो ही न्यारौ ॥ २ ॥

अंत—आय अचानक मींडत हैं मुषरोरी कहा अवलानि कौ चारौ ।
षोलत हैं अंगिया की तनी उरलावत कुंकुम कौ करिगारौ ॥
ऐसो भयौ भंडवा नंदराय कें आहा बडेन कौ पुन्य निहारौ ।
औरहू गाँव सषी वहुतैं पर गोकुल गाँव की पैंडो ही न्यारौ ॥ ५ ॥

× × ×

ठाढे ही देषिये री ठग से मग मैंन टरैं करते जु विगारौ ।
षोलि वधून के घूंघट कौं लपटावत है मुष चन्दन गारौ ॥
कौन पैं जाय पुकारिये हो सवकौ मन प्रान है नंद दुलारौ ।
औरहू गाँव सषी वहुतैं पर गोकुल गाँव कौ पैंडो ही न्यारौ ॥ ८ ॥

॥ इति गोकुलाष्टक संपूर्ण ॥

विषय—आठ सवैयों में श्री कृष्ण की गोकुल की गोपियों के साथ होरी खेलने का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—विशेष के लिये देखिए "गोपी वैन विलास" का विवरण पत्र ।

संख्या १०३ ई. फागविलास, रचयिता—महाराज साँवंतसिंह 'नागरीदास' (कृष्णगढ़ तथा वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति-पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भूपदेव शर्मा, स्थान—सिहाना, डा०—भरना खुर्द, जिला—मथुरा ।

आदि—अथ फाग विलास श्री महाराज कुँवांर साँवत सिंहजी कृत लिष्यते ।

॥ सवैया ॥

देवन के रु रमापति के दोउ धाम की वेदनि कीनी बड़ाई ।
संष औ चक्र गदा अरू पद्म सरूप चतुर्भज की अधिकाई ।
अमृत पांन विमांननि वैठिवो नेती कही तेती एक न भाई ।
स्वर्ग वैकुण्ठ में होरी जो नाहि तौ कोरी कहा सै करैं ठकुराई ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

ठौर ठौर चाचर चहुल मची चंगन की,
अंगन की औरैं दसा औरे रूप छायो है ।
आनंद उरनि अति अमित अषंड वाढयौ,
प्यारे मिलिवे कौ दाव दिन दरसायो है ।

लाज औ रुषाई तिय संग लै विवेक पति,
भाज्यो व्रज मैं तैं मार वाननि दवायौ है ।
पौढी प्रीत जागन नवल नेह लाग यौं,
फागुन सनेहिन के भागन सौं आयौ है ॥ २ ॥

अंत—

षेल षेल चायनि चतुर चौक चाचर मैं ठाढ़े,
थकि इतैं उतैं भीर सषियान की ।
मंद मंद पवन सुलावत नवेलियाँ,
जही के पीत फूलनि गुहीलै पषियानि की ॥
चाहैं मन मौंहन वदन राधा रंग भरयौ,
दोऊ नेह नदगत दोऊ झषियांनि की ।
विनहीं गुलाल रंग रसिया उठावै मूठ,
देवन कौं झिझक रंगीली अँषियानि की ॥११॥
॥ फाग विलास संपूर्ण ॥

विषय—श्री कृष्ण के साथ गोपियों का होरी खेलने का वर्णन ।

संख्या १०३ चफ. सीतसार, रचयिता—महाराज साँवंत सिंह 'नागरीदास' (कृष्णगढ़ या वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति-पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भूपदेव शर्मा, स्थान—सिहाना, डा०—भरनाखुर्द, जि०—मथुरा ।

आदि— ॥ अथ सीतसार लिष्यते ॥

दोहा

सीतसार संकेत हित रचिवर चौपर तोत ।
हितय के नाहीं उठैं फिरि कचे होत ॥ १ ॥
समझिदाव पिय चूकि कैं चलत सारि सुष सारि ।
पकरि पिछौंहौं देतकर नवल डकीली नारि ॥ २ ॥
कटकसार गहि लटक सौं देत छबीली वाल ।
परत झगरई षेल में होत सेत तैं लाल ॥ ३ ॥

अंत—

थरहरात तन वचन चल चंचल लोचन वंक ।
भये भीत वस सीत कैं सरकति आवति अंक ॥१२॥
अनदेषे द्रग तरफरत विना मिलैं वेहाल ।
एक निहा लीने भये दोऊ निपट निहाल ॥१३॥

नेह पगे रहियौ लगे नागर हिम रित धाम।
सुंदर पानिय सहित है तिय उर गरम हमाम ॥१४॥
इति श्री सीतसार संपूर्णम्

विषय—शीतकाल के दिनों में श्री कृष्ण और राधा की क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है ।

संख्या १०४. जैजिन पच्चीसी, रचयिता—नवल, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला विशन स्वरूप जी, स्थान तथा डाकघर—राया, जिला—मथुरा ।

आदि—अथ जैजिन पच्चीसी लिष्यते ।

सीस धार करि नमत हू जी में उपजी एव।
पांच वीस कीजै दोहा जै जै जै जिन देव ॥ १ ॥
तुम गुन अगम अपार हो गन धरल हेन देव ।
तुमसे तुमही हो प्रभु जै जै ... ... ॥ २ ॥
प्रगट विरद कानन सुन्यो त्यार जगत उछेव ।
सुरनर मुनि वंदत चरन जै जै जै० ॥ ३ ॥
अद्भुत अतिसै तुम विषै राजत है स्वमेव ।
छबि लषि भवभय अघकटै जै जै जै० ॥ ४ ॥
नाम तिहारो जाप तै तजि मिथ्या मत टेव ।
ते वाँछित फल पाय है जै जै जै० ॥ ५ ॥

अंत—सीस सकल प्रनाम तै उर तुम ध्यान धरेय।
सफल होत कर पुजितै जै जै जै० ॥ २३ ॥
दृढ़तु सरधा करत जे नर भवलाहौ लेव।
अचिर काल मैं सिव लह्यौ जै जै जै ॥ २४ ॥
ऐ सरधा मोरे उर भई कीजै तुम पद सेव।
"नवल" नवल गुण गाइये जै जै जै जिन देव ॥ २५ ॥

॥ इति जै जिन पच्चीसी संपूर्णम् ॥ १ ॥

विषय—जिनदेव का गुणगान किया गया है ।

संख्या १०५. नवलदास जी की वाणी, रचयिता—नवलदास (कड़ा नगर), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२८ वि०,

(संभवतः), लिपिकाल—सं० १८९८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० अयोध्या प्रसाद जी, स्थान—जतीपुरा, डा०—गोवर्धन, जि०—मथुरा ।

आदि—अथ नवलदास जी की वाणी लिष्यते ।

॥ चौपाई ॥

चेतन देश काया परनामा । चराचर सबमें विसरामा ॥
सहजई बसै सहज भजि जाई । सहज सुभाव जग रह्यौ भुलाई ॥
जामारग विरले नर जानें । वेद शास्त्र अरु सन्त बषानै ॥
गुरु परताप जासु फल होई । या कौतिक कौ निरषै कोई ॥
शिव विरंचि सनकादिक गायौ । सुकदेव व्यास भेद प्रगटावौ ॥

॥ दोहा ॥

काया नगर अनूप है परमातम को वास ।
गुरु किरपा ते लषि पर्‌यौ वरन्यौ नवलादास ॥

॥ चौपाई ॥

जीव पुरुष जाकी द्वै नारी । सुमति कुमति अति परम दुलारी ॥
निस वासुर पीतम संग रहही । अपनी अपनी वातैं कहहीं ॥
वोली सुमति सुनौ मम राजा । सुफल होहि जासौं सब काजा ॥
कछुक दान विप्रन कौं दीजै । हरि गुरु कृपा हृदै धरि लीजे ॥
तीरथ वरत दया उर मांही । सदा रहै हरि भक्तिन ताईं ॥

॥ दोहा ॥

जिन यह सब सिरजयो पाले करै संघार ।
नवल सोइ चित राषियो छाँड़ि भर्म व्यौहार ॥ २ ॥

कुमति सुनी जवही यह वानी । सुमति सीष पिय के मनमानी ॥
धाइ पिया कौ कंठ लगायौ । मधुर मनोहर सवद सुनायो ॥
अहो कंथ पीतम सुर ग्यानी । याकी वात कहा तुम मानी ॥
या कपटिन वौहोतक घर षोये । राज छाँड़ नल वन वन रोये ॥
मूंड मुंडाय नगन है रहे । भूष प्यास सव विपदा सहे ॥

॥ दोहा ॥

अपने कुल की रीति तजि देश दिसन्तर जाहि ।
उदर काज घर घर फिरै नवल समझि मन मांहि ॥

अंत— चौपाई

वाकै जिय डर वैठ्यौ भारी । आयौ जुर घर पर्‌यौ दुषारी ॥
सवने मिलि जुरिमतौ उपायौ । पेंडे में कौ भूत जनायौ ॥

लोगनि यहां थान ठहरायौ । अपनो कुल पुज्य आप वनायौ ॥
जाइ ब्रछ की पूजा करी । जब वंदे की वेदन टरी ॥
यैसेइँ डर जियहि सतावै । विन सतगुरु कछु मरम न पावै ॥

॥ दोहा ॥

पानी ते वर्फ भई नाम रूप हैं दोइ ।
नवल घुरी जल ही गई दूजी कहै न कोई ॥
"येक सहस्र अठाइस परमान ।
फागुन सुदि चौदसि मिति मन परमोद वपान ॥"
रामानुज है संप्रदा कड़ा नगर सुषवास ।
गुरू मलूक उपदेश सौं बरन्यौ नवला दास ॥

इति श्री नवलदास जी के दोहा संपूर्णम् ॥ श्री यमुनाजी पठनार्थं स्वार्थं परमार्थं ॥ श्री केशवदास जी कृपा सूं ॥ संवत् १८९८ मिती श्रावण शुक्ल ९ भौमे लिषि श्री महाराज यमुना जी स्थानं ॥

विषय—मनुष्य के शरीर के अन्दर काम, क्रोध, मद, मोह आदि दुर्वृत्तियाँ और ज्ञान, संतोष, दया, धर्म, वैराग्य, आदि सुवृत्तियों का तथा सुमति कुमति और जीव का रूपक बाँधकर ज्ञानोपदेश किया गया है। कथा रूपक के रूप में इस प्रकार है:—

जीव राजा की दो रानियाँ सुमति और कुमति थीं। सुमति का ज्ञान, संतोष, वैराग्य आदि सुवृत्तियों से एक सुन्दर परिवार बसा हुआ था और कुमति की संतानें काम, क्रोध, मद, लोभ आदि थीं।

एक दिन सुमति जीव राजा को ज्ञान, धर्म और दया-पुण्य संबंधी कार्यों को करने के लिये उत्साहित कर रही थी कि यह बात कुमति ने सुन ली। उसने राजा से सुमति की बुराई की और कहा कि इसी ने नल सरीखे भले राजाओं का घर बरबाद किया है। इसका कहना न मानना चाहिए और कामनि-कंचन तथा कलत्रादि से नेह जोड़ना चाहिए।

सुमति चुप न रह सकी। अतः कुमति के साथ वाद विवाद छिड़ गया। बहुत से दृष्टान्तोपरान्त कुमति को भागकर अपने पुत्रों की शरण लेनी पड़ी। उसके पुत्र सुमति की बातों को न सह सके और उससे लड़ने को तैयार हो गए। इधर सुमति के पुत्र ज्ञान, संतोष, दया, धर्मादि भी लड़ने को तैयार हुए। दोनों ओर बड़ा वाक् युद्ध होने लगा। किंतु अन्त में दुर्वृत्तियों को हारना पड़ा। देवताओं ने सुमति को आशीर्वाद दिया।

इसी तरह जीवराजा एक दिन सुमति से अमर होने के लिये एक पदार्थ खोज निकालने की जल्दी मचाने लगा जो उसका भ्रम था। इस पर सुमति ने उसको अच्छा ज्ञानोपदेश दिया जिससे उसका भ्रम जाता रहा। यह ग्रंथ जिन-जिन ग्रंथों के आधार पर लिखा गया है, रचयिता ने निम्नलिखित दोहे में उनका इस प्रकार वर्णन किया है:—

एकादस अरू उपनिषद् निज गीता की आस।
जोगवसिष्ट बेदांत मत वरन्यौ नवलदास॥

संवत् दोहा

एक सहश्र अठाइस परमान।
फागुन सुदि चौदस मिति मन परमोद वषान॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ आध्यात्मिक विषय का है। रचयिता का नाम नवलदास है जो कड़ा मानिकपुर निवासी सुप्रसिद्ध संत मलूकदास जी के शिष्य थे। अपने को ये रामानुजी संप्रदाय के बतलाते हैं। रचनाकाल का दोहा अशुद्ध है जो लिपिकर्त्ता के हस्तदोष से हुआ जान पड़ता है। लिपिकाल संवत् १८९८ वि० है।

संख्या १०६. पलटु साहब की वानी, रचयिता—पलटुदास, कागज—देशी, पत्र—६८, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—ठा० लछमन सिंह, स्थान व डाकघर—छाता, जि०—मथुरा।

आदि—

... ... पतसेर हेडराई॥
पलटू मेरे वचन को ले जापामी मान।
मीठ वहुत हरिनाम है पीव तनिक सै जान॥१६॥

कुंडलिया

सतगुर सिकलीगर मिलै सब छुटै पुराना दाग।
सब छुटै पुराना दाग तन मुरचा माही।

× × ×

॥ श्री सत गुरु साहेब की दया सकल संतन की दया॥

अरियल (अरिल) पलटू साहब के लिष्यते

ये जीवन झूठ साँच है मरन को। अबहू चेत गमार गहौ गुर सरन कौ॥
हाड मांस पर चाम पर रंग है। अहारे पलटू जाइ जीव अकेल कोई नहीं संग है॥ १॥
ये जीवन दिन चार भजन कर लीजिये। तन मन धन वार संतन पर दीजिए॥
संतन से सव होइ वे चाहे सो करै। अरे हारे पलटू संग फिरै भगवान संत से वे डरै॥ २॥

अंत—

इधर ना उधर तू जाईगा किधर जिधर तू जाइ तिधर पकर लाऊँ।
कोस हज्जार तू जाइगा पलक में ग्यान की कूटी लै उई छाऊँ।

सुमत जंजीर तेरे गले डार कै जहाँ तू जाइ तहाँ पैंचि लाऊँ ॥
दास पलटू कहै मारिहौं ठौर ही जभी मैदान में पकर पाऊँ ॥१६॥

× × ×

ब्रह्म परचै लिष्यते

पूरन ब्रह्म आपू हते जहीया। पुरस प्रकृती हती न तहीया।
सुंन्न सब्दन मोहे अहरा ॥ १ ॥
ब्रह्मा बिस्न माहेस ना होते नही मोह अहंकार।
करता कर्म काल ना होते नहीं दसौ औतार ॥ २ ॥

× × ×

निरछि निरनै करै सतगुर कप ताप सूनि बूझै।
इन सब्द कों हरै सकल संताप ॥५१॥
साध महंतो पंडितो साधिक सिध सरदार।
तुम परमोधौ जगत को इन सब्दन का करौ विचार ॥५२॥

॥ संपूर्ण ब्रह्म परचौ ॥

विषय—ज्ञान, वैराग्य, उपदेश, तथा भक्ति संबंधी विषयों का वर्णन। हिंदू, मुसलमान एकता पर भी जोर दिया गया है।

१—कुंडलिया,	पत्र ३ से १२ तक।
२—अरिल्ल	पत्र १२ से ३६ तक।
३—ककेरा 'क' से 'ह' तक के अक्षरों पर कविता,	पत्र ३६ से ४७ तक।
४—झूलना,	पत्र ४७ से ५६ तक।
५—ब्रह्म परिचय,	पत्र ५६ से ६९ तक।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ के आदि के ८ पत्रे और मध्य के संख्या १५, १९, २०, २१, २२ और २३ के पत्रे नहीं हैं। इसमें कुंडलिया, अरिल्ल और झूलना छंदों का अधिक प्रयोग हुआ है। भाषा तीन तरह की प्रयुक्त हुई है—ब्रज, खड़ी बोली और फारसी मिश्रित खड़ी बोली। अंतिम दो रूप झूलना में मिलते हैं। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

संख्या १०७. लवकुश पर्व, रचयिता—परमानंद (कन्नौज), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—८×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिवंशलालजी, ग्राम—पचहेरा, डा०—बाजना, जि०—मथुरा।

आदि—सिध श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गुरुभ्योन्म ॥ श्री सरस्वतीन्म ॥ अथ लौंकुस पर्व लीषते ॥

निति णामशारंग सुष देषत मन आनंद ।
काहे दुषु सुषु स्यामु है, वुझत "परमानंद" ॥
प्रमानद वनु जन्मु हमारै जहाँ कंचनु तहाँ जाहि ।
तोल वरावरि हम भई मोल वरावरि नाहि ॥ १ ॥

तपु कीन्यौ तनु लालु है भक्ति विना सुष स्यांमु ।
कंचन समि तपु तौलीयौ मोल घट्यौ विनु राम ॥
हरयौ भरयौ सांवनु भयो कल ही संग न साथ ।
वाई सम्युंनौ वीति के कछु न आयो हाय ॥ २ ॥

•भूलत भूलत दिन गए समझ्यो ना मतिमंद ।
गयौ भूलि संसारू सब कोई रह्यौ न "परमानंदु" ॥
जोती पकरयौ तंतकी गावौ गुण गोविंद ।
सहजहिं डोल्यो रामकौ झूलत परमानंद ॥ ३ ॥

राजा उठि पायन परै विनऊँ जैमुनि तोहि ।
रामचंद्र लौंकुश रनु मांड्यौ सुनि जिज्ञाक्षा मोहि ॥
वन्नवान अर्जुन कथा जैमुनि कहै वषानि ।
तातै अति लौंकुस लरे लरै जु सारंग पानि ॥ ४ ॥

राम जु अमृत रूषरा फल लौंकुस विच कंद ।
सरधा सवै सुसान है जनक सुता सतसील ॥
सुनति गति पाइये ॥ ५ ॥

अंत—

तौ अवधि वितीत जु भई सुनौ द्रज वचन अभेवा ।
विप्र करहुँ कल्यान कुँवर तुम्हरी करि है सेवा ॥
हमकूं अग्या दीजिये करि जोरि कहै रघुवीर ।
करि प्रनाम चले है चारयौ पौहोचे सुरसरि तीर ॥ सुनत ॥ १८०॥
तौ गंगा के उष कंठ जाई कै आसनु कीनौ ।
सहस्र वर्ष तहाँ रहे तपस्या पूरन कीनौ ॥
अंत्र ध्यान रावौ भये रहे ज्योति सरूप समाइ ।
संत साधि मिलि सुमिरन कीजे रामनामु चितुलयाइ ॥ सुनत ॥ १६१॥

× × ×

कनवजीया महैमा सुतु गावै प्रभु जसु परमानंद ॥ सुनति ॥ १९३ ॥
जो सुषु चाहै भुवलोक मैं तौं सुंमीरौं जादौराय ।
पंकज पग रघुवीर के तासौं रहौं लिपटाइ ॥
सुनत गति पाइये ॥१९४॥

इति श्री लौंकुस पर्व कथा संपूरन जथा प्रति तथा लीपते ममदोषो न दीयते लिषते मिश्र सेठमल्ल संवत् १८१८ अश्वन सुदी सप्तमी ७ सौमवासरे दसैहरामधि ।

विषय—जैमुनि पुराण के आधार पर लवकुश कथा का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम परमानंद है । ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है, किंतु लिपिकाल संवत् १८१८ वि० होने से रचना काफी पुरानी है । रचना ग्रामीण भाषा में हुई है । गोपीचंद की कथा जिस प्रकार गाँवों में गाई जाती है, उसी तरह की यह रचना भी जान पड़ती है । इस तरह की कथाएँ अधिकतर भीखमंगे और नाथ लोग इकतारे के साथ गाते हैं ।

संख्या १०८ ए. मान कवित्त, रचयिता—प्रभुदयाल—कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जुगलकिशोरजी 'शर्म्मा, स्थान व डाकघर—जगसौरा, जि०—इटावा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ मान कवित्त ॥

दूती वाक्य राधिका जी सें ॥

घट तात अरी तनियाँ पति सौं करि मोहहियैं रिस ना धरीयै ।
प्रभु द्याल महेस के भाल वसैं तिहि चालि कुचालि सवै हरियै ॥
कसि सारग तातहि सारग मैं हरि अंकम सारग मै भरीयै ।
तजीयै रिपुता वृष भान सुता अव सैल सुता सुत ही करियै ॥

॥ अथ वसंत रितु कवित्त ॥

आये वसंत न कंथ घरै अव पाँवर प्राण कहौ किमि रहिहैं ।
फूलन हार भईं सरसौं सर सौ तन मैं सरसे करकइहै ।
धारिहौं किमि धीर कहौ प्रभुद्याल जवै रतिनाथ हिये विच दइहै ।
प्राण अरप्पि मरौ सजनी जो पै तंत वसंत पै कंथु न अइहै ॥ १ ॥
अखीआंन ते पीरे चुयैं अँसुआ पियरी तन सारी दवारी लगइहै ।
पिअरी विनु प्रीतम देह भई पिअरो गुदि माल न हार लिआइहै ।
पिअरे तन भूषण कंचन के प्रभुद्याल पिया विनु काहि दिखाइहै ।
प्राण अरप्पि मरौं सजनी जौ पै तंत वसंत पै कंथु न आइहैं ॥ २ ॥

अंत—विरहा की घटा तन पीरी उठी पियरे हग नीर गिरै झड़ ल्याई ।
सुधि कौंधति पीत पिया की हमैं पिअरे तन दौरि गई पिअराई ॥
पिअरे तन पीर उठी तबसैं जबसैं द्रग दीन वसंत दिखाई ।
प्रभू द्याल न पाँवर प्राण कढ़ै गुधि मालिनि पीरोई हार लिआई ॥ ७ ॥
फूले गुलाब गुलाव सखी अलि पुंज समूह वधे मड़रावैं ।
वन वेलि सबै द्रुम पै हुलसी तरु ऊपर कोकिल सब्द सुनावैं ॥

कदली सहसात हुलास किये खहराति समीर सरीर दगावैं ।
प्रभूद्याल वियोग मिटै तवहीं घर आइकैं कंथु वसंत वधामैं ॥ ८ ॥
पिअरी तन सारी वसंती रंगौं सखी रंग सुरंग कौ नाम मिटइहौं ।
पिअरे तन भूखण कंचन के सजिहौं मनमोद विनोद वढ़इहौं ॥
पिअरे चुनि फूल (सु) ल्याऊँ सखी गुथिहार महेस को भाल चढ़इहौं ।
प्रभूद्याल पिया कौं लखौं जवहीं भरि अंकमकंथ वसन्त मनइहौं ॥ ९ ॥

विषय—राधा का मान दूती द्वारा मोचन कराया जाना, वसंत ऋतु और तत्कालीन उद्दीपनों के संसर्ग से वियोगिनी की वियोगावस्था का वर्णन ।

संख्या १०८ बी. होली उषादि, रचयिता—प्रभुदयाल (सिरसागंज, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जगन्नाथ प्रसाद जी, स्थान—फूलपुर, डाकघर—भरथना, जि०—इटावा ।

आदि—॥ अथ होली उखाजी की ॥

क्यौं ऊखा घबड़ानी । कहौ हमसे न बखानी ॥
ऊखा कहति सुनहु चित्र रेखा चित दै स्वपन कहानी ।
मदन रूप धरि मोर मुकुट सिर जन उन पर सो आनी ॥
चौंकि हम जिय मै सकानी ॥ क्यौं० ॥

लीनो मन अपनाय लियो दिल कहि कहि मुख मृदुवानी ।
जव हम अंक भरन पिय चाहौ तवही नींद उचिटानी ॥
सखी करमल पछितानी । ऊखै समुझावति चित्ररेखा
बोध बोध समझानी ॥
तीनि लोक तोहि लिखि दिखराऊँ लीजै पिय पहिचानी ॥
मिलादूँ पल भरि में सयानी ॥ क्यौं० ॥
सुमिरि सरस्वती और उमापति लिखन लगीं गुण खानी ।
पहिलैं लिखि रवि ससि लिखि दिखराये इन्द्र आदि सुरज्ञानी ।
नहीं वह छवि दरसानी ॥ क्यौं० ॥

× × ×

गौरि कृपा प्रभूद्याल भनत मुदपायौ वर सुखदानी ।
जुगल लखि तड़ित लजानी ॥ क्यौं ऊखा घवड़ानी ॥

अंत—॥ होली वसन्त की ॥

कैसे वसन्त धरौंरी ॥ कहौ मालिनि हमसौंरी ॥
तजि व्रजवास निवास साँवरो जाइ विदेस रमोरी ॥

निपट कठिन हुइ सुधिहु न लीनी अजहूँ ना वहुरौरी ॥
रोय नित विपति भरौरी ॥ कैसे वसन्त धरौरी ॥
पिया विन फूल गुलाल अंगार से लागत देखत दृगन जरौरी ॥
गुंजि गुंजि मधुकर कुंजनि में तरसावत हम कौरी ॥
दिवस निसिनि वन भ्रमरौरी ॥ कैसे० ॥
उमँगि मदन तन वदन लियौ डसि विकल विहाल फिरौरी ॥
वन वेली द्रुम रहै लसानी ॥ सरसानी सरसौं री ॥
देखि जिय माहिं डरौरी ॥ कैसे० ॥
कोकिल कूक हूक उठै तन मैं अब मैं कैसी करौरी ॥
तरसि तरसि प्रभूद्याल लाल विन पाँवर प्राण हरौरी ॥
खाय विख जहर मरौरी ॥ कैसे० ॥

× × × (शेष लुप्त)

विषय—१—ऊषा, रुक्मिणी, गज-ग्राह और द्रौपदी की भक्ति के वश में होकर भगवान् से रक्षा करने की प्रार्थना की गई है, (होली में) पत्र १ से १० तक।

२—वसन्तादि संबंधी कुछ फुटकल होलियाँ, पत्र ११ से १६ तक।

संख्या १०८ सी. सद्गुरु स्तोत्र, रचयिता—प्रभुदयाल (सिरसागंज, मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—७$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला श्रीनारायणजी, पटवारी, ग्राम—धरवार, डाकघर—बलरई, जि०—इटावा।

आदि—

श्री सद्गुरु स्तोत्र लि०।

सम्पुटित हृदय के खिलाने वाले श्री सद्गुरु भगवान की जय—कृपालु दयालु श्री स० जय सर्वोत्तम गुण निधान दया की खानि प्रभु जगत्पति के प्रियकरव प्रियवर श्री स० जय कृपा सिन्धु करूणाकर शरण्य के शरण श्री स० जय परमेश्वर ईश्वर के तुल्य जीवन दायक सुन्दरता में युसुफ को लज्जित करने लायक जिनके आराध्य श्री रघुनायक सवके प्रिय व प्रीति रीति प्रतिपालक प्रकाश में पूर्ण चंद्र व शुभ दर्शन में द्वितीया के चंद्र श्री स० जयसर्व विद्याओं के ईस के तत्त्वज्ञ श्री स० जय श्री भगवत्तत्व ज्ञातरूपों के प्रियतम के प्रेमपात्र श्री स० जय चित्तहर्ष वर्द्धक उपदेश रूप अपूर्व पुष्पों से शिष्यों का मस्तिष्क सुवासित करने वाले श्री स० जय।

अंत—

जिनके दर्शन ते मिटत पाप जिनके वचनामृत पान से नशत त्रयताप जो अहर्निश करते श्री युगल नाम का आलाप जो दीन जन के माई, बाप तिन (श्री स० जय)।

पीव नगर की गलिन गलिन में, तुम प्यारे आये हो घूमि ।
कृपा करौ अरु आज्ञा देवो । हमहूँ लेवें तव पद चूमि ॥

॥ आपकी जय ॥

कोमल भाव स्वभाव वाले सच्चे प्राण प्यारे के हाव भाव के भाव वाले व उसकी चाह मिटाने वाले (श्री स० जय) सम्पति में नहीं हर्षित व विपत्ति गति में न चलित होने वाली सत्यासत्य विवेकिनी मति वाले महामति सर्वाभि मतिप्रद (श्री स० जय जय) तूती पक्षी सरीखे मधुर बोली में भगवत् की एकता के वचन सुनाने वाले व हुमा सदृश अपनी कृपा की छाँह बाँह गहे हुए शिष्यों पै डारि उनको उच्च पद पर चढ़ाने वाले (श्री स० जय)।

॥ दोहा ॥

शशि के तारे वहुत हैं, तारन के शशि एक ।
हम अस उनके वहुत है, हमरे उन अस एक ॥

॥ श्री सद्गुरु भगवान की जय ॥

इति श्री सद्गुरुस्तोत्र समाप्तम् शुभम् ॥

विषय—श्री सद्गुरु विनय वर्णन ।

संख्या १०६. विराट चरितांमृत, रचयिता—प्राणनाथ, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—५½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० रेवती नंदन (रेवती रमण) जीमिश्र, स्थान—वेरी, डा०—वरारी, जि०—मथुरा ।

आदि— श्री गणेशाय नमः ॥

एक समै कैलास मै वैठे हे हरनाथ ।
पारवतीकूँ संगलियैं होत परम परगात ॥ १ ॥
महादेव तव ध्यान करि देष्यौ रूप अषंड ।
उमा निरषि तव यौं कह्यौ किमि देष्यौ गगन अषंड ॥ २ ॥

॥ महा० उ० ॥

सुनो सिवा मन लाइकैं बुद्धि युक्त अनुराग ।
हानि लाभ जीवन मरन और लषौ वैराग ॥ ३ ॥
गुप्त ध्यान प्रघट कियौ गगन भूमि के माझ ।
दिवस मध्य तव लगि लषै जवलग होइ न सांझ ॥ ४ ॥
सविता मांही पीठि करि छाया गल अवरेष ।
निमषन लागै एक टक फिरि ऊंचे दृग देषि ॥ ५ ॥
नष सिष मूरति आपनी प्रघट देषिलै मित्र ।
स्वेत वर्न अति ऊजरौ दीर्घ पुरष पवित्र ॥

अंत—

विराट स्वरूपी जो गहै सुगम रच्यौ सुनि मित्त ।
आधघरी लौं द्रष्ट में दृढ़ करि राषि सु चित्त ॥५५॥
विराट चरितामृत कह्यौ सिव पुरान अनुसार ।
'प्राननाथ' भाषा करी छत्रसाल नृप द्वार ॥५६॥
दियौ पंथ प्रनाम करि परमधाम दरसाइ ।
प्रगट षांनि हीरानि की नृप कौं दई बताइ ॥५७॥
द्वादस कोसी गिरद मैं परनापुर उर आनि ।
जित षोदै तितही कढै विदित वज्र की षानि ॥५८॥

इति श्री सिव पुराने सिव गौरी सम्वादे व्योम खंडे विराट चरितामृत समाप्तं ॥१॥१॥१॥

विषय—महादेवजी ने गौरी से एक ऐसी क्रिया का वर्णन किया जिससे भविष्य तथा गुप्त बातों का प्रकटिकरण होता है। यह क्रिया सूर्य, चंद्र और दीपक की ज्योति के सहारे की जाती है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता महाराज छत्रसाल के सुप्रसिद्ध गुरु प्राणनाथ हैं। इसमें एक ध्यान क्रिया का वर्णन किया गया है। जिसके सहारे भविष्य तथा गुप्त बातों का ज्ञान प्राप्त होता है। शायद इसी क्रिया शक्ति से प्राणनाथ ने महाराजा छत्रसाल को हीरे की खान का पता दिया था। इस ग्रंथ से रचनाकाल और लिपिकाल दोनों ही मालूम न हो सके। ग्रंथांत में लिखा है कि परनापुर (? पन्ना) के चारों ओर बारह कोस में जहाँ भी खोदा जाय वहीं वज्र की खान निकलेगी।

रचयिता धामी पंथ के प्रसिद्ध प्रचारक हैं। इसी पंथ को प्रणामी संप्रदाय भी कहते हैं।

संख्या ११०. जानकी विजय रामायन, रचयिता—प्रसिद्ध, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१३ वि०, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० आशाराम जी, स्थान—दरवा, डा०—माँट, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ जानकी विजय रामायण लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

चिरत राम सत कोटि किय विविध मुनिन विस्तार ।
अद्भुत चरित विचित्र बहु गुप्त प्रगट संसार ॥
भारद्वाज मुनिसन कहत वालमीक इतिहास ।
नाना विचित्र रामायन विजय जानुकी जास ॥

॥ छंद ॥

जय जयति जय जगदंबिका जननी अषिल जगजानकी ।
अति अतुल जासु प्रभाव पावन गम्यनहि गतिज्ञानकी ॥

गुनतीन पाँचों तत्व मय सब निर्गुन सर्गुन रूप जो।
प्रसिद्ध त्रिभुवन विभव विभूषित अमित सक्ति सरूप सो ॥

अंत— ॥ छंद ॥

लीला ललित सियराम यह अतिगुप्त ग्रंथनि भर रही।
पावन करन हित निज गिरा "परसिध" भाषा कर कही ॥
पद पंक जानुकी प्रीतजुत जो सुनहि सारद (? सादर) गावही।
सौभाग श्रिय संपति सकल कल्यान कीरति पावहीं ॥

॥ दोहा ॥

एक सहं(स) अरू आठ सै संवत दस अरू तीन।
सुक्ल पक्ष दुतिया मास मधु भाषी कथा नवीन ॥

इति श्री जानुकी विजय रामायन सहंस्र सीस दिव्य रावन वध संपूर्ण समाप्तं ॥
श्री कृष्णायनमः

सोने मध्ये पठनार्थं जै किसोर संबत् १९१२ भाद्रपद वदी ५ शनीवासरे ॥

विषय—रावण को मारकर रामचन्द्र जी जब अयोध्या के सिंहासन पर बैठे हुए थे उस समय सप्तर्षि मंडल उनकी स्तुति करने को आया। ऋषि लोग जब उनकी स्तुति कर रहे थे तो सीता जी हँस दीं।

रामचन्द्र जी ने इसका कारण पूछा तो सीता जी ने एक सहस्र शीश दिव्य रावण का पता बताया और कहा जब तक वह नहीं मारा जाता तब तक आपकी यह स्तुति निरर्थक है।

निदान रामचन्द्र जी दलबल सहित सहस्र शीश दिव्य रावण को मारने के लिये गए। साथ में सीता जी भी चलीं।

किन्तु रामचन्द्र जी उस रावण को न जीत सके। पश्चात् सीता जी ने उसका वध किया। यही कथा इस ग्रंथ में वर्णित है।

रचनाकाल

एक सहं (स) अरु आठ सै संवत दस अरु तीन।
सुक्ल पक्ष दुतिया मास मधु भाषी कथा नवीन ॥

संख्या १११. कवित्त, रचयिता—प्रेमनिधि, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—चौ० मातादीनजी, स्थान—कंजरा, डाकघर—करहल, जि०—मैनपुरी।

आदि—

तेज के निधान खंभ फारिकै प्रगट भए,
जनहित कारी नर वपु धारो है।

चौकौ चतुरानन रचि मड़ि रह्यौ चंद्र चूड़,
रमाचंक वानी रूप अलषा निहारो है ।
मनौ निधि प्रेम भक्ति वछल कहाए यातै,
भक्तन के काज दयौ कबहूँ न टारौ है ।
ऐसे अव दुष्टनि को कीजिए वधन नाथ,
जैसे हिरनाकुस कौ उदर विदारो है ।
एक ओर क्रूरर कतारन सौं आए दौरि,
एक ओर त्रपत समूह जुत ठाढ़ौ है ।
एक ओर दीरघ दमार कौ दवाउ भयौ,
एक ओर पवन प्रचंड झ्यौर वाढ़ौ है ।
भनै निधि प्रेम ऐसें तुमही कृपा के सिंधु,
मीत होत दीननि के देषि दीन गाढ़ो है ।
दुष्ट छल छंदन ते रक्षहु गोपाल मोहि,
पारधी के फंदन तें जैसे मृग काढ़ो है ।

अंत—

मच्छ कच्छ सूकर निगम गावै नरहरि,
वावन ह्वै बलि पै पहुमि पैंड़ भरे हैं ।
प्रकट परसराम छत्रिन विनकीनी छिति,
राम ह्वै अवधि ईस वीस भुज दरे हैं ।
कृष्ण ह्वै पछारौ कंस जगंनाथ निह कलंक,
भनै "निधि प्रेम" और कौने लषि परे हैं ।
जानत हौं करुना कौ छोड़ि हौ न कैसोराइ,
करूना के कारन अनंत रूप धारे हैं ।
रसना वही है रामनाम के रंगी है रस,
संगत वही है संत सेवन परन सौ ।
बैन अैन वेई छवि छाके घन स्याम तन,
दीवो हरि हेत वनि आवै जो करन सौ ।
भनै निधि प्रेम हियौ सोई जिहिवसै भक्ति,
कीजिये विचार नहीं वरन अवरन सौ ।
जीवन मरन नर देह कौ सुफल जोई,
करिहौ सनेह सीताराम के चरन सौं ॥
ध्रुव कैसी धारन है तारन त्रिवेनी जिमि,
दीन भी उधारन ज्यौं वरुन कौं दीसी है ।
गंग की तरंग अंग पापन विनासिवे कौ,
नरहरदास की प्रतिज्ञा वरनीसी है ।

भनै "निधि-प्रेम" सीताराम की कृपा कौ भूल,
दुष्टनि कौ सूल कोटि जनम तचीसी है।
आगत करन सरनागत को सुनौं संत,
करुना निधान जू की करुना पचीसी है।

॥ इति ॥

विषय—कवि प्रेमनिधि के भक्ति संबंधी कवित्तों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—हस्त लेख के आदि और मध्य के कुछ छंद लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या ११२. भक्तमाल, रचयिता—राघवदास, कागज—देशी, पत्र—१३९, आकार—११$\frac{1}{3}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५१६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल, मूल का—सं० १७१७ वि०, टीकाकार—सं० १८१८ वि०, लिपिकाल—१९३३ वि०, प्राप्ति स्थान—श्री गो० देवकीनंदनाचार्य, पुस्तकालय श्री गोकुल चन्द्रमा का मंदिर, श्रीकामवन, भरतपुर (रियासत)।

आदि— × × ×

"राघव" रीति बड़ेन की कापै बनि आवै ॥ २ ॥
मगन महोदधि है भर्यौ जन पूजत डरपै।
वहै गंभीर गह'''यह मुछ जल अरपै ॥

× × ×

उत हरिजन त्रय ताप हर ॥ ३ ॥
प्रणाम करि तबहि गम तोकौं होई है।
च्यारौं जुग के संत मगन माला ज्यौं पोइहै ॥
नग रूपी निज······टकरि वांणीं।
गगन मगन गलतान हेरि हिरदामधि आंणी ॥
मंगल रूपी मांझ महि हरि हरजन ··· ···।
भृत्य करत विरदावली जान राघव मणि भव दुष हरन ॥ ४ ॥

× × ×

भक्तमाल भगवंत कौं प्यारी लगै प्रतक्ष।
राघव सोरठ······गुरुन वताई लक्ष ॥१३॥

× × ×

गुरु दादू गुरु परम गुरु सिष पोता परजंत।
आगै पीछे वरन तैं मत कोई दूषौ संत ॥१५॥

मध्य—   ॥ भक्त भूप की टीका ॥

इंदवै

भूप भगत्त सु भांडन पावत है प्रभु कौ धन आनन दीजै ।
स्वांग धर्‌यौ जनकौ सु पुजावत नाचत भूप कहै इमि कीजै ॥
भोजन कौं करवाई धर्‌यौ बसु जौरि कहै कर यौं सब लीजै ।
भक्ति भई दृढ़ वासन भावत हाथ गहै कछू ल्यौ नहीं छीजै ॥४९१॥

× × ×

मम गुरु माथै पर स्वामी हरिदास जू है प्रम गुरु स्वामी प्रहलाद बड़ी निधि है ।
स्वामी प्रहलाद जू कै गुरू बडे सूरवीर नांव स्वामी सुंदरदास जागै सारी विधि है ॥
तास गुरू दादूजी दयालदिणि परमसो तो त्रिपे लोकमधि प्रगट प्रसिद्ध है ।
स्वामी दादू जू कै गुर ब्रह्म हैं विचित्र विग राघो इति राति दिन नाती प्रनति वृध है ॥

× × ×

संमत सत्र सै सत्र होतरा सुकल पक्षि सनिबार ।
तिथि त्रितीया आसाड की राघो कीवो विचार ॥१९॥

अंत—   चौपाई

पीपा वंसी चांडाल गोत । हरि हिरदै कीन्हौं उदौत ॥
भक्तमाल कृत कलिमल हरणी । आदि अंत मधि अनुक्रम वरणी ॥
सीषै सुणै विरे वैतरणी । चौरासी कर्म होइ नषरणी ॥
साध संगति सति सुगुंनि सरणी । राघो अगतिन कौ गति करणी ॥२१३२९॥

॥ इति श्री राघोदास जी कृत भक्तमाल सम्पूर्णम् ॥

॥ मनहर छंद ॥

अगर गुरु नाभा जू कूं आज्ञा दीन्ही कृपा करि प्रथमहि साषि छप्पै कीन्ही भक्तमाल है ।
तैसें प्रहलाद जू विचारि कही राघो जू सौं करौ संत आवली सुवात यौ रसाल है ॥
लई मानि करि जानि धरे आनि भक्त सब नृगुन सगुंन षटदरसन विसाल है ।
साषि छप्पै मनहर इंदवै अरेल चोपिनि स्वानी सवईया छंद जांनियौ हंसाल है ॥३३०॥
प्रथमहि कीन्हीं भक्तमाल सुनि सुरगदास(अगरदास-संभवतः)प्रचा स्वरूप संत नाम ग्रामगाईया।
सोई देषि सुनि करि राघोदास आप कृत मधि मेल्हिया विवेक करि साधन सुनाइया ॥
नृगुन भगत और आंनिया वसेष यह उनहूँ का नांवगाँव गुन समझाइया ।
प्रियादास टीका कीन्ही मनहर छंद करि तैसै ही चतुर दास इंदव वनाइया ॥३३१॥
स्वामी दादू इष्टदेव जाकौ सर्व जानै भेव बूसर सुंदर सेव जगत विष्यात है ।
तिनके नराणदास भजन हुलास पास उनहु कै रामदास पंडित साष्यात है ॥
जिनकै जु दयाराम कथा कीर तन नाम लेत भये सुषराम (? सुषराम) ओर (? और) नहीं बात है ।
त्रिष्ण अरु लोभ त्याग लयो है संतोष भाग ऐसे जू संतोष गुरू चत्र दास तात है ॥१३८॥

॥ मनहरण छंद ॥

संमत येकरू आठ लिषै सुभ पांचरू सातहि फेरि मिलावै ।
भाद्रव की वदि है तिथि चौदस मंगलवार सुवार सुहावै ॥
तादिन पूरण होत भयो यह टि•••पण चातुरदास सुनावै ।
वाँचि विचारि सुनैंरू सुनावै सो नर नारि भगति कौं पावै ॥ ३३५ ॥

इति श्री भगतमाल की टीका संपूर्ण समाप्तः छप्पै छन्द ३५३ मनहरण छन्द १८७ हंसल छन्द ४ साषी ८५ चौपई २ इंदव छंद १००२ येता राघोदास जी कृत संपूर्ण ॥ चतुरदासजो कृत टीका इंदव छंद मनहर ६६६ अब कवितां कौ जोड १३२६६ ग्रंथ कौ श्लोक संक्षा सर्वहजार पाँच ५००० ॥ समत १६३३ लिषतं साध भगतराम गांवरो जड़ी मध्ये लिषी लिषाइतं साध मोजीराम ॥

विषय—प्राचीन और अर्वाचीन (विशेषतः निर्गुण सन्त) भक्तों का वर्णन जो इस प्रकार है :—

मंगलाचरन, प्राचीन संतों का वर्णन,		पत्र १ से २१ तक ।
रामानुज संप्रदाय के सन्तों का वर्णन,		पत्र २१ से ३८ तक ।
विष्णु स्वामी ,,	,,	पत्र ३८—४८ ।
माध्वाचार्य ,,	,,	पत्र ४८—५५ ।
निम्बार्क ,,	,,	पत्र ५५—६२ ।
सन्यासी ,,	,,	पत्र ६२—६३ ।
जोगीदरसन ,,	,,	पत्र ६३—६४ ।
जैन पंथ जंगम दरसन बौध	,,	पत्र ६४—६५ ।
यवन फकीर ,,	,,	पत्र ६५ ।
समुदाय भक्त वर्णन	,,	पत्र ६५—८५ ।
नानक पंथ ,,	,,	पत्र ८५ ।
कबीर पंथ ,,	,,	पत्र ८५—८६ ।
दादूदयाल पंथ के सन्तों का वर्णन,		पत्र ८७—११७ तक ।
निरंजनी पंथ के सन्तों का वर्णन,		पत्र ११७—११९ तक ।
समुदाई पंथ के सन्तों का वर्णन,		पत्र ११९—१३९ तक ।

रचनाकाल

संमत सत्र सै सत्रहोतरा सुकल पक्षि सनिबार ।
तिथि त्रितिया आसाड की राघो कियो विचार ॥

टीका का रचनाकाल

संमत येकरू आठ लिषै सुभ पांचरू सातहि फेरि मिलावै ।
भाद्रव की वदि है तिथि चौदस मंगलवार सुबार सुहावै ॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता राघवदास हैं। ये दादूदयाल जी की शिष्य परंपरा में हरिदास जी के शिष्य थे। ये अपने को पीपावंशी और चांडाल गोत्र के लिखते हैं। ग्रंथ संवत् १७१७ वि० में निर्मित हुआ। इसकी टीका किसी चतुरदास ने की है जो रचयिता के ही पंथानुयायी थे। चतुरदास ने अपनी गुरू परंपरा भी बताई है जिसके अनुसार ये सन्तोषदास जी के शिष्य थे।

इस ग्रन्थ में बहुत से रचयिताओं का परिचय दिया गया है। यह पूर्ण तो है, किन्तु प्रारंभ के पत्रे दीमक और सील के लग जाने से आधे-आधे रह गए हैं।

संख्या ११३. पांडु चरित्र, रचयिता—राघोदास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—७३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७३९ वि०, प्राप्तिस्थान—प्रोफेसर पं० मोहनवल्लभ पंत, किशोरी रमण कालेज, मथुरा, जि०—मथुरा।

आदि— ... ... यः ॥

तातै जीव इहां ही वसै मरीयाह त्रासन षाय ॥
करता किसन हरे ॥ १२ ॥

पंडु कुल हित जानि करि कृष्ण आवहि नाहिं।
तुम्ह कहियो निजदास रहौ दसन तन मांही ॥
इतनां महि दरसन दीयो दीनबंध जी आनि।
अंधकार सव मिटिगयो दिन भानु उगयो जानि ॥
करता किसन हरे ॥ १३ ॥

जनु कीन्ही निरधन लछि अंध ले लोचन पायो।
ई व्रत उठो अंगि आनन्द उर न समायो ॥
सिंघासन वैठाय करि राजा लियो सीस चढ़ाय।
षाव धोय परिदछ करि बूझी परस चलाय ॥
करता किसन हरे ॥ १४ ॥

अंत—वलि वावन पातालि भली सुरपति की कीन्ही।
परसराम पणि विभै राज विप्रन कुं दीन्ही ॥
जा दिन करि वंसावली जसरथ नन्दन राम।
मन्दोवरि पति मारणां सीया संवारण काम ॥
करता किसन हरे ॥ ३२ ॥

कलि क्रिसन औतार कोपि कंस सर मार्‍यौ।
सुरपति परलै कालि ऐसै कर गिरवर धार्‍यौ ॥
ग्वाल बाल सव गोपिजन राषि लियो सव साथ।
आपन परिछाया करी प्रभु दे दैं आड़ा हाथ ॥
करता किसन हरे ॥ ३३ ॥

जगत् प्रगट जगनाथ जाहि ब्रह्मादिक जानै ।
कहि विधि सागर शेस सन्तजन सुषहि बषानै ॥
वेद पुराण प्रगट कहै हरि पद सवै सुषरासि ।
स्वामी कोली नरहर सदा शरणां राघोदास ॥
करता किसन हरे ।। ३४ ॥

इति श्री पंडु चरित्र संपुरण समापत ।। संवतु १७३९ ।। कर वरषे भादा सुदि ११ लिषतं परसराम सुभंभव ।

विषय—दुर्वासा ऋषि के श्राप से भगवान् श्री कृष्ण का पांडवों को बचाने की कथा का वर्णन०।

विशेष ज्ञातव्य—रचना श्री नंददास जी के भ्रमर गीत के ढंग पर ३४ रोला छंदों में है जिसके प्रारंभ के १२ छंद नष्ट हो गए हैं । अन्त के छंद में रचयिता ने अपना नाम राघोदास लिखा है । रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल संवत् १७३९ वि० दिया गया है । ग्रंथ की लिपि सदोष है ।

संख्या ११४. रघुराज के कवित्तों का संग्रह, रचयिता—रघुराजसिंह (रीवां), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१० × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७३, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० रघुवर दयालजी दीक्षित, कटरा साहब खाँ, इटावा, जिला—इटावा ।

आदि—

घ—सात लोक वू अरध त्यौं सत लोक अधर के संयुत अषंड ब्रह्म अंड येक फन में ।
धारैं अहिराज जौन सर्षप समान विश्व सोई तेज विश्वते समेत छन छन में ॥
कमठावतार धारि धारैं पीठि पंकज सो भुवन अधार सरदार सुरगन में ।
वाको सूप फारि कै उठाइ निज हाथन सो भूप देषरावै भानु कौसिला अंगन में ॥ १ ॥
अतिअनुरागन ते ब्रह्मा जू के जागन के भागन ते आजुलौं न तोष कछु पायो है ।
महाभाग देवन के सेवन ते साहेब जो पायकै कितेक वलि चित्त नहिं लायो है ।
वलि प्रहलाद अंवरीष आदि भक्तन ते लहिकै निवेद भूरि रोज कह वायो है ।
सोई रघुराज राज दसरथ जू के पानि चारि चाउर ते आसुही अघायो है ॥ २ ॥

अंत—

दोहा

दांत दावि यक हार मानि, फोरयो पवन कुमार ।
तव विस्मित ह्वै लंक पति, कीन्ह्यौं वचन उचार ॥
हनूमान वोल्यो वचन, मैं फोरयौ यहि काज ।
रामनाम अंकित मनिन, देखन हित कुल केत ॥
साभिमान कह लंकपति, मनि अंतर नहिं नाम ।
तन अंतर कहँ नाम है, अस जानहु बल धाम ॥

कवित्त

सुनत विभीषन के वैन वायु सूनु बोल्यौ राम,
नाम अंकित न राखे तव कौन काम।
भाषि साभिमान निज नखवज्रनोकन सो,
विचारयौ चित्त चायकै चटकत नही को चाम॥
रघुराज जानकी लषन वहु वारयौ ताहि हाय,
हाथ ह्वै रह्यो समामे वहु धाम धाम।
चीरत ही चाम चाम अंतर चितै परै चितेर के,
लिषे से वर्न सीताराम सीताराम॥ १॥
॥ इति युद्ध काण्डे राज्याभिषेक॥
॥ समाप्तम्॥ १॥

विषय—कविवर महाराज रघुराजसिंह कृत रामायण सम्बन्धी कुछ छंदों का संग्रह।

संख्या ११५. द्रव्य संग्रह, रचयिता—रामचंद्र, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७६१ वि०, प्राप्तिस्थान—पं सुखदेव शर्मा, स्थान व डाकखाना—शेरगढ़, जि०—मथुरा।

आदि —'''श्री जिनायनमः श्री परमपुरूष परिचरणं शरणीकृत्य बालानामुपकाराय रामचन्द्रेण भाषया द्रव्य संग्रह—व्याख्यालेशो बितन्यते १ अथ सूत्रमारभ्यते—

तत्रादौ नमस्कार गाथां प्रणयांति श्री नेमिचन्द्र सैद्धांतिक देवाः सूत्रं जीवम जीव जिणकर बसु हेण जेणाणिद्दियं देविदं विदं वंदे वंदे तंसवृदा सिरसा १ अर्थः तं सब्ददा सिरसा वंदे श्री नेमि चंद्राचार्य ग्रंथ को कर्त्ता हे तिन श्री जियेश्वर देव कौं सर्व्वदा सदाकालविषे शिरसामस्तक करि वांदउं त्रिकाल नमस्कार करों हों वह कौण जिनेश्वर देव जे जिणवर वस हेण जीव जीव दव्वंणि छिद्दं जिन्ह जिनगण धरादिक तिन मांहे वर प्रधान केवली तिन्ह केवली मांह वृषभसमान ध्यान अतिशय प्रातिहार्यादि विभूति विराजित तीर्थंकर देव अैसे जिन तीर्थंकर देव इं जीव द्रव्य ऐसैं जीव अनीवादि षटद्रव्य कौ स्वरूप जिन जिनेश्वर देवनईं कह्यौ तिन्ह श्री जिनेश्वर देव कौं हमारऊ नमस्कार है।

अंत—दव्व संग्रह मिणं मुणिणाहा दोष संसय चुदा सुद पुण्णा सोधयंतु त्तणु सुत्त धरेणणेमि चेद मुणिणा भणियंजं ५८

अर्थः

इणं दव्व संग्रहं मुणिणाहा सोधयंतु यह द्रव्य संग्रह नामा ग्रन्थ कौं मुनि नाथ बड़े सूरीश्वर शुद्ध करौ अशुद्ध शब्द अर्थ कौं दूरि करहु कैसे हैं मुनिनाथ दोस संसय चुदा सुद पुणा द्वेष राग द्वेष मोह रूप तथा संशयादि मिथ्याज्ञान तिन तैं च्युत रहित है अरू श्रुत द्रव्य श्रुत भाव श्रुत करि पूर्ण भरे है यह सुकौण द्रव्य संग्रह नामाशास्त्र जं णेमिचंद मुणिणा भणियं जो द्रव्य संग्रह ग्रंथ नेमिचन्द नामा मुनि नै भण्यौ है कह्यौ गाथा वेध रच्यो है

कैसो है णेमिचन्द्र मुनि तनुसुत्त धरेण तनु अल्प मात्र श्रुत शास्त्र धरै है अल्प बुद्धि कौ धनी है तिन्ह कौ कीयौ यह द्रव्य संग्रह ग्रंथ ताकौं वहुश्रुत यतीश्वर शुद्ध करहु इति गाथार्थः।

इति श्री नेमिचन्द्र सैद्धांति देव कृते द्रव्य संग्रह शास्त्रे मोक्षमार्ग प्रतिपादक स्तृतीयोध्यायः शब्द नायागमादि श्रुत सदवगमा मायां निधीनां गुरूणां हीरानंदेदु नम्नां चरणन लिनयो; सेवया सिद्धवो ४; धर्म्मार्थी रामचंद्रस्त लिन मतिमतां हेतवे बालबोधं द्रव्यादेः संग्रहस्य लिखद वहु कंतस्य टीकां विलोक्य ? अपिच नवेत्ति द्रव्याणि जिनोक्षितानि यः सनैवजैनः खलु मूढ़ चेतनः तद्रव्य बोधाय पठंतुसादरा श्री नेमिचंद्रोदित द्रव्यसंग्रह संवत्

१ ६ ७ १
इंदु षड ऋषि शशि वर्षे आषा शुदि १ बुधवारे लिखितायोगिनी पुरे ऋषिघासी रामेन आत्म पठनाय ॥ लेषक ध्यापकयोः भद्रं भूयास्तां ॥ १ ॥

विषय—जैन धर्मानुसार मोक्ष प्रदायक द्रव्यज्ञान का विषय वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। परंतु लिपिकाल १७६१ वि० होने से ग्रंथ प्राचीन है। ब्रजभाषा गद्य ग्रंथ होने के कारण यह और भी महत्वपूर्ण है।

संख्या ११६ ए. दृष्टांतसागर, रचयिता—रामचरण (शाहपुरा, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—१९८, आकार—६¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० धुरेंमलजी, ग्राम—राजेगढ़ी, डा०—सुरीर, जि०—मथुरा।

विषय—

आदि ॥ ६० ॥ ॐ नमः श्री र र रः रामः रामः रामः अथ स्वामीजी श्री राम चरणजी कौ ग्रंथ दृष्टांत सागर टीका संजुग लष्यतेः ॥

॥ स्तुति दूहा ॥

रमतीत राम गुरुदेवजी पुन तिहुँ काल के संत।
जनकूं रामचरण की वंदन वार अनंत ॥ १ ॥
गुरु षेवट जन साह की रांमनांम की नाव।
भोतर सरणे विचारहु करि वंदन वधिभाव ॥ २ ॥
नर कै तो नारी भई नारी सू नर होय।
नर माहै नारी वसै सो जानत है सब कोय ॥ ३ ॥

सात हाथ की काकड़ी बीज बंध्यो नव हाथ।
आठ फाड अर तीन रस माली संग सुनाथ ॥ ४ ॥

एक पाव एक डांगड़ी लीया सीस पर भार।
भारलीया भटकत फरै वैठे नहीं लगार ॥ ५ ॥
बार भया बारैं गया आदित परस्यौ नांह।
यूं जनम मरण संसार को नो तंत काकै मांह ॥ ६ ॥

अंत—

॥ दूहा ॥

दुषम सबद संसार मैं उलटौ दुषी पुकार ।
जसैं दुधारा षड्ग ज्यूं केरे वंध परहार ॥१५४॥
कड़ो बचन मैं संगि लियाँ मीठें नहीं मिलाय ।
लड़बो ऊठत वैठतां दुरजन बड़ौ संताप ॥१५५॥
नषदर बाहरि भींतरा जल धरिं अगनि उचारि ।
सिव सुत नारि विचारि कैं मकैं मधि की मधि न्दिवारि ॥१५६॥
तेरा मैं मेरा काहा तेरा मेरा नांहि ।
तेरा में मेरा कहैं सो वूंड जाइ भौ मांहि ॥१५७॥
गुडि ग्यान पुजि परमपद रसक होइ रसलेह ।
रामचरण चहूँ उड़न के मतधुर अषिर जेह ॥१५८॥

इति दृष्टांत सागर सुधा आगर रामचरणजी विरंचंता संपूर्णम् ।

विषय—नाना प्रकार के दृष्टांत देकर ज्ञान, वैराग्य और भक्ति का उपदेश किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ रामसनेही पंथ के प्रवर्तक स्वामी रामचरणजी कृत है । इस पर इन्हीं महात्मा के शिष्य रामजन की विस्तृत टीका (वचनिका) है। सुविधा की दृष्टि से टीका का विवरण रामजन के नाम से अलग लिया गया है जो यथास्थान देखने को मिलेगा । ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है । टीका का समय संवत् १८३९ वि० है । अतः स्वामी रामचरणजी का समय उससे कुछ ही पूर्व मानना चाहिये । ग्रंथ की भाषा अधिकतर राजस्थानी है । इसमें ३ सोरठे, १५० दोहे और ६ कुंडलियाँ हैं । रचना दुरूह है ।

संख्या ११६ बी. पद, रचयिता—रामचरण (शाहपुरा, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—$6\frac{3}{4} \times 4\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० घुरेंमलजी, ग्राम—राजेगढ़ी, डा०—सुरीर, जि०—मथुरा ।

आदि ... ...

पायो सुष अमाव रामचरण सतगुर की करपा घट मैं-प्रगटै आयरे ॥ ३ ॥

पद राग टोड़ी

मन रे नज वैरागी होणा ।
राजा रांक एक कर मांनौ ज्युं कंकर ज्यूं सोना ॥ मनरे ॥ टेक ॥
भूष लगे तब भष्या करीयै ... कर लेण दुणा ॥
आसा तसना दूर नवारो हर भज हरदा धोना ॥
तब दल पाष दया नंद पावै गावै बड़ बड़ मौना ॥ ३ ॥
पंच जीत-प्रीत सतगुर सु धरणा ध्यान ऐकौना ।
रामजन कहै वैरागी रामचरण का चौना ॥ ४ ॥

रागझंझोटी

कोई मांने हंस मलावै। हंस हरिजी भवपीर ॥ टेक ॥
वेद पुराण सुण विध साधी तोउ न भयो मथीर ॥ १ ॥
दान सनान सेवा वर करता लागत सरम सरीर ॥ २ ॥
दसणतधारी सब ही सोध्या कहुँ न भागी भीर ॥ ३ ॥
हंस मले कृपाल कृपाकरी दरसाया जल षीर ॥ ४ ॥
राम नाम दिया रामचरण की लिया मनसर तीर ॥ ५ ॥

अंत —

पद राग जंजटी

जागी जोति जगत गुर दरस्या। परस्या अगम सनांबे।
रसनां बना रामधुन लागी जांने संत सुनाना बे ॥ टेक ॥
गगन मंडल मै गाजै अनहद सुन है वनकाना बे।
चरन बना जाहां नरत करत है देषत ब्रह्म दांना बे ॥ १ ॥
भाँति भाँति सुषदाई नाटक प्रेम मगन गलतां नांबे।
रीत रमइया मोजा वगसी जांषत मरण महांणा बे ॥ २ ॥
रोग संताप सनेही भागा निति आनंद वलसांना बे।
नोतम प्रीत निरंजन सेती कवल कवल वगसांना बे ॥ ३ ॥
रं रं कार वर अमर अनामी अंतर जामी जाना बे।
रामचरण ता सरणै सुषिया अगम निसान बनांनांबे ॥ ४ ॥

साषी

मलतां सेती मल चलो अणमलता रहो दूर।
रामचरण गुर ग्यान कौ जे सुष सावौ पूर ॥

॥ पमंगम छंद ॥

सबद ब्रह्म पर ब्रह्म भली वद जाणीयै।
पाँच तंत गुण तीन म्रषा कर मांनीयै।
बुधवंत सब संत गुर कहै सोइ रे।
और ठौर सुष जाय भ्रमै जन कोई रे ॥ १ ॥

विषय—भक्ति विषयक कुछ पदों का संग्रह।

संख्या ११७. गोपीचंद, रचयिता—रामदयाल (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०३, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० महेश्वरदयाल, गंडोह, डाकघर—कोसी, जि०—मथुरा।

आदि— × × × ॥ दोहा ॥

कहा करूं सुरलोक कूं कहा वैकुंठ निवास ।
इन्द्रलोक घर आपने नृपं पु······हि वास ॥

॥ चोपाई ॥

उघरि दियै उज्जल सुसरीरा । ज्यों पथर में चमकत हीरा ॥
ज्ञान तरंग उठी जिय माता । जलकर छार होय यह नाता ।
आंषिन उमड़ि नीर तव झरे । आकर राजा तनहि परे ॥
मुष उठाय जव देष्यौ राजा । माता रुदन करै किहि काजा ॥
ऐसे सुष मैं मैनावंती । रही अटा पै रुदन करंती ॥
राजा धाय अटा पहुँ गयेऊ । सनमुष जाय जोरि कर कहेऊ ॥

॥ दोहा ॥

आयसु दीजै पुत्र कौ तुम सुषवंती मात ।
आज्ञा ··· ··· ···

मध्य— ॥ दोहरा ॥

मोहि वताओ वेगि तुम जतन करौं मैं सोइ ।
अमरकाय जिहि कर वने होनि होय सो होय ॥
गोपीचंद विनती यह कीनी । रामदयाल कान धरि लीनी ॥

अंत—फूलन जो हम दलमली भोग कियो जो पान ।
अव यों माता कहन कौं सीष्यौ किस पर ज्ञान ।

॥ चौपाई ॥

गोपीचन्दनाथ फिर वोलै । शब्दज्ञान हृदय से षोलै ॥
तिया जात होत वुधि नासू । नेक रोस भरि ल्याव आँसू ॥
हम जोगी वालक अवधूता । सब हैं माय नार हम पूता ॥
नारि पूर्व इस जग के नाती । अन्तकाल को संग न साथी ॥
पंच तत्व का किया पसारा । गुण है तिन्है मिलावन हारा ॥
वंध्यो जगत है मोह की वेड़ी । अंत होइ है भस्म की ढेरी ॥

॥ दोहरा ॥

हमको मिथ्या पूरिकै बैठो सदन मंझार ।
हम असीस तुमैं देई हैं पुरै आस करतार ॥

\+ + +

गोपीचंद चित्त धारिकै प्रण किनो मन मांह ।
चलो पंथ जहाँ साध को होय रहो तरू छांह ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि मन प्रण कियौ सिध जोगी । वन षंड वास करौं तजि भोगी ।

भोर भई पंथहि उठि चले, भोजन षाद इन्द्रि दलमले।
सांझ परै ... ... (अपूर्ण)

विषय—राजा गोपीचंद के वैराग्य की कथा का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—यह ग्रंथ अपूर्ण है। आदि का पत्र और अन्त में संख्या २६ के पश्चात् के पत्रे नहीं हैं। ग्रंथ का नाम स्पष्ट नहीं दिया है। परन्तु सातवें पत्र में एक चौपाई दी हुई है जिसमें 'रामदयाल' का उल्लेख है जो ग्रंथकार के नाम के लिये प्रयुक्त हुआ जान पड़ता है। चौपाई इस प्रकार है:—

'गोपीचंद विनती वहु कीनी। रामदयाल कान धरि लीनी।

रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति की लिखावट बहुत अशुद्ध है।

संख्या ११८. दृष्टान्त सागर की टीका, रचयिता—रामजन (शाहपुरा, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—१६८, आकार—६¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३९ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० घुर्रेमलजी, ग्राम—राजेगढ़ी, डा०—सुरीर, जि०—मथुरा।

आदि—॥ { 0 ॥ ॐ नमः श्री र र रः रामः रामः अथ स्वामी जी श्री रामचरण जी कौ ग्रंथ दृष्टांत सागर टीका संजुगत लिष्यते ॥

स्तुतिः दूहा

रमतीत राम गुरूदेव जी पुनि तिहूँ काल के संत।
जनकूं राम चरन की वंदन वार अनन्त ॥ १ ॥
गुरू षेवट जन साह की रांम नांम की नाव।
भोतर सरणे विचारहु करि वंदन बधि भाव ॥ २ ॥

॥ टीका वचन का ॥

भो कहिए संसार को जनम मरण सो जनम मरण मटवे कुं। एह नयाव कहीए है॥ सो जनम मरण वासना के संग पावे है॥ सो वासना मन में है मन आत्मा के आसरे फुरै है॥ सो आत्मा ब्रह्म को अंग है॥ सो देह संबन्ध करके इन्द्या द्वार भए। तीसु भिन भिन भास उपजत भए विषयाकार भए। तब अहैमत से बंधै। मै मेरी मैं परें तीसु संसार कहीए॥ जीव कहीए॥ विगं के वंध मान्य थके॥ बहु जनम मरण भेद कहीए॥ सो भेद मटाइवे कूं एह भावना उपजी है॥ सो दृष्टांत सागर कहिए है॥ तै दृष्टांत करकै अपनो सुध न्यान (ज्ञान) बचारिये॥ सो ज्ञान राम भजन करै तब पावै॥ और लष अलष दृष्टांत कर देषीये॥ ताते दृष्टांत भाव ये कहिए है॥ जीव की जीवता मटाइबे कुं कारज संसार कौ अभाव करत है यो संसार मन करकै उदै है॥

अंत—रामचरण महाराज के वचन अमोलिक नंग।
अपनी बुधि परमाण तैं एह टीका परसंग ॥ ११ ॥

अरथ कमी नाहीं कछु कमता मेरी बुधि ।
संत बड़े वरीयाम मत करै असुधा सुधि ॥ १२ ॥

\+ + +

साहिपुरा मधि एह सिधि सत संगति सुभधाम ।
टीकाकृत भए 'रामजन' गुर किरपा मुषि राम ॥ १४ ॥
गुरु किरपा मुषि रामरटि सब संतन का हेत ।
रामजना के रामजन ह्वै रहौ चरणू रेत ॥ १५ ॥

॥ सोरठा ॥

अठारा सै गुणताल ए संबत संष्या कही ।
मघसर सुदि विसाल टीका पूरण रामजन ॥ १६ ॥

ग्रंथ संष्या दूहा

दुहा पचासर एक सत तीन सोरठा जान ।
कुंडलिया षट रामजन ग्रंथ मूल परमान ॥ १७ ॥
तापरि टीका बचन का चौगानी एह सार ।
गोप ग्यान चौगांन मैं रामजन विसतार ॥ १८ ॥

टीकाकार गुर संप्रथाइ कहीतु है

कर गहै काढ्यौ कूंप तै रामचरण जी आप ।
रामजन के उरि सदा एक तुमारो जाप ॥ १९ ॥

इति ग्रंथ दृष्टांत सागर सुधा आगर रामचरण जी विरंचतांई टीका कृत दासानदास रामजन ॥

॥ सोरठा ॥

गुढां दुहा कौ ज्ञान सो चौड़े करि दाषीयौ ।
रामचरण कौ ध्यान रामजन के उरि सदा ॥ १ ॥

मूल संष्या दुहा ॥ १५० ॥ सोरठा ॥ ३ ॥ कुंडल्यां ॥ ६ ॥ टीका समाधान का ॥ दुहा ॥ २० ॥ श्रब ॥ १८० ॥ टीका बचनका इति संपूरण ॥

विषय—ज्ञान, वैराग्य और भक्ति संबंधी नाना प्रकार के दृष्टांत देकर उपदेश किया गया है ।

रचनाकाल का संवत्

॥ सोरठा ॥

अठारा सै गुणताल ए संवत संख्या कही ।
मघसर सुदि विसाल टीका पूरण रामजन ॥ १६ ॥

विशेष ज्ञातव्य—टीकाकार का नाम रामजन है । ये शाहपुरा (राजस्थान) के सुप्रसिद्ध संत रामचरण जी के शिष्य थे । प्रस्तुत टीका रामचरण जी कृत 'दृष्टांत सागर' पर की गई है । टीका का रचनाकाल संवत् १८३९ वि० है । लिपिकाल नहीं दिया है ।

मूल ग्रंथ में १५० दोहे, ३ सोरठे और ६ कुंडलियाँ हैं। टीका में २० दोहे अलग से हैं- जो टीकाकार के स्वयं रचे हुए हैं। मूल दृष्टांत सागर का विवरण रामचरण जी के नाम से अलग लिया गया है जो यथास्थान दिया हुआ है।

संख्या ११९. विहारी सतसई, संपादक—कविराम (रचयिता—विहारी लाल), कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८९० वि०, प्राप्ति स्थान—प्रोफेसर पं० मोहन वल्लभ पंत, किशोरी रमण कालेज, मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि—

श्री गनेस जू॥ श्री सरस्वती जू॥ श्री भगवान जू॥
अथ विहारी सतसैया के दोहरा लिष्यते।

दोहरा

मेरी भव बाधा हरौ राधा नागर सोइ।
जातन की झाँई परै स्याम हरत दुति होइ॥ १॥
गज मुष मोदक प्रिय मुदित मूषक वाहन जास।
विघन हरन विधुधर विमल नमो प्रेम नित तास॥ २॥

× × ×

नाग धरन सुत नागधर नाग वदन मुष जाल।
इकहि जछवि "कविराम" कहि दूज सोभै सुभलाल॥ ३॥
षान पान परधान वहु पान वांन दिन दिन दान।
बुधिदा विधिन्नन आदिलौ नमो प्रेम तिहिवान॥ ४॥
विप्र विहारी नाम हुव तीसी ष्यांत प्रवीन।
तिन कवि साढ़े सात सै दोहा उतिम कीन॥ २॥
बीते काल अपार ते भये विन्नक्रम लेख।
करे अनुक्रम फेरते प्रोहत प्रेम विसेष॥ ३॥
कहे क्रस्न जु नैन के साठि पाँच घटि ईस।
इकै षंडित चालीस कहि मानवती द्वै वीस॥ ४॥
तीन तीन कहि सुरति के विरहिन इक घटि साठ।
लगिन पिचोतर जुक्ति के दो सौ उनसठ पाठ॥ ५॥
मूक प्रश्न के चार हैं केस वरन के आठ।
अरलोषक के सैतीस कहि अन्योक्त के अध साठ॥ ६॥
प्रस्ताइक छह आगरे चालीस वरनै विप्र।
करै अनुक्रम रामजू ताते समभयौ छिप्र॥ ७॥

॥ श्री कृष्ण के दोहरा ॥

प्रगट भये जदुराइ कुल सुवस वसे व्रज आइ।
मेरे हरौ कलेस सब केसव केसव राइ ॥ ८ ॥
नीकीं दई अनाकिमी फीकी परी गुहार।
तजौ मनो तारन विरद वारक वारन तार ॥ ९ ॥
जमकर मुह तरहर परौ इहि घर हरचितु लाँउ।
विषै तृषा परहरइ अजौ नरहर के गुन गाँऊ ॥१०॥

अंत—

अपने ही गुन पाइये उपकारी जस लेइ।
घर ही के हाथी चढै टेक महावपु देइ ॥७६०॥
सवरी की छाती फटी और कछू दुष पाइ।
पारि देषि पंथी थके नीर हीन फिर जाइ ॥७६१॥
दुषी सुषी दिन काटियै घाम वारहु सोइ।
छाह न ताकी विरमिये पेड़ पातरो होइ ॥७६२॥
पायै अन पायै भलौ अततइ नरअंत।
पातु न देइ करील कौ फूलै फलै बसंत ॥७६३॥
बुरौ बुराई जौ तजौ चितषरौ उरात।
जौन कयंक मयंक लषि लोग गनै उतपात ॥७६४॥
मैले होइ न विमल मन करि देषौ जो कोइ।
छार परै ज्यौं आरसी अधिक ऊजरी होइ ॥७६५॥

इति श्री बिहारी कृत सतसैया संपूर्न ॥ मिति भादौ वदि ॥१॥ बुधे संवतु १८९० मुकामु दलीप नगर लिषतं प्रधान रामलाल वैद हमीरपुर के ॥ जैसी प्रतिपाइ हती तैसीलई उतार। भूल चूक सब समझ के सुरजन लेउ सम्हार ॥ १ ॥

॥ श्री रामजू ॥

विषय—विहारी के ७५० दोहों का निम्नलिखित विषयों के अनुसार संपादन किया गया है:—

सं०	नाम विषय
१	श्री कृष्ण
२	नयन
३	खंडिता
४	मानवती
५	सुरति
६	विरह

७	लगन
८	युक्ति
९	मूक प्रश्न
१०	केश
११	श्लेष
१२	अन्योक्ति
१३	प्रास्ताविका

विशेष ज्ञातव्य—संपादन कर्त्ता का नाम कविराम है। इनका कहना है कि विहारी ने साढ़े सात सौ उत्तम दोहे कहे थे। बहुत काल बीत जाने पर उन दोहों में व्यतिक्रम हो गया था; अतः उन्होंने पुरोहित (शायद अपने पुरोहित) के विशेष प्रेम के कारण उनका फिर से क्रम लगाया। इस कथन से विदित होता है कि इसके पहले भी सतसई के दोहे क्रमबद्ध थे। चाहे वे स्वयं विहारी द्वारा क्रम-बद्ध रहे हों अथवा किसी अन्य के द्वारा। दूसरी बात यह है कि इसमें विहारी के साढ़े सात सौ दोहे हैं। अब तक तो यह प्रसिद्ध था कि विहारी सतसई में सात सौ ही दोहे हैं। अतः इस दृष्टि से यह ग्रंथ विचार करने योग्य है। रचयिता का कोई परिचय तथा समय प्राप्त नहीं होता तथापि जैसा कि वे स्वयं कहते हैं—बीते काल अपार ते भये वित्र क्रम लेष—वे बिहारी से अपार काल के ही अंतर पर वर्तमान रहे होंगे। संभवतः विक्रम १८वीं सदी के अंत और १९वीं सदी के पूर्वार्द्ध में वर्तमान रहे होंगे।

लिपि कर्त्ता ने इस ग्रंथ को लिखने में इतनी भद्दी भूलें की हैं कि कोई भी दोहा अपने मूल स्वरूप को लिए हुए नहीं है। नीचे एक उदाहरण दिया जाता है:—

अपने अंग के जानि कै जोवन नृपति प्रवीन।
रतन नैन निखंत कौ वड़ौ इजाफा कीन ॥३८६॥

इसमें 'स्तन मन नैन नितंव' का 'रतन नैन निखंत' हो गया। इसी प्रकार अन्यत्र भी हुआ है।

लिपिकाल संवत् १८९० है। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में आनंद कृत 'कोकसार' भी लिपिबद्ध है।

संख्या १२०. रूकमनी मंगल, रचयिता—रामलला, कागज—देशी, पत्र—२७, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८३, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६२ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० पुरुषोत्तम लाल जी, ग्राम और डाकघर छाता, जि०—मथुरा।

आदि—……कंस उपाव आनत किये।

तासमय गोकुल सिधारे सकल दृग झूठे भये ॥ ९ ॥
अस्थान जाय जसोदा मात के वोहोत हित करता होइये।
गोपी ग्वाल विचार प्रभु हित सबन कौ आनन्द दए ॥ १० ॥

पूतना के प्राण नाशे देत्य तरनावृत दरौ।
सकटासुर को गर्भ गजो कालि को मर्दन कीयो ॥ ११ ॥
वछा कृष्ण चोर ले गयो कान्हा जान अहीर को।
उन करतार ने ऐसी और कीनी समर्थ स्याम शरीर को ॥ १२ ॥

× × ×

गोपाल के गुन सुन के रुकमनि चातक ज्यों निसिदिन रटै।
स्याम स्वात पिया मिलै रात दिना तिसना घटै ॥ २१ ॥

अंत—हंस हंस सब रानी कहै पाय बहुकै परौ।
कै बुलावौ देवकी कौ सकुच काहे ते करौ ॥ ५ ॥
देव पूजौ कांगन छुटौ रंग महल ही रचौ।
कनक मंदर कुसम सिज्या रतन हीरा वोहो जरौ ॥ ६ ॥
राज करौ नग्र द्वारका भक्त वत्सल सी गोपाल।
'रामलला' मंगल गायौ कृष्ण भजन हो निहाल ॥ ७ ॥
राज करौ नग्र द्वारका लली (?) रणछोर राय।
रामलला मंगल गायौ वोहोर जनमना धराय ॥ ८ ॥

इति श्री रामलला रूकमनी मंगल कृति संपूर्ण ॥ १८६२ ॥

विषय—श्री कृष्ण और रुक्मिणि विवाह वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम रामलला है। रचनाकाल ग्रंथ में नहीं दिया है। लि० का० संवत् १८६२ वि० है। ग्रंथकर्त्ता का विशेष वृत्त मालूम न हो सका।

संख्या १२१. हिताष्टक, रचयिता—रामनारायण, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हृदयरामजी, ग्राम—अगरवाला, डा०—छाता, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ श्री हिताष्टक लिष्यते ॥

॥ सवैया ॥

जग तारण हित वेद रचे प्रभु अजभुष सुपद धर्म्म जिहि नाना ॥
कलिजन तारन तिहिन देखि हित सहित वंश गाई शुभ ताना ॥
द्वापरांत सोइ प्रगट भयो कलि हित हरिवंश स्वरूप सुजाना ॥
वंदौ हित हरिवंश पद्म पद हित प्रगटाय कियौ जग त्राना ॥ १ ॥
मिथ्या नश्वर लोक विषय सुष श्रुति परलोकहु नश्वर गायौ ॥
नित्य ब्रह्म चित रूप मोक्ष सुष तद्यपि रसिक जनमन नहि भायौ ॥
तिहि समान बिन वृति ब्रह्म सुष प्रेम वृत्ति गत सो अधिकायौ ॥
वंदौ हित हरिवंश पद्म पद हितप्रद जिन हित पथ प्रगटायौ ॥ २ ॥

अंत—सकल कष्टनाशक यह अष्टक हित हरिवंशहि जो नर गावै ।
तृण सम त्यागे भोग मोक्ष सुख तद्यपि सो तिह पाछे धावै ॥
विष्णु सखी जीवन सुविहारी तिह प्यारी पद प्रेम बढ़ावै ।
रीझैं हित हरिवंश कृपा तिह श्रीराधा वल्लभ उर छावै ॥ ८ ॥

इति श्री विष्णु सख्यापन्न श्री रामनारायण विरचित श्री हिताष्टकं संपूर्णम् ॥ शुभं भवतु आषाड चतुर्दश्यां ॥ सं० १८७७ ॥

विषय—इस अष्टक में हित हरिवंश जी की वंदना की गई है । ये हित हरिवंशजी राधावल्लभ संप्रदाय के प्रवर्तक एवं उच्चकोटि के महात्मा थे ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में दो और ग्रंथ भी हैं । ये तीनों अष्टक ही हैं । प्रथम दो अष्टक हित हरिवंश जी की वन्दना में लिखे गये हैं और अंत का तीसरा श्री कृष्ण की वंदना में लिखा हुआ है । प्रथम अष्टक के रचयिता का नाम स्पष्ट है, शेष का नहीं । रचनाकाल किसी भी ग्रंथ का ज्ञात नहीं है । प्रथम हिताष्टक का लिपिकाल ज्ञात है जो १८७७ वि० है ।

संख्या १२२. जैमुनी अश्वमेध, रचयिता—रामपुरी, कागज—देशी, पत्र—४५, आकार—११½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०१२, खंडित, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५४ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० राम स्वरूपजी, ग्राम—परखम, डा०—फरैह, जि०—मथुरा ।

आदि— श्री गणेशाय नमः

॥ दोहा ॥

संष दलनय हरनाक्ष हर मधु मर्दन मधु आरि ।
सकल दलन जगत पोषन भरन श्री जदुपति सुषकारि ॥ १ ॥
सकल लोक लौकिक रची चतुर्वेद सुष वैन ।
जगत प्रसंसित देव पितु सुमिरौं श्री वसुनैंन ॥ २ ॥
लोक आरि त्रपुरारि जे नंदन सुष कंद ।
चित चेत्यौ तुव चरन निज विमल भाल जुत चंद ॥ ३ ॥
वाहन वलित विहंग जे त्रकुचा भूषन नाम ।
"रामपुरी" प्रनवत तिनैं जास साल पा वाम ॥ ४ ॥

× × ×

सत्रह सौ चौवन समै कृष्ण पक्ष बुधवार । माघ मास तिहि पंचमी कियौ कथा विस्तार ॥८॥
बुद्धिवंत दार गुर हैं गुहलौत गहमीर । महासिद्धि सूत धर्मयुत नाम 'जगतमनि' धीर ॥९॥

अंत—

विश्व वाहन दूजौ गज रथ कारी । हंस ध्वन नृप यौं रन डारी ॥
तीनि वान करि राजा हये । गिरे नृपति रन मूर्छित भए ॥४९॥
गिरे देषि हंस ध्वज तवै । प्रद्युमनि धाए रन मैं तवै ॥५०॥

॥ दोहा ॥

गिरे देषि रन मैं तवैं धाये जन प्रद्युम्न।
जाइ करयौ संग्राम अति "रामपुरी" कही कौन ॥५१॥

इति श्री जैमुनि अश्वमेधे विभ्रवाहन युद्ध वर्नतो नाम चतुर्विंसो ध्यायः ॥२४॥

\+ + +

विभ्रवाहन प्रद्युम्न महामति । लग्यौ होन तब युद्ध महामति ॥

\+ + +

वृषकेत जोवनास नरनाथा । हंस ध्वज सङ्लि है साथा ॥ ४ ॥

\+ + +

(अपूर्ण)

विषय —

१—मंगलाचरण—कविपरिचय, रचनाकाल, युधिष्ठिर व्यास संवाद, पत्र १ से ३ तक ।

२—द्वितीय अध्याय—कृष्णयुधिष्ठिर संवाद, पत्र ३ से १० तक ।

३—तृतीय अध्याय—कृष्णभीमसेन संवाद तथा भीमसेन का घोड़ा लेकर विजय के लिए प्रस्थान, पत्र १० से १३ तक ।

४—चतुर्थ अध्याय—भीमसेन का राजाओं को विजय करना, पत्र १४ से १७ तक ।

५—पंचमोध्याय—खंडित, पत्र १७ से २० तक ।

६—षष्ठमोध्याय—वृषकेत जेवनास युद्ध, पत्र २१ से २१ तक ।

७—सप्तमोध्याय—युधिष्ठिर योवनास मिलाप, पत्र २४ से २४ तक ।

८—अष्टमोध्याय—व्यास युधिष्ठिर संवाद, पत्र २४ से २६ तक ।

९—नवमोध्याय—भीमसेन का द्वारिका आगमन, पत्र २६ से २७ तक ।

१०—दसमोध्याय—कृष्ण सहित भीमसेन का हस्तिनापुर प्रस्थान, पत्र २७ से २८ तक ।

११—एकादसोध्याय—श्री कृष्ण का हस्तिनापुर आगमन, पत्र २८ से २९ तक ।

१२—द्वादसोध्याय—खंडित

१३—त्रयोदसमोध्याय—कृष्णसत्यभामा संवाद, पत्र ३३ से ३३ तक ।

१४—चतुर्दशोध्याय—नीलध्वज राजा का अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा पकड़ना, पत्र ३३ से ३६ तक ।

१५—पंचदसमोध्याय—खंडित ।

१६—षोडसोध्याय—अर्जुन का घोड़ा सहित विजय करने के लिये जाना और प्रद्युम्न के स्पर्श से उद्दालक ऋषि पत्नि का उद्धार होना, पत्र ३७ से ३६ तक ।

१७—सप्तदसमोध्याय—हंसध्वजयुद्ध वर्णन, पत्र ३९ से ४१ तक ।

१८—अष्टादशोध्याय—सुधन्वा युद्ध वर्णन, पत्र ४० से ४२ तक ।

१९—एकवींसोध्याय—सुधन्वा वध वर्णन, पत्र ४२ से ४३ तक ।

२०—वीसमोध्याय—सुरथवीर वध वर्णन, पत्र ४४ से ४५ तक।

२१—एक वीसमोध्याय—हंसध्वज मिलाप वर्णन, पत्र ४५ से ४७ तक।

२२—द्विविंसोध्याय—अर्जुन और रानी-परिमल का युद्ध वर्णन, पत्र ४७ से ४९ तक।

२३—त्रिविंसमोध्याय—वभ्रुवाहन का युद्ध के लिये तैयार होना, पत्र ४९ से ५२ तक।

२४—चतुर्वींसमोध्याय—वभ्रुवाहन वध वर्णन, पत्र ५२ से ५२ तक।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ खंडित है। कुछ पत्र बीच से और कुछ अंत से लुप्त हो गए हैं। ग्रंथकार का नाम रामपुरी है। इनके गुरु का नाम जगतमनि था। रचनाकाल संवत् १७५४ वि० है। लिपिकाल अज्ञात है।

संख्या १२३. पिंगल मंजरी, रचयिता—पं० रामसिंह, कागज—बाँसी, पत्र—९, आकार—६ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० बालमुकुन्द जी चतुर्वेदी, मानिक चौक, मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः

अथ पिंगल मंजरी लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

प्रथम सरस्वति सुमिरि गणपति कौं सिरनाय।
वरणत पिंगल मंजरी ग्रंथ परम सुषपाय ॥ १ ॥
एक समै एकांत में तिय पूछ्यौ कर प्रीत।
परतत रसिक फनिंद की उक्त छन्द की रीति ॥ २ ॥
प्रथम वरन गजगामिनी लघु दीरघ पहचान।
बहुरि गजानन भेद गुनि तातैं छंद वषान ॥ ३ ॥

॥ अथ लघुदीरघ भेद ॥

आईऊ ए सै बहुरि ओ औ दीरघ जानि।
अ इ उ जुत (लघु) भामिनी भाषा में पहिचानि ॥ ४ ॥
संजोगी की आदि अरू विसर्ग बिंदु समेत।
दीरघ वर्ण वषानिए वरनत सुकवि सहेत ॥ ५ ॥

अंत— यथा

सषि चलि नंद कुँवरवर वंसी वटतर तो चित
निपट उदास परे अति विरह भरे।
लषि बाँकी भौंहे दृग तिरछौंहैं चितवन में
रस बंसी करे बिहाल परे।
जोवन अति चंचल अंजुलि जल ह्वै दिन द्वै
मैं वढ़ि जात जवै दुष देत तबै।
तू मानत नाहिन प्यारी काहिन जामिनि वीति,
जात सबै मिलि है सुकनै ॥

इति मदन ग्रह ॥ इति श्री पंडित रामसिंह विरचिते पिंगल मंजरी मात्रा छंद वर्णनो नाम प्रथमोल्लासः ॥ १ ॥

× × ×

॥ छंद शार्दूल ॥

आयहू दीरघ ह्रस्व भेद धरिकै तातै गनौ आगनौ।
बर्नै नंक्ष नक्ष पदत्र इकठे ह्वै बुद्धि में गनौ ॥
लै उक्ति फणीस की गुन सुनै कहिए वोधियों।
कीनी जु पिंगल मंजरी भव में कोविद सोमियो ॥

इति श्री रामसिंह कृत पिंगल मंजरी वर्ण छंद वर्णनो नाम द्वितीयोल्लास संपूर्णम श्रावण वदी ११ सवत १९१६ ॥

विषय—१—प्रथमोल्लास—मंगलाचरण, लघुदीर्घ अक्षर वर्णन
और मात्रा छन्द वर्णन, पत्र १ से ३ तक।
२—द्वितीयोल्लास वर्ण कृत, पत्र ३ से ९ तक।

संख्या १२४. ख्याल (संभवतः), रचयिता—रसिक, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—$5\frac{3}{4} \times 5\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—११, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० हरिरामजी, स्थान—बठैन, डा०—कोसी, जि०—मथुरा।

आदि— ... ... ठी।
देषि यह विधि सवन की मति भजन तें उछटी ॥ २ ॥
कर कुसंग सुसंग तजि के विषय जाय गटी।
कुमत पावस कूप जल लों आपतें उलटी ॥ ३ ॥
करनहारे हों कहा प्रभु जात गन जन घटी।
कहा गीता भागवत में कही कहा नटी ॥ ४ ॥
चरनपर जे रहे तिनकी होत मत उलटी।
कहा फल की चींटी सवकी येकवार फटी ॥ ५ ॥
हमारी यह वेर मनसादांन तें उलटी।
"रसिक" कहि कहि जीभ तोसों छिलत छिलत छटी ॥ ६ ॥

राग सोरठ

अहो हरि दीन के दयाल।
कब देखोगे दिसा हमारी ग्रसित हैं कलिकाल ॥ १ ॥
सकल साधन रहत मोसों और नाहि गोपाल।

करत अति विपरीत साधन चलत चाल कुचाल ॥ २ ॥
कहा सुमिरन करौं तिहारो पर्‌यौ अति जंजाल ।
काटिवे कों नाहि समरथ तुम विनां नंदलाल ॥ ३ ॥
कहो कासों कहिये व्रजपति मेरो है यह हाल ।
हसत कहा हों हरों हो आरत करों "रसिक" निहाल ॥ ४ ॥

राग काफी

वसि गये नैंनन मेरे प्रीतम ।
ज्यौं चाहत चकोर चंदही हू चाहत मुख तेरे ॥ १ ॥
वैरी लोग चवाव करत हैं कहा जानें वे अनेरे ।
पुरुषोत्तम ... .

(अपूर्ण प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि)

विषय—अनेक रागरागिनियों में कृष्ण भक्ति प्रदर्शित की गई है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रत्येक राग के अंत में 'रसिक' मिलता है जिससे विदित होता है कि रचयिता का नाम 'रसिक' है । पत्र के बाएँ कोने पर "ख्या" लिखा हुआ है । इससे ग्रंथ का नाम 'ख्याल' ज्ञात होता है ।

संख्या १२५. सेवकवानी, रचयिता—महाराजा रसिक मोहनराय (बंगाल), कागज—आधुनिक, पत्र—५६, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गो० यमुना वल्लभ जी, विहारीपुरा, वृन्दावन, सम्प्रति २७ नं० बाँसतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता ।

आदि— श्री प्रभु चंद्रगोपाल स्वामिनां जन्मनि स्वयं मुखारविन्द निः सृतं श्रीराधा स्वामिनीं प्रतिपद्य वर्णनम् ॥

श्री चित्रासखी भावेन स्वखेद प्रकाशः
माधुर्याम्बुधितोह मद्य दुरिताम्भोधौ प्रिये पातिता ।
यस्या नित्य रसोत्सवैः क्षण मतं क्षीणं क्षणं नोगतम् ।
किं कृत्वा सुखिता भवामि भुवने भद्रं न भद्रे भवत् ॥
सेवाधीन जनस्य भर्तृकथने प्रत्युत्तरं किं क्वचित् ॥ १ ॥

॥ श्री राधामाधव चन्द्रगोपाल ॥ श्री वृन्दावन नित्यरसाल ॥ श्री सेवकवानी जी प्रारंभ्यते ॥

॥ श्री चित्रा जू कौ ध्यान ॥

निकुंजे राधामाधव मधुर नीरा मृतधरां ।
मुदा वृन्दारण्याधिप परमसेवा विलसिताम् ।

स्फुरिर्तिंकजलकाभां कनक रुचि वासां वितततन् ।
सदाध्यायेत चित्रां सहचरि पवित्रां शिखरिणीम् ॥ १ ॥

कुंडलिया

श्रीप्रभु चंद्र गोपाल पद कर प्रणाम उरधार।
गाँऊ तिनके रूप की महिमा सुख आगार ॥
महिमा सुख आगार ज्ञान संसार सार गति।
भक्त वृन्द के प्रान ज्ञान सीमा अद्भुत अति ॥
जानूं जद्यपि नांहि छंद फंदन कौ निज मति।
तौहूँ वानी शुद्ध आपनी इनके ही प्रति ॥
लोक वेद गामैं सकल मिलि जिन प्रीति विशाल कौं।
तिनकौं ही ध्यावत 'रसिक' श्रीप्रभुचंद्र गोपाल कौं ॥ १ ॥

अंत—आदि मध्य अन्ते विधी कार्य मंगलाचार।
श्री प्रभु चन्द्रगोपाल पद सोही रसिक विचार ॥
सोही रसिक विचार रसिक सेवक वानी मधि।
भई पूर्न जह आश पास श्री प्रेमदास बुधि ॥
ब्रजभाषा के दोष दुराये इन करूनाम्बुधि।
एतेहू जो रहे सम्हारें तिनहि रसिक सुधि ॥
पढ़हि पढ़ावहि सुनहि जो नित्य रसिक मोहन रचै।
द्वादश पूनम होत ही प्रेमी महल टहल जचै॥ ५५ ॥

श्री राधामाधवेन्दुर्जयति ॥ इति श्री मन्माध्व गोडेश्वराचार्य सप्तम पीठाधीश्वर श्री प्रभु चन्द्रगोपाल गोस्वामी कृपापात्र श्री रसिक सेवक विरचिता श्री सेवक वानी समाप्तिमगात ॥

विषय—गो० श्री जयदेव जी के वंश में उत्पन्न श्री रामरायजी तक के आचार्यों की स्तुति की गई है जिनके नाम निम्नलिखित हैं:—

१—श्री प्रभु जयदेव गोस्वामी (गीतगोविन्दकार)
२—श्री कृष्णदेव गोस्वामी, ३—श्री गोविन्ददेव गोस्वामी।
४—श्री मन्मुकुन्द देव जी, ५—अनन्यदेव जी।
६—श्री माधवलाल जी, ७—श्री प्रद्युम्नलाल जी।
८—श्री मोहन लाल जी, ९—श्री नन्दगोपाल जी।
१०—श्री गुरु गोपाल जी, ११—श्री रामराय गोस्वामी प्रभु।
१२—श्री प्रभु चन्द्रगोपाल जी।

अन्त के दो आचार्य सहोदर भाई थे।

संख्या १२६. आनंदलहरी (दसम स्कंध भाषा), रचयिता—रतन, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० कृष्णलाल, स्थान—नसीठी, डा०—माँठ, जि०—मथुरा।

आदि— × × ×

सै कहति धरिये विनिकौ ध्यान ॥ ५ ॥
गोपी कहत वियोग दुष कृष्ण लयो चित्त चोरि।
काहू जातन जानही कहा दै गये षोरि ॥ ६ ॥
एक घरी ब्रजनाथ विनु धरत नहीं मन धीर।
करिये कछू उपाव सषी जासु मिलै वलवीर ॥ ७ ॥
चलौ सषी वन ढूँढीये औत्यागी सुषदाई।
चहूँ ओर हेरन लगी टेरति लै लै नाइ ॥ ८ ॥

अंत—गोपद रजछाई तहाँ मगन वैन धुनि कान।
निरषि दूरि हलधर हरी अक्रूरहि सुष दीन ॥३१॥
नील मनि सोहत अधिक गौर वरन वलराम।
मनहु कनक गिरि ऊपरें राजत मनि मनिधाम ॥३२॥
पीताम्बर धरि कृष्ण जू जिनि को स्याम सरीर।
× × ×

(अपूर्ण)

विषय—भागवत दसम स्कंध की कृष्ण लीला को भाषा में दोहाबद्ध किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के केवल सात पत्रे संख्या १६६, १६८, २०८, २०९, २१२, २१३ और २२४ के प्राप्त हुए हैं। इनसे सहज ही विदित हो जाता है कि ग्रंथ कितना बड़ा रहा होगा। सौभाग्य से पत्रों को टटोलते-टटोलते रचयिता का नाम भी विदित हो गया; परंतु अतिरिक्त परिचय अज्ञात है। रचना को देखने से ये प्रौढ़ कवि विदित होते हैं। भाषा स्वच्छ, सरल और काव्यमय है।

संख्या १२७. कालज्ञान, रचयिता—ऋषिकेश (कवि), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कृष्णप्रसाद, ग्राम—कटयारा, डा०— माँट, जि०—मथुरा।

आदि—··· ··· ··· ···क्षत्र जानि निर्वहौ।
मेषरासि जो उपजै कोई। सत्यसील रूप अति होई ॥ १३ ॥

भाग्यवन्त मानै सो राज । प्रजावंत बहु सारै काज ॥
पर उपगारू सवनिकौं करै । कहौ विज्वक्षन सोचित धरै ॥ १४ ॥
ग्रहके चिन्ह लग्न परिमान । सो फल होइ सुनो सुरज्ञान ॥
प्रथम वर्ष कष्टता होई । जरै अग्नि चौथी सुनि सोई ॥ १५ ॥
पंच रत्न फलु कीजै दान । एहि विधि कह्यौ सु "कालज्ञान" ॥ १६ ॥
अष्टावीस वर्ष अब कहौ । होय त्रदोषष्ट अल्पता लहौ ॥
पंचधेनु औरू प्रतिमा देई । वस्त्र पीत पांच गज लेई ॥ १७ ॥
तामें के वासन मै धरै । देइदान अल्प सो ढरै ॥
"रिषीकेस" यह कही वषानी । गुनवंतै लीजौ सब जानि ॥ १८ ॥

अंत—पंचधेनु ता दीजै दानु । नवैं वर्ष कौ है परिमानु ॥
मासु अषाढ़ अंधेरौ पाष । तिथि पाँचै बुध श्रवन सुमाझ ॥ १४ ॥
व्यतीपात जोग सो जानि । तेतल कर्न होय परिमान ॥
पहले पहर मरनता होई । धनरासि जानौ नर लोई ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

धनरासि लक्षन कहे सुभ और असुभ वषानि ।
मकर रासि लक्षन कहौ आदि अन्त सो जानि ॥ १६ ॥

॥ चौ० ॥

उत्तराषाडा चरन लै लीन । श्रवन सबै तुम लीजौ चीन्हि ।
दोइ धनिष्टा चरन वषानि । मकररासि सो इहि विधि जानि ॥ १७ ॥
मकर रासि लछिन अब कहौं । भागिवंत पुरिष सोलहो ॥
राजपुज प्रजा वहुसाथ । अति सामर्थ सुरन नाम...

× × × (अपूर्ण)

विषय—बारह राशियों में पैदा होनेवाले मनुष्यों के शुभाशुभ लक्षणों का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ का प्रथम पत्र और अन्त के छठवें पत्र के पश्चात् के पत्र अनुपलब्ध हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या १२८ ए. विन्ती, रचयिता—रूपचन्द, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—लाला शंकरलालजी, स्थान व डाकघर—मलाजनी, जिला—इटावा ।

आदि— ॥ अथ विनती लिष्यते ॥

जय जय जिन देवनि के देवा । सुर नर सकल करहिं ते सेवा ॥

अद्भुत है प्रभु महिमा तेरी। वरणी न जाइ अलप मति मेरी ॥ १ ॥

मेरी अलप मति वरणी न जाइ अस यमहिमा तुम तणी।
गणराज वचननि के ओचर पूज्य पद उद्योतणी ॥ हंड सकति ॥
रहित जिनेस यद्यपि तदपि लज्जत जियधरों।
तुम भगति वस वाचाल हउँ प्रभुकि भवि गुण की जिन करों ॥ २ ॥

देव देवाय न तो यहि छाजै। दोष अठारह जुरहि न विराजै ॥
अनंत चतुष्टय श्री जिन सोहै। अवरदेव प्रभुतो सम को है ॥ ३ ॥

कोहै अव तो सम अवरदेव त्रिलोक नाथ निरंजनो।
फुनि दव्य ध्वनि करि अघ विनासै सव सभा मन रंजनो ॥
वसु प्रतिहार्य विभूति सोभित द्वादश अंग सुहावने।
आत्मच्य भाषा भाषित अतिशय अनंत नाथ कहावने ॥ ४ ॥

विनु आपु धनिर्भय सुष कारी। निराहार त्रिपति अति भारी ॥
निरा भरण भासुर मन हारी। विनु अंवर सुंदर अविकारी ॥

अविकार सुंदर सांत मूरति देव तेरी सोहए।
जिहि देषि जात विरोध प्राणी तजहिं वैर विरोधए ॥
लक्षण अट्ठोत्तर सहस सोभित अंग अंग वनतिए।
अरू अनुपम रूप ऊपरि कोटि रवि छवि लाजए ॥ ६ ॥

मध्य—भौंह वको है चंचल आही। नयन कटाक्ष अरूणता नाहीं ॥
हँसै न परमानंद जनेरौ। दसै न दसन सदामुष तेरौ ॥ ७ ॥
तेरो ही सदा मुष तेरी भलाई सभै भीतरि कहै।
वह रंग चिह्ननि के स्वभावनि।
अंत रंग डरि उ रहै ॥
तूं राग द्वेष तै रहित स्वामी।
सौम्य भाव सदा धरै ॥
सत्यदेव शिव पंथ दरसिक अवर देवन ता परै ॥ ८ ॥

अंत—दरसन देषत पातिग चूरै। सेवत सकल मनोरथ पूरै ॥
नाम लेत तुम विघन विनासै। सुनत वचन भुव ज्ञान प्रकासै ॥ ९ ॥
ज्ञान प्रकासै सुनत वचननि मोह तिमिरि विनासए ॥
होइ निरमल दृष्टि तारि सतत्व जिय प्रति भासए ॥
निस्तार कौ मूमूल स्वामी वड़े भागनि पइयो।
रूपचंद चिन्ता कहा अव चरण सरणनि आइयो ॥१०॥
॥ इति विनती संपूर्णम् ॥—प्राप्त प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—जिन भगवान् की स्तुति का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—संपूर्ण ग्रंथ की प्रतिलिपि कर दी है।

संख्या १२८ बी. पंचमंगल, रचयिता—रूपचंद, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—५ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० रामदत्तजी, स्थान व डा०—कोसी, जिला—मथुरा।

आदि—अथ पंच मंगल लिष्यते ॥

यंण वनि पंच परम गुरू जिण गुरु सासणों।
सकल सिध दातार विघन विनास नौ ॥
सारद अरु गुर गोतम सुमत प्रकासणो।
मंगल करूचडसध हया यपण सणो ॥
पाप पणासण गुण गभा दोष अष्टादस हरौ ॥
धर ध्यान कर्म विनास केवल ग्यान अविचल जिन लह्यौ ॥
प्रभु पंच कल्याणक विराजित सकल सुरनर ध्याइये।
त्रैलोक नाथ सुदेव जिनवर जगत मंगल गाइये ॥ १ ॥

जाके गर्भ कल्याण धनपति आइयो।
अवधि ग्यापरबान सुइन्द्र पठाइयो ॥
रचिनव बार जोजन हर सुहावनि।
कनक रयण मणि मंदिर अति वनी ॥
अति बनी षौरी पगार परछा सोहन उपवन सोहिए।
नरनारि सुंदर चतुर भेष सुदेष जनमन मोहिये ॥

अंत—सुध्या त्रिषा अरु राग दोष असुहावने।
जन्म जुरा अरु मरण त्रिदोष भयावने ॥
रोग सोग भय विस्मय अरू घना।
गनि एह अठारह दोषति निकर रहत देव निरंजना ॥
नव केवल लब्धि मंडित सिव रमनि मनि रंजनो।
श्री ग्यान कल्याणक सु महिमा सुनत सव सुषपाईया ॥
त्रैलोक्य नाथ सुजिनवर जगत मंगल गाइये ॥२१॥ ४ ॥

× × ×

मै मति हीन भक्ति बसि भाना भाइया।
मंगल गीत प्रबंध सुजिन गुन गाइया ॥
जोई सुनइ बषान सुरध गावइ।
मन वंछित फल सोनर निश्चै पावई ॥
अष्टोसिद्ध नवोनिधि मन प्रतीतज आवए।
भ्रमभाव छूटे सकल मनके जिन सरूप सुजानिए ॥

पुनि इहिपार तटरहि विघसु होइ मंगल नितनए ।
भनि "रूपचंद" त्रिलोक पति जिन देव चउ संग हजये ॥२५॥

इति श्री पंचमंगल संपूर्ण ॥

विषय—जैन तीर्थंकर की स्तुति की गई है ।

संख्या १२८ सी. तपकल्याणक, रचयिता—जनरूपचन्द, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भागवतप्रसाद जी, स्थान—सिरसा, डा०—इकदिल, जि०—इटावा ।

आदि—श्रैम जल रहित शरीर, सदा सव मिलि रह्यो ।
वीर वरण वरु रुधिर, प्रथम आकृति सह्यो ॥
प्रथम सार संहनन सरूप विराजए ।
सहज सुगन्ध सुलक्षण मंडित छाजए ॥ १ ॥
छाजै अतुल वल परम प्रिय हित मधुर वचन सुहावने ।
दशसहज अतिशय सुभंग मूरति वाल लीला कहाँवने ॥
आवाल मति त्रिलोक पतिमन रुचित उचित जु नित नए ॥
श्रमरोप नीत पुनीत अनुपम सकल भोगति भोगए ॥ २ ॥
भवता न भोग विरक्त कदाचित चिंतए ।
धनयोवन पिय पुत्तसकल अनितए ॥
कोई न सरन मरन दुख चहूँ दिसि गति भरयौ ।
सुख दुख एकै भोग तौ जीव विधि वसि परयौ ॥ ३ ॥
परयो विधि वस आन चेतन आन जड़ज कलेपरो ।
तनु असु विपरतै होइ आश्रव परिहर पर संवरो ॥
निरजरा तपवल होइ समकित विनु, सदा त्रिभुवन भमैं ।
दुर्लभ विवेक बिनान कबहूँ परम धरम विषैं रमैं ॥ ४ ॥

मध्य—ए प्रभु वारह पावन भावन भाइया ।
लोकांतिक वरदेवनि योगइ आइयो ॥
कुसुमांजलि दे चरण कमल शिर नाइयो ।
स्वयं वुद्ध प्रभु युति कति नि.सुमुझाइयो ॥ ५ ॥
समुझाइ प्रभु ते गए निज पद फुनि महौछौ हरि कीयौ ।
रुचि रुचिर चित्र विचित्र शिविका करि सुनन्द नवमलीयौ ।
तहिं पंघव मूंठि सुलोच कीनौ प्रथम सिद्धहंनति करे ।
मंडिय महा व्रत पंच दुद्धर सकल परिग्रह परिहरे ॥ ६ ॥
मणिमय भाजन केश परिछय सुरपती ।

षीर समुद्र जल षिपि करि गयो अमरावती ॥
तव संयम वल प्रभु कौं मन पर्यय भयो ।
मौन सहित तप करत काल कछु तहिं गयो ॥ ७ ॥

अंत—गयो तहँ कछु काल तप वल रिद्धि वसु गुण सिद्धिया ।
जसु धर्म ध्यान वलेनष भगय सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥
षिपिसा सातए गुण जतन विनु तहिं तीन प्रकृति जु वुद्धि वढ़िड ।
करि करण तीनि प्रथम सुकल वलषि पिक श्रेणी प्रभु चढ़िड ॥ ८ ॥
प्रकृति छतीस नवै गुण थ.न विनासिया ।
दशमै सुछिम लोभ प्रकृति नहिं आसिया ॥
सुकल ध्यान पद दूजौ फुनि प्रभु पूरियो ।
वारह मैं गुण सोरह प्रकृति जु चूरियो ॥ ९ ॥
चूरियो भेसहि प्रकृति इहि विधि घातिया करम हतणी ।
तपकीयो ध्यान पर्यन्त वारह विधि त्रिलोक श्रोमणी ॥
निक्रम कल्याणिक महिमा सुनत सब सुष पाइए ।
'जनरूप चन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गाइए ॥ १० ॥

॥ इति तप कल्याणिक ॥
॥ समाप्तम् ॥
॥ शुभम् ॥

विषय—जिन देव के तप करने का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ जैनसम्प्रदाय से संबन्ध रखता है । इसके रचयिता रूपचन्द हैं । ग्रंथ की अविकल रूप से प्रतिलिपि कर दी गई है ।

संख्या १२८ डी. ज्ञानकल्याणक, रचयिता—जन रूपचंद, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० भागवत प्रसादजी, स्थान—सिरसा, डाक—इकदिल, जि०—इटावा ।

आदि—

तेरह में गुण थानि सयोग जिरने सरो ।
अनंत चतुष्टय मंडित भयो परमेसरो ॥
समव सरण तव धनपति वहु विधि निरमयो ।
आगम जुगति प्रमाण गगनांगन परि ठयो ॥ १ ॥
चित्र विचित्र मणि मय सभा मंडप सोहाए ।
तिहि मध्य वारह वने कोठे वनक सुरनर मोहए ।
मुनिकल्प वासिन आर्य कातिहिं जोति भौम भवनतिया ।
पुनि भवन भौम सुकल्प सुरनर पसुनि कोठिनिवैठिया ॥ २ ॥

मध्य प्रदेश तीनि मणि पीठ तहाँ वने ।
गंध कुटी सिंघासन कमल सुहावने ॥
तीनि छत्र सिर सोभित त्रिभुवन मोहए ।
अंतरीक कमलासन प्रभु तहाँ सोहए ॥ ३ ॥

सोहए चहुँ सहसु मरठरते अशोक तरु तलि छाजए ।
पुनि दिव्यधुनि प्रति शवद जन तहाँ देव दुन्दुभि वाजए ॥
सुरपुहुप वृष्टि प्रभा मंडल कोटि रवि छवि छाजए ।
इम अष्ट अनुपम प्रतिहार जव रवि भूमि विराजए ॥ ४ ॥

योजन द्वइ समान सुभिक्ष चिहूँ दिसि ।
गगन गमन अरु प्राणी वधन अहो निसि ॥
निरूप सर्ग निराहार सदा जगदीसए ।
आनन च्यारि चहूँ दिसि सोभित दीसए ॥ ५ ॥
दीसै अशेष विशेष विद्या विभव वर ईशर पन्यो ।
छाया विवर्जित सुद्ध फटिक समान तनु प्रभु कौ वन्यो ॥
नहिं नयन पलक पतन कदाचित केश नष सम छाजहिं ।
धातिया षइ जनित अतिशय दश विचित्र विराजहिं ॥ ६ ॥

सकल अरथ मागधिया भाषा जानिए ।
सकल जीव गति मैत्री भाव वषानिए ।
सकल कृतु फल फूल वनस्पति मन हरै ।
दर्प्पण सम मणि अवनि पवन गति अनुसरै ॥ ७ ॥
अनुसरै परमानंद सवकौं नारिनर जे सेवता ।
योजन प्रमाण धरा जिसन मार जहिं मारूत देवता ।
फुनि करहिं मेघ कुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी ।
पद कमल तर सुरषि यहिं कमल सुधरणि शशि शोभितवनी ॥ ८ ॥

अमल गगन तल अरु दिसि तिहिं अनुसारहिं ।
चतुर निकाय देव तहँ निसुर आकारहिं ॥
धर्म्म चक्र चलै आगहि रवि जहिं लाजहिं ।
फुनि श्रृंगार प्रमुख वसु मंगल राजहिं ॥ ९ ॥
राजैति चौदह चारू अतिशय देव रचित सुहावनै ।
जिनराज केवल ग्यान महिमा और कहत कहावनै ॥
तव इंद्र आनि कियो महोछव सभा सोभित अतिवनी ।
धर्मोपदेश कियौ तहँ उछलिय वाणी जिनतणी ॥१०॥

क्षुधा तृषा अरु रोग द्वेष असुहावने ।
जनम जरा अरू मरण त्रिदोष भयावने ॥

रोग सोग भय विस्मय अरू निंदा घनी ।
स्वेद स्वेद मद मोह अरति चिंता गनी ॥११॥
गनिय जि अठारह दोष तिनि करि रहित देव निरंजनो ।
नव परम केवल लब्धि मंडित शिव रमणि मनरंजनो ।
श्री ज्ञान कल्याणिक सुमहिमा सुनत सब सुष पाइए ।
जन रूपचंद सुदेव जिनवर जगत मंगल गाइए ॥१२॥

॥ इति श्री ज्ञान कल्याणक ॥
॥ समाप्तम् ॥
॥ शुभम् ॥

विषय—जिनराज के ज्ञानोपदेश का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ जन रूपचन्द की रचना है। इसमें उन्होंने प्रथम कुवेर द्वारसंवसरण निर्मित किए जाने का वर्णन किया है। उसके कोठों आदि की बनावट और विस्तारादि का वर्णन करते हुए जिन द्वारा कर्मों का विनाश और निराहार व्रत करते हुए अर्द्धमागधी भाषा में सफल अर्थ करने का प्रयत्न किया है। शत्रुता त्याग कर परममैत्री भाव से उपदेश ग्रहण करने का स्वरूप दिखाया गया है। विवरण पत्र में ग्रंथ अविकल रूप से उद्धृत कर दिया गया है।

संख्या १२९ ए. समयप्रबंध, रचयिता—हितरूपलाल जी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—१०½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६७ वि०, प्राप्तिस्थान—गोस्वामी श्री हितरूपलाल जी, अधिकारी श्री राधावल्लभ मन्दिर, वृन्दावन, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री हित हरिवंश चन्द्रो जेति ॥
अथ श्री हित रूपलालजी कृत समय प्रबंध ॥

॥ राग रामकली ॥

प्रथमहि भावक भाव विचारै ।
मन तन नव किसोर सहचरि वपु हित गुरू कृपा निहारै ॥
भूषन वसन प्रसाद स्वामिनी पुलकि पुलकि अंग धारै ।
जै श्री रूपलाल हित ललित त्रिभंगी रंगी रस विस्तारै ॥ १ ॥
सषि लषि कुंजधाम अभिराम ।
मणिनु प्रकास हुलास जुगल वर राजत स्यामा स्याम ॥
हास विलास विनोद मोद मद होत न पूरन काम ।
जै श्री रूपलाल हित अलि दंपति रति सेवत आठौ जाम ॥ २ ॥
पौंढी प्रिया नील पट ढांपि ।
वदन चंद दुरि दुरि अवलोकत प्रेम मुदित तन कांपि ।

होइ परी सुष इंदु दुहूँ दिस होत न क्यौंहू नाँपि।
जै श्री रूपलाल हित ललित त्रिभंगी दृग चकोर तन ताँपि ॥ ३ ॥

अंत— सोरठ

सुनि पिय स्याम सुजान कहानी।
प्रेम नृपति हित वन में षेलत मृगया जात न जानी ॥
नेह तुरंग चढ्यो अभिमानी पंचवान सर साधैं।
विरह कुरंगनि घायिल करि करि संजोगिनि सौ वाँधैं ॥
सुरत सदन आनन्द नारि संग करत विलास विलासी।
हाव भाव रस आसव छकि छकि पिवत न लेत उसासी ॥
मिलि बिछुरनि की पीर न व्यापै कोककला कलठानी।
जै श्री हित अलि रूप रसीले रसिया प्रीति रीति पहिचानी ॥

× × ×

पौंढ़ि सुष सेज स्याम भुजा सीस दियें,
प्रिया उरझि अंग अंग वाल लाल उर समाई।
वीरी विवि षंड षंड आनन दृग पानन रूप छके,
सरस सौरभ दुति परत नहीं लषाई ॥
ओढ़ें पटपीत एक झलमलात वदन चंद,
भूषन उडगन समाज कविमति विलषाई।
सेवति पद कमल टहल महल अली श्रीलाल,
रूप हित अनुगत जानि निजु कर अपनाई ॥२७॥ सवपद-१९६ ॥

इति श्री हित रूपलाल जी कृत समय प्रबंध संपूरन ॥ संवत १९६७॥ माह वदि चौथ ॥ द: ॥ राधिका सरन ॥

विषय—श्री कृष्ण और राधा के समय-समय पर के संयोग श्रृंगार का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसमें राधाकृष्ण का संयोग श्रृंगार बहुत सुन्दर रूप में वर्णित है। रचयिता का नाम हित रूपलाल है जो चाचा वृंदावनदासहित के गुरू थे। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९६७ वि० है!

संख्या १२९ बी. छद्मलीला (सुनारिन लीला), रचयिता—रूपहित, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—$८\frac{३}{४} \times ६\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० पुरुषोत्तमजी, ग्राम व डाक घर—छाता, जिला—मथुरा।

आदि— श्री गणेशाय नमः

राग गौरी

तन साँवरी सुघर सुनारी।
रतन जटित के वीछिया लाइ नाद परम रूचिकारी ॥ टेक ॥

इनको सब्द जु परैगौ प्रीतम के जव कान।
मन को षैंचि जुलाइ है इनमैं जु जंत्र वलवान ॥ १ ॥
बड़े नगर हौ वसति हौं मो मैं बड़ो गुमान।
राज भवन ही वेचि हौं जहाँ वड़ौ पाय हौं मान ॥ २ ॥
सवही सौ यौ कहत है वैठी पनघट वाट।
ये विछिया सो लेहिगी विधि उचौ रच्यौ ललाट ॥ ३ ॥
वूझत हैं वृजभाम कहा तोपै यह साज।
वेचै क्यौं न वजार मैं कहा मारग रच्यौं समाज ॥ ४ ॥
वस्तु वजारू नाहिं यह विन समझै सतरात।
गहने रतन जड़ाय के सषी भूपति भवन विकात ॥ ५ ॥
हमहू तौ देषै सुने ए री सावल गात।
वैठी चौरे चौहटे तू कहै वड़ी वड़ी वात ॥ ६ ॥

अंत—गहने गठरी षोलतै मुरली पर गइ हाथ।
यह न सुनारी है भटू यह ढोटा गोकुलनाथ ॥५१॥
किनहू उचकी कंचुकी किनहू उचक्यौ चीर।
मुष ऊपर गुलचा दियौ हसे हर हर हर दलवीर ॥५२॥
सिर फैंटा कंचुक सज्यौ मुष रचि दयो तबोर।
तव गोरस की चोरी करी लाल अव भये रस के चोर ॥५३॥
धनि महरि पूजी छटी भले महुरत माँहि।
ये छंद वंद रमे सषी देषे सुने जु नाँहि ॥५४॥
यह जु छदम कौ ढापियौ रचना वचन अनेक।
वनेन स्याम सरीर विन विधि भ्रम्यौ वरष लगि एक ॥५५॥
कौन गुरू पै ये पढ़े वचन चातुरी लीक।
सवकी वुद्धि पलेंटि कैं कहै वात ठीक ठीक ॥५६॥
ललिता इन वीथीनु मै मों चितु पावत चैन।
चलै अधिक अकुलाय कै इहि घर सुष देषन नैन ॥५७॥
प्रीति डोर षैचै जवही यौ न आयौ जाय।
तव जु वुद्धि वल आपनी अस छदमनि रच्यौ वनाय ॥५८॥

\+ + +

द्दग आलस आलस जु मन आलस पूरित वैन।
धवल महल मैं जाय कैं सषी तहाँ करावत सैंन ॥६२॥
पान डिवा सौरभ धरै आँजन धरि रस पान।
चरन पलोटत रूप हित अलि ... ...

\+ + + —(अपूर्ण)

विषय—एक बार श्रीकृष्ण सुनारिन का भेष बनाकर राधा से मिलने गए, पर वहाँ गहनों के बीच मुरली मिलने से पहचान लिये गये। इस प्रकार राधा से उनका मिलन हुआ।

संख्या १३०. गंगालहरी, रचयिता—रूपरामजन, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०० वि० (संभवतः), लिपिकाल—सं० १८६० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवतीनंदन जी, ग्राम व डाक०—बेरी, जि०—मथुरा।

आदि—पद्माति छंद

श्री गौरी नंदन सुरनर वंदन जग अभिवंदन विघ्न हरौ।
श्री रूप रामजन करत वीनती गंगा तन मम चित्त करौ॥ १॥
श्री मत भवानी निगम वषानी ब्रह्म कमंडल कर संगा।
भागीरथ आनी मुनिजन भानी कुलन उधारन जै गंगा॥
तव निरमल धारा अगम अपारा न्हाइ देषि कहि शुध लहै।
तन मन वच धावै तव पद पावै अधम उधारन संत कहै॥ ३॥
शिव शीस निवासी परम प्रकासी कलुष संघाता सत जनकै।
जलपान करत भवरोग कटत द्रुम भेष नभछत जीम तनकै॥ ४॥
वैकुंठ नसैनी जन सुष दैनी अमृत वहंती शिव मानी।
भवसागर तरनी कलिमल हरनी वेदन वरनी जग जानी॥ ५॥

अंत—

जै गंगा माता रिधि सिधि दाता रची विधाता ब्रह्ममही।
अच्युत पद पतिता शुभ गुन गतिता जनकौ हरिपद देत भई॥ ६॥
इहिं भाँति निहारी निज उहिधारी निज संसृत दुष दूरि कहि।
गण सेस सारदा नारदाद मुनि निस दिन तव अस्तुत ही धरी॥ ७॥
प्रात समै गंगा की महिमा सीषै सुनै जो नित गावै।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि संपदा विष्णलोक वासौ पावै॥ ८॥
संवत् सर भरि वासु चंद्र प्रतिष्युभमाद्य शुक्ल ते सरस विलास।
बुद्धवार कर गंगा लहरी रूपराम हिय करौ निवास॥ ९॥
—पूर्ण प्रतिलिपि

॥ इति श्री गंगालहरी संपूर्ण॥

विषय—श्री गंगाजी की स्तुति की गई है।

रचनाकाल

संवतसर भरि वासुचंद्र प्रतिष्युभमाद्य शुक्ल ते सरस विलास।
बुद्धवार कर गंगालहरी रूपराम हिय करौ निवास॥

विशेषज्ञातव्य—रचयिता का नाम 'रूपरामजन' है, रचनाकाल अस्पष्ट है। संवत् १८०० के लगभग मान लिया है। लिपिकाल संवत् १८९० वि० है जो इसी लिपिवद्ध सुदामा की 'बाराखड़ी' के लिपिकाल के आधारपर है।

संख्या १३१ ए. कृपाकल्पतरु, रचयिता—रूपरसिक, कागज—देशी, पत्र—४३, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०३, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हरिकृष्णजी वैद्य 'कमलेश', श्री कृष्ण औषधालय, डीग, जि०—मथुरा।

आदि—कुंज महल गहर छांह पिय कैं गर धरै वांह,
उरसमात नहीं उमाह सरस वनक वनी वाल।
चाहत सव सषी और मानौ चंद चित चकोर,
मोर चित्र अति विचित्र भरि मदन मदन पाल ॥ ५ ॥
रमी रहसि रस विहार नागरिनव रंग उदार।
अरस भरि ठठकि चलन मंद मत्त द्रुभ अराल।
रूप रसिक रसिक राइ निरषि नैन सहज भायहिए,
मैं समाय रह्यौ दोउ लोचन विसाल ॥ ६ ॥ ४ ॥

+ + +

कंत कामिनी किसोर जोर ओर आजही।
देषो सषी देषौ आज कैसे छवि छाजही ॥ टेक ॥
अंग अंग माधुरी अलौकिकी विराजही।
अदल वदल उरझि पुरझि नील पीत राजहीं ॥ १ ॥
मधुर मधुर सुर अनूप नूपरादि वाजही।
रूप रसिक निरषि नैन मैनसैन लाजही ॥ २ ॥ ११ ॥

अंत— राग गौड़ी

लाल तेरो जीवै राज महाराजा जी।
हुवा हमारे भागों सेती लैंही दान गजबाजा जी ॥ टेक ॥
पुरी आस कोटिन जनमन की तनमन का दुष लाग्या जी।
रूप रसिक ब्रजराज लाडिले राषिलीन सग लाज्या जी ॥ १ ॥ ५१ ॥

+ + +

कौरी ललदुवा बोली हमैं नंद जी,
सुन अनन्द फूले आनंद कंद जी ॥
कोई रावल कौं जावो कोई पुर के वुलावो,
कोई घर के जगावो कोतों जीघर आवो ॥ १ ॥
कोई घोड़े मंगावो कोई जोडे मंगावौ,
कोई गजराज मंगावों सुनैरे साज मंगावो ॥ २ ॥

कोई पालकी मंगावो कोई नानालकी मंगावो,
कोई भूषण मंगावो कोई मगन चुकावो ॥ ३ ॥
इति कृपाकल्पतरु संपूर्णं शुभमस्तु ॥

विषय—

१—इक सतबीस पद्यावली—राधाकृष्ण प्रेम क्रीड़ा विषयक पद, पत्र २५ तक।
२—फागलीला, पत्र २७ तक।
३—लाड़िली जू की जन्म उत्सव साषा, पत्र ३३ तक।
४—कृष्णजन्म उत्सव साषा, पत्र ४३ तक।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ का केवल आरंभ का पत्र लुप्त है। यह राग रागिनियों और कवित्त सवैयों में रचा गया है। कृष्ण जन्म वधाईवाला अंश अधिकतर कवित्त सवैयों में है। पद ललित और सरस हैं। अन्त में रेखता और रागगौड़ी में रचे छन्द उद्धृत हैं जिनमें खड़ी बोली का प्रारंभिक रूप पाया जाता है। रचयिता का नाम रूपारसिक है। विशेष परिचय इनका अज्ञात है। 'उत्सवमणिमाल' ग्रन्थ के, जो प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में है, अंत में इसी रचयिता द्वारा रचित 'हरिव्यासदेव जस अमृतसागर' की सवा छ पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। लिपिकार ने पता नहीं क्यों इसे अधूरा छोड़ दिया है। ये पंक्तियाँ इस प्रकार है:—

श्री गणपतये नम ॥ श्री हरिव्यासदेव हरिप्रियाभ्याम् नमः ॥ मांझ ॥
श्री हरिव्यास हरिप्रिया रूप तिनकी कृपा मनाई।
श्री हरिव्यास देव जस अमृत सागर लिखों वनाई।
तामैं काव्य छन्द नाना विधि सो लहरी समझाई।
युगल रतन दाई यह गाई रूप रसिक मन भाई ॥

इससे विदित होता है कि रूप रसिक ने 'हरिव्यासदेव जस अमृतसागर, भी रचा है जिसमें अनेक प्रकार के छंदों में कविता की गई है। ये हरिव्यासदेव इनके गुरु विदित होते हैं। हरिव्यासी संप्रदाय के प्रवर्त्तक संभवतः यही हरिव्यासदेव हैं। निंवार्क संप्रदाय के अन्तर्गत ही हरिव्यासी संप्रदाय है।

प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल और लिपिकाल दोनों नहीं दिए हैं।

संख्या १३१ बी. उत्सव मणिमाल, रचयिता—रूपरसिक, कागज—देसी, पत्र—८०, आकार—१०½ X ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० हरिकृष्णजी वैद्य 'कमलेश', श्री कृष्ण औषधालय डीग, रिया०—भरतपुर।

आदि— अथ उत्सव मणिमाल लिष्यते ॥

दोहा

प्रथम समरि श्री गुरू चरण हरन सकल अघ जाल।
तास कृपा वल लिषत हौं यह उत्सव मणिमाल ॥ १ ॥

करि आरंभ वसंत तैं विजन द्वादसी भांड ।
रूप रसिक यह यह नाम कौं सो अव सत्य कहाँऊँ ॥ २ ॥

॥ अथ वसंतोत्सव ॥ राग वसंत ॥

वसंत वंधावो चालौ बृज महा पंचमी माह की मदन महोत्सव कहियैं ।
सजि सजि सकल चलौ जुवती जन मन वांछित फल लहियौं ॥ १ ॥
कनक कलस मैं उलही हरित जव नूत मौरन बनी कैं ।
घसि केसरि घनसार मलय मिलि धरि सिर कल कमनी कैं ॥ २ ॥
वाजा विविध बजाओ गावो अविर गुलाल उड़ावौ ।
इहि विधि रूप रसिक दंपति कौं जाय वंसत वंधावौ ॥ ३ ॥ १ ॥
आज वसंत वन्यौ वृंदावन देषैं ही वनि आवैं री ।
विविधि भांति द्रुम लता फूलि रहि कहत कह्यौ नहि जावैं री ॥
तैसीय कोकिल की कल वोलनि सुनि श्रवना सचु पावैं री ॥ १ ॥
ठौर ठौर निर्मल जल आसय संपति सहित सुहावैं री ।
रूप रसिक यह सोभा निरषत तन मन नैन सिहावैं री ॥ २ ॥

अंत— सरदोत्सव रास

॥ राग वंगाल ॥

निर्तत रास कमल दल नैन । सरद सुरैन अति सुष दैन ॥ टेक ॥

× × ×

मंद हसनि भौंहन की लसनि सुरवलनि तन कूल ।
ररन वसन तन सिथिल सुश्रम कन किरनि सिरनि ते फूल ॥ ९ ॥
पावनि धावनि धरनि सुहावनि चावनि निर्त्य करंती ।
गावनि सुरहि मिलावनि पियहि रिझावंनि वच उचरंती ॥१०॥
वंसी वजावें ग्राम सजावैं कल सुर अधिक चढ़ाय ।
निकट आय परसावैं उरवर उद्‌भुत तान बढ़ाय ॥११॥
डोलनि मुकुट सुकुंडल लोलनि थेई थेई बोलनि वोल ।
पट झक झोलनि ओप अतोलनि ढरि ढरि दे नित वोल ॥१२॥
परसत मरसत सरसत तन मन मधुर सुधारस पाय ।
श्रमित जानि श्रमकन पिय पौंछत कर पीतांबर लाय ॥१३॥
लखि खेचर तिय भई जु मोहित थकित भये उडचंद ।
रूप रसिक यह सोभा निरषत वाढ़त अति आनंद ॥१४॥

× × ×

॥ मणि गणना ॥

पद

वसंत पच्चीस जानि होरी पैतिसहि ।
दोय डोल श्री राधा जनम के पद पुनित छहि ॥
फूल डोल पद चार चार अभय तृतीया पद ।
नव श्री जानकि जनमू सप्त नरहरि केहरगद ॥

× × ×

यह उत्सव मणिमाल जिहिं पहरे होत स्वरूप ।
याते पहरे अवर कहा जगमें वस्तु अनूप ॥
इति उत्सव मणिमाल संपूर्ण ॥

विषय—निम्नलिखित विषयों पर पद लिखे गए हैं :—वसंत, होरी, डोल, अक्षय तृतीया, जानकी जन्म, नरसिंह जन्म, जल विहार, वर्षा ऋतु, पवित्रा, वधाई, लाललाड़ली, जलपूजा, रंग वधाई, सांझी के पद, विजैदसमी, रासविलास, दीपोत्सव, गिरिपूजन, गिरिधन, प्रबोध, तुलसी विवाह, राधाकृष्ण विवाह, महल मंगल, द्वादसी विंजन और सिद्धांत ।

संख्या १३२ रामायण. रचयिता – साहबराय, कागज – देशी, पत्र—६१, आकार—१० × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०४७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० केशवदत्त, ग्राम—सेई, डाकघर—छाता, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः

॥ चौपाई ॥

प्रथम गुरू गणेश चित लाऊं । पाछे तास राम गुण गाऊं ॥
वही राम है घट घट मांही । जल थल में व्यापक सवघांही ॥
वा समान दूजो कोऊ नाहीं । रची सृष्टि जू यक पल मांही ॥
धर्ती जलपर तुरत विछाई । सोन रूप की थान वनाई ॥
लै आकास तान्यो विन पुंनी । ऐसो और कौन है गुनी ॥
सूर्य चांद ता मांहि लगाये । तारे सकल गगन पर छाये ॥
पुनि वर्षा कीन्हीं अति भारी । तासों होय धान फुलवारी ॥
माटी में सवको भष काढ़े । फिर सवको माटी कर डारै ॥
वाको भेद देव नहिं जानै । नर अजान कैसे पहिचानै ॥

× × ×

अव गुरु देव नाम गुण कहूँ । जाते प्रगट गुप्त सुष लहूँ ॥
'साहव राय' नाम मम जानो । तात नरायणदास वषानो ॥

पर अजा दयालदास वडभागी । रामराय पर अजा सुभागी ॥
तिनके वंश जन्म धर आए । कायथ सगसैने जु कहाये ॥
औध देस कहिए भु गावा । साहव नहिं देषी वह ठावां ॥
सदा रहे दषिण कर वासी । भली सभा में वुध प्रगासी ॥
मैनिज जो है ननसार हमारी । सो हमको लागै अति प्यारी ॥
नना हमार हुते बड़ भागी । जिह्न की मति प्रभु सौं लागी ॥

× × ×

॥ दोहा ॥

षेतलदास नना हुते जिन्ह चीह्ने भगवान ।
तिनके नाम प्रताप ते साहब पायो ज्ञान ॥ ६ ॥

अंत—

दोहा

भरत भूप की कान तुम धरियो नित्त मन माँहि ।
तहाँ वड़ाई वैठ कै मेरी करियो नाँहि ॥६६॥

× × ×

चौपाई

यह कहि राम भये उठि ठाढ़े । सीता दौड़ चरण गहे गाढ़े ॥
कह्यौ मोहि अब लीजै साथा । लाग्यो चरण तुम्हारे माथा ॥
मेरी प्रीति जु तुमसौं लागी । सदा रहूं तुमरे रंग पागी ॥
जो तुम करिहो मोह निहारी । अवही मरूँ हृदय दुषभारी ॥

× × ×

तवहि राम वोले यह वाता । तू सुष माँहि रहे दिन राता ॥
फूल समान देह सुकुमारी । कैसे सहै दुष वन भारी ॥

× × ×

सुनी राम जव जल निधि वानी । भए मगन सब रीस सिरानी ॥
वहुरि राम यह वचन वषाना । छूछा परै न मेरो वाना ॥
तव सागर वोल्यौ यह वाता ।
सुनो जु साहव प्रभु सुषदाता ॥
एक हौद मोहि निकट कहावै ।
असी जोजन वह फाट दिषावै ॥
वातन परै दिष्टि जव मेरी । उठत पीर मन माँहि घनेरी ॥
मार वान अव ताहि सुषावो । मेरे मन कौ हर्ष वढ़ावो ॥
यह सुन राम वान तव मार्यौ । हुतौ हौद तहाँ नगर वसायौ ॥
समुन्द्र के मन को दाह मिटायो । ... ... (अपूर्ण)

विषय—रामायण की कथा का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में ६१ पत्रे हैं। रचयिता का नाम साहबराय है। इनके पिता का नाम नारायणदास, पितामह का नाम दयालदास और परपितामह का नाम रामराय था। गुरु का नाम बाबानंद था जो व्रज के रहने वाले थे। ये सक्सेना कायस्थ थे। अपने गाँव का नाम औध लिखा है जिसको इन्होंने कभी नहीं देखा। बाल्यावस्था से ही ये अपने ननसाल में रहते थे। इनके नाना का नाम खेतलदास था जो दखिन के रहने वाले थे।

प्रस्तुत ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें केवल 'रामचंद्रजी द्वारा समुद्र से रास्ता माँगने' तक की ही कथा वर्णित है। काव्य की दृष्टि से रचना यद्यपि साधारण है तथापि इसमें मनोरंजन की प्रचुर सामग्री विद्यमान है। मनोवैज्ञानिक भावों का यत्र तत्र अच्छा निदर्शन हुआ है। कथा कांड बद्ध नहीं है। खेद है रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात न हो सके। संभवतः अंत में दिए रहे हों जो लुप्त हो गया है।

संख्या १३३. एकादशी माहात्म्य, रचयिता—सहज, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—१४ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९०० वि०, प्राप्तिस्थान—मदनराम जी, स्थान—सरसा, डा०—छोटीकोसी, जि०—मथुरा।

आदि— श्री गणेशाय नमः

अथ एकादशी महात्म लिष्यते॥

मानधाता उवाचै॥

॥ चौपई॥

·········चैत्र कृष्ण पक्ष कहु भेवा॥
लोकन के हित प्रण जु कीनी।
कहौ महातम रिषि परवीनी॥ १॥

॥ लोमस उवाच॥

धनि धनि राजन सुषदाई। लोकन हित हरि कथा चलाई॥
चैत्र कृष्ण पछि कहौं भेवा। पाप पुन्य दोषनि न सेवा॥
कथा पाप हरन सुषदाई। देश चैत्र रथ सेव कराई॥
वहु तापस वन में तप करै। मेधावी देषे दुख टरै॥

अंत—महापाप नासै सुषहोई। अंत धर्म पद पावै सोई॥
आमला महिमा है सुषदाई।
धर्म पुत्र सों कथा सुनाई॥
जो कोई सुनैं अरू मन में धावै।
धर्म पदारथ सोई पावै॥ १७॥

दोहा

एकादशी महिमा वड़ी प्रभु कोहै सुषदाइ।
जन सहजा चौवीस मत हरि जू दये बताइ ॥ १८ ॥

इति श्री वासिष मानधाता सम्वादे सहिज विरचितायं काल्गुण शुक्ल पक्षि एकादशी महात्म चतुर्विंशमो अध्याय ॥ २४ ॥ चतुर्विसमे महात्मे कृष्ण जुधिष्टर सम्वादे संपूर्ण शुभमस्तु ॥ संवत् १९०० शके १७६५ ॥

विषय—मूल संस्कृत ग्रंथ एकादशी माहात्म्य का भाषा में छन्दोबद्ध अनुवाद किया गया है।

संख्या १३४. सालू की वाणी, रचयिता—सालू, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—८३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० कृष्णचंदजी, स्थान—पैंठो, डा०—डीग, जि०—भरतपुर रियासत।

आदि— श्री गणेशाय नमः ॥

अथ वाणी लिष्यते ॥

सालू तन मन वाणी रम रह्या गणपत नाव अधार।
रिद्ध सिद्ध दाता में लघोः समरथ सिरजणहार ॥ १ ॥
सालू कंठ कंवल में सरस्वती कुंडल झलक कांन।
हीरा कस वरणह दे उक्त का दांन ॥ २ ॥
सालू नील कंठ पर सोहीया भूषण वन्या भुजंग।
जटा जूट में षलक ही अरसि परसि वाहा गंग ॥ ३ ॥
सालू हीरा कस वरण है कंठ है नील सरूप।
त्रिकुटी आण वीराजीया शंकर करणा रूप ॥ ४ ॥
श्री गणेशाय नमः श्री रामजी ॥ श्री कृष्णाय नमः
श्री बलभद्राय नमः श्री गुरूभ्यो नमः ॥
सालू गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरूदेव महेश्वरः।
गुरु रेव परंब्रह्म तस्मै श्री गुरूभ्यो नमः ॥ १ ॥

× × ×

सालू नमस्कार कर गुरु देव कूं वंदु सत गुरु रूप।
भो सागर में कादि कैं दरसाया निज रूप ॥ १ ॥

अंत—

सालू करणी गरतैं कर लीया सनमुषि सकल सरीर।
लो लागी सुमरण हुवा द्रस्या नीर मैल नुर ॥

× × ×

साल्हू राम नाम सुंथीर हुवा पाया नुर निवास।
झल मिल झल मिल रूप का हुया भाण प्रकास ॥२५॥
साल्हू भो मन मोरा भया सुन अनहद की घोर।
पीव पीव रटणा लग रही लग्या सांम सुं घोर ॥२६॥
साल्हू हम जाण्या नीज पीवन त्रवेणी की तीर।
सास उसासां झलकीया परगट होगा पीर ॥२७॥
साल्हू यक दीसावर हम गया जहाँ गुंगा पढ़ै कुरान।
अंधे लोचन पाइयाँ देष्या को डयूभाण ॥२८॥
ररंकार की गम भई लाध्या सोहं मूल।
नीध्य पाइ नहचल हुवा नाम कंवल क फूल ॥२९॥
साल्हू दील मैं दरगा मंडरही वैठा हरद मै आय।
नाम कंवल क ... ... (अपूर्ण)

विषय—गुरु तथा भगवद् स्मरण पर निर्गुण विचारधारानुकूल विवेचन किया है :—

१—गणपति वंदन,	पत्र १ से १ तक।
२—गुरु अंग,	पत्र १ से १० तक।
३—स्मरण अंग,	पत्र १० से १३ तक।

विशेष ज्ञातव्य—प्रत्येक दोहे के आरंभ में 'साल्हू' नाम आने से यह रचना साल्हू की मान ली गई है। रचना उत्तम है, कबीर के टक्कर की है। इनके बहुत से दोहे कबीर के दोहों से मिलते हैं। प्रस्तुत प्रति बहुत अशुद्ध लिखी गई है। बहुत से शब्द या तो छोड़ दिए हैं या उनका रूप ही इस तरह बदल दिया गया है कि उनके मूल स्वरूप तक पहुँचना कठिन है। प्रति खंडित है। संख्या ३ और ४ के पत्रे तथा संख्या १३ के पश्चात् के पत्रे अप्राप्त हैं। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

संख्या १३५. लीला (संभवतः), रचयिता—सनेहीराम, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शंकरदेवजी, ग्राम—सेई, डाकघर—छाता, जि०—मथुरा।

आदि—भादौं ॥ उठो क्रोध की ज्वाल दिसा चारयौंनमै फेलाई।
गोप गये घवराइ बड़ी भै अवकैं है आई॥
कृष्ण ने धीरजु सौ दीऔ।
आँषि लई मिचवाइ घूंटु हरि इकुई करि लीऔ।
पानु दावानल कौ कीऔ ॥ भादौं० ॥
दावानल पीली औक निरमल जमुनाजल कियो।
घरकूं आए कृष्ण नंद नै उतिसवु है कियो॥

कृष्णगति किनहू ना जानी। कहै 'सनेहीराम'--
वलैया लेत है बृजरानी ॥
जसोधादानु वड़ौ कियौ ॥ भादौ ॥
बृज में भए अनंद मगन भई डोलति बृजरानी।
नंद भमन में भीर भई जव गोपीन की भारी।
वहुत सी सामग्री मँगवाई।
इंदर को पूजा करी कृष्ण के मन मैं नहीं आई ॥
कौन कौं पूजा उहै कीयो ॥ भादौ ॥
करौ कौन की जग्य कहौ किन करवाई पूजा।
हमकौ देऊ वताइ कृष्ण ने वावा है बूझा ॥
कृष्ण कूं वावा समझामै।
सुर तेतीसनु बड़े इन्द्र वे जल कूं वरसामै ॥
हम पूजनु विनई कौ कीयो ॥ भादौ ॥
हंसि कै बोले कृष्ण कहौ तुम कौने वैहैकाए......
--अपूर्ण प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय--श्री कृष्ण द्वारा दावानल पान तथा इन्द्र पूजा बन्द करने का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य--ग्रंथ का नाम अज्ञात है पत्र के कोने पर 'ली' लिखा होने के कारण इसका "लीला" नाम रख दिया है।

संख्या १३६. देवाष्टक, रचयिता--शंकराचार्य, पत्र--१, आकार--६$\frac{१}{२}$ × ४$\frac{३}{४}$ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)--९, परिमाण (अनुष्टुप्)--११, पूर्ण, रूप--प्राचीन, पद्य, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--पं० बैजनाथ जी, स्थान व डा०--जसवन्तनगर, जि०--इटावा।

आदि-- ॥ श्री ॥

श्री ॥ नों वो देव देवं नवो गरुड़गामी। नोवो आदि नाथं नवो अंतरजामी ॥
नेवो संष चक्रं गदा पद्मधारी। नवो मछ कछं वाराह अवतारी ॥
नवो नर सिंघ मनवो विर्मचारी। नवो वावनं पावनं श्री मुरारी ॥
नवो फरस हस्तं सहस प्रहारी। तेज रूपं नवो त्रिया हकारी ॥
नवो रामचंद्रं सुनंदं फुनंदं मुनंदं। नमो नमस्ते नमस्ते जानकी जीवनं प्रानप्यारे
नवो राघवं रावने राजहारी नवो नंद लालं।
नवो व्रम वालं नवो काली नाथं त्रियाताप जारी ॥
नवो धैनचारी नवो सैल धारी नवो रासलीला विनोदं विहारी ॥
नवो कंस मथेनं नवो कंस कालं नवो गोपीनाथं।
श्रीवलं गोपालं नवोसेस स्यायी। अछतं अनंतं अवगती गुसाईं ॥

नत्रो देव देवं करौ देव पारं तुमही देव माता पिता नाथ सारं ॥
नवो देव देवं कमला निवासी । नवो देव देवं वैकुंठ वासी ॥
॥ येते श्री संकराचं विरचतं देवा अस्टक ॥
॥ संपूरनं ॥
|| अरपनं श्री सीताराम जी कौ ||

—संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय—भगवान् के रामकृष्णादि अवतारों की स्तुति ।

संख्या १३७. रसरूप, रचयिता—सरस्वती, कागज—देशी, पत्र—३८, आकार—१०×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८९ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रामचंद्र सारस्वत, मोहल्ला छीतमटीला, ब्याना, भरतपुर (रियासत)।

आदि— श्री गणाधिपतये नमः

|| सवैया ॥

वानी जूहौ जगरानी सही पद पंकज रावरे जे नर ध्यावै ।
ते नर ऊष मयूष पियूष सनी मृदु काव्यकला वरषावै ।
मान भरे गुन ग्यान भरे पुरमी मघवानन कौं ते रिझावै ।
कीरति चंद्रिका चंद्र समान सभान मैं तेई कविंद कहावै ॥

॥ अथ राज वर्णन छप्पै ||

द्विजनि सुरनि सुर विधिहि विधि कियहु ईस निवेदन ।
तव वे प्रभु ढिग जाय द्विजनि को वरनी वेदन ।
तव प्रभु करूनासिंधु सकल त्रभुवन के नायक ।
लियें लछि कौं संग मतौ किय सकल सहायक ।
तव आनंदइ प्रभु सुरन कौं सुरन द्विजन को अभय दिय ।
भुवभार हरन मंगल करन माधवेस अवतरन लिय ॥ २ ॥

दोहा

सबद अरथ जीरन बसन लषितं दुल गुन गाथ ।
माधव मोव सुदाम सौं करयौ द्वारकानाथ ॥ ३ ॥
गुन रतनाकर नृप मुकुट विलसत मधुकर भूप ।
निज मत उज्वल करन मैं कियौं ग्रंथ रसरूप ॥ ४ ||

अंत—

हास्य यथा

एतौ ज्ञान एतौ मान तप को निधान् एतौ,
ताकौं कोऊ जानै न अगोरापिछोकरा ।

सहज विरूप नैन मैंन कौ कुचैंन हरवादि ही,
वढ़ाइ डाढ़ी मूँछ बन्यौ वो वोकरा।
कीनौं भलौं सुजस प्रगट चतुरानन कौं,
विकट जटानि सीस ओंही धर्यौ टोकरा।
चसमां चसम दीयें मोहिनी के पाछैं परि,
डोकरा हसायें सब जगत के छोकरा ॥९२॥

करुणायथा

एक वृत जनम जनम सौ तिहारौ सदा त्यौं ही,
तुम कृपा सिंधु पालिवे अमंद हौ।
रावरे ही ध्यान निस वासर विताऊँ प्रभु,
दियें चित आय तहाँ आनंद के कंद हौ।
"सरसुती" साँची कहौ स्वांति कौ संजोग पाय,
वरसौ पीयूष कै यौ भांति छर छंद हौ।
हौं तो दीन चातक हौं राजही कौ माधवेस,
दीनन के वंधु तुम भूमि के महिन्द्र हौ ॥२९२॥

विषय—रसों का वर्णन किया गया है।

संख्या १३८. मांझवत्तीसी, रचयिता—श्री सर्वसुखदासजी, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—$१०\frac{१}{२} \times ६\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६६ वि०, प्राप्ति स्थान—गोस्वामी श्री हितरूपलाल, श्री राधावल्लभ मंदिर, वृंदावन, मथुरा।

आदि—अथ श्री सर्वसुषदासजी कृत मांझवतीसी लिष्यते ॥

प्रथमपद

जगविपरीत वितीति तरीतौ होत जात सुत वित न चितैयै।
सेष आदि अपवर्ग स्वर्ग सुष नस्वर विश्व नरेस विषैयै ॥ १ ॥
है हितदास उपास विलासनि आस त्रास उपहासन दहियै।
श्री वनवास निवास इकौसे वसि विस्वास अन्यास अघैये ॥ २ ॥
वचनावलि प्राचीन विवेचन चारु विचार उचरि अचरैयै।
निर अभिमान न्हान अचलासन तिलक सुचाल माल मिलिनैयै ॥ ३ ॥
लोभ क्षोभ मद मदन मत्सरै स्वाद वाद मोहादि मिटैये।
हरि गुरुनाम धाम धर्मी धुनि आदर नाद प्रसाद पवैये ॥ ४ ॥

× × ×

लाज काज भाजैं भाजे जव परकारज मर्जाद तजैयै।
कहिये कहा अहा रहनी यह अकह लहै जो कहन निवहियै ॥ ९ ॥

को माया मन कर्म काल वल परालब्ध वाधन विवुधैये।
जै श्री हित हरिवंश प्रसंश सर्व सुष राधावल्लभ लाल लडैये ॥१०॥

अंत—

हित वंशी हरिवंश अंश अवतार वरीस अपारा।
हित कृत हरि अवतार नारि नर प्यार करीय उधारा॥
हित षिलवार ष्याल अचलाचल काल ष्याल काचारा।
हित हरिवंश प्रसंश नृसंश वतंस सर्व सुषसारा ॥३२॥

॥ दोहा ॥

सव सुषसार विचार करि माँझ वतीसी हेत।
कर्त्ता कृत करतूत हित नित निमित्त समेत ॥३३॥
श्री हित राधावल्लभी गादी आदि अनादि।
पद्धति नित्य विहार की सम्प्रदाय अहलादि ॥३४॥

इति श्री हितमांझ वतीसी सर्व सुषदासजी कृत संपूर्ण ॥ सं० १९६६ ॥ पौष वदि एकादसी ॥

दः राधिका सात फूल सेवी ॥

विषय—वत्तीस मांझ छंदों में श्री हित हरिवंशजी की महिमा का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ काव्य की दृष्टि से अच्छा है। ग्रंथ कर्त्ता सर्वसुषदासजी का कोई विशेष वृत नहीं मालूम हुआ। लिपिकाल सं० १९६६ वि० है।

संख्या १३६ ए. श्री गंगाचरित्र, रचयिता—सेवाराम, (स्थान, वेरी,), कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—१३ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) —१४, परिमाण (अनुष्टुप्)-६८२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२३ वि०, प्राप्ति-स्थान—पं० पन्नालालजी, ग्राम—कठैला, डा०—श्री बलदेव जी, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ गंगा चरित्र लिक्षते।

दोहा

सिव सुत श्री गनराज कौं हिय मैं निसदिन धारि।
गुर के चरनन कौं सदां, कीजै ध्यान विचार ॥ १ ॥
तिनके चरन प्रताप ते सिद्धि होत सव काम।
श्री गंगा जू की कथा वरनत सेवाराम ॥ २ ॥

× × ×

जन्मैजै उवाच

मुनिवर सों सो कहौ समुझाई।
गंगाधार कहाँ ते आई ॥

कारन कहा भूमि कौ परसन।
अति दुर्लभ देवनु कौ दरसन ॥ ८ ॥
मोमन मैं अभिलाषा भारी। कहो चरित्र सकल बृतधारी ॥
जन्म कर्म गुन गात्र बषानौ। रिषि जू मोहि दास करि जानौ ॥ ९ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

गंग गंग मुषसौं कहैं वसैं सहस्रनि कोस।
जाके अघ ऐसै कटै ज्यों रवि काटत ओस ॥ ५७ ॥
सिद्धि सिद्धि नव निद्धि को पुत्र हेत सुष वास।
सेवाराम सुजान की निसदिन पूजओ आस ॥ ५८ ॥
अरज करौं तुमसौं अवै सुनौ सुरसरी माई।
सेवाराम सुजान कौ वर दीजै सुष पाइ ॥ ५९ ॥
जव ते या भुवलोक में गंग कियौ परवाह।
तव तै संतनि कौ सदा दूरि भयौ उरदाह ॥ ६० ॥
जो याकौ सीषै सुनै निसदिन राषै ध्यान।
सोई उत्तम पुरष है जानौ चतुर सुजान ॥ ६१ ॥

इति श्री गंगाचरित्र हीरासिंह कृते कवि सेवाराम कृते नाम त्रतीयोध्याय ॥ ३ ॥ संवत् १९२३ ॥

विषय—एक समय नारद जी ने घोर तप किया। यह देखकर इन्द्र को बड़ा दुष हुआ। उसने नारद जी का तप खंडित करने के लिए उर्वशी आदि अप्सराओं को भेजा, किन्तु वे असफल रहे। इतने में ब्रह्मा, विष्णु, महेश—तीनों देवता नारद जी को उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर वर देने आये। नारद जी ने 'हरिभक्ति' का वरदान पाने की याचना की। तीनों देवों ने यह याचना पूर्ण की। श्री लक्ष्मी जी ने नारद जी को अपने हाथ की बीणा दी और कहा कि तुम भ्रमण कर संसार को हरिकीर्तन सुनाओ। नारद जी ने वीणा ले ली और कीर्तन करते हुए भ्रमण करने लगे। किन्तु वे राग रागिनियों के स्वर ज्ञान से निपट अनभिज्ञ थे। उनके बेठिकाने और कुसमय के गाने से रागरागिनियों के अंग भंग हो गए। एक दिन वीणा हाथ में लेकर भगवान् के पास गए और कहा, 'महाराज संसार मेरे कीर्तन से तो बहुत प्रसन्न है' किन्तु मुझे स्वर आदि का ज्ञान नहीं है। अतः कहिए कि मैं यह कैसे प्राप्त करूँ ? श्री भगवान् ने उन्हें गंधर्वलोक जाकर यह ज्ञान प्राप्त करने का आदेश दिया। नारद जी गंधर्वलोक को गए; परन्तु वहाँ रागरागिनियों के अंग भंग देखकर अत्यन्त दुखित हुए। उन्हें यह भी पता चल गया कि वह उनके गाने के ही कारण हुआ। निदान वे फिर दौड़े हुए भगवान् के पास आये और सारा हाल कहा। भगवान् नारद जी तथा ब्रह्मा जी आदि देवताओं सहित शिवजी के पास गए। उन्होंने शिवजी से राग रागि-नियों को स्वर से गाकर उनके अंगों की पूर्ति करने की प्रार्थना की। जब शिव जी गाने लगे

तो सब देवता पत्थर के समान हो गए। ब्रह्मा जी ने यह अनर्थ देखकर शिव जी को रोका और उनसे देवताओं तथा श्री नारायण जी को जिलाने की प्रार्थना की। अमृत राग गाकर शिवजी ने देवताओं को तो जिला दिया; किंतु भगवान् जैसे के तैसे रहे। नारद जी की प्रार्थना करने पर भगवान् ने फिर रूप धारण किया; किन्तु जल का रूप वैसा ही रहने दिया। ब्रह्मा जी से वह जल कमंडल में भरने के लिए कहा गया। जल का नाम गंगा रक्खा गया। इसके बाद गंगा का भागीरथ द्वारा पृथ्वी में आने का वर्णन किया गया है।

संख्या १३९ बी. नासकेत पुरान, रचयिता—सेवाराम (स्थान, बेरीग्राम), कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—१३$\frac{1}{3}$ X ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६१८ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० पन्नालालजी, ग्राम—कठैला, डा०—श्री बलदेवजी, जि०—मथुरा।

आदि— श्री गणेशाय नमः

॥ दोहा ॥

सिद्धि करन धीरज धरन मंगल जयति पुनीत।
जैसे शंकर सुवन सौ निसि दिन करिये प्रीत ॥ १ ॥

॥ राजा जनमे दाउ० ॥

अहो मुनिनमें श्रेष्ट तुम देव। जानत सकल शास्त्र के भेव ॥
वेद विधान पुरान वषानत। पूरन वृह्म हिये मैं आनत ॥ २ ॥
करै अकर्म दोश सिरलैही। ते फल कर्म कियें तजिदैही ॥
कुष्ट निवारन मंत्र है जोई। कहो कृपा करिके पुनि सोई ॥ ३ ॥

॥ वैसंपाइन उ० ॥

सुंदर प्रष्ण नृपति तुम वूझ्यौ। पूर ब्रह्म हिये में सूझ्यौ।
वृह्मा के सुत भये हैं जितने। वेद मरजाद जानत हैं तितने ॥ ४ ॥
तिनमें एक उदालिक मुनी। गंगा तीर तपत है गुनी ॥
करै त्रिकाल समाधि लगावै। अपने मनमें आनंद पावै ॥ ५ ॥

अंत—

भोजन स्वाद अकेलौ करै। औरन के कर पै न धरै।
कुसुम चुराय लामै गृहमांही। औ नर सौ भाषै पुनि नाही।
विना कृष्ण के अर्पे भाई। सुधि लेत आपुन सुष पाई।
विप्र विना जे अतर लगामें। विष्टा कूप नर्क जे पावै।
क्रम अनेक काटत है जाही। डर्यौ विलाप करत है जाही।
जत पछितात हिये में भाई। ता अस्थान कछू न वरयाई।

जौ लौं पाप की अवधि नहि आवै।
तौ लौं जीव महादुष पावै।

इति श्री नाशकेत पुराने राजा जनमेजय वैसंपाइन
संवादे १४ श्री रसतू संवत् १९१८॥

विषय—एक समय ब्रह्माजी के पुत्र उद्दालिक मुनि गंगा के तीर तप कर रहे थे। पिप्पलादि ऋषि भ्रमण करते हुए उनके पास गये। उन्होंने उद्दालिक मुनि से कहा कि विना संतान के जीव का उद्धार नहीं होता इसलिये तुम संतान प्राप्त करने का उद्योग करो। उद्दालकजी यह सुन कर ब्रह्माजी के पास गए और उनसे पुत्र प्राप्ति का वरदान माँगा। ब्रह्माजी ने कहा कि पहले तुमको पुत्र का दर्शन होगा और पुनः विवाह। मुनि को इस बात पर आश्चर्य तो हुआ किन्तु बड़ों की बात को सत्य समझ कर वहाँ से चले आए। उन्हें हर समय स्त्री और संतान की चिंता सताने लगी। एक समय जब वे तपस्या में बैठना चाहते थे तो उनका चित्त स्त्री की ओर ऐसा लगा कि उनका वीर्य स्खलित हो गया। उन्होंने वह वीर्य कमल में भरकर गंगा में बहा दिया। वह कमल गंगा में नहाती हुई राजा रघु की कन्या चंद्रावती ने सूँघा। सूँघते ही वीर्य नाक द्वारा चन्द्रावती के पेट में प्रवेश कर गया। चन्द्रावती गर्भवती हो गई। सब लोग देखकर उसकी निंदा करने लगे। राजा ने यह सुन कर उसको वन में भेज दिया। वन में चन्द्रावती को ऋषि सुकरमी मिले जिनके आश्रम में जाकर वह रहने लगी। कुछ दिनोंपरांत उसके गर्भ से नासिकेत ऋषि का जन्म हुआ। जब नासिकेत बड़ा हुआ तो माता से पिता का नाम पूछने लगा। चन्द्रावती जो स्वयं ही नहीं जानती थी नासिकेत को पिता का नाम कहाँ से बताती। नासिकेत अपनी अड़ पर जमा हुआ था। क्रोध से चन्द्रावती ने नासिकेत को एक मंजूषा में बंद कर गंगाजी में बहा दिया। मंजूषा बहती हुई उद्दालक ऋषि के पास पहुँची। मुनि ने उस मंजूषा को खोल कर नासिकेत को निकाला और उसको पुत्र के समान पालने लगे। उधर चंद्रावती नासिकेत विना बेचैन हुई और उसे खोजती हुई उसी आश्रम में पहुँची। उसने आश्रम में नासिकेत को देख लिया। दोनों हर्ष पूर्वक गले मिले। मुनि ने जब चंद्रावती की कहानी सुनी तो राजा रघु से उसे पत्नी रूप में माँगने की याचना की। राजा ने भी सत्य बात जान कर लड़की का ऋषि के साथ विवाह कर दिया। इसके पश्चात् नासिकेत जंगल में तपस्या करने के निमित्त चला जाता है और माता पिता को भूल जाता है। उद्दालक ऋषि खोजते-खोजते नासिकेत के पास जाते हैं और उसे नर्क में जाने का श्राप देते हैं। नासिकेत ज्योंही नर्क में जाने को तैयार होता है त्योंही मुनि उसे रोकते हैं और श्राप पर ध्यान न देने के लिये उससे कहते हैं तथा घर चलने के लिये आग्रह करते हैं। किंतु नासिकेत पिता की आज्ञा पूर्ण करने के लिए नर्क में जाता है। वहाँ यमराज को जब विदित होता है तो वे उसे अमर होने का वरदान देते हैं। साथ ही नासिकेत को स्वर्ग-नर्क के दृश्यों और स्थानों को दिखाते हैं। नासिकेत माता-पिता के पास फिर वापस आ जाता है। सब लोग प्रसन्न होते हैं और नासिकेत सब ऋषियों-मुनियों को स्वर्ग-नर्क का विवरण सुनाते हैं।

संख्या १३९ सी. भागवत दशम स्कंध (भाषा), रचयिता—सेवाराम (वेरीग्राम, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—४८, आकार—१२ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५२, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८० वि०, लिपिकाल—१८८० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० भजनलाल जी, ग्राम और डाकघर—सौंख, जि०—मथुरा।

आदि—सूत जू कहे हैं हो सौनिक मुनि जू। इतनी कथा श्रवन करिकैं राजा एक प्रश्न पूछतु भयो। हो मुनिवर जू हमारौ दादौ जो होय पार्थव और दादी जो ही सुभद्रा तिनि के विवाह की कथा वर्णन करौ ॥ १ ॥

श्रु० हे० यह जो प्रश्न तुम पूछ्यो सो कथा सुषकौ सागर है। ता कथा कौ श्रवन करै तैं तेज की गुण की वृद्धि होय।

एक समय अर्जुन प्रभास क्षेत्र में आयौ। ता स्थान सुभद्रा की कथा सुनतु भयौ।

अंत—

ताभगवान् को ध्यान करैं तैं मुक्ति रूप पुरूष होय। अरू अन्त के समय भगवान् के लोक कौं जाइ तौ कछु अचरज नहीं। अरू इस्त्री जो हैं तेऊ भगवान् के ध्यान तैं वैकुंठ वास पावै हैं। तौ कछु अचिरज नहीं। ता भगवान के हेत राजा जो हैं राज्य कौं छांड़ि कै वनकौं जात हैं। ते वैकुंठ वास पामें हैं ॥ ५१ ॥

इति श्री मद्भागवते महापुराणे दसमस्कन्धे वार्तीक टीका सेवाराम कृते नाम नवतितमौध्याय ॥ ९० ॥ दसष सेवाराम मिश्र के लिषतं वेरी मध्ये ॥ सम्वत १८८० वि० ॥ चैत्रवदि ७ रवौ ॥

विषय—दशमस्कंध भागवत की कथा का भाषा गद्य में वर्णन किया गया है।

संख्या १४०. मानलीला, रचयिता—सीधर (संभवतः श्रीधर), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—५¾ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भजराम जी, स्थान व डा०—राल, जि०—मथुरा।

आदि—अथ मानलीला लिषितं ॥

श्री रची कुंज मन मैं मुकट झलकल परम रसाल।
राजत हैं दोऊ रंग में हे गयो विच ऐक ख्याल ॥
देषि प्रिया प्रति विंम छवि चकवै रही निहारि।
तेंहैं छिन वैठी लाड़िली मान कुंज में जाय ॥
रहे सोच विसमाय तन मन की गति भई आन।
लेत स्वास धीरज वचन कहैंत कहाँ प्रिय प्रान ॥ १ ॥

कौन चूक मोते परी गई कहाँ दुष पाइ ।
हे सषी में समझों नहि इतनी सुधि ले आऊ ॥
वार वार सोचति हृदै में तो कही कछु नाहि ।
नीके मन दै समझि तु कहा आइ जिय माहि ॥
कहु कहु अव प्रान ऐ नैनन में रहे आइ ।
जो गति देषै जाति है तैसी जाइ सुनाइ ।
को समझै यह बात कहा कहु हिय चटपटी ।
प्रान चलै अव जात रहन सकत हैं प्रीय विनि ॥ २ ॥

अंत—

लाल आए हैं लाड़िली जू,
नेकु लोइनि कोइनि सु फिरि हेरो ।
नेसिक मोन कहा मन तें रह्यौ,
माधुरी कुँज में मोहन तेरो ।
कीजिये सोइ जु है जिय में,
प्यारी नेक चितै नहीं होत निवेरो ।
नीचीय चाहत चुककहा परी ऐ,
तो सदां तेरी चेरी को चेरो ॥
द्वार के द्वारिया पौरि के पौरिया,
पाहरू वा घर के घनस्याम हैं ।
दासिन दास सषीन के सेवक,
पार परोसिन के धनधाम हैं ।
'सीधर' कान्ह भरैं हित भांमरी,
मान भरी सुत वामासी वाम हैं ।
एक कहै विश्राम थली व्रषभान लली,
की गली के गुलाम हैं ॥ ८ ॥
मोहन के मोहन वचन सुनि मोहनि मुसिकाइ ।
प्यारी प्यारे प्यार सु ढरकि मिले उरआइ ॥ ९ ॥
॥ इति श्री मानलीला समाप्त ॥

विषय—एक दिन श्री कृष्ण और राधा अन्य सखियों के साथ कुंजक्रीड़ा कर रहे थे। कृष्ण के मन में राधा जी का ध्यान जगा तो राधा को एकाग्रचित्त होकर देखने लगे। राधा ने समझा कि कृष्ण किसी अन्य स्त्री के ध्यान में निमग्न हैं, बस इतने ही में रूठकर मानकुंज में जा बैठी। अन्त में सखियों के समझाने तथा कृष्ण की स्तुति से प्रसन्न हुई।

संख्या १४१. लोलंवराज (वैद्यक), रचयिता—सीतल (कवि), कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—६½ × १०½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४४ वि०,

लिपिकाल—सं० १९२७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० बैकुंठनाथ जी, स्थान—जवार, डा०—मुरशान, जि०—अलीगढ़।

आदि— ... ...

यह प्यारी गंगाधर चूरन तंदुल सौं जु पीजै।
अतीसार जीरन गद जेते पीवत ही सब छीजै॥ ८९॥
अय कंदुक निंदक कुच प्यारी प्रमदा रूप पहारी।
कहु काके उर मैं नहिं साल्वी तेरी चितवन आरी॥
दाड़िम वीज कुडामधु मिश्रत यह काढौ सुषदाई।
अतिसार लोहू कौ कीन्हो छिन भीतर न रहाई॥
•चंदन विमल तंदुल न कौ जल मधु मिश्री सौं पीवै।
दाह मोह तृषा अरु लोहू समन होय अरू जीवै॥
कुच सूल और आमशूल और अगिन मंद गद वाकौ।
सेवत सम गुड विल्व मृगनयनो फेरि विवध कहाकी।
अतिसार को सूल हजारन समन होत है ऐसे।
जौ तेरे कुच परन कीने मैंन मनोरथ जैसे॥ ९२॥

अंत—आयुर्वेदवचन कौ प्यारी मोहि धनंतर जाने।
सीमागाम दिवाकर कौ सुत यह निश्चै पहिचानै।
सुकल सुधा कौं जलधि भावती ताकौ पूरन चंदा।
कविता कौ अवतंस नवेली निसदिन आनन्द कन्दा।
पूरनराज सभा कौ भूषन बुद्धिमान गुनधारी।
जिन यह ग्रंथ रचौ है ताकी रतनकला सी नारी॥
कठिन ग्रंथ वैद्य की जीवन भाष लाय सुनायौ।
जो कुछ लोलंवराज वैद्य ने ग्रंथ वीच दरसायौ॥
"सीतल सुकवि" करी नर भाषा यह श्रृंगार रस भीनी।
जे कोऊ रस के परम उपासी तिनकी अज्ञा लीनी॥
कृष्ण उपासक वल्लभ सेवक विष्णु धर्म व्रतधारी।
जिन यह भाषा रची ललित पद चतुरन कीजिय जारी॥

वेद वेद वसु इंदु मिलावे संवत १९२७ मास फगन मिति फगुनवदी ८ चंद्रवासरे लिषतं वृहमन सरसुतं पुस्तकघर कु हरीकृष्ण॥

विषय—

१—द्वितीयो विलासः—अतिसार संग्रहणी आदि का कारण तथा दवा, पत्र १६ तक।
२—तृतीय विलासः—विलासनी और कुमार रोग का निदान और कारण, पत्र २६ तक।
३—चतुर्थो विलासः—कफ प्रतीकार पत्र ३७ तक।
४—पंचम विलासः—स्फुट रोग वर्णन और उनका निदान पत्र ४१ तक।

संख्या १४२. अम्बा-आर्ती, रचयिता—शिवानन्द स्वामी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि – नागरी, प्राप्ति स्थान—ला० दरबारीलालजी, स्थान व डा०—वरालोकपुर, जि०—इटावा।

आदि— अथ देव देव जयदेव ॥

कनक सजावन कलेवर रक्तावर राजे रक्त सुमन माला।

कंठन पर छाजै ॥ जै देव० ॥

केहरि वाहन सौ वैखडगरवप्पर धारी ॥ सुरनर मुनि जन सेवत ॥ २ ॥

जिनके दुख हरे ॥ जय अ० ॥

चौसठि जोगन नाचत नृत्य करत भैंरूं वाजत ताल मृदंग ॥ २ ॥

ओर वाजत भेरू जय अं० ॥

सोरनपाल विराजत अगर कपूर वाती माल स्वेत मराजित।

कोट महिषासुर घाति धूम्र विलोचन नासक ॥ २ ॥

निस दिन मद माती ॥ जय अं० ॥

चंडरु मुंड विडारे सो रक्त वीज हरे शुंभ निशुंभ सँहारे ॥ २ ॥

निरभय राज करे ॥ जय अं० ॥

तुम रानी ब्रह्मानी तुम कर मलामानी ॥ २ ॥

आगम निगम वषानी ॥ तुम शिव पटरानो जय अं० ॥

अंवा माईनि आरती जे कोई गावै भनत शिवानंद स्वामी दूना फल पावै।

॥ जय अंबे ॥

॥ इति अंबाजी की आरती ॥

॥ संपूर्ण ॥ (पूर्ण प्रतिलिपि)

विषय—अंबाजी की आरती।

संख्या १४३. पिंगल, रचयिता—शिवप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२६, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० लल्लूप्रसादजी महेरे, स्थान—वाउथ, डा०—बलरई, जिला—इटावा।

आदि— ... ... (पृष्ठ २ तक लुप्त)

॥ दोहा ॥

हज धन धर षभ अंक ए, आदि छंद मति देहु।
रंक राज ते करत ए, और सबै लिषिलेहु ॥२५॥

॥ भुजंग प्रयात ॥

हतै वित्त हाते जुझावै जु कोई।
घटै आइ घाते वसै नारि वोई ॥

गयो धीर धातै रते रोग राजै।
षते होत षुष्विन्न है दीन भाजै ॥२६॥

॥ अथ लघु गुर के नाम ॥

॥ दोहा ॥

लघु रेखा मत्ता कही, कला नाम ये चारि।
हार वड़ा गुर दीजिए, करन कही सु विचारि ॥२७॥
पंच कला को अबुध कहि, चरि तुरंगम नाम।
करन दोइ गुरु जानिए, चौलघु दिजवर धाम ॥१८॥

अंत—

अथ अवंद

रा	म	ना	म	को	ई	क	है
पा	वै	प	द	नि	र	वा	न
का	म	धा	म	वो	ई	ल	है
गा	वै	स	द	गु	रू	गा	न

विषय—दग्धाक्षर, गुरुलघुनाम, छंदोभंग, पंचकला के आठ नाम, शत्रु-मित्र भेद, छंद के दूषण, प्रस्तार, सूची तथा उद्दिष्ट वर्णन—द्वितीय उल्लास, पत्र ४ से ६ तक।

२—मात्रिक छन्द (गाहा, सोरठा, वरवा, रोला, दोहा, रसिक, नदोवै, चौपैया, सुलक्षणा, पद्धती, पदाकुल, अरिल्ल, चौपई, रूप चौपई, छप्पै, पद्मावती, पज्वंलित, मधुभार, लीलावती, हरिगीतिका, त्रिभंगी, हीरा, सुगति, छवि, विद्याधरी, तथा कुंडलिया)—(तृ० उ०), पत्र ६—१३ तक।

(३) वरन वृत्ति छन्द [श्री, मधु, महि, साहू, शशि, पंचाला, प्रिया, रमन, मंदरा, कमल, गजधारी, मोहा, हरी, हंस, सेषा, जमक, निनालिका, तिलका, विजोहा, चौरंस, संषनारी, मंथाना, मालती, मदनक, सावास, सामानिका, सीरषा, विंदुमाल, मल्लिका, परमानिका, त्रिग, कमला, मानव, क्रीड़ा, अनुष्टुप, महालक्ष्मी, सारंगीका, पाइत, रतिपद, बिंबा, तोमर, रूपमाली, अमृत गति, संजुतिका, चंपकमाला, सारवती, सुषमा, दोधक, सुमुषी, सालिनी, मदनक, सेनिका, मालती, इंद्रवज्र, मोक्तिकदाम, रथवधता, स्वागता, भुजंगप्रयात, लाक्ष्मी, तोटक, सारंग, मोदक, तरलनयन, तारक, कंद, द्रुतविलंबित मालिनी, नाराच, वसंत तिलका, चामर, भरमावली, निसिपालिका, सरभ, शिखरिणी, शार्दूल, गीतिका, रूपमाला, सुंदर—(चतुर्थ उल्लास), पत्र १३—२५ तक।

४—चक्र, पादावली, प्रमिताच्छरा, सवृती, महर्घ, झूलना, रूवाई, रेषता, भुजंगी, (पंचम उल्लास), पत्र २६—२९ तक।

(५) सवैया, मदिरा, चकोर, मत्तगयंद, मानिनी, भुजंग, लक्ष्मी, दुमिला, आभार, मुक्तिहरा, किरीट, वसुधा, अमृतध्वनि (षष्ठम उल्लास), पत्र ३० से ३३ तक।

(६) घनाक्षरी—कलानिधि छंद, कवि गर्वोक्तिः—

रस हावभाव, नायिका, अलंकार,
मर्कटी, पताका, मेरू, चित्र पहिचानो है।
नष्ट औ उदिष्ट गन अगन विचार करै,
कविन की उक्ति जुक्ति विविधवषानो है।
पूजा पाठ धर्म कर्म देवी सक्ति स्यौ प्रसाद,
कविता कहै बे को सदा ही मनमानो है।
जानो कलिकाल को प्रभाव साह सूम भए,
गुन न हिरानो गुन गाहक हेरानो है।

राम की महत्ता, नखशिख, चित्र काव्य (कपाट व डमरू बंद), महाघनाक्षरी (सप्तम उल्लास), ३३—३६ तक।

७—चित्र वर्णन—गोमुत्रिका चित्र, त्रिपदी, कमल बंध तथा अबंध, पत्र ३६ से ३८ तक।

संख्या १४४. संग्राम दर्पण, रचयिता—सोमनाथ, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७८६ वि०, लिपिकाल—संवत् १८१० वि०, १७५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवतीनन्दन जी मिश्र, स्थान—वेरी, डा०—बरारी, जि०—मथुरा।

आदि—॥ बार कथनं ॥

मानु निशाकर भौम पुनि बुध गुरू शुक्रहिमानि ॥ १६ ॥
चंद्र जानि शुभ पूरनहि बुध गुरु शुक्रहि मानि।
और रहेते अशुम हैं तिनयुत बुधहू जानि ॥ १७ ॥
॥ तिथि वार सौं सिद्धियोग कथनं ॥
शुक्रवार तिथि नन्दा होई। बुध भद्रा तिथि जानो लोई ॥
मंगलवार होइ जो जया। शनि रिक्ता गुरु पूरण भया ॥
सिद्धि जोग ये जानो सबै। सुफल कर्म शुभ इनमें कवै ॥ १९ ॥

अंत— ॥ कवि कुल वर्णन ॥

मिश्र नरोत्तम महाकवि भए छिरोरा वंस।
रामसिंह नृप के गुरु माथुर कुल अवतंस ॥ ६१ ॥
तिनके पुत्र प्रसिद्ध देवकी नन्द लाइक।
वेटा तिनके चार सदा सबको सुषदायक ॥

नीलकंठ अरू मोहनमनि प्रभु के गुन गाइक।
मिश्र महामनि और राजाराम सुरिपुघाइक॥
चार्यौं भाषा कवि वहुरि जोतिष विद्या में निपुन।
नीलकंठ महिमां अधिक प्रगट्यौं अंव प्रसाद गुन॥ ६२॥
नील कंठ जू के तनय तीन सदा वड़भाग।
तिनके कहत सुनाम अव सुनत वढ़ै अनुराग॥ ९३॥
बड़े उजागर गंगधर सुष संपति के धाम।
सवतें छोटो सु लघुमति सोमनाथ इहिनाम॥ ९४॥
तानें कीनौ सुगम यह अगम स्वरोदय भेद।
जाकौ वांचत सुनतहू मन में रहै न षेद॥ ९५॥
मिश्र महामनि के तनय माधोराम विचित्र।
पुत्र उजागर मिश्र के उदै चंद्र सुपवित्र॥ ९६॥
सुगुनी माधोराम अरु उदैचंद सुपवित्र।
सोमनाथ पुनि तीनहू जानो एकमति मित्र॥ ९७॥
सत्रह सै छयासी समझि संवत्सर मेरे यार।
भादौ सुदि की पंचमी अरु रजनीपतिवार॥ ९८॥
ताही दिन प्रगट भयौ यह दर्पन संग्राम।
जाकौ सरस विचारि सुनि हिये होय अरांम॥ ९९॥
समरसार नरपति निरषि कीनों ग्रंथ विचारि।
जो कछु भूल्यौ हौंहू तौ लीजै सुकवि सुधारि॥ ५००॥

इति श्री मिश्र नीलकंठस्यात्मज मिश्र सोमनाथ कृत संग्रामदर्पण संपूर्ण शुभं भवतु संवत् १८१० मिति मार्गशिर शुदि ८ सोमवार॥

विषय—स्वरोदय के मतानुसार राजाओं के संग्राम जीतने के विषय में विचार किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—संख्या ९५ दोहे के अनुसार यह ग्रंथ स्वरोदय शास्त्र का एक भेद है। इसके रचयिता सोमनाथ हैं। इन्होंने अपने वंश का विशद वर्णन किया है। इस वर्णन से ज्ञात होता है कि इस वंश में बड़े नामी विद्वान्, कवि और लेखक हो गए हैं। इनके वंश वृक्ष से कई कवियों का पता चल सकता है, ऐसी संभावना है।

संख्या १४५. रुपैया अष्टक, रचयिता—श्रीधर, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौधरी प्रसाद राम जी, स्थान—बम्हनीपुरा, जि०—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥

अथ श्रीधर कृत रूपैयाष्टक प्रारंभः॥ दोहा॥

मुकुट हेत हरि सीस नवायो, वैस्यो को धन छूचो ।
कह श्रीधर गुण वलदाऊ रीप्यो रांम सूं ऊँचो ॥ १ ॥

गुरू गणेश की पूजा को फल,
विना ·दक्षिणा वूचो ।
कह श्रीधर गुण वलदाऊ,
रीप्यौ राम सूं ऊंचौ ॥ २ ॥

गुरू की भेंट नजरि नरपति की, माता पिता को ठूंचो ।
कह श्रीधर गुण वलदाऊ, रीप्यो राम सूं ऊंचौ ॥ ३ ॥
रथ में बैठे मोजां माणौ, निसि दिन हालै कूंचौ ।
कह श्रीधर गुण वलदाऊ, रीप्यौ राम सूं ऊंचौ ॥ ४ ॥

अंत—

कांणो षोड़ो रावण षंडो,
परणैं वींदनि मूचो ।
कह श्रीधर सुण वलदाऊ,
रीप्यो राम सूं ऊंचौ ॥ ५ ॥

सलमैं तोड़ साषनैं भानैं,
गिणौं न घांचा घूचौ ।
कह श्रीधर सुण वलदाऊ,
रीप्यो राम सूं ऊंचौ ॥ ६ ॥

रूपयो वड़ो कहावै जग मैं,
गिणै न ऊंचो नीचो ।
कह श्रीधर सुण वलदाऊ,
रीप्यो राम सूं ऊंचौ ॥ ७ ॥

होय परस्या को परस राम जी,
सवसै जोड़ै षूंचो ।
कह श्रीधर सुण वलदाऊ,
रीप्यो राम सूं ऊंचो ॥ ८ ॥

॥ इति रूपैया अष्टक ॥

॥ सम्पूर्णम् ॥

विषय—रुपया के गुण वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ की अविकल रूप से प्रतिलिपि कर दी है ।

संख्या १४६. रामचन्द्रोदय (लंकाकांड), रचयिता—श्री कृष्ण कवि, कागज—देशी, पत्र—११३, आकार—९ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)-

२५२२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मदनलाल जी, गली कसेरान, रामदास मंडी, मथुरा।

आदि—श्री रामायनमः ॥

अथ लंकाकांड कथा लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

करे पार जब सिन्धु के राम सकल कपि सैन।
सुकसारन मंत्रीणि तब दस मुख बोल्यो बैन ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

सागर अपार तरि आयो बल बानर कौ,
बांध्यौं सेतु पानी पै न ऐसी कबहू भई।
मान बैन आवत सु कीनौं काम राम तिहि,
कारन छुहानो मन सारन लषै नई।
केती कपि सैन सब कीवै निरधार अब,
पैठि कैं लछित लषौ जु कहुँधा छई।
गुट कपि रूप गही गनिवे को जौगु तुम,
जिनकैं विसुद्ध जिय बुद्धि विधिना दई ॥ २ ॥

× × ×

लषी चहुँओर धुजा फहराति चमक्कहिं मानहु दामिनि नेहु।
गरज्जहि बानर सज्जहि जुद्ध दई छित राघव सैंन अछेहु।
निवारहु राछसराज विरोध अजौं समता गहि राषहु गेहु।
विहे दसरथ्थ महीपति नैं हित सीय विदेह सुता तुम देहु ॥ २८ ॥

इति श्री रामचन्द्रोदये कवि श्री कृष्ण कृतौ जुद्धकांड संग्रहे चार प्रवेशो नाम १ सर्ग ॥ १ ॥

अंत— पवंग

तिन साषा मृग सहज जूथ पनि तज्जिये।
भीम तुमुल रव भूरि भूमि नभ मज्जिये।
मनु निदाघ के अन्त घनाघन भज्जिये।
आधीरात मझार नदत भय सज्जिये ॥ २७ ॥

इति श्री रामचंद्रोदये लंकाकांडे युद्ध पर्वणि सरबंध हरणं नाम—सर्ग

× × ×

करि रामहि सनमान विभीषण सीयहि दैहै।
माल्यवान मति सहित राकसन कौ हित कैहै ॥
रघुनाथहि सिर नाइ करौ विनती करि साधहि।
रावन मंत्रीन सहित अनुज चित्त प्रीति प्रबंधिहि ॥

अरु सीयदान पुनि भेद सुनि राजनीतिहुँ सुभ मानिये ॥
अति अंसुम जुद्ध विवुधनि कह्यौ ताते जुद्ध न ठानिये ॥

× × ×

सवैया

जो पुनि लछिन लछि सुलछन वीर विचछन वाल महावल ।
संतत भ्रातइकैं हित मैं रत जात गनैं मुष आन पलै पल ।
तैहो छमानिधि के मत मानिहि मन्त्रिन को प्रणपत्ति विनाछल ।
रामवली पररत्थ तनै संगसंधहि आजु प्रवंधहि सोभल ॥
वली नील हत्थ्यौ प्रमथ्यौ प्रहत्था गयो जुगिता ने कहा काज सारयौ ।
वदौ रछ धूम्रछ संयामलो भीस वादांवदो वंदरी नै विदारयौ ॥
महामाय मानी महाकाल ... ... (अपूर्ण)

विषय—

१	संग्रहे चार प्रवेशो नाम	१	सर्ग,	पत्र	१	से	३	तक ।
२	अनेक दर्शनो नाम	२	सर्ग,	पत्र	३	से	६	तक ।
३	सारण वाक्य नाम	३	सर्ग,	पत्र	६	से	८	तक ।
४	शुक वाक्यं नाम	४	सर्ग	पत्र	८	से	१३	तक ।
५	चर प्रत्यागमनं नाम	५	सर्ग,	पत्र	१३	से	१५	तक ।
६	,, ,, ,,	६	सर्ग,	पत्र	१५	से	१८	तक ।
७	माया सिरोदर्शन नाम	७	सर्ग,	पत्र	१८	से	२२	तक ।
८	सीता संमोहनो नाम	८	सर्ग,	पत्र	२२	से	२४	तक ।
९	सरमा वाक्यं नाम	९	सर्ग,	पत्र	२४	से	२६	तक ।
१०	,, ,, ,,	१०	सर्ग,	पत्र	२६	से	३०	तक ।
११	माल्य वद्वाक्यं नाम	११	सर्ग,	पत्र	३०	के	३३	तक ।
१२	लंका विधान नाम	१२	सर्ग,	पत्र	३३	से	३५	तक ।
१३	सेना विभागो नाम	१३	सर्ग,	पत्र	३५	से	३७	तक ।
१४	सुवेल दर्शनं नवासो नाम	१४	सर्ग,	पत्र	३७	से	३९	तक ।
१५	लंका दर्शनं नाम	१५	सर्ग,	पत्र	३९	से	४१	तक ।
१६	अंगद प्रत्यागमनो नाम	१६	सर्ग,	पत्र	४१	से	४५	तक ।
१७	औत्पाति के नाम	१७	सर्ग,	पत्र	४५	से	४६	तक ।
१८	प्रथम संहारो नाम	१८	सर्ग,	पत्र	४६	से	४९	तक ।
१९	पुनर्युद्ध प्रत्यागमनो नाम	१९	सर्ग,	पत्र	४९	से	५१	तक ।
२०	ग्रहणं नाम	२०	सर्ग,	पत्र	५१	से	५४	तक ।
२१	संसक्त युद्ध नाम	२१	सर्ग,	पत्र	५४	से	५६	तक ।
२२	द्वन्द युद्ध नाम	२२	सर्ग,	पत्र	५६	से	६०	तक ।

२३	रात्रि युद्ध नाम	२३	सर्ग,	पत्र	६०	से	६४	तक।
२४	इन्द्र जीन्नियाणि	२४	सर्ग	पत्र	६४	से	६५	तक।
२५	इन्द्रजीत माया युद्ध	२५	सर्ग,	पत्र	६५	से	६७	तक।
२६	शरवंधो नाम	२६	सर्ग,	पत्र	६७	से	७०	तक।
२७	शरवंध निवेदनो	२७	सर्ग,	पत्र	७०	से	७३	तक।
२८	सीता शरवंध निवेदनो नाम	२८	सर्ग,	पत्र	७३	से	७५	तक।
२९	सरवंधे सीता विलापो नाम	२९	सर्ग,	पत्र	७५	से	७७	तक।
३०	रामविलापो नाम	३०	सर्ग,	पत्र	७७	से	८१	तक।
३१	सुग्रीव गर्जन नाम	३१	सर्ग,	पत्र	८१	से	८४	तक।
३२	नारद वाक्य नाम	३२	सर्ग,	पत्र	८४	से	८७	तक।
३३	सरवंध हरणं	३३	सर्ग,	पत्र	८७	से	९०	तक।
३४	रावण क्रोधो नाम	३४	सर्ग,	पत्र	९०	से	९१	तक।
३५	धूम्रछ निर्याण	३५	सर्ग,	पत्र	९१	से	९२	तक।
३६	रछ अंकपन नाम	३६	सर्ग,	पत्र	९२	से	९७	तक।
३७	,, ,, ,,	३७	सर्ग,	पत्र	९३	से	९९	तक।
३८	वज्रदंत युद्ध नाम	३८	सर्ग,	पत्र	९९	से	१०१	तक।
३९	वज्रदन्त बध नाम	३९	सर्ग,	पत्र	१०१	से	१०४	तक।
४०	प्रहस्थ युद्ध नाम	४०	सर्ग,	पत्र	१०४	से	११३	तक।

संख्या १४७. भूगोलसार, रचयिता—पं० श्री लाल (आगरा), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—$६\frac{3}{4} \times ५\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१८ वि० के पूर्व (१८६१ ई० में छापा गया), प्राप्ति स्थान—पं० बालगोविन्दजी, स्थान—शेषशाई, डा०—होरल, जि०—गुडगाँव ।

आदि—भूगोलसारः यह भूगोलसार भरतखंड के वर्णन में है श्रीयुत हेडमास्टर शार्प्रिलीसाहीब बहादुर दस्तूर तालीम आगरा की आज्ञानुसार पण्डित श्रीलाल दस्तूर तालीम आगर हते दस्तूर तालीम विद्यार्थियों के लिये बनाया आगरा एहितमाम वजीरखाँ के से इलाही छापेखाने कम्मूटोले में छापा गया सन् १८६१ ई० भूगोलसार :

श्री गणेशाय नमः भरतखंड देश पूर्वकाल से विद्या और धन के कारण प्रसिद्ध चला आता है और इस देश में रूई नील कस्तूरी दुशाले केशर अफीम नोन और हीरे आदि पदार्थ उत्पन्न होते हैं इस कारण भरतखंड अति प्रसिद्ध है भरतखंड त्रिकोणकार सा है इसकी पूर्वी सीमा ब्रह्मा का देश और बंगाले कर्दि समुद्र है पश्चिमी सीमा सिंधु नदी और अरब का समुद्र उत्तर सीमा हिमालय पर्वत और दक्षिण सीमा भरतखंड का सागर जिसे हिंदक महासागर बोलते हैं ।

अंत—

लंका नाम टापू

यह टापू भरतखंड के दक्षिण में है उसे सरन दीप (शायद स्वर्णद्वीप से मतलब है) वा सिलोन भी कहते हैं और वादाम के समान आकार में इसकी लंबाई १२० कोस पूर्व पश्चिम चौड़ाई ६५ कोस है लंका में मनुष्य संख्या ११२६८००० है इस दीप के उत्तर की ओर पापने मातिले आदि छोटे छोटे टापु है इनके समीप है उनके सामने कर्णाटक के नीचे रामेश्वर नाम टापू है इन दोनों टापुओं के बीच में पुल सा बंधा है उसे भरतखंडी लोक सेतबंध कहते हैं। इसमें होकर जहाज नहीं निकलता और मन्नारम टापू के पास चैत के महीने मै मोती निकलते हैं लंका में द्वै पर्वत नामी हैं पहला श्रीपाद दूसरा पेंद्राटे क्षागले इसकी नदी कैलोनी गंगा और पौपरेती गंगा आदि बहुत सी है इस देश में दारचीनी नारियल मानिक नील पुखराज आदि रत्न ये वोहोत होते हैं और इस दीप के सर्प बड़े जहरी और लंबे होते हैं इस द्वीप के हाथी बड़े उचे होते हैं और यहाँ बहुत जातैं रहती है वे येहैं संगली वेदासुर मुसलमान और अंगरेज जो (अपूर्ण)

विषय—भारतवर्ष का भूगोल वर्णन किया गया है। इसमें निम्नलिखित विषय हैं:—

१—भूगोलसार की प्रस्तावना।

२—सीमा।

३—पहाड़।

४—देशों का वर्णन—बंगाल, विहार, भूटान, नैपाल, शिकम। ये बंगाले की उत्तर सीमा के देश हैं। पश्चिमोत्तर देश कमिश्नरी बनारस, प्रयाग, आगरा, मेरठ, रुहेलखंड, पंजाब, भूपाल नाममंडल, राजपूताना, काठैडनाम देश, (भरतपुर); सिंध, कच्छ देश, गुजरात, काठियावाड़, उत्तर सरकार, (तैलंग देश), गौड़वान देश, (मध्यप्रदेश); खानदेश, बरार देश, औरंगाबाद मंडल, हैदराबाद, महाराष्ट्र देश, कर्णाटक, मैसूर, कोयंमतूर मंडल, तंडकल, संह्याद्रि के पश्चिम के देश, सूरत नाम मंडल, कान कान, गोवा, कानड़ा देश, मलेवार और लंका नाम टापू।

संख्या १४८ ए. ख्यालो की पुस्तक, रचयिता—सुखलाल, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—श्री नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—बुरा कहते हैं इस मत के विरहमन वेदखूवा को।
निकाला पोप उनका इस्म नहीं सूझा ये नांदा को॥
आपी पोप वो आपी चतुर है पर दिल पर माया का फंद था।
दयाधरम की सार न जानी नाम धराया दयानंद था॥ ४॥

॥ चौक ४॥

वेशक ब्रह्मण वो मलीन है जो त्रिकाल संध्या नहीं जानः।
फिर भी बुरा जो कहै किसी को उसको पापी जगत वखानः॥

बुरा भला कह करके हरेक को मत काया इस गार में सानः ।
सदा नर्क में रहेगा बच्चा जो तू हमारा कहा न मानः ॥

॥ शेर ॥

राजवाड़ौ में भी जाकर बहुत सी चरचाकरी ।
पर वहाँ नावाकिफों की दिल लगी परचाकरी ॥
उदेपुर सरकार मत में जर बहुत खरचाकरी ।
मत चले दयानंद का बुधराव की अरचाकरी ॥
राजा तो मतवालो होगए पर ख्याल रानी को चंद था ।
दयाधरम की सार न जानी नाम धराया दयानंद था ॥

॥ चौक ५ ॥

अंत—

ये राह रोसता हुई दूर कर दिल से ।
क्यों करके तू पुतला बना है आयोगिल से ।
है बात अगन आतमा जीव शामिल से ।
ये हाल पूछना हमैं पड़ा कामिल से ।
जब तक ये पाँच मौजूद रहैं रिल मिल से ।
सब छुपा है अः वो हुनर चश्म के तिल से ।
इसको सुचेत बिन किये क्यौं झगड़ा ठाना ।
हम कर्म शुभ करके ज्ञान पैछाना ॥

॥ चौक ५ ॥

दो आँखों को इस तौर गुनी फरमावैं ।
एक से दुनिया एक से परलोक बनावैं ।
दुनियाँ में श्राध कर्मादिक सभी कहावैं ।
... ... (अपूर्ण)

विषय—(१) दयानन्द मत खंडन, साकार निरूपण और ज्ञानोपदेश वर्णन, पत्र १ से ८ तक ।
(२) कर्म विधि जो वाजिब है—सन्ध्या का महत्त्व, तथा लावनी सभा-विचित्र, पत्र ८ से ११ तक ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में ख्याल और लावनी संगृहीत हैं । रचयिता का नाम मुंशी सुखलाल है । इन्होंने ख्याल रचयिताओं की प्रवृत्तियों के अनुसार अपने कई साथियों के नाम भी लिखे हैं यथा—गिरिधारी, रामकृष्ण, ननवाँ शुक्ल आदि । ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति के आदि और अंत के पत्रे लुप्त हो गए हैं ।

संख्या १४८ बी. ख्याल, रचयिता—सुखलाल, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० महादेव प्रसादजी, स्थान व डाकघर—जसवंत नगर, जि०—इटावा।

आदि—हर बात से उसके है छल बुयारी मिलावट ऐसी है।
सौसन है खिजल गुलशन अन्दर मिस्सी की जमावट ऐसी है।
दिल लेवै छोन दिखलाके अदाँ आँखों में लगावट ऐसी है।
पीते हैं लोहि ज्व में खून जिगर इस दिल को तरावट ऐसी है।
नहीं मेरी सुने ना अपनी कहे तलब की छिपावट ऐसी है।
हर लहजे रकीबों को शाद करे लों उनसे घुलावट ऐसी है।
जामे की सिलावट ऐसी है॥ १॥
दिललेवै छीन दिखलाके अदा आँखों में लगावट ऐसी है।

॥ चौक २॥

है शम्श कमर नादिम जिसके चहरे की वनावट ऐसी है।
दिललेवे छीन दिखलाके अदाआँखों में लगावट ऐसी है।
जो देखे नजर भरजाय वो फँस जुल्फों की सजावट ऐसी है।
हरवात से उसके है छलबल यारी की बनावट ऐसी है।

अंत—

दिखलाके फतन ले जान माल वो याद चुरावट ऐसी है।
है बाग इरम रौनक से भरा उस गुलकी लिखावट ऐसी है।
बुलबुल दिल होवे फिदा जिस पर खुशबू की फलावट ऐसी है।
चौदह तवक रौशन जिससे जल्वे की दिखावट ऐसी है।
दिललेवै छीन दिखलाके अदाँ आँखों में लगावट ऐसी है॥ १॥

॥ चौक॥ ३॥

नहीं सुन के सखुन को वो मारे दम न गुरों को रुकावट ऐसी है।
मजमूं की सजावट ऐसी है, लफ्जों की जड़ावट ऐसी है।
कहैं भैरों गुरू मौजूं करके ख्यालों की कथावट ऐसी है।
सुखलाल दहन में तेरे भरी रागों की सुरावट ऐसी है।
सुन करके उदू का हो नाकों में दम मिसरों की धरावट ऐसी है।
है शम्श कमर नादिम जिसके चहरे की वनावट ऐसी है।
दिल लेवै छीन दिखलाके अदा आँखों में लगावट ऐसी है।
जा देखें नजर भरजाय फिर उसको ही फंद में वहशी बना
अफशां की चुनावट ऐसी है।

गैरों के साथ रहै खुर्रम आशक को जलावट ऐसी है।
दिल लेवै छीन दिखलाके अदाँ, आँखों में लगावट ऐसी है।
... ... (शेष लुप्त)

विषय—प्रेमी का प्रेम और मोह एवम् माशूक के हुस्न का वर्णन।

संख्या १४९. दंपति भावामृत, रचयिता—श्री महाराज गुसाईं सुखलाल जी, कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—४ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८६० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० मोहनलाल जी, ग्राम—सत्तूखेड़ा, डा०—गोमत, जि०—अलीगढ़।

आदि— × × ×

जहाँ नंद वृषभानु गृह मणि गोवर्धन सैल।
जमुना तट वन उपवननि बिहरत दोऊ छैल ॥ ४ ॥
सब वन में अति सुखद बन श्री वृन्दावन राज।
रास विलास विनोद जहाँ विहरत सहज समाज ॥ ५ ॥
तामध श्री हित जी निकट जमुनामधि झलकंत।
रतन सेतु झलिमलि ... ...।
× × ×
सुयामें रहे जोगिनि कौं रस मूल ॥ ९ ॥
जोग कहैं संजोग नित ता दरसावैं नित्य।
प्रभु शरीर वनराज की यही सुष मन सत्य ॥ १० ॥
पद्म पुरान कह्यौ प्रगट नित्य वृन्दावन धाम।
ऊपर है गोलोक तै सौ यह मन अभिराम ॥ ११ ॥
षौजि सकल आगमनि मैं जान्यौं इसकी षानि।
दंपति संपति प्रगट निधि प्राण वल्लभा जानि ॥ १२ ॥
श्री गुरु कृपा तैं मुरलि अनुग्रह होइ।
तव अटकै मन विन कृपा जन्म गए सब षोइ ॥ १३ ॥
द्वार सेतु के चित्र बहु लीला प्रभु की जानि।
ऊषिल सब अटके जहाँ परम माधुरी मानि ॥ १४ ॥

अंत— ॥ अथ सेवाध्यान लिष्यते ॥

प्रातः ही उठि अनबोलै है मुंदि नयन धर ध्यान।
गुरू वंदन निज रूप करि दास जीव करि जान ॥ १ ॥
तासरीर में रहत जो दास भावना देह।
चितवन है या देह में लिपटा मन करि गेह ॥ २ ॥
जवे भावना में गई वह देह परम अभिराम।
नश्वर देह दिसा विवस परीरहत विन काम ॥ ३ ॥

सिद्ध शरीर विभावना देह गई व्रजमान।
करि प्रणाम वृन्दा विपिन मध्यसमाध प्रधान ॥ ४ ॥
तहां श्री हित जु कनक वपु व्यास सुवन के रूप।
तिन माल सित वसन तन वीणा मगन अनूप ॥ ५ ॥
आज्ञा लै मणिसेतु के द्वार जमुना में न्हाइ।
दरसन पावै सहचरी तिन संग ह्वै करि जाइ ॥ ६ ॥

× × ×

यह निस दिन को ध्यान हुँ समै समै मनधारि।
अपनी•••विरच्यौ रसिक हित के लेहु संभारि ॥ १४७ ॥
दंपति भावामृत सरत पोथी ह्वै विधि जानि।
वानी अमृत प्या मनुज भाषा मन में आनि ॥ १४८ ॥
इति श्री भावामृत•••वानी श्री परम दयाल श्री महाराज श्री गुसाईं
श्री सुषलाल जी कृत्य संपूरणं ॥

विषय—श्री राधावल्लभी संप्रदाय के दृष्टिकोण से श्री वृन्दावन का ध्यान वर्णन तथा श्री राधाकृष्ण की सेवा का विधान बतलाया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल इसके साथ लिपिबद्ध एक छोटे ग्रंथ के आधार पर दिया है जो संदिग्ध है। वह पूरा नहीं लिखा है, केवल 'संवत् ॥ ६० ॥' लिखा हुआ है। यह पता नहीं चलता कि यह संवत् १६६० है या सं० १८६०। फिर भी कागज और स्याही को देखते हुए (जैसा कि अन्वेषक ने लिखा है) सं० १८६० मान लिया है।

संख्या १५०. कृष्णध्यान चुतुरष्टक, रचयिता—श्याम कवि, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—$8\frac{1}{2} \times 6\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८५ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० बालमुकुन्दजी चतुर्वेदी, मानिक चौक, मथुरा, जि०—मथुरा।

आदि— श्री गुणेशाय नमः

॥ दुहा ॥

वुधधर सेस महेस विध सुध कर कही न जाय।
सबी स्याम घनस्याम की वरनत कैसे वाय ॥
वेदव्यास सुन सुन वचन अषर भेद उपाय।
सबीस्याम घनस्याम की वरनत ये चे वाय।

॥ सवैया ॥

वह नीर मथ्यौ दह नाग नथ्यौ फन मर्दन कीम पगः थल कै।
वह कंस निवंस कियौ छिन मांझ गिन्यौ तिलमान हन्यौ वल कै ॥

वह गोवर्द्धन धरिबौ नष ऊपर भूपर होइ कै अट्टल कै।
निसि वासर मांझ कभी 'कविस्याम' सबी वह भूलत नापल कै ॥ १ ॥

× × ×

वह ताल विसाल तमालन के ढिग लालन मूछें मरोरत है।
वह अंवु में देषत है प्रतिविम्वर पीत पटम्बर चोरत है।
वह षुल्लत फूलन के तुरे उररे अलिवास ढंढोरत है।
वह स्याम कहे घनस्याम खड़े खगिया पगिया मचकोरत है॥ १ ॥

—दूसरे अष्टक का पथम छंद।

अंत—

वह लाल के संग रमै व्रजवाल सुचाल मराल के साल सरै।
वह स्याम घटा मधि विज्जु छटा विधि अंवर भावसी रौव करै।
वह लोयन कोयन अंजन सौं अब गंजन षंजन तेजु अरै।
वह स्यामकहै कंचनीचत है हरि मोरन के सर पेंच धरै॥ ४ ॥

—तीसरे अष्टक का चौथा पद

× × ×

वह गोकुलराय के अंगन अंगन मोतिन चौक पुरावत है।
वह आन सिंहासन आसन दै गरुडासन कौ पधरावत है।
वह कुंदन थार हरियालि लिये व्रजवाल कलस वंधावत है।
वह स्याम हसंत वसंत रमै नंदलाल गुलाल उड़ावत है।

—चौथा अष्टक

॥ दोहा ॥

कृष्ण ध्यान चतुरष्टक श्रवण सुनत सुप्रंण।
कहत स्याम कलमल कहु रहत नरंजक समंन ॥ १ ॥

अष्टक संपूर्ण ॥ लिषंतं भजै राम श्री राम राम राम सतः संवत् १७८५ वर्षे कार्तिक सुदि १३ ...मे श्रीरस्तु।

विषय—भगवान् श्री कृष्ण के उस स्वरूप का वर्णन है जिसका ध्यान करते समय स्मरण करना चाहिए।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ में चार अष्टक हैं। विवरण पत्र में चारों अष्टकों के एक-एक सवैया लिख दिए गए हैं।

संख्या १५१. सदा शिवजी को व्याहलो, रचयिता—तापा या तापान, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—७३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भेदीराम जी, ग्राम—चन्द्रभाननगर, डा०—फरैह, जि०—मथुरा।

आदि —श्री गणेशाय नमः ॥

अथ सदाशिव जी कौ ब्याह लिष्यते ।
राजा हेमाचल की नारी कहत चंद्रावती ।
प्रथम वंद गुरू सुमरि सीस साधन कू नाऊ ।
मात पिता डंडौत महा संकर गुण गाऊं ॥
कंठ सरस्वती सुमरि के गाऊं विद्या सुनाय ।
महादेव अरु पारवती कौ सुनौ ब्याह चित्तलाय ॥ कहत चंद्रावती ॥ १ ॥

जब चंद्रावती कही सुनौ राजा कहा कीजै ।
कन्या भइ वर जोग्य कहूँ लै टीकौ दीजै ।
ब्रह्मा बोल्यो वेग दे वर कुं सोधन जाय ।
वरह परो पति कन्या कीजै टीकौ देववदाय ॥ कहत चंद्रावती ॥ २ ॥

जबै गवरि जा सुनी गई ब्रह्मा के द्वारै ।
कहा कही मोरी माय कहा कही पिता हमारे ।
उनके जिय कछु और है मेरे जिय हठमेव ।
उनै छूटि मै और न जानू शिवशंकर महादेव ॥ कहत चंद्रावती ॥ ३ ॥

अंत—

लिष्यौ पूर्व लौ अंक कनक की चौरी आनी ।
ब्रह्मा उचरत वेद विदहतारचि है वानी ॥
कृष्ण सिंगासन छांड़ि के आए सुरनर मुनि जनसेस ।
इन्द्र सहत इंद्रादिक आये मुनि जन अनेक ॥ कहत चंद्रावती ॥३३॥

रतन जात के षंभ जहाँ लै वेदी कीनी ।
सभा रही भरिपूरि जहाँ लै ज्वाला कीनी ।
साषाचार जब होने लागी को कहै स्यौकी आदि ।
तीनि देवकी जोति एक है जाहि वषाने सादि ॥ कहत चंद्रावती ॥३४॥

पहलै कन्या दीन पीछे लै भाँवरि पारी ।
कौन मात कौन पिता काहि लै दीजै गारी ।
ब्रह्मा विष्णु महेश कौ बहौत करौ परमोध ।
फिरि फिरि गाठि परै गौरा की राजा हेमाचल की गोद ॥
कहत चंद्रावती ॥३५॥

रतन सिंधु जब मथ्यो जहाँ तुम हाथ न ओट्यो ।
अर्थद्रव्य बोलो लछिजा तुम सरवस छोड्यौ ।
सबै भूप मिनती करै स्यौ चरना तिनलोट ।
कर जोरे हेमाचल विनवै कन्या दइ लइ वोट ॥ कहत चंद्रावती ॥३६॥

बटत बधाइ कैलास गुनी सब आवध लीनै।
जै जै उचरत भाट अमर मंदी जन कीने।
षरचत कंचन कंचन कर मुक्ताहल सबकौ राषत मान।
जाचिक षुसी कियो स्यौ संकर देवि प्रन कू दान ॥ कहत चंद्रावती ॥३७॥
धनि गौराके भागि पुरष संकर से पाये।
अमिथ्या जिनको जनम वहरि लै पीछे आये ॥
आवागमन सूं उवरे जस कीर्ति जस गाय।
शिवसंकर के चरन कवल पर "तापान" वलिजाय ॥ कहत चंद्रावती ॥३८॥
इति श्री महादेवजी को व्याहुलौ संपूर्ण

विषय—शिव पारवती का विवाह वर्णन किया गया है।

संख्या १५२. शिवस्तुति, रचयिता—तुकाराम, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० महादेव प्रसादजी, स्थान व डाक०—जसवंत नगर, जि०—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ तुकाराम कृत शिव स्तुति लि० ॥ श्रीः ॥
ऐसा है ध्यान शिव हरिहर का हारे कर आसन वाघंवर का।
अगड़ बं अगड़ बं डिमक डिमक डिम् बाजे डमरू शिव शंकर का ॥ टेक ॥
अंग विभूति लगाव सदा शिव हाथ लिये निशिदिन गोला।
कैलास छोड़कर लोटैं मसान मैं ऐसा है शंकर भोला ॥ १ ॥
असरे० ॥ अगड़० ॥
खोपड़ी में भोजन करता गिरिजा है सो अर्द्धंगा।
सुरनर मुनिवर ध्यान धरै को देवता है अवधूता ॥ २ ॥
आसरे० ॥ अगड़० ॥
त्रिशूल से त्रिपुरासुर मारयो तीनि लोक में अधिकारी।
नागन केरा कुंडल विराजै चढ़ै वैल की असवारी ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥
कुंडी सोटा लेकर गोरा घोट पिलावै निशिदिन भंगा।
गले रूंड की माल विराजै जटाजूट शिर है गंगा ॥ ४ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

अंत—

विष से कंठ हुआ जब नीला राम नाम मुख से बोला।
ठंडा शीतल हर हुवा जवी तो प्रेम मगन में शिव डोला ॥ ५ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

जो कोई माँगे उनकों देवै ऐसा है शंकर भोला।
आग धतूरा आप अरोगे दूध भात कोइ कूं देता ॥ ६ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

शिंगी शेली शिव कूं सोहै हाथ लिया झोली चंगा।
वहु रंग कर शिर छत्र विराजे आढ़े गुदड़ी नव रंगा ॥ ७ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

इक रानी है गोरी पार्वती दूजी शिव के अर्द्धंगा।
तीजी रानी असल मिलांदे जटाजूट शिर है गंगा ॥ ८ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

यक रानी तो चन्दन घसती दूजी जल भर लावेगी।
तीजी रानी धूप दीप ले चौथी ज्योति जलावैगी ॥ ९ ॥
असारे० ॥ अगड़० ॥

तुकाराम उस्ताद नाम मो साहिब है सो वहु रंगा।
देख दाख ले पोथी पुराण में मत कर वार्ता अडभंगा ॥१०॥
असारे० ॥

अगड़ बं अगड़ बं डिमक डिमक डिम् वाजै डमरू शिव शंकर का ॥
॥ इति शिव स्तुति समाप्तम् ॥ शुभम्

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—श्री शिवजी की स्तुति।

संख्या १५३ ए. हनुमान अष्टक, रचयिता—तुलसीदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—५½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२० वि०, शकाब्द—१७६५, प्राप्तिस्थान—पं० सुखदेव शर्मा, ग्राम व डाकघर—शेरगढ़, जिला—मथुरा।

आदि— अथ हनुमान अष्टक लिष्यते ॥

ॐ चंदन चरच सिंदूर भूषण लंक कोटि विध्वंसनं।
अपर वल भुज दंड बाहू श्री हनुमत देव महाबलं ॥ १ ॥
उदित दिनकर देव सुरपति कंपिते सव दूर जनं।
हांक देत दिगपाल कंपे श्री हनुमत देव महाबलं ॥ २ ॥
राम तेज प्रताप बाहू राघवे कुल सेवितं।
पवन नंदन वीर बाहू श्री हनुमत देव महाबलं ॥ ३ ॥
लरत रण रणधीर जोधा सुग्रीव राज कपीश्वरं।
जामवंत श्री वालिनंदन श्री हनुमत देव महाबलं ॥ ४ ॥
जुद्ध मधे हते दानव सलील व्रक्ष उषारितं।
देव सुरपति करत जै जै श्री हनुमान देव महाबलं ॥ ५ ॥

नगन रूप निसंक गर्जितं गिर परवत मही मंदिरं ।
अग्रमुष श्रीराम पूजा श्री हनुमत देव महावलं ॥ ६ ॥
रामदूत प्रचंड जोधा सेत सागर लंघितं ।
हाँक देत दस सीस कंपे श्री हनुमत देव महावलं ॥ ७ ॥
सिंघ रूप निसंक गर्जित दुष्ट दानव मर्दनं ।
भूत प्रेत पिसाच मारे श्री हनुमत देव महाबलं ॥ ८ ॥
हनुमान अष्टक पठति निसदिन विष्णुलोक स गच्छति ।
तुलसीदास प्रभु करत जै जै श्री हनुमान देव महावलं ॥ ९ ॥

इति श्री हनुमान अष्टक संपूर्ण ॥ मिति पौष सुदि १० दीतवार संवत् १९२० ॥ शाके १७६५ ॥ शुभंमस्तु ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—हनुमानजी का यश कीर्तन किया गया है ।

संख्या १५३ बी. हनुमान स्तुति, रचयिता—तुलसीदास, कागज—देशी, पत्र—४, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० चक्रपाणीजी दुबे, स्थान व डा०—वलरई, जि० —इटावा ।

आदि— श्रीरामजी सहाय ॥

जै अंजनी लालं देव विसालं तेज प्रजु आलं मुषलालं ।
दीन दयालं सदा कृपालं जन प्रन पालं अरि सालं ।
त्रिकाल सरूपं उदित अनूपं मरकट रूपं रन रंगं ।
जै हमुमंतं रघुवर संतं जै हनुमंतं वजरंगं ॥ १ ॥
जै झलकत रूपं सिर सिंदूरं छबि भरपूरं बलभूरं ।
वड वियो मलं गुरूं सुर धन पुरं पगपग पूरन वचरुरं ॥
जैराम प्रबंधं हथि रिपु जुथं रनषंगं ।
जै वलवतं ... ... ॥ २ ॥
जै मारुत पूतं अमित सपूतं सीय पीय दूतं अवधूतं ।
अतिरन मजवूतं अमै अकूतं जोग संजूतं अदभूतं ।
उलंधन सुत दसकंधर अछय भंजन कर भंगं ।
जै जै वलवंतं ... ... ॥ ३ ॥
अजान प्रचंडं विज भुजदंडं नितषल षंडं ।
जस जासु अखंडं छिति व्रह्मंडं डंडअडंड वलवंडं ।
इंद्रादि अमानं करि दहंसानं मदि भंगं ।
जै जै हनु० ... ... ॥ ४ ॥
वल अमित अटंकं चढिचढि लंकं जै वल वंकं करिहंकं ॥
दससीस सककं कंपित सअंकं उदर कि कंकं जिमिपंकं ॥

मंदोदरि डुहं सुनि कपि कुहं भयप समूहं चित भंगं ।
जै० जै० ... ... ॥ ५ ॥
बलबुद्धि निधानं जनु ससि भानुं तम हरिता ।
हरष गिल्ला कारी लंका जारो असुर सिंध्होर दुषहरता ।
सिय आसिष दीनों हरजन चीन्हौ अदभुत कन्हौ निजुअंगं ।
जै जै वलवंतं० ... ... ॥ ६ ॥
दौना गिरि सहितं आनि सुचेनं ऊसष विनि तंतं ।
वलि आंत्रां प्रभु अहमन जानी उत्तिम ठानी मुरसु
आनी मनि भायं ॥
तव आसिष दीनौं हरिजन चीनो प्रेम नवीनौ निरभंगं ।
जै जै हनुमंतं ... ... ॥ ७ ॥
महि रावन रानं हनि रिपु सानं रघुकुल भानं तव लिआयं ।
विरभु अनुज समेतं निज हित केतं सदा निकेतं सुषदायं ।
षल दल वल गंजन करि गंजन ।
जै जै वलवंतं० ... ... ॥ ८ ॥
पंच सुवदनं गिआन सुसदनं तिह तसु मदनं वलवीरं ॥
राछस कुल हंतं प्रिभु निजु भगतं रहत विरकतं जिमनीरं ।
षल सु अषर्व मेटत गरभं सुष सुरभंगं निरभंगं ॥
जै जै हनमंतं रघुवर संतं जै हनमंतं वजरंगं ॥ ९ ॥
जगसूं आस अपारं इछया कारं अपरं पारं रूपधरं ।
हर भगत सुपरमं मेटत भरमं निजु निजु धरमं देववरं ॥
ब्रिह्म सुचारी गिरवरधारी मद्य अहारी कर भंगं ॥
जै जै वलवतं० ... ... ॥१०॥
जै जै मनवीरं जै रनधीरं हरजन पीरं सुषदाता ।
अंजनी नंदन दुष्ट निकंदन मुनजन वंदन जगि भ्राता ॥
आदि सुदेवं सुरसव सेवं लहतत भेषं निजुसंगं ।
भगत सहितं कहत भरथं तुम समरथं मतिपंगं ॥
जै जै हनवंतं० ... ... ॥११॥ श्री श्री ॥
सुरन सेल लंका सुकौ रख तरून तेज छूलन उर विसाल ।
भुजदंड षंड नषं वज्रख जेर वजर तक ॥
पिंग नयन भ्रकुटी विसाल ससनांतस आनन ।
कपि सुकौट करक सिलगुर षलदल वलभारन ।
कहि तुलसीदास उर जासु वस मारुत सुतं मुरत विकट ।
ताप सोक तिहुँ पुरस कौ सपनेहुँ नहिं आवत निकट ॥ १ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—हनुमानजी के विक्रम का वर्णन करते हुए उनकी स्तुति और उसका फल वर्णन किया गया है।

संख्या १५४. रामचन्द्र औतार, रचयिता—तुलसीदास, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—८½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० नत्थीरामजी पुरोहित कौशिक, पुरानी डीग, रियासत, भरतपुर।

आदि—अथ रामचन्द्र औतार लिष्यते ॥

कंठ सरस्वती सुमरि प्रेम आनन्द मनाऊं।
मात पिता दंडौत सीस साधन कूं नाऊं ॥
आन बुद्धि परगट भई गुर गनेश मनाय।
रामचन्द्र औतार सुनतही अधिक पाप कटि जाय।
ऐसे रघुनाथ हरि ॥

तौ रानी नगर अजुध्यापुरी राज मैं कियौ घनेरौ।
घर नही जन्म्यौ पुत्र कहा जीतव है मेरौ ॥
मौर बांधि कै रानी व्याही तीन्यौ राजकुमारि।
केकइ सुमित्रा वांझ कहाई कौसल्या सी नारि ॥
ऐसे रघुनाथ हरी ॥ २ ॥

राजा कहा मन उपज्यौ ज्ञान कहा जिय करना कीनी।

× × ×

समझामती रानी कौसल्या अब कहा मन पछिताय।
जो सुत लिषे भागि तेरे मैं घर जनमैंगे आय।
ऐसे रघुनाथ हरि ॥

अंत—

धरै साथिये द्वार चौहौत असलूप बनाये।
चंद्र सूर्य ते उधरे नौहरै कौतिग आये ॥
सीक रूपी जसरथ के मन्दिर रघुवंसीन दरवार।
न लजाये माता कौसल्या रामचन्द्र औतार ॥
ऐसे रघुनाथ हरि ॥ ६४ ॥

दिन दिन स्याने होइं द्रष्टि रघुवंसीन षाई।
हंसुली टोडर हाथ अंग जामा फहराई ॥
मुकुट धरौं रघुपति के मांथें और कुंडल पैहैराय।
कुंडल माल मुकताहल सोहै पदम झलकैं पाय।
ऐसे रघुनाथ हरी ॥ ६५ ॥

जहां पंच जहां परमेसुर अवगति की गति कही न जाइ ।
जसरथ पिता मात कौसल्या और लछिमन से भाइ ॥
रामचन्द्र औतार भयौ सरत भरथ दोऊ साथ ।
श्री रामचंद्र के चरनकमल पै वलि वलि 'तुलसीदास' ॥ ६६ ॥
॥ इति श्री रामचंद्र औतार संपूर्ण ॥

विषय—राम अवतार का वर्णन किया गया है ।

संख्या १५५. ग्यान बत्तीसी, रचयिता—उदय (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—७¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७३९ वि० के लगभग, १६८२ ई०, प्राप्तिस्थान—प्रो० मोहन वल्लभ पंत, किशोरी रमण इंटर कालेज, मथुरा ।

आदि-॥ 0 ॥

अथ श्री ग्यान बत्तीस लिषितं ॥ श्री ॥

कका कीजहि काम धरम हेत उदिम कछू ।
करि सिमरण ले नाम भज भज भगवंत न विसार तूं ॥ १ ॥
षषा षमि तजि रोस कर्म कमाया आपणा ।
किसहि न दीजे दोस विन भोग वैन छूट सी ॥ २ ॥
गगा गरब निवारि गरबत ना दुष यादि कर ।
संकट उदम झारि उरध मुषें टांगि उहिउ ॥ ३ ॥
घघा घरमहि लोग स्वारथ मिल्या कुटंब सब ।
दुष पीड़ा हुई रोग तब बांटि न लेई बल्लहा ॥ ४ ॥
ङा ङा डेहन लाइ परनारी पर दरबि सिंउ ।
षिणक बिलंबइ आइ जनम जनम दुष भोगवै ॥ ५ ॥
चचा चिर नहिं कोई चेतनि सौं चितु लाइये ।
औ जौं लाज नहि ताहि बिरध भयौ विक्रिति नहीं ॥ ६ ॥
छछा छिन छिन देह छीजहि छह रस पोषतां ।
अंति मिलैगी षेह कछु संवर करि संवलै ॥ ७ ॥
जजा जनम अनेक लष चौरासी हउं भम्यऊ ।
इह नर जनम विवेक बिथा न षोइसि धर्म विनु ॥ ८ ॥
झझा झलकत अंग बहुत जतन रवि पवि करत ।
सोउ न चालत संग किसो भरोसो ओर को ॥ ९ ॥
ञञा जिमि सुधचित साधि सुदेव धर्म करि ।
जिन सेवा विनु चित्त फलनहि वंछित जीव कछु ॥ १० ॥
टटा टलहु न टेक सील सदा दिढ़ राषि ज्यौं ।
जै कारज पड़हि अनेक तो कायर होइ रहु मत डगमगो ॥ ११ ॥

ठठा ठोड संभाल धरनि गोद बासो तिहां ।
रूलिउ अनंत काल अबनि चेत सुकृत करउ ॥ १२ ॥
झझा झहकिन (? डडा डहकिन) षोइ आउध छांड़ि अधर्म का ।
बहुत दुहेलो होइ जब कठिन बार आवइ "उदय" ॥ १३ ॥
ढढा ढिग जिनि जाहु चोरी जूवा पर त्रिया ।
सनमुष आवइ धाइ तउ छाया पीडिन अंग पर ॥ १४ ॥
णा णा रणि चढ़ि कोपि आठो कर्म विदारि जइ ।
कीजइ मारि अलोप जिम बहोरिन ब्यापइ जीव कहुँ ॥ १५ ॥
तता तरि संसारि कछु तप जप करि निरजरा ।
बहोत लिये सिर भार छूटिउ उदैन उछलई ॥ १६ ॥
थथा घरि हरि कंपि रष्या करि बहु जीव की ।
परसि उनक दे चंपि इहइ सीष पर तरु सधई ॥ १७ ॥
ददा देइ नित दान साध सु सुर नित हेत स्यौ ।
श्री मुष वांणी कांनि सुनता होइ चित निरमला ॥ १८ ॥
धधा धनके हेति धर्म छाँड़ि धंधउ सहई ।
जब काल चपेटा देत तब आरंभो योंही रहई ॥ १९ ॥
नना न करु प्रमाद पंचौ राषिन मोकली ।
मृग सुनत इकनाद हण्यउ वाण तन दुष सहइ ॥ २० ॥
पपा पर हरि प्रेम साध विनां संगति अपर ।
सदा निबाहो नेम सहुव्रत लेहु सकति सो ॥ २१ ॥
फफा फिरिउ अनंत घरि घरि को राषिन सकइ ।
अब करणी करि भव अंत तो सिवपुर सुष भोगवै ॥ २२ ॥
बबा बारि न लाइ बिलसि लछि पुनिही मिली ।
"उदय" पाय कोइ जाइ तब मन पछितावो रहै ॥ २३ ॥
भभा भरम न भूलि दीरघ दुष सुष तुछ इइ ।
और नहीं समतूल जाप जपो जगदीश को ॥ २४ ॥
ममा मन न डुलाइ देषि विभो पर ग्रेह को ।
पूरब कृत कमाइ सुभ गति आयो आपनी ॥ २५ ॥
जय घट मांहि विचारि सरणां गये पूंजी अछत ।
राहि उपचिंद्री हारि सगो न कोइ सजीव कउ ॥ २६ ॥
ररा रसिन लुभाइ जिभ्या स्वाद निवारि सहु ।
मीन बहुत तरफराइ तउ काट्य बेधिउ काल जे ॥ २७ ॥
लला तजहि न लोभ अतिहलू चलउ संसार मइ ।
नरन लहइ कछु सोभ लालच गरू वातन हरै ॥ २८ ॥

ववा वहिन विचारइ नीच नरक बास दुख त्रास बहु ।
तऊ न व्यापत मीच षंड एक बहुरउ मिलै ॥ २९ ॥
शशा शील सुभाइ चित कोमल राषहु सदा ।
जे अरि सिर घालइ घाव तउ सहज न छांडो आपणो ॥ ३० ॥
षषा षिण न बिसारि मंत्र सार नवकार को ।
तजहु विषय मनु मारि तो भव सायर निस्तरो ॥ ३१ ॥
ससा साहस धीर इत रहुइ साच जत जउ ।
जो आइ परइ बहुभार तउ सत जिनि चूकहि बपुरे ॥ ३२ ॥
हहा हरषि न रोइ पाप पुनि दोऊ भुक्ति लै ।
मेटि न सकइ कोइ लिषा अंक जो निरमया ॥ ३३ ॥

इति ग्यापचीस सुभस्त ॥ कल्याणं भवेत् ॥

(पूर्ण प्रतिलिपि)

विषय—'क' से लेकर 'ह' तक क्रमानुसार प्रत्येक अक्षर पर सोरठा रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या १५६ ए. अहरावन लीला, रचयिता—उदय (स्थान, व्रज), कागज—देशी, पत्र – ११, आकार—८½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९१० वि०, प्राप्तिस्थान—पं० भेदीरामजी, ग्राम—जोधपुर, डा०—फरैह, जि०—मथुरा ।

आदि— श्री गणेशाय नमः

अथ अहिरावन लीला लिष्यते ॥ रामहरन ॥
अति सुंदर सुकुमार कुमर ये कौन के ।
अहिरावन को बोलि कही रावन सुनि भाई ।
राम लषन दोउ वीर तिन्हें तू हरि ले जाई ॥
अहिरावन यह सुनत ही मगन भयो तिहि काल ।
माया करि हरि लै गयौ तिनकौ निसि पाताल ॥ १ ॥
कुमर ये कौन के ।
भोर भयो सव जगे वीर वानर दल मांही ।

× × ×

सुनो सजनि हरि कुमर कहुँ न दीसत वीर ।
वलहारे वानर वली बिना राम रनधीर ॥ २ ॥
कुमर ये कौन के ।

अंत—

अहिरावन की नारि निकट आए दोउ भाई ।
सकल भाँति अपनाय चलै सो अभै कराई ॥

मकरध्वज कौ राज दै ताकी लाज गहाय ।
लै आए कपि कटक मैं कंधा कुमर चढ़ाय ॥५५॥
कुमर ये कौन के ।
आनंद दै सब लोग सोग सागर तैं छूटें ।
नैंना नंद प्रवाह प्रेम पुलक उरते छूटें ।
अहिरावन के राज की अगनी गई विहाय ।
सेना सरवर कमरन कसि षुले ठाम विपाय ॥५६॥
कुमर ... ... ।
जामवंत सुग्रीव विभीषण सभही आये ।
धन धन पवन कुमार प्रान ते सवके राषें ।
कीस भाल कपि कटक में भयौ न भावत भोर ।
रामचन्द्र चाहत उदै कपिकुल कुमुद चकोर ॥५७॥
कुमर ये कौन के ।

इति श्री रामहरन अहिरावन लीला संपूर्ण शुभं मस्तु कल्याण मस्तु ।

विषय—अहिरावन का रावण के कहने से राम लछमण को चुरा ले जाना, उनकी देवी को वलि देने का आयोजन करना और हनुमान का वहाँ जाना तथा उसको मार कर राम लक्ष्मण को वापस लाना आदि कथा का वर्णन है ।

संख्या १५६ बी. चोरमिहचनी, रचयिता—उदय, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० भजनलालजी, ग्राम व डाकघर—सौंख, जि०—मथुरा ।

आदि— अथ चोर मिहचनी लिष्यते ॥
एक दिन नंद कुमार सषि को भेष वनायौ ।
नंद गाँव तैं निकरि स्याम वरसानै आयौ ॥
उदै उजारी चाँद की सरद चाँदनी राति ।
निकस सषी संग राधिका वाहर षेलनि जाति ।
राति पषि उजेरी ॥ १ ॥
हेल मेल कौ षेल करत हूँ गोपदुलारी ।
इतनही नंदलाल आय गयो षेल षिलारी ॥
सबै अचंभै ह्वै रही मिलै अचानक आय ।
पहिचांनो प्यारी तवै आये रूप छिपाय ॥
छबीले संग मेंः ॥ २ ॥

मध्य— तरु पातन परिछांह दुरि दामिनि मिलि जाई ।
आनन अंग उजील पास नहि दुरैं दुराई ॥

देषत ही भागत छिपत छुवत कुमरि कौं आइ।
हाथन आवत एक हूँ षढे रहत षिसाइ॥
सषि को भेष धरि ॥२९॥

अंत--

राधा माधव मित्र चित्रशाला संग आये।
प्रेम तरंग अंग संग सुकुमारि सुहाए।
उदै भई आसा अली चली टहल में जाय।
महल महल में पहैल ही राषी सेज बिछाय।
खाइ आय अटा ॥४८॥

॥ दोहा ॥

दोऊ जन मन भावते एक सेज सुष पाय।
सोये सुंदर उदै उर वरसाने में आय ॥४९॥

इति श्री वरसाने बिहार चोर मिहचनी ष्याल लीला संपूर्ण ॥ मिति पोह वदि १४ रविवार संमत् १८८५ वि०

विषय--श्री कृष्ण साँवरी सखी का रूप बना कर वरसाना जाते हैं। वहाँ राधाजी को अपना झूठा परिचय देते हैं और राधा एवं उसकी सखियों के संग चोर मिहचनी लीला खेलते हैं। खेल में श्री कृष्ण की छद्मता प्रगट हो जाती है और अंत में राधा-माधव मिलन होता है।

संख्या १५७. पद, रचयिता—उमा, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० घुरेमल जी, ग्राम—राजेगढ़ी, डा०—सुरीर, जि०—मथुरा।

आदि—पद राग परज

आइरे मांरै दिन दिन सुजस वाइ रे संता छे ॥ टेक ॥
धन सत गुर तुमें परमहंस हौ नीर षीर नरणो कराइ रे ॥ १ ॥
पर करती परव्रती त्यागी नस्वर तीन गसाइ रे ॥ २ ॥
संत पुरूष मुगति के दाता भरम को ले मेर मटाइ रे ॥ ३ ॥
तरगुण रहित नरंजन देवा ज्याको ध्यान धराइ रे ॥ ४ ॥
उमा रामजनां के सरणै नरभै पदवी पाइ रे ॥ ५ ॥

× × ×

ऐसे जन पुजवु जु राम रंग राते हैं ॥ टेक ॥
ग्यान ध्यान सै सब सुजलीयां भारी समता संतोष धन मै
ऐसे संत माते हैं ॥ १

पाँच पचीस तीन गुण सु रहीत स्यांई है,

आप सो अलपत स्वामी सोइ संत कहाइ है ॥ २ ॥

भरम करम के भार जु दूर करावै आप सरूप सांमी सबमें कुंहावै ॥ ३ ॥

सुध बुध सुं सैज सैन सुष पावै पारब्रह्म

एकतार धार कै एक भाव रहावै है ॥ ४ ॥

सतगुर सूरा सांवत है अवनासी उमां नित

दरसण पावै सरणा मैं दासी ॥ ५ ॥

पद राग वसंत—धुमाल

सातों सुरत सुन्दरीं नाठी जाय।

पलक पीया संग क्यूं न आय ॥ टेक ॥

पीया के संग अमर सुष पाय।

इमरत रास (? रस) का फल षाय ॥

इण सुष की महैमा कही न जाय।

जनम मरण का दुष वलाय ॥ १ ॥

ऐसो सुष सतगुर बगसाय।

अनन्त कोट जनमै मा गाय ॥

सुरत सबद मैरा षोय।

अमरापुर में वासो होय ॥ २ ॥

ओ अवसर अब बन्यौ है आय।

अवसर सुकां (? चूक्यां) फेर पसताय (पछताय) ॥

नगरा (नगुरा) नर दो जग (दो जख) मां।

उमां सतगुर सरणो ध्यां ॥ ३ ॥

× × ×

पद

सहेल्यां हे मांरो बौहौत सुप्यारौ सैण सतगुर जी सैण मलायो है ॥ टेक ॥

राम तमारा नाम मैहो रैण दिवस तलफाय।

नेरा सु दूरा क्यूं होइ मुझ मै सुकवताय ॥ १ ॥

सुरत नरंत कर पांथ जी हार करम लोगे आइ।

विरहन कूं विसवास दीजै तुम बिन रह्यौ न जाइ ॥ २ ॥

बौहत दिनां रौ अंतरौ भागौ असभो मांह।

सतगुर मेल मलाइया हो मलीया पूरण ब्रह्ममाह ॥ ३ ॥

विषय—गुरु तथा निर्गुण ब्रह्म की भक्ति का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम 'उमाँ' है। विवरणपत्र में उद्धृत दूसरे पद की अंत की पंक्ति से विदित होता है कि ये कवि न होकर कवियित्री थीं:—

उमां नित दरसण पावै नित सरणा मै दासी ॥ ५ ॥

इसमें 'दासी' शब्द स्त्री वाचक है, अतः ये स्त्री थीं।

प्रथम पद के अंत के चरण के अनुसार ये रामजन की शिष्या थीं:—

उमां रामजनां के सरणै निरभै पद पाइरे ॥ ५ ॥

जैसा कि रामसनेही पंथ के प्रवर्तक स्वामी चरणदास कृत 'दृष्टांत सागर' (संख्या ११६) के विवरण से स्पष्ट है, रामजन (संख्या ११८) उक्त स्वामी जी के शिष्य थे और संवत् १८३९ में विद्यमान थे। अतः प्रस्तुत कवियित्री का भी लगभग यही समय मानना चाहिए।

इनके पदों में राजस्थानी शब्दों की बहुलता है।

संख्या १५८. अनन्यमाल, रचयिता—हितउत्तमदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—$१०\frac{१}{२} \times ६\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९६६ वि०, प्राप्ति स्थान—गोस्वामी श्री हित रूपलालजी, श्री राधा वल्लभ मंदिर, वृंदावन, जि०—मथुरा।

आदि—श्री हित राधावल्लभो जयति। श्री हित हरिवंश चंद्रो जयति॥ अथ श्री हित हरिवंश चंद्र चरित्र अनन्यमाल लिष्यते॥

॥ दोहा ॥

मंगल मय हरिवंश जी तिनकौं करौं प्रनाम।
इनही के गाऊँ गुननि प्रेम भक्ति के धाम ॥ १ ॥
श्री हरिवंश चरित्र बहु वरने कापै जात।
कछुक सुने आरज वदन सो हौं लिषि हुलसात ॥ २ ॥

॥ चौपई ॥

श्री हरिवंश चरन सिर नाऊँ। तिनको सुजस जथामति गाऊँ ॥ ३ ॥
रसिक अनन्य कृपा उर आनौं। तव श्री हरिवंश प्रतापहि जानौं ॥ ४ ॥
प्रथम कहौं देवन की कथा। सुनी सुधर्मिनि मुंष तें जथा ॥ ५ ॥
देव नगर प्रसिद्ध विराजै। व्यास मिश्र द्विज कुल मधिराजैं ॥ ६ ॥
गौड़ सु विजा चान शुभ ग्यात। यजुर्वेद तिनको विष्यात ॥ ७ ॥
माध्यंदनी प्रचुर है साषा। कस्यप गोत्र सुनो सभिलाषा ॥ ८ ॥
पंडित गुनिन पार अप्रमान। हय गय संपति नृपति समान ॥ ९ ॥
देस देस मधि सुजस अभ्यासौ। पृथवी पति लौं जाइ प्रकास्यौ ॥ १० ॥

अंत—

अथ रसिक परचई

चौपाई

अब कृपापात्र हित जी के कहौं,
तिनकौ नाम सुमरि सुष लहौं ॥ १ ॥

भगवत मुदित परचई करी,
रीति प्रीति पद्धति सब धरी ॥ २ ॥
सिष्य प्रसिष्यनि में भए सिद्ध,
महल टहल में लगे प्रसिद्ध ॥ ३ ॥
प्रथमहि नर वाहन जू भए,
श्री हरिवंश जुगल पद दये ॥ ४ ॥

× × ×

ऐसेंई श्री हरिवंश गुसाईं,
महल पधारे सो सब गाई ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

संवत् सोरह सैरुनव कातिक पून्यौ स्वच्छ ।
तादिन श्री हरिवंश वपु दीषत नहि जग अच्छ ॥ ७ ॥

इति श्री उत्तमदासजी कृत संपूर्ण ॥

विषय—श्री हित हरिवंशजी का चरित्र तथा नरवाहनजी, छबीलदासजी, श्रीव्यास जी, श्री स्वामी हरिदासजी, श्री सनातनजी, श्री कृष्णदासजी, श्री प्रबोधानंदजी, नाहर-मलजी, श्री विट्ठलदासजी, श्री मोहनदासजी, श्री सेवकजी आदि की वार्ताओं और रसिक परचई का वर्णन किया गया है ।

संख्या १५९ ए. अद्वैत प्रकाश, रचयिता—वली, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४६, खंडित (केवल प्रथम पत्र खंडित), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० गोपालदत्त, शीतलाघाटी, मथुरा, जि०—मथुरा ।

आदि—······रू पातांजलि जानौहु । पुन वैसेसक तीनौहु मानौहु ॥
सुनिकरि समझे चारौं वेद । जिउ ब्रह्म में रहे न भेद ॥
वेद वेद प्रति पद है तीनि ।
तिनको ऊर्थ सुनौहु प्रवीन ॥
द्वादस महा वाक्य सिधांति । सुनतहि जाइ जीव की भ्रांति ॥
पहिलै इड रिगु वेद सुनावै । प्रज्ञानंद ब्रह्म कहि गावै ॥
ऊँचो ते ऊँचा है ज्ञानू । वाहौ कौ कहिये प्रज्ञानु ॥
जड माया मे यह जु विलासु । गुपति प्रकटि वाकौ परगासु ॥
पांच भूत उपजै है जासौ । इन्द्री ग्राम सपूरत वासौ ॥
वाही मैं यह जग विस्तार । उपजत प्रति पालन संहार ॥
अब आनंद पद को विष्यान । कहियतु है अति निर्मल ज्ञानू ॥
सर्व निरंतर सहजानंदा । व्याप रह्यौ आनंद को कंदा ॥

आनंद सो उपजे सब लोका। आनंद रूप करै सब भोगा ॥
फिरि सब आनंद मांहि समाही। आनंद मांहि मगन होइ जाई ॥
यह दुष सुष जग कौ व्यौहार। 'वली' कहै छिन भंग असार ॥
ब्रह्म पदारथ अब सुनि लीजै। यामै भलो भांति मनु दीजै ॥

अंत—

वेद वचन करि जो हितु राषे।
तेनर मधुर अंब रस चाषै ॥
तरक करहि जे भाषा जानि।
तिनको पेड गिनन की वानी ॥
साध संग गुरू महिमा भाषी।
पुनहि ज्ञान साधन गति राषी ॥
पुन गरंथ की जुगति वताई।
वीच वीच की बात सुनाई ॥
आदि अंत निजु ब्रह्म सही है।
वीच वीच की बात यही है ॥
ज्ञान अज्ञान तहाँ नही पोये।
आदि मध्य अंत सम होवै ॥
आदि अंत हिम पानी ही है।
हिम की वीच कही नीही है ॥
हिम जानै अन जानै पानी।
सार विचार सार मति जानी ॥
ज्ञान अभिमान उतारै धोई।
सहजानंदी ज्ञानी सोई ॥
जौर कहै अज्ञानी दुषी।
तो ज्ञानी काहे का सुषी ॥
एकमेव अद्वैत वषानै।
यह नार्निव नही कछु मानै ॥
सोंहं "वली" सर्व प्रकासी।
केवल अज अक्र अविनासी ॥

इति श्री ग्रंथ अद्वैत प्रकास संपूर्ण ॥

विषय—ऋग्वेद के 'प्रज्ञानंदब्रह्म', 'यजुर्वेद' के 'अहं ब्रह्म' और सामवेद के तत्वमसि पर वेदांत मतानुसार विचार किया गया है।

संख्या १५९ बी. षटशास्त्र विचार, रचयिता—बली, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गोपालदत्त जी, शीतलाघाटी, मथुरा, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री ग्रंथ "षटशास्त्र विचार" मतः

आपन कौ कीजै परनामु । जाकी महिमा चिद्घन रामु ॥
चार वेद षटशास्त्र भये । अपनी महिमा में निरमये ॥
मीमांसा वैसेषिस कहिये । पुनि न्याइ पातांजल लहीये ॥
सांष्य और वेदांत वषानौ । षटशास्त्र षटदरशन जानौ ॥
शक्ति अनंत आप अविनासी । सोहं "वली" सर्व प्रकासी ॥
मीमांसा प्रपादे कर्मू । विनु करनी सव वातै भर्मू ॥
देह वीच जो कहै सो पावै । मीमांसा ऐसो ठहरावै ॥
विनुवाए कैसै फलु पावै । विनु षाये कोइ न अघावै ॥
सुभ कर्मन के सुभ फल लागही । ते मूरख जे करमु तियागही ॥
जे नर असुभ कर्म लपटाही । वली कहै ते करि पछिताही ॥ १ ॥

अंत—

सांष्य कहै विनु ग्यान न पावै ।
जो कोई कोटि जतन करि धावै ॥
कर्म जोग साधन को देहा ।
सो अनित्त छिन भंगी एहा ॥

× × ×

षट शास्त्रन के भिन्न विचारा ।
तत्त विचारै सव मत सारा ॥
जैसे एकै गावन हारा ।
रागु रागनी वहु विस्तारा ॥
जोई जोई ताकौ भावै ।
रोज रीजसो सोई गावै ॥
विधि निषेध कौन सों कहीये ।
जिउ गावनवारा एकै लहीये ॥
"वली" सर्वमत पूर्ण एक ।
अपनी भाव रस्यौ एक ॥ ६ ॥
सुष कौ सागर सांत जल,
जाकै नही न थाह ।
सांति विना ज्ञानी 'वली",
दरव विना जैसे साह ॥

विषय—षट् दर्शनों का सार वर्णन किया गया है ।

संख्या १५९ सी. वस्तु विचार, रचयिता—बली, कागज-देशी, पत्र—७, आकार—६३⁄४ × ५१⁄२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गोपालदत्त जी, शीतलाघाटी, मथुरा, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री केशवजी सत्य ॥ गुरुदेव जी सत्य ॥

नमो निरंजन अलषसार अज स्वयं प्रकासी ॥
निराकास निर्वाण निमैं निर्गुण अवनासी ॥
निराभासनिर्धूम नमो निर्मल अपार अंत ।
अस्तभात प्रय तत्व नमो चिदंघन अनंत गत ॥
पूरन प्रगट प्रतछ प्रभु पर्म पुर्ष अक्री अगम ॥
नमो नित्य साक्षी "वली" जुनेत नेत भाषत निगम ॥

॥ साषी ॥

अभिवादन कर ब्रह्म को विरचत वस्तु विचार ।
कहौ प्रगट हस्तामलक सकल सार को सार ॥
जो पूरव रचना रची सुरवानी बुधवंत ॥
संक्राचारज रिषि सुमत वर्नै भाव अनंत ॥

॥ दोहा ॥

भ्रम अविद्या तम जगत मिटत सुनत ही जाहि ॥
"वली" जथामति प्रेम सों भाषा वरनत ताही ॥

अंत— चौपाई

सुन्यो एक द्विज पंडित ज्ञाता ।
कर्म धर्म जग माहि विष्याता ।
ताके पुत्र एक बुध भारी ।
जनमत भयौ मौन व्रतधारी ॥
सवकी सुनै न अपनी कहे ।
वोलत वदन चाह कर रहे ॥
या दुष द्विज अति अकुलाना ।
मूक वधुर अपनो सुत जाना ॥

× × ×

एक समै संक्राचारज गुरू ।
आई गये नारद सम तिहि पुर ।
द्विज वालक पुन सहज सुभाई,
रिषि आज्ञै होइ निकस्यौ आई ॥

बूझत रिषि सुन बालक मोसो ।
उतर देहु कहूँ कछु तोसो ॥
काको पुत्र कहाँ विस्रामा ।
चल्यौ कहाँ जु कौन कहि नामा ॥

× × ×

तब द्विज बालक वचन उचार्यो,
सुनत तहाँ अचरिज भयो भारौ ॥
मैंन मनुष्य देव पुन नाहीं,
मेन जच्छुः गंध्रव गण मांही ॥
नहीं ब्राह्मण नहीं छत्री धर्म ।
नहीं वैश्य शूद्र के कर्म ॥

× × ×

ऐसे ब्रह्म सकल प्रतिपालक,
तज भ्रम जान सोई मैं बालक ॥

॥ दोहा ॥

अंग अंग व्यापक पुरुष चीन्ह सकै नहीं कोय ।
जैसे दधि मै ये ... ... (अपूर्ण)

विषय—वस्तु के वास्तविक ज्ञान विषय का वेदान्त के असुसार प्रतिपादन किया गया है ।

संख्या १६०. नेमनाथजी को वारामासो, रचयिता—विनोदीलाल, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०६ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० रेवतीनंदनजी, स्थान—बेरी, डा०—वरारी, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गणेशाय नमः अथ नेमनाथजी को वार्यामास्यौ लिष्यते ।

विनवै उगरसेन की लाडलि जु कर जोड़ि के नेम के आगे खड़ी ॥
तुम काहे कु पी गिरनार चढ़े अबै हमतैं कहो कहा चुक पड़ी ॥
यह वैस नहीं पिय संजम कौ तुम काहे कु ऐसीय चितधरी ॥
कैसै कै वारा मास वताओगे समझावोगे मोही ऐ सगरी ।
आगे असाढ़ में क्यों नाव्रत लीयो तुम येती व्रत काहे कु वुलाई ।
छप्पन कोटि जुरे जदुवंसग व्याहन आये निसान चलाई ॥
संग समुद्र वीना वलभद्र मुरारी की तुम लाज न आई ॥
नेम पिया उठ आवो घरा इन वातन में कहौ कौन वराई ॥ २ ॥

वड़ाई कहा कीजै सुन राजल जीवन ही निसि कौ सुपनौं।
सुत बुद वदसैव जाल चलैगी जैसे जल बूंद परै नीतनो॥
अपनो दिन चारही को विझवान सव थीरता न कछू सवही षपनो॥
हमरे यही अजान अनंत समैं हमरे अब सिधन कौ जुपनो॥ २॥

अंत—

दुलभ है नर कौ भव राजुल,
दुलभ ज्यों न सरावग हमारे।
दुलभ धर्म दसोरथ नाथ दुलभ,
है षोडस करमन सारी॥
दुलभ है श्री जिन जी को मारग,
दुलभ है सवु सुद्र नारी॥
दुलभ जान सवै तवहु,
दुलभ मीच सीन्यासक न्यारी॥२५॥
जवही वारहमास पूरण भये,
नेमजी राजल आण सुनाए॥
नेमजी वारभात तपै,
फिर राजल कू आण समझाए॥
राजल ही तव संजमलैं,
निर्जर के वस करम जलाए।
राजल की पत नेमजी सूं,
जव उत्तर लाल विनोदी ने गाए॥२५॥

इति श्री नेमनाथजी कौं वारामास्यौं लिष्यते॥ संवत १८०६ मिती माह वदी २ वार सुक्रवार लिषंतं बूलचंदजी पठनार्थं॥

विषय—नेमनाथ (जिनतीर्थंकर) यादववंशी समुद्रविजै के पुत्र थे। इनका विवाह उग्रसेन की लड़की राजमती (राजुल) से होना निश्चित हुआ था। जब बारात उग्रसेन के यहाँ गई, उसी अवसर पर नेमनाथजी को वैराग्य उत्पन्न हुआ और वे गिरिनार पर्वत पर चले गये। राजमती ने उन्हें गृहस्थ में लाने के लिये कई प्रलोभन दिये, किन्तु सफलता न मिली। अंत में स्वयं उन्होंने भी वैराग्य धारण कर लिया।

संख्या १६१. पांडव सत, रचयिता—(जन) विसनदास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि - नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, सन् १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० चिरंजीव लाल जी, स्थान व डाकघर—राधाकुण्ड, जि० —मथुरा।

आदि—श्रीराम जी अथ पंडो सत लिष्यते॥

हरि को विरद वीरद सरनाई।
जहाँ जहाँ भीर पड़े संतन मैं जहाँ जहाँ स्याम सहाइ ॥
गवर पुत्र मुष सुमरै कंठ सरस्वती मनाऊं।
सत गुरू चरण प्रताप कछू पांडो गुन गाऊं ॥
पांडव हैं वनवास सत्य जोधा रिण पूरे।
सील स्वभाव उनमें सही संकट पड़े अनेक।
संकट विपत एक करि लेषो तजी न हरि की टेक ॥ १ ॥
येक समय दुरवासा रिषि जाय छपे कौरव दरवार।
भगत भाव सेवा करि प्रतिपालो परिवार ॥

× × ×

तव दुर्योधन कियो विचार तुरत मेरे मन भायौ।
ज्यौं दुरवासा घेति होति हमरो मन भायौ ॥
रिषि हम पै प्रसन्न है हम पै भये दयाल।
पांडव कुल सराप के मिटै हमारौ साल ॥ ३ ॥

अंत—

तंदुल लिये मंगाय पंडों सुत द्वारे ठाढे।
मुषभर दई असीस सवन मिलि तंदुल छांडे ॥
सदाराज पोहौमी करौ अविचल जोड़ी पाँच।
इतनो सत होइ ज्यो मोमे तुम वैरी छय जाय ॥ २४ ॥

× × ×

पंडो सुतन की लीला गावै,
'जन विसनदास' बलि जाय ॥
॥ इति श्री पांडव सत गीता संपूर्ण ॥

विषय—दुर्वासा ऋषि एक समय कौरव दरबार में गए। वहाँ दुर्योधन ने उन्हें प्रसन्न कर पांडवों को नाश करने का आशीर्वाद मांगा। आशीर्वाद तो ऋषि ने नहीं दिया, पर पांडवों को नाश के जाल में लाने का वचन दिया।

वहां से ऋषि युधिष्ठिर के पास (जो वनवास में थे) गए और उनसे पृथ्वी से सद्यः उगा हुआ तथा पका हुआ आम एवं दाख के फल खिलाने को कहा। पहले तो पांडव चिन्तित हुए, किंतु पीछे अपने-अपने सत्य से ऋषि के लाए हुए फलों को उन्हीं के अनुसार उगाकर तथा पकाकर उनको भोजन कराया। ऋषि इस पर अत्यन्त प्रसन्न हुए और पांडवों को आशीर्वाद देकर विदा हुए।

संख्या १६२ ए. दोहापचीसी, रचयिता—विशेश्वर कवि, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० देवी प्रसादजी, स्थान—हरनाथपुर, डा०—इटावा, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ दोहा पचीसा लिष्यते ॥

प्रथमहि गुरु पद वन्दिके, गणपति शंभु मनाइ।
विशेश्वर दोहे चन्द यह, कागज लिखौं बनाय ॥ १ ॥
नर नारायण ना हरि भज्यो, कीन्हों देह सिंगार।
विशेश्वर अंत में देह को, पूछत नाहिं चमार ॥ २ ॥
चील झपट्टा मीच है, रही शीश मड़राय।
विशेश्वर याही मीच में, लेहु राम गुण गाय ॥ ३ ॥
विशेश्वर गज रथ पालकी, धरी अशर्फी लाख।
आवेंगी केहि काम तव, जब मूंदेगौ आँख ॥ ४ ॥
गाड़ि गाड़ि सब धन धर्‌यो, दिहौ न खायो आप।
विशेश्वर वोदत डरत फिर, मानौ बिच्छू साँप ॥ ५ ॥
दादे पर दादे सकल गए, गए छोड़ि संसार।
विशेश्वर जीवन आपको, जानत वर्ष हजार ॥ ६ ॥
विशेश्वर नर तन पायकै, भजिये राम सवेर।
चढ़िगो तीर कमान पर, तब छूटत क्या देर ॥ ७ ॥

अंत—

जीभ धरे पर स्वाद है, निगाल गए सब वादि।
विशेश्वर षट रस छोड़ि कै, कीजै हरि पद यादि ॥१९॥
राम चरण विश्वास दृढ़, पर दुख दुखी अमान।
विशेश्वर लक्षण साधु के, ज्ञान विराग निधान ॥२०॥
विशेश्वर साँचे साधु को, कहो न कड़वी बात।
मारि विभीषण वंश गो, जस रावण की लात ॥२१॥
विशेश्वर भगवद्दास को, नहिं कीजै अपमान।
दुर्वासा को अंबरीष हित गयो असह्य गुमान ॥२२॥
विशेश्वर घर को वास भल, राम राम सों हेत।
घर को छोड़ि फकीर में,
वाहर गोड़त खेत ॥२३॥
विशेश्वर शोभा डीउ की, शील समान न आन।
विना शील को पील पर, जानिय वारु समान ॥२४॥
चिदानंद रघुवंश मणि, शरण हौं वारम्बार।
विशेश्वर दीन मलीन को, खेइ करो मो पार ॥ २ ॥

॥ इति दोहा पचीसा ॥

॥ समाप्तः ॥

विषय—राम भक्ति विषयक २५ दोहों का संग्रह ।

संख्या १६२ बी. उल्था श्री सत्यनारायण, रचयिता—विशेश्वर कवि, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० देवीप्रसाद जी, स्थान—हरनाथपुर, डा०—इटावा, जि०—इटावा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ उल्था सत्यनारायण कथा ॥

॥ कवित्त ॥ १ ॥

ब्रह्म देव ऋषि सूत सौनिक सम्बाद कथा ।
कह्यो सत्य व्रत कलि महिमा अपार है ।
काशी वासी ब्राह्मण को दीन्ह्यो उपदेश आप—
कीन्हीं सत्यव्रत कथा सुनिये सुखसार है ॥
देखि एक विप्र व्रत बेंचि वोझ मोल पाय,
कीन्हीं सोई व्रत कथा आइ लकड़हार है ।
उल्का मुख राजा भार्जा सहित सो वृत कीन्ह्यो ।
विशेश्वर जग लीन्ही आनन्द विहार है ॥ १ ॥

अंत—

॥ कवित्त ॥ २ ॥

व्रती भूप देखि कै वनिक व्रत कथा मानि,
पायो कछु काल गये कामिका उदार है ।
नारिसन कह्यो वृत करिहौं विवाह उक्त,
व्याहौ परि भूलि गयो वाणिज व्यपार है ।
सहित जामात्र चन्द्र केतु नग्र दुख पाय,
फिरयो वृत फल माल लादि नाव भार है ।
दण्डी साप कन्या का प्रसाद त्याग पायो फल,
विशेश्वर व्रत करि सुख अधिकार है ॥ २ ॥
प्रथम प्रसाद त्याग पाइ फल वग ध्वज,
व्यापि फेरि गोपन समाज सुख पायो है ।
सहित कलित्र पुत्र कन्यों संसार सुख,
अन्त काल सत्यदेव धामहिं सिधायो है ।
नर भौ सागर को होत पार कथा सुनि,
देत मन वाँछित जो शरण में आयो है ।
मिटै नेत्र रोग धुंध आदिक कृपाल चित,
विशेश्वर नाथ तव हाथ ही विकायो है ॥ ३ ॥

॥ समाप्तम् ॥ शुभम् ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—सत्यनारायण व्रत कथा का केवल तीन कवित्तों में संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—इस विवरण पत्र में समस्त ग्रंथ अविकल रूप से उद्धृत कर दिया गया है।

संख्या १६२ सी. कृष्णपदाष्टक, रचयिता—विशेश्वर कवि, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८ X ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० देवी प्रसादजी, स्थान—हरनाथपुर, पो०—इटावा, जिला—इटावा।

आदि— श्री गणेशाय नमः॥ अथ कृष्णपदाष्टक लिष्यते॥

॥ भजन १ ॥

सखी हम ल्याउव श्याम मनाई॥

नन्द ववा सुत सहित कूवरी आनव रथ वैठाई॥ १॥
देश देश के भरे गुनियन पठउव वेगि वुलाई।
करो प्रसन्न कृष्ण कूवरि कौं कूवर सूध कराई॥ २॥
साढ़ी सहित दूध दधि माखन प्रेम समेत खवाई।
करि श्रृंगार रास रस क्रीड़ा राखव व्रजहि रिझाई॥ ३॥
मान गुमान सानि सव परिहरि करवै प्रीति दृढ़ाई।
वृज वनितन को देखि विशेश्वर प्रीति रहत लगाई॥ ४॥ १॥

॥ भजन २ ॥

ऊधो हम का जोग सिखावत।
जिनके घर में कामधेनु है तिनहिं दरिद्र सतावत॥ १॥
हम नन्द नन्दन संग केलिकरि अंतर फुलेल लगावत।
अव सव वैठि गनै गुरिया नित अंग विभूति सुहावत॥ २॥
हम ब्रजवाला माला लेवें आभूषण सौतिन पहिरावत।
धन्य अहैं महराज द्वारिका नाहक तुमको वृजहि पठावत॥ ३॥
मन हमरो लै गयो सामरो, दूसर मन कहँ पावत।
विशेश्वर गोपी प्रेम मगन ह्वै हरिचरनन चितलावत॥ ४॥ २॥

॥ भजन ३ ॥

ऊधो जोग न जानत वाला॥

प्रीति वढ़ाइ रीति करि मोहन कहत डोलावन माला॥
हास विलास रास करिकै सब अब ओढ़ै मृगछाला॥ १॥
करि श्रृंगार आभूषण नाना ओढ़ा शाल दुशाला।
अब हम काधौं काह वदा है अंक लिखे विधि माला॥ २॥

हम सब अंग विभूति लगावैं कुवरी को करव निहाला ।
तुमका पठवत लाज न आई धन्य अहैं नँद लाला ॥ ३ ॥
वृज वन के द्रुमलता सुखाने देखहु वृज को हाला ।
विशेश्वर गोपी तरसि रही सब दर्शन देहु कृपाला ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ भजन ४ ॥

ऊधो सूधो स्याम कहावै ।
नंद यशोमति पालि वड़ौ करि साँढ़ी षीर पिलावैं ।
ताको त्यागित देर न कीन्ही छोड़ि द्वारिका जावैं ॥ १ ॥
वृज वनितन संग केलि किही वहु अपने साथ नचावैं ।
सो सुधि भूलिगयो मनमोहन लिखिलिखि जोग पठावै ॥ २ ॥
वृन्द्रावन गौअन के पीछे मुरली मधुर बजावै ।
अब तो रीझि परे कूवर पर सारी रात गँवावैं ॥ ३ ॥
माया तिलक जोग जप मुद्रा हमका एक न भावै ।
मन हमरौ लै गयो साँवरो विशेश्वर गुन गावै ॥ ४ ॥ ४ ॥

मध्य—

ऊधो साधो श्याम खरे ।
अब लग जोग सिखावन पठयो तुम वृज पाँव धरे ।
योग विराग ज्ञान तप के घट लाग्यो मनहु भरे ॥ १ ॥
अब महराज द्वारिका वनि कै कूवरि लागि गरे ।
तुलसी माला पहिर बिलैया झपटि मूश पकरे ॥ २ ॥
हम सब गोपिन ज्ञान सिखावत आपनि सुधि विसरे ।
दान दही माखन चोरी करि नाचत कर पकरे ॥ ३ ॥
सुफलक सुत नंद ववा सो कह्यो हाल हमरे ।
विशेश्वर दासी प्रेम पियासी दर्शन देहु हरे ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ भजन ६ ॥

माधो वृज की दशा निराली ।
जव हमको व्रज आवत देखा धाई मनहु मराली ॥ १ ॥
नाथ वियोग भई दुर्वल जस विन जल सूखत साली ।
तिनकी दशा देखि मधुसूदन ज्ञान योग गयो खाली ॥ २ ॥
निशि वासरनु मही को ध्यावत गावत फिरत विहाली ।
अविरल भक्ति देखि गोपिन की दरस देहु वनमाली ॥ ३ ॥
कहत सँदेश दूरि चलि आई हम सब उनकी पाली ।
विशेश्वर व्रज वालन के ऊपर कृपा करौ अव हाली ॥ ४ ॥ ६ ॥

अंत—

॥ भजन ७ ॥

ऊधो हमैं वहुत वृजभावा ।

नन्द ववा अरु मातु यशोमति प्रेम सहित खिलावा ॥ १ ॥
मेवा मिसरी दही दूध सब सादी सहित खवावा ।
प्यार दुलार कीन वहु भाँतिन पालन माहि झुलावा ॥ २ ॥
वृन्दावन मिली गोपसखा सब गौवैं वहुत चरावा ।
वृज वनितन के संग केलि करि मुरली मधुर बजावा ॥ ३ ॥
जो सुख भयो गोप गोपिन से तौन यहाँ नै पावा ।
विशेश्वर वृन्द्रावन की शोभा वहुत भाँति हरि गावा ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ भजन ८ ॥

ऊधो वृज वैंकुंठ से भारी ।

विद्रुमलता कूल कालिन्दी देखत विपति विसारी ॥
चन्द्रवदनि मृग शावकिलोचनि विधि करतब से न्यारी ।
वृज वनितन को रूप विलोकत मार नारि गई हारी ॥ २ ॥
विपिन करील कोकिला कुहकत सुखी चराचर झारी ।
सुरति होति व्रज की निशिवासर हमहिं गोपिका प्यारी ॥ ३ ॥
वृज की भूमि घूमि जो आवत पावत दरस करारी ।
विशेश्वर करुणासिंधु भक्त हित नरतन धरयो मुरारी ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ इति श्री कृष्ण पदाष्टक ॥
॥ सम्पूर्णम् ॥ शुभम् ॥
॥ भूयात् ॥

विषय—उपालम्भ सहित कृष्ण को मना लाने की गोपियों की प्रतिज्ञा, उद्धव का ज्ञानोपदेश, व्रज वनिताओं की विविध उक्तियों द्वारा उद्धव का प्रभावित होना और कृष्ण से उनके उत्कृष्ट प्रेम की प्रशंसा करना एवं उनको दर्शन देकर प्रसन्न करने की प्रार्थना करना, उद्धव की प्रार्थना सुन कर कृष्ण का व्रज और व्रज वनिताओं की प्रशंसा करना ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ इस विवरणपत्र में अविकल रूप से उद्धृत है ।

संख्या १६३ ए. कृष्णविलास, रचयिता—वृन्दावनदास या जन "विंदा", कागज—देशी, पत्र—६, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)-४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दुलीचंद जी, ग्राम—हानो, डा०—कोसी, जि०—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कृष्ण विलास लिषते ॥ सारद चरण सुमिरि के गाऊं कृष्ण विलास । हरे सकल मल वासना वाढ़े भक्ति हुलास ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

अभिमन नाउ गोप एक अहे,
सुनंद महेर सों नातो रहे ॥ २ ॥
ताकों श्री वृषभान दुलारी,
ब्याही गई परम सुकुमारी ॥ ३ ॥
ताके हित भूषन पट आनी,
धर पिटारी व्रज पतिरानी ॥ ४ ॥
पूछत हरि मइया ढिग आये।
यामे कहा मो देय बताये ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

चूम वदन मुष चंद्रमा बोली जसुमति रानी।
कहा काम तोकों परो सुत षेलो सारंगपानी ॥ ६ ॥

चौपई

अंत-— पुनि कुंवरि संग रसमाते। विहरत कबहु न अघाते ॥
भुज दृढ़ाय जोवन मदमांते। डोलत भमन महल लड़कांते ॥ ५० ॥

× × ×

दोहा

अलष लड़ेतो तुम कियो वाने यह धसि जावे।
अहो नंद वहि वरजिले नाहि कियो आपनो पावे ॥ ५८ ॥
अलषलड़ेती लाड़ली अलष लड़ेतो लाल।
विंदावं सषी भा करि सेओ पद सवकाल ॥ ५९ ॥

इति श्री कृष्न विलास संपूरन

विषय—अभिमन नामक एक गोप से श्री राधिका जी का विवाह कर दिया गया था। वह गोप नन्द जी का संबन्धी था। एक दिन यशोदा जी ने संबंध के नाते कुछ वस्त्र और आभूषण एक पिटारी में बन्द करके राधिकाजी को भिजवाए। श्री कृष्ण ने अपने सखाओं से मिलकर किसी तरह चालाकी से उन वस्त्राभूषणों को निकाल लिया और स्वयं उसमें बैठ गए। अभिमन उस पिटारी को सिर में रखकर राधिका जी के पास ले गया और कहा कि इसमें नन्दरानी ने तुम्हारे लिये भेंट दी है।

पश्चात् जब वह बाहर चला गया तो पिटारी खोली गई। परन्तु वस्त्राभूषणों के स्थान पर श्री कृष्ण को बैठा पाया। पहले तो सब बड़े क्रुद्ध हुए; किन्तु अंत में श्री कृष्ण ने राधिका जी और अन्य सखियों को अपने वश में कर लिया। श्री कृष्ण रात्रि वहीं बिता देते हैं। सुबह जाते समय अभिमन देख लेता है और क्रुद्ध होता है। वह नन्द जी से श्री कृष्ण को समझा बुझाकर रखने के लिये कहता है तथा उसकी बात का पालन न करने पर दुष्परिणाम का भय दिखलाता है।

संख्या १६३ बी. गोकुललीला, रचयिता—वृन्दावनदास या 'जन विंदा', कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—६३ × ४३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रमणलाल जी, ग्राम और डाकघर—फरैह, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री कृष्णाये नमः

॥ अथ गोकुल लीला लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

गुरू गणेश पद सुमिरि कें, सारद कूं सिर नाऊं।
भक्त अनन्य कृपा करैं तव कछु हरि गुन गाऊं ॥ १ ॥
बाल चरित्र गोपाल के अद्भुत कहौं बनाय।
जगत कूप में परैं जन तिनके हिये सिराय ॥ २ ॥
एक दिना नव लाल कौ जसु आँगन लै वैठाय।
लगे लाल जव षेलिवे लगि गइ टहल कूं माय ॥ ३ ॥
कंचन गडुवा द्रिष्टि परिगये लाल तहाँ धाय।
रिंगसत रिंगसत चलि गये दयो लाल ढरकाय ॥ ४ ॥
फैलि गयो जल भवन में षेलत जसुमति तात।
छोटे छोटे कर षेल पर सनि रहे कोमल गात ॥ ५ ॥

अंत—

बाल कुमार यौगंद्र लाल के कहे चरित सुष दैंन।
गुरु प्रताप साध की संगति कहे जथामति ऐन ॥ ३७ ॥
रास विलास वन में किये वैस किसोर कन्हाय।
गोपीन संग क्रीड़ा करी "जन विंदा" बलि जाय ॥ ३८ ॥
जो यह लीला साषई सुने गुने चित्त दै कोय।
भक्त समाज आदर मिलैं गोविंद विषैं रति होय ॥ ३९ ॥

इति श्री वृन्दावन दास कृत गोकुल लीला संपूर्ण समापते ॥

विषय—श्री कृष्ण जी के बाल्यकाल और कुमारावस्था के चरित्र वर्णन किए गए हैं।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का नाम 'जन विंदा' है जैसा अंत के ३८वें दोहे से पता चलता है। परन्तु पुष्पिका में 'वृन्दावन दास' दिया है। सुप्रसिद्ध हितानुयायी चाचा वृन्दावनदास से ये भिन्न हैं या अभिन्न, यह नहीं कहा जा सकता। 'जन' शब्द से तो विदित होता है कि ये 'चाचा जी' से पृथक् ही हैं। क्योंकि 'हित' के बदले इन्होंने अपने नाम के साथ 'जन' शब्द जोड़ा है जहाँ कि 'हित' शब्द जोड़ने में कोई बाधा नहीं थी। किन्तु यह भी संभव हो सकता है कि हितानुयायी होने के पहले ये 'जनविंदा' ही रहे हों और प्रस्तुत रचना इनकी प्रारंभिक काल की हो। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं।

संख्या १६४ ए. सुघर सुनारी लीला, रचयिता—हित वृंदावनदास (स्थान, वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—५½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० शिवलालजी, स्थान व डा०—सौनई, जि०—मथुरा ।

आदि— श्री गणेशाय नमः

॥ राग गौरी ॥

तन साँवरी सुघर सुनारी ।

रतन जटित के विछिया लाई नाद परम रूचिकारी ॥ टेक ॥
इनको शब्द जु परेगो मीत के कान ।
मन कौ पैंचि जुलाइ है इनमें सुजंत्र वलवान ॥ १ ॥
वड़े नगर हौं वसति हौ मो मैं वड़ो गुमान ।
राज भवन ही वेचि हौं जहाँ वड़ौ पाइ हौं मान ॥ २ ॥
सबही सौं यौं कहति है वैठी पनघट वाट ।
ये विछिया सोइ लेहिगी विधि ऊँचों रच्यौ ललाट ॥ ३ ॥
वूझति हैं व्रजभाम सव कहा कहा तो पै साज ।
बेचे क्यौं न बाजार में कहा मारग रच्यौ समाज ॥ ४ ॥

अंत—

दग आलस आलस जुमन आलस पूरत वैन ।
धवल महल लै जाय कै सषि तहाँ करावत सैन ॥६२॥
नउना सौरभ धरैं भाजन धरि ध्यान ।
चरन पलोटति रूप हित अलि का उरझवति रसगान ॥६३॥
श्री हरिवंश प्रसाद वल वरनी विवि हिय लाग ।
वृंदावन हित वारनैं सुषभीने जुगल सुहाग ॥६४॥

इति सुघर सुनारी लीला संपूर्णम् ॥

विषय—इसमें श्री कृष्ण के एक छद्म वेश का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है :—

एक दिन श्री कृष्ण एक साँवरी युवती का रूप धारण कर एक डिब्बा में नाना प्रकार के गहने आभूषण धर कर उन्हें बेचने के निमित्त वरसाने को गए।

ललिता ने गहनों को देखकर राधाजी से इनका परिचय कराया। राधा साँवरी के रूप पर अति प्रसन्न हुई और उसको अपनी सखी बनाया। उससे सब आभूषण मोल ले लिए। किंतु डब्बा खोलने के समय गहनों के साथ बाँसुरी दिखाई दी जिससे राधा तथा उसकी सखियों को उस साँवरी सखी पर कृष्ण के होने का संदेह हुआ। निदान सखियों ने उसके सारे स्त्री भेष को अलग कर दिया और श्री कृष्ण अपने असली रूप में प्रकट हुए। फिर क्या था, नाना प्रकार के हास्य कौतुक होने लगे तथा राधा कृष्ण का मिलन हुआ।

संख्या १६४ बी. अष्टयाम समय प्रबंध, रचयिता—हित वृंदावनदासजी (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—४१, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११९९, पूर्ण, रूप—नया, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३० वि० (१७७३ ई०), प्राप्ति स्थान—पं० भगवत प्रसादजी ज्योतिष रत्न, स्थान—राधाकुण्ड, जि०—मथुरा।

आदि—श्री राधावल्लभो जयति ॥ श्री हित हरिवंश चंद्रो जयति ॥

अथ अष्टयाम समय प्रबंध लिष्यते ॥

प्रथम से यह नौम प्रबंध है ।।

प्रथम मंगल समय प्रात पच्चीसी वरणन ॥

॥ रागभैरों ताल चर्चरी ॥

रसिक मणि चक्रवै वंदियै भोर भल।

कृपा की अवधि अरू अवधि रसदान मैंरे सुमति नर समझि वेगि परिचरण तल ॥
परचि हैं राधिका लाल इन शरण तें व्यासकुल सुधाधर पोषिकरे उर अमल ॥
गाय रे गाय गौरांग कमनीय चरित तोहि अपनाय हैं दया जिनके सवल ॥
मानुषी जनम कौ लाभ लहि कहि सुयश पाइ हैं वास कानन महारम्य थल ॥
वृंदावन हित रूप भींज रस भजन मैं निगम दुर्लभ वदित पाइ हैं सोजु फल ॥ १ ॥

अंत—

दोहा

सात पचीसी पद लिखे समय पर धान।
मंगल ते लगि सैंन लौं कियो विचित्र वषान ॥
अठारह सै तीसा विदित नौमी माघ पुनीत।
गुरु वासर पुनि कृष्ण पक्षि कथी जुगल रसरीत ।।
अति सै कमनी काम वन सुमति भरनि कौ वास।
श्री राधावल्लभ सदन मधि भयौ प्रबंध प्रकाश ॥
सुमति यथा वरन्यौ जु मैं श्री हरिवंश प्रसाद।
वृन्दावन हित रूप यह दम्पति उर अह्लाद ॥
केलिदास हस्ताक्षरनि लिष्यौ रसिक प्रिय कृत्य।
गुरु भक्त सेवी जुगल तिन पद रज कौ भृत्य ॥

इति श्री नौम समय प्रबंध पद वंध पचीसी सात श्री बृंदावनदासजी कृत संपूर्ण ॥

विषय—श्री राधा कृष्ण (युगल सरकार) की सेवा करने में जो-जो कृत्य अष्टयाम तक किये जाते हैं उनका विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। कृत्यों के नाम निम्नलिखित हैं। प्रत्येक कृत्य २५–२५ पदों में वर्णन किए गए हैं:—

१—मंगल समय प्रात पच्चीसी ।
२—प्रात वन विहार तथा शृंगार समय पच्चीसी ।
३—श्री कुंजनि कौतुक तथा राजभोग समय पच्चीसी ।
४—श्री उत्थापन समय वन विहार तथा संध्या समय पच्चीसी ।
५—श्री रास उद्दीपन तथा रास पच्चीसी ।
६—श्री वन विहार चाँदनो कुंज बैठक पच्चीसी ।
७—श्री सैन समय सेज्या विहार पच्चीसी ।

॥ रचनाकाल ॥

अठारह सै तीसा विदित नौमी माघ पुनीत ।
गुरु वासर पुनि कृष्ण पक्षि कथी जुगल रसरीत ॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ स्वामी का कहना है कि जिस हस्तलेख से उन्होंने यह ग्रंथ उद्धृत किया है उसमें रचयिता के १२ अष्टयाम संगृहीत हैं । उनमें से यह नौवाँ अष्टयाम है । इसमें रचनाकाल संवत् १८३० दिया हुआ है । अपने नाम के आगे रचयिता ने 'रूप' शब्द लगाया है । इससे विदित होता है कि 'श्री रूपहित' इनके गुरु थे । साथ ही श्री हीरा सखि के गुरु भी श्री रूपहित ही विदित होते हैं; क्योंकि गुरु का गुरु सहचरि के भाव में नहीं लिया जा सकता (देखिए चतुर्थ अष्टयाम, हीरा सखि कृत) । श्री हित वृन्दावन-दासजी का समय विदित हो जाने के कारण श्री हीरा सखि का भी यही समय समझना चाहिए ।

संख्या १६५. रास पंचाध्याई, रचयिता—श्री व्यास जी या हरिराम व्यास (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९६९ वि०, प्राप्तिस्थान—गो० श्री हित रूपलाल जी, अधिकारी, श्री राधावल्लभ मन्दिर, वृन्दावन, मथुरा ।

आदि—श्री हित हरिवंश चन्द्रोजयति ॥
अथ रासपंचाध्यायी श्री व्यासु जी कृत ॥

॥ तृपदि छंद ॥

सरद सुहाई आई राति । चहुँ दिसि फूल रही वन जाति ॥
देषि स्याम मन सुष भयो ।
ससि गोमंडित जमुनाकूल । बरषत विटप सदा फल फूल ॥
त्रिविध पवन दुष दवन है ॥
श्री राधारवन बजायौ बैंन । सुनि धुनि गोपिन उपज्यो मैंन ।
जहाँ तहाँ ते उठि चली ॥

चलत न काहू दियौ जनाव । हरि प्यारे सौं वाढ्यौ भाव ।
रास रसिक गुन गाइहौं ॥ १ ॥

घर डर विसरयौ वढ्यौ उछाहु । मन चीत्यौ पायौ हरिनाहु ।
ब्रजनाइक लाइक सुन्यौ ॥
दूध पूत की छाड़ी आस । गोधन भरता किये निरास ।
सांचो हित हरि सौं करयौ ॥
षान पान की करी न संभार । हिलग छुड़ाई ग्रह व्यौहार ।
सुधि बुधि मोहन हरि लई ॥
अंजन मंजन अंग सिंगार । पट भूषन छूटे सिरवार ।
रास रसिक गुन गाइ हौं ॥ २ ॥

एक दुहावत तैं उठि भागि । और चली सोवत तैं जागि ॥
उतकंठा हरि सौं वढो ॥
उपनत दूध न धरयो उतारि । सीझी थूली चूल्हैं डारि ॥
पुरुष तज्यौ जैंवत हुत्यौ ॥
पय प्यावत वालक धरि चली । पति सेवा कछु करी न भली ॥
धरयौ रह्यौ जैंवन भलौ ॥
तेल उवटनौ न्हैवौ भूलि । आगन पाई जीवन मूलि ॥
रास रसिक गुन० ॥ ३ ॥

आँजत एक नैन विसरयो । कटि कंचुकी लहंगा उर धरयौ ॥
हार लपेट्यौ चरन सौं ॥
श्रवननि पहिरे उलटे तार । तिरनी पर चौकी सिंगार ॥
चतुर चतुरता हरि लई ॥
जाकौ मन मोहन हरि लियौ । ताकौ काहू कछु न कियौ ॥
ज्यौं पति सौं रति तिय करै ॥
स्यामहि सूचत मुरलीनाद । सुनि धुनि छूटे विषय सवाद ॥
रास रसिक गुन गाइहो ॥ ४ ॥

माता पिता पति रोकी आनि । सही न पिय दरसन की हानि ।
सबही कौ अपमानि कै ॥
जाकौ मन जासो अटक्यौ । रहे न छिन ता विन हटक्यौ ॥
कठिन प्रीति कौ फंद है ॥
जैसे शलिता सिन्धुहिं भजै । कोटिक गिरि भेदत नहि लजै ॥
तैसी गति तिनकी भई ॥
एक जु घर तैं निकसी नहीं । हरि करूणा करि आई तहीं ॥
रास रसिक० ॥ ५ ॥

नीरस कविन कहै रसरीति, रसिकहि लीला रस परतीति ॥
यह मति सुकमुष जानिवौ ॥

ब्रज वनिता आईं पिय पास । चितवनि नैंननि भृकुटि विलास ॥
हंसि वूझि हरि मान दै ॥

नीकैं आईं मारग मांझ । कुल की नारि न निकसैं सांझ ॥
कहा कहौ तुम जोग्य हौ ॥

ब्रज की कुशल कहौं वड़भाग । क्यौं तुम आईं सुभग सुहाग ॥
रास रसिक गुन० ॥ ६ ॥

अजहूं फिरि अपने घर जाहु । परमेश्वर करि मानौ नाहु ॥
वन मैं वसिवौ निसि नहि ॥

वृन्दावन तुम देष्यौ आइ । सुषद कमोदनि प्रफुलित जाइ ॥
जमुना जल सीकर घनै ॥

घर मैं जुवति धर्महि फवै । ताविन सुत पति दुःषित सवै ॥
यह रचना विधिना करी ॥

भरता की सेवा सुषसार, कपट तजैं छूटै संसार ॥
रास रसिक गुन० ॥ ७ ॥

वृद्ध अभागौ जो पति होय । मूरष रोगी तजै न जोइ ॥
पति न अकेलो छांड़ियै ॥

तजि भरतारहिं जारहिं लीन । ऐसी नारि न होइ कुलीन ॥
जस विहून नरकहि परै ॥

वहुत कहा समझाऊं आज । मोहू ग्रह में कछू न काज ॥
तुम तैं को अति जानि है ॥

पिय के वचन सुनत दुषपाइ । व्याकुल धरनि गिरीं मुरझाइ ॥
रास रसिक गुन० ॥ ८ ॥

दारुन चिन्ता वढ़ी न थोर । क्रूर वचन कहे नन्द किशोर ॥
और सरन सूझै नहीं ॥

रूदन करत नदि वढ़ी गभीर । हरि करिपा विन को जानै पीर ॥
रहरि तरिया विन को जावै तीर ।
कुच तुंवनि अवलंव दै ॥

तुम्हरी वहुत हुती पिय आस । विन अपराधहिं करत निरास ॥
कितव रूषाई छांडि दै ॥

निठुर वचन जिनि वोलो नाथ । निज दासी जिनि करौ अनाथ ॥
रास रसिक० ॥ ९ ॥

मुष देषत सुष पावत नैन । श्रवन सिरात सुनत कल वैन ॥
तुव चितवनि सर्वसु हरयौ ॥

मंद हसन उपजायौ काम । अधर सुधा दै करि विश्राम ।
वरषि सींचि बिरहानिले ॥

जवतैं पिय देषे ये पाय । तवतैं हमै न और सुहाय ॥
कहा करैं व्रज जाइकैं ॥

सजन कुटुम्ब गुरू करैं न कानि । तुम बिमुषे पिय आतम हानि ।
रास रसिक ॥ १० ॥

तुम हमकौ उपदेस्यौ धर्म । ताको हम जान्यौ नहिं मर्म ॥
हम अबला मति हीन सब ॥

दुषदाता ग्रह सुत पति वंध । तुम्हरी कृपा विन सव जग अंध ।
तुमसौं प्रीतम और को ॥

तुमसों प्रीति करै जे धीर । तिनहिं न लोक वेद की पीर ॥
पाप पुन्य तिनकैं नहीं ॥

आस पास बंधी हम लाल । तुम विमुषहि ह्वै हैं वेहाल ।
रास रसिक० ॥ ११ ॥

बैनु बजाई बुलाई नारि । सिर धरि आई कुल की गारि ।
मन मधुकर लंपट भयो ॥

सोई सुन्दर परम सुजान । आरज पंथ सुनैं सुनिगांन ॥
तो देषत पुरुषौ लजै ॥

वहुत कहा बरनौ यह रूप । और न त्रिभुवन परम अनूप ॥
वलिहारी या रूप की ॥

सुन विनती मोहन दे कान । अपजस है कीनें अपमान ।
रास रसिक० ॥ १२ ॥

विरद तुम्हारो दीन दयाल । कुच पर कर धरि कर प्रतिपाल ।
भुज दंडनि षंडहु विथा ॥

जैसे गुनि दिषावत कला । कृपन करै नहि हलहूँ भला ॥
सदय हृदय हम पर करो ॥

व्रज की लाज बड़ाई तोहि । सुष पुजवत आई सव सोहि ॥
तुमहि हमारी गति सदा ॥

दीनवचन जुवतिन जव कहे । सुनि हरि नैननि नीर वहे ॥
रास रसिक० ॥ १३ ॥

हरि बोले हँसि ओली ओड़ । कर जोड़े प्रभुता सब छोड़ ॥
हौं असाधु तुम साधु सब ॥
मोकारन तुम भई निसंक । लोक वेद वपुरा को रंक ॥
सिंघ सरन जंबुक ग्रसै ॥
विनु दामनि हौं लीनौ मोल, करत निरादर भई न लोल ॥
आवहु हिलि मिलि षेलिये ॥
मिलि जुवतिन घेरे व्रजराज । मनौ निसाकर किरनि समाज ॥
रास रसिक० ॥ १४ ॥

हरिमुष देषत फूले नैन । उर उमगे सुष कहत वनैन ।
स्यामहि गावत काम वस ।।
हंसत हंसावत करि परिहास । मन मैं कहत करौं अव रास ॥
गहि अंचल चंचल चल्यौ ॥
लायो कोमल पुलिन मंझार । नषसिष नटवत अंग सिंगार ॥
पट भूषन जुवतिनु सजे ॥
कुच परसत पुजई सब साधु, सुषसागर मन वढ्यौ अगाध ।।
रास रसिक० ॥ १५ ॥

रस में विरस जु अंतर ध्यान । गोपिन कै उपज्यौ अभिमान ॥
विरह कथा में कौन सुष ॥
द्वादस कोस रास परमान । ताकौं को करि सकै वषान ||
आसपास जमुना झिली ॥
तामें मान सरोवर ताल । कमल विमल जल परम रसाल ||
षग मृग सेवैं रस भरे ॥
निकट कलपतरू वंशी वटा । श्री राधा रतिग्रह कुंजनि अटा ॥
रास रसिक० ॥१६॥

नव कुंकुम जल बरषत जहाँ । उड़त कपूर धूरि जहाँ तहाँ ।।
और फूल फल को गनैं ॥
तहाँ स्याम घन रास जु रच्यौ । मरकत मनि कंचन सौं खच्यौ ॥
सोभा कहत न आवई ॥
जोरि मंडली जुवतिनि वनी । द्वै द्वै विच आये हरि धनि ॥
अद्भुत कौतुक प्रगट कियौ ॥
घूंघट मुकुट विराजत सिरनि । ससि चमकत मानो कोटिक किरनि ॥
रास रसिक० ॥१७॥

मनि कुंडल ताटंक बिलोल । विहँसत लज्जित ललित कपोल ॥
नकवेसरि नासावनीं ॥
कंठ सिरी गजमोतिनुहार । चारि चारि चुरीं कंकन प्रनकार ॥
चौकी दमकै उर लगी ॥
कौस्तुभ मनि तैं पोतिहि जोति ।
दामिनि हूँ तैं दसननि दोति ॥
सरस अधर पल्लव वनैं ॥
चिवुक मध्य रस साँवल विंदु ।
सबनि देषि रीझे गोविन्दु ॥
रास रसिक० ॥१८॥

नील कंचुकी मांडन लाल । भुजनि नवैया उर वन माल ॥
पीत पिछौरी स्याम तन ॥
सुंदर मुंदरी पहुँची पानि । कटि तट काछनि किंकनि वानि ॥
गुरु नितंव वैनी करैं ॥
तारा मंडल सूतन जघन । पाइनि पैजन नूपुर सघन ॥
नषन महावर षुलि रह्यौ ॥
श्री राधा मोहन मंडल मांझ । मनो विराजत संध्या सांझ ॥
रास रसिक० ॥१९॥

सघन विमान गगन भरि रह्यौ । कौतुक देषन जग उमरयौ ॥
नैन सफल सबके भए ॥
बाजत देव लोक नीसान । बरषत कुसुम करत सब गान ॥
सुर किन्नर जै धुनि करैं ॥
जुवतिन विसरे पतिगति देषि । जीवन जनम सफल करि लेषि ॥
यह सुष हमकौं है कहाँ ॥
सुंदरता गुन गनकी षानि । रसना एक न परत वषानि ॥
रास रसिक० ॥२०॥

तिरपलेति सुंदर भामिनी । मानहु नांचत घन दामिनि ॥
या छवि की उपमा नहीं ॥
श्री राधा की गति पिय नहि लषि । रस सागर की सींवां नषी ।
बलिहारी यह रूप की ॥
लेत सुघर औघर मैं मांन । दै चुबंन आकरषत प्रान ॥
मेटत मेटत दुष सबै ॥
राषति पियहि कुचनि विच वांनि । करवावति अधरामृत पांनि ॥
रास रसिक० ॥२१॥

भूषन वाजत ताल मृदंग । अंग दिषावत सरस सुधंग ॥
रंग रह्यौ न कह्यौ परै ॥
कंकन किंकनि नूपुर चुरीं । उपजत मिश्रित धुनि माधुरी ।
सुनहि सिराने श्रवन मन ॥
मुरली मुरज रवाव उपंग । उघटत सदा विहारी संग ॥
नागर सव गुन आगरौ ॥
गोपिन मंडल मंडित स्याम । कनक नीलमणि ज्यौं अभिराम ॥
रास रसिक० ॥ २२ ॥

पद पटकत लटकत लटवाहु । मोहन मटकत हसन उछाहु ॥
अंचल चंचल भूमिका ॥
मनि कुंडल तार्टक विलोल । मुष सुष रासि कहै मृदुवोल ।
गंडनि मंडित स्वेदकन ॥
चौंरी डोरी विगलित केश । घूमत लटकत मुकुट सुदेस ॥
कुसुम षिसत सिरतैं घनै ॥
कृष्ण वधू पावन गुन गाइ । रीझत मोहन कंठ लगाइ ॥
रास रसिक० ॥ २३ ॥

हरषत वैंनु वजायौ छैल । चंदहि विसरी घर की गैल ॥
तारागन मन में लजैं ॥
मोहन धुनि वैकुण्ठहि गई । नारायन मन प्रीति जु भई ॥
वचन कहत कमला सुने ॥
कुंज विहारी विहरत देषि । जीवन जनम सफल करि लेषि ॥
यह सुष हमकौं है कहाँ ॥
श्री वृंदावन हम तैं अति दूरि । कैसैं करि उडिलागै धूरि ॥
रास रसिक० ॥ २४ ॥

धुनि कोलाहल दुहुँ दिसि जाति । कलप समान भई सवराति ॥
जीव जंतु मय मंत सव ॥
उलटि वह्यौ जमुना कौ नीर । वालक वछ न पीवैं खीर ॥
राधा रवन ठगे सवै ॥
गिरिवर तरवर पुलिकित गात । गोधन थन तैं दूध चुचात ॥
सुनि षग मृग मुनि वृत धरै ॥
फूली महि भूल्यो गति पवन, सोवत ग्वाल तजत नहिं भवन ॥
रास रसिक० ॥ २५ ॥

राग रागिनि मूरति वंत । दूलहि दुलहिनि सरद वसंत ॥
कोक कला संगीत गुरु ॥

सप्त सुरन की जाति अनेक। नीकैं मिलिवन राधा एक।
मन मोह्यौ पिय कौ सुघर ॥
चंद्र वधुवनि के भेद अपार। नाचत कुंवरि मिलैं झपतार ॥
सवै कह्यौ संगीत मैं ॥
सरस सुमति धुनि उघटत शब्द।
पिकनि रिझावत गावत सुपद ॥
रास रसिक० ॥२६॥
श्रमित भई टेकत पिय अंस। चलत सुलप मोहन गति हंस।
तान मान मन मृगथके ॥
चंदन चर्चित गोरी वाहु। लेत सुवास पुलकि तन बाहु ॥
दे चुम्बन हरि सुष लह्यौ ॥
साँवल गौर कपोल सुचारु। रीझि परस्पर षात उगारु॥
एक प्रान द्वै देह हैं ॥
नाचत गावत सुषकी रचानि। राषति पियहि कुचन विचपांनि ॥
रास रसिक० ॥२७॥
अलि गावत पिय नादहि देत।
मोर चकोर फिरत संग हेत ॥
घन अरू जुन्हाई है मनौं ॥
कच कुच चिकुर परसि हँसि स्याम।
भौंह चलत नैननि अभिराम ॥
अंगनि कोटि अनंग छवि।
हस्तक भेद ललित गति लई।
पट भूषन तनकी सुधि गई ॥
कच विगलित वाला गिरीं ॥
हरि करुना करि लई उठाइ।
श्रम जल पोंछत कंठ लगाई ॥
रास रसिक० ॥२८॥
तिनहि लवाइ जमुन जल गये।
दूरि कियौ श्रम अति सुषि भये।
जल में खेलत रंग रह्यौ ॥
जैसे मदगज कूल विदारि,
ऐसे षेले संग लै नारि ॥
संक न काहू की करी ॥
ऐसे लोक वेद की मैंड। तोरि कुंवर षेल्यौ करि ऐंड ॥
मन में धरी फवी सवै ॥

जल थल क्रीड़त व्रीडत नही । तिनकी लीला परत न कही ॥
रास रसिक० ॥२६॥
कह्यौ भागवत सुक अनुराग । कैसे समझें विनवड़ भाग ॥
श्री हरिवंश कृपा विना ॥
व्यास आस करि वरन्यौ रास । चाहत हैं वृंदावन वास ॥
करि राधे इतनी कृपा ॥
निजदासी अपनी करि मोहि ।
नित प्रति स्यामा सेवहुँ तोहि ॥
नव निकुंज सुष पुंज मैं ॥
हरिवंशी हरिदासी जहाँ । हरिकरुना करि राषौ तहाँ ॥
नित्य विहार अधार है ॥
कहत सुनत वाढ़ै रसरीति,
श्रोतहि वक्तहि हरिपद प्रीति ॥
रास रसिक गुन गाई हौं ॥३०॥
इति श्री रासपंचाध्यायी श्री व्यासजी कृत सम्पूर्ण ॥
—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—श्री कृष्ण और गोपियों की सुप्रसिद्ध रासक्रीड़ा का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ की पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

तृतीय परिशिष्ट

(अ) अज्ञातनामा रचयिताओं की कृतियों के उद्धरण

(आ) अज्ञातनामा रचयिताओं की साधारण रचनाओं की नामावली
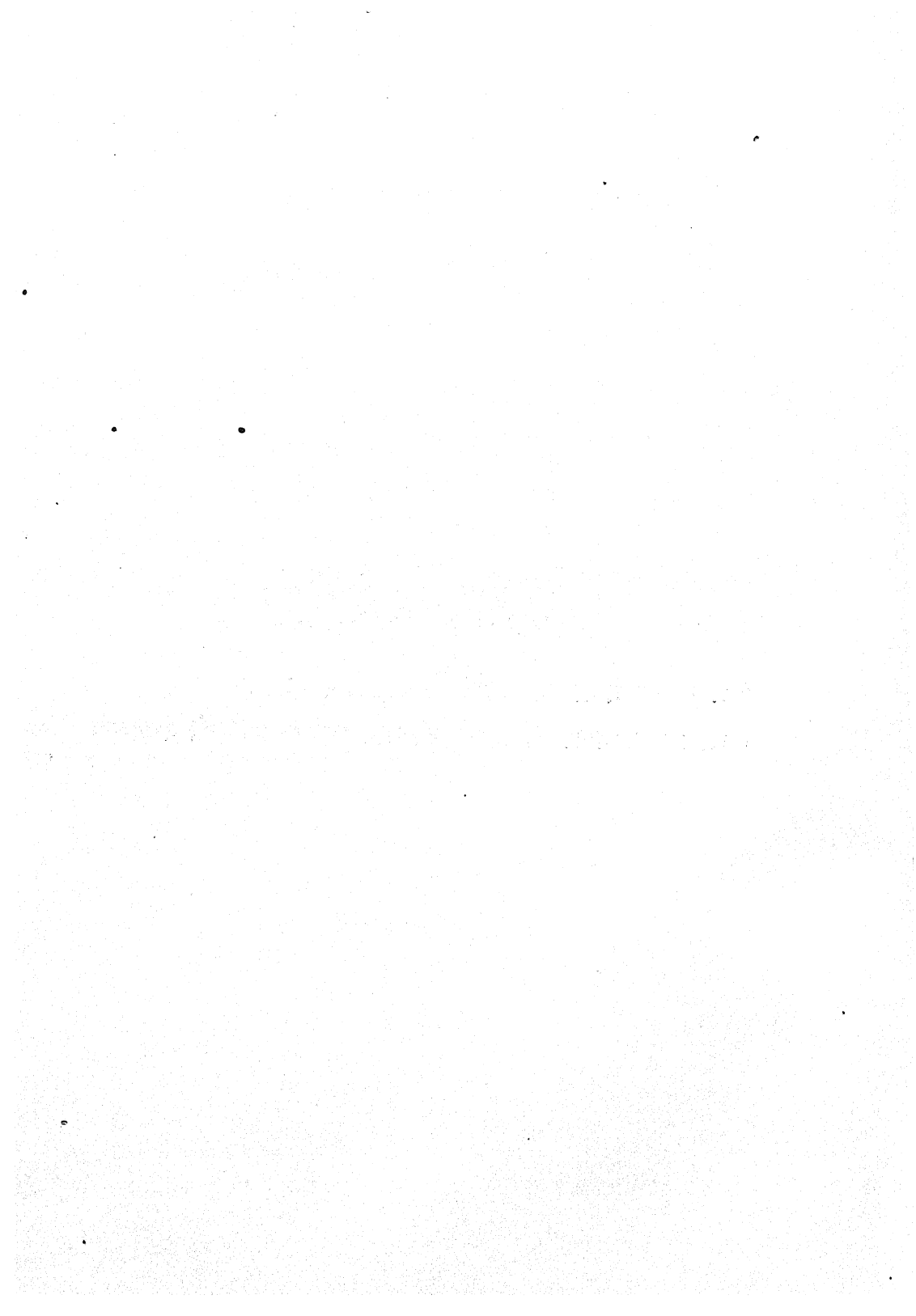
तृतीय परिशिष्ट (अ)

अज्ञातनामा रचयिताओं की कृतियों के उद्धरण

संख्या १६६. अमर प्रकाश या अध्यात्मप्रकाश, कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—६ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—गुरुमुखी, प्राप्तिस्थान—मास्टर रामस्वरूप जी, स्थान—माँट, पो०—माँट, जि०—मथुरा ।

आदि—......है । इड़ा अगन है पिंगला पानी है । सुषमा पवन है । यह तीन एक ठाईं रहते हैं । इस देही मै ये सुख के वीच कहते हैं । राम सो ये हाई है औ एकठा होते है । जहाँ राम दया वेणी संगम इसनान होता है । एड़े गुण है । राजस तामस सातक ये क्या कहे । ये ब्रह्मा विष्णु महेस औ देही के वीच एक असोक सरोवर है । सो कैसा है तिसके बीच कमलु है । तव आतम कहा । आसोक सरोवर जो है सो कैसा है । तव प्रमातमा कहा । असोक सरोवर जिहवा है । एक चरन कमल है । एक नाभी कमल है । एक हसत कमल है । एक नैन कमल है । यह चार कमल...........

अंत—

सोक का हल । औ भाउ भगत का षेल ।
औ गरीबी रखवाला । और । संजम की वाडू है ।
जो ऐसी खेतो हैइ तो जमे । जो ऐसी जुगतना हैइ तो
खेती उजड़ जाई । यह खेती इस प्राण पिंड में है ।
कहो जी ब्रह्मंड के विषै मुकत है अंड के विषै क्या
है । कहो जी । अंड सुध्य हैइ सो सभ ब्रह्मंड इस ही का
है । कहो अंड किस बात में सुध होता है कहो जी ।
अंड इही ब्रह्मांड में सुध होता है जो कुबुध
नाचित हैं । वै सुबुध ना छोडे या को घोर रहै ।
गु··· ··· ··· ··· ··· ··· (अपूर्ण)

विषय—आध्यात्मिक ज्ञान का विषय वर्णन किया गया है । मनुष्य की देह में सभी तत्वों का होना बतलाया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ गुरुमुखी में लिखा हुआ है, परंतु भाषा इसकी ठेठ खड़ी बोली है । यह सिख सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखता है । खेद है कि रचनाकाल ज्ञात न हो सका । लिपिकाल भी अज्ञात है । ग्रंथ खंडित है । लिपिकार ने लिखने में जहाँ तहाँ बहुत

अशुद्धियाँ की हैं जिससे अक्षर ठीक-ठीक पढ़ने में नहीं आते। ग्रंथ का नाम मालूम न हो सका। प्रत्येक पत्र की बाँईं ओर "अ०" और दाँईं ओर "प्र०" लिखा होने से मैंने इसका नाम "अमर प्रकाश" या "अध्यात्म प्रकाश" रख दिया है। यह सभा के लिये दान में प्राप्त कर लिया गया है।

संख्या १६७. वाल वजरंगी चरित्र, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० लल्लू प्रसादजी महेरे, स्थान—वाउथ, पो०—जसवन्त नगर, जिला—इटावा।

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥ अथ वाल वजरंगी चरित्र लि०॥

॥ दोहा ॥

एक रदन करिवर वदन, सुषमा सदन सवेश।
सदा वसो मेरे हृदय, मोदक अदन गणेश॥

॥ चौपाई ॥

जय वजरंग वली वर वीरा।
मर्कट विकट रूप रणधीरा॥
जय प्रभु असुर वंश वन आगी।
राम पदारविन्द अनुरागी॥
ज्ञान विधान नीति नय नागर।
वुद्धि रासि गुण विद्या आगर॥
वाल वृह्मचारी वलवन्ता।
तेज पुंज दृढ़ व्रत हनुमन्ता॥
अरुण वरण तन दीपति जागा।
अरिहि रौद्र जन कहँ अनुरागा॥
अरुण गदा कर काछन काछे।
एक रंग कपि सोहत आछे॥
करहु देव मम हृदय निवासा। जानि मोहि आपन लघु दासा॥
वरणहु वाल चरित्र तिहारा। भूत प्रेत भय नासन हारा॥

अंत—

॥ दोहा ॥

कछुक काल वीते तुमहिं, आय मिलहिं तँह राम।
मनुज रूप भुवि भार हर, पूर्ण वृह्म सुख धाम॥
गुरु आयसु धारि शीश तुरन्ता।
पम्पा पुरहिं चल्यो हनुमन्ता॥

सहजहिं वेगवन्त कपि राऊ।
पुनि नव सखा मिलन को चाऊ॥
तापै राम दरस की आसा।
पहुँचो वेगि वालि पुर पासा॥
समाचार रवि सुत जब पायो।
सहित समाज आपु उठि धायो॥

विविध भांति बहु आदर दयऊ। पौन सुतहिं स्वभौन लै गयऊ॥
एक रूप रंग एक स्वभाऊ। शील निधान दोऊ कपि राऊ॥
बाढ़ी प्रीति न अन्तर ठ ... ...

[शेष लुप्त]

विषय—हनुमान की उत्पत्ति का वर्णन, पवन के संसर्ग से उनकी माता केसरी की स्त्री—अंजनी को गर्भ होना और हनुमान का जन्म होना, बाल क्रीड़ा में प्रातः उदित होने वाले रवि को निगलना और अरुण का भाग कर इन्द्र को सूचित करना, उनका आकर हनुमान पर वज्र प्रहार करके सूर्य को छुड़ाना, हनुमान को मृतवत् देखकर पवन का क्रोध करना और बालक को लेकर बहने का कार्य छोड़ देना, ब्रह्मादि देवों की विनय और पवन का आगमन, ब्रह्मा का हनुमान को जीवित करना और उनके आदेश से इन्द्र, वरुण, कुवेर और अश्विनी कुमार तथा सूर्य का बालक को वरदान देना, पवन की प्रसन्नता, बालक की उद्दंडता और ऋषियों का शाप, सूर्य से विद्याध्ययन, और गुरु आज्ञा से पम्पापुर में निज गुरु-सुत सुग्रीव के पास आकर रहना।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में दोहा-चौपाइयों में श्री हनुमानजी की जन्म की कथा और बाल लीला का वर्णन किया गया है। बालक हनुमान की उद्दंडता से अङ्गिरादि ऋषि बहुत तंग आ गए और यथा शक्ति बालक होने के कारण उसे क्षमा करते रहे। उसके पिता केशरी से भी शिकायत की जिसने बालक को बहुत समझाया; किन्तु बालक के उपद्रवों में कमी नहीं हुई। तब ऋषियों ने उसे शाप दिया कि "तू अपने बल को भूल जायगा, किन्तु जब कोई स्मरण दिलाएगा तब तुझे पुनः अपने बल का भान हो जाएगा"। अभिशाप बालक के लिये वरदान हो गया। अब वह बहुत सुशील और साधु स्वभाव का हो गया। ऋषियों के पास बैठ कर धर्म चरचा सुनते-सुनते राम में उसका अनुराग हो गया। ऋषियों की अनुमति से सूर्य से विद्या पढ़ी और गुरु-आज्ञा से पम्पापुर आकर सुग्रीव के पास सम्मान पूर्वक रहने लगा। आगे का कुछ भाग लुप्त हो गया है।

संख्या १६८. वरवा, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हीरालाल जी शर्मा, स्थान—कुसुमरा, पोस्ट—कुसुमरा, जि०—मैनपुरी।

आदि—॥ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वरवा लि० ॥

हरि पद रुचिर तरुनिया, चढ़ मन मोर ।
तरि भवसागर अब हीं, दिन रहे थोर ॥ १ ॥

मोहन के सुख सौहन जौहन जोग ।
रूप असन अखियन को भस्मक रोग ॥ २ ॥
ऊँच जाति ब्राह्मणियां, वरणि न जाय ।
दौरि दौरि पा लागी, शीस छुआय ॥ ३ ॥

बड़ि बड़ि आँख बरनियाँ हीय हरिलेय ।
पतरी के अस डोभ करेजवा देय ॥ ४ ॥
घाट वाँट लै वानिन, हाट वईठ ।
कहत काहु नहिं जी जी वतियन मीठ ॥ ५ ॥

नीक जाति कुरमी की, खुरपी हाथ ।
अपने खेत निराये पिय के साथ ॥ ६ ॥
अहिरनि मन की गहरीं उतर न देय ।
नयना करैं मथनियाँ, मन मथ लेय ॥ ७ ॥

मध्य—परद वारतन नाजुक, कैथिन नारि ।
शंक धरैं घूंघट दग चलीं निहारि ॥ १७ ॥
अब रज करत लुहरिया पिय के पास ।
जाहि छुवत बिन जिय के लेत उसास ॥ १८ ॥
खेल फाग धन वहुरी धूरि उड़ान ।
गावो वालम वरत्रै ऋतु नियरान ॥ १९ ॥

निशि दिन वसै हिरदवा, मिलन न होय ।
जिमि पानी के चंदहि छुवै न कोय ॥ २० ॥
पात पात कर ढूंढ्यो, सब वन वीन ।
घटहि परे मो वालम परे न चीन ॥ २१ ॥
हाथ उपरिया रहि गई गिर गइ आग ।
घर की पौरि बिसरि गई गोहन लाग ॥ २२ ॥

अंत—पात पात कर लूटिस विपिन समाज ।
राजनीति यह कसि कसि कस ऋतुराज ॥ ३३ ॥
चलत न शोच करसि सखि सगुण सभाग ।
है ससुरारि तुम्हारिहू, घन वन वाग ॥ ३४ ॥
कारे वरण कोयलिया, कुहकत आन ।
अम्बा चढ़ि डरपावति, पिय विन जान ॥ ३५ ॥

भले भेंट बालम सन, भटकिह आय।
धाय धाय वन खाय, वेष नहिं जाय ॥ ३६ ॥
वालम चलत न भेंटे छतिया लाय।
सोई कसक करेजवा, कसकति आय ॥ ३७ ॥
वदरन धरी धनुहियाँ, करत अचेत।
बुंदियन के करिवाण, करेजवा देत ॥ ३८ ॥
नयना भीतर भितवा रहत जु ठाढ़।
निकसन कवहुँ न भेंटिस असमन गाढ़ ॥ ३९ ॥
हरद वरण मोरी देही, पियहि वियोग।
कोंन विथा मोहि, बूझउ वाउर लोग ॥ ४० ॥

॥ इति वरवै ॥

विषय—कुछ जातियों की स्त्रियों के स्वभाव और सौन्दर्यादि का वर्णन तथा वियोगिनी स्त्रियों की पति वियोग संबंधी उक्तियाँ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में चालीस बरवै छन्द संग्रह किए गए हैं। करीब-करीब आधे से कुछ अधिक बरवै ब्राह्मणी, वनियाइन, कैथिन तथा लुहारिन आदि जातियों की स्त्रियों के स्वभाव और सौन्दर्य के संबंध में हैं। शेष में विप्रलंभ शृंगार का वर्णन किया गया है। संग्रहकार का परिचय, ग्रंथ का रचनाकाल और लिपिकालादि अविदित हैं।

संख्या १६९. ब्रह्म जिज्ञासा, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० नंदलाल, मु०—बाजना, पो०—वाजना, जि०—मथुरा।

आदि—श्री रामाय नमः॥ अथ ब्रह्मजिज्ञासा लिष्यते॥ ॐ ब्रह्म एक सो चैतन्य। माया अचेत जड माया ब्रह्म को संजोग। जैसे वीरछ की छाया। व्रछ छाया सजीव नाही। व्रछ विन छाया होत नांही। माया की ओट ब्रंभ नाही सूझै। ब्रंभ की ओट माया नाहिं सूझैं। माया ऊपरि ब्रह्म ब्रह्म ऊपरि कोई नाहिं। येका येकी रमते ब्रंभ। ब्रंभ माया तन इछा भई। ब्रंभ की सकति तीन। अछया किया गीयान। माया की सकति तीन। संसै मिथ्या विप्रीत। ब्रंभ के नांव पांच। ब्रह्म कहिये। जीव कहिये काल कहिये। क्रम कहिये। सुभाव कहिये।

मध्य—

पंच ततु पचीस प्रकृति। ताकौ अरथ। मन पाणी को सरूप। वुद्धि प्रथी को सरूप। चित्त वाय को सरूप। अहंकार अगनि को सरूप। इति चतुर अंतसकरण कहावै। सवद आकास को सरूप सपरस (स्पर्श) वायकौ सरूप। रूप अगनि को सरूप। रस अपकौ सरूप। गंध प्रथी कौ सरूप। इति पंच तनमात्रा कहिये।

माया के सरीर दोय । येक सरीर को तत्त को । ताके नांव तीन सूक्षम कहिये । लिंग कहिये । जोति कहिये । येक सरीर पंदरह तत को । ताके नाम तीन । सथूल कहिये । दीरघ कहिये । बिराट कहिये ।

अंत—

माया तीन । उनमनी ब्रंभ वाच । पंदरह तत को विनसै । नौ तत को बासनाले औतरै । ये दोय सरीस वीन मै तव निरवाण पद का परापति होय । गंद्रयान्यय । अरहर घटिका न्याय । कुलील डंड न्याय । जम चक्र न्याय । क्रीट भ्रंग न्याय । लोहा चरका न्याय । गुलफ धन्य न्याय । सन्यास चारि । हंस प्रमहंस । वोय कुठचर इती श्री वीरंभ माया का नीरणै । पंब्रह्म को ।

॥ विचार । ब्ररम हंसगीनान पुरणसमापती ॥

विषय—माया और ब्रह्म का निर्णय किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—एक तरह से रचना सूत्र रूप में है । किसी विषय में विस्तार पूर्वक नहीं वर्णन किया गया है । लेख में मात्रा और शुद्धाशुद्धि का ध्यान नहीं रखा गया है । रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए हैं । एक जगह आगे एक स्वतन्त्र लेख की समाप्ति पर लछमन संवत ६८९९ है और दूसरी जगह संवत १८१०० है । तीसरी जगह पर ल० सं० १८१०० है । यदि इन तीनों में से एक का ठीक निश्चय हो जाय तो लिपिकाल मालूम हो सकता है ।

संख्या १७०. चित्तौड़ के घराने का ब्यौरा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—श्री पं० प्रभुदयालजी शर्म्मा, संपादक—सनाढ्य जीवन, इटावा ।

आदि—

श्री रामजी

सीध श्री चीतोड़ का घराणा री । एतातौ राजा पाछै दीनः पाछै रावलः पाछे राणा ॥

आसामीः	वरसः	दिनः	घड़ीः	पलः
१ राजा अजैवाहरम	१६	६७	५	०
२ राजा वैरंम	९	९	१०७	७
३ राजा वीजसठ	२०	०	७९	०
४ राजा का सेष	२५	१	१०	७
५ राजा सुरज	७	६	१००	७
६ राजा अषैतोष	१०	१	६१	३
७ राजा सासत	१५	१	७१०	६

मध्य—

२४ रावल हंसराज	४०	०	३६	०
२५ रावल जदकरण	४	३	६६	३
२६ रावल षैराड	४९	३	६६	३
२७ रावल षैरसी	९	३	६६	३
२८ रावल षरसींघ	०	३	६	३३
२९ रावल सरपत	१०	१०	१०	१३
० पाछण हुआ				
१ राणा राहप	४०	९	१०	०१
२ राणा नरहु	२०	०	४४	०
३ राणो नगपाल	७	९	२९	३६

अंत—

४ राणा पुनपल	४१	१०	०	०

५ राणा पीथडधे	राणा एइमल
६ राणा भीमसी	राणा सैंगर
७ राणोगड़चढ	राणा उदसींघ
८ राणो लषमसी	राणा प्रतापसींघ
९ राणो हमीर	राणो अमरसींघ
१० राणोषेतो	राणो करणसींघ
११ राणो लाषा	राणो जगतसींघ
१२ राणो मोकल	राणो राजसींघ
१३ राणो कुंभो	राणो जयसींघ
	राणो अमरसींघ

विषय—चित्तौड़गढ़ के राजघराने का ब्यौरा।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयितादि के संबंध में कोई उल्लेख नहीं पाया जाता। इसका विषय इसमें चित्तौड़गढ़ के राजघराने का ब्योरा दिया है। इससे प्रकट होता है कि चित्तौड़ के नृपतिगण पहिले राजा कहलाते थे, फिर रावल और तदुपरान्त राणा कहलाने लगे। आदि में संख्या १ से लेकर संख्या १७ तक के राजाओं का नामोल्लेख इसमें मिलता है। इसके पश्चात् के राजाओं के नाम लुप्त हो गये हैं। लुप्त भाग के आगे के २३ रावलों का ब्योरा भी नहीं मिलता। केवल संख्या २४ से २९ तक के रावलों का उल्लेख पाया जाता है। सबसे अन्तिम रावल सरपत हुआ है। इसके पश्चात् राणा हुए। सबसे पहला राणा राहप और अन्तिम राणा अमरसींघ हुआ। ज्ञात होता है कि इससे आगे की सूची लुप्त हो गई है। आदि से लेकर राणा पुनपाल तक के नृपतियों का राज्यकाल वर्ष,

मास, दिन, घडी और पलों सहित अंकित किए गए हैं। पश्चात् के राणाओं का केवल नाम ही नाम लिखा गया है। इसमें संवत् का कोई ब्योरा नहीं है।

संख्या १७१. दामरीलीला, पत्र—७, आकार—९ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० शिवलाल जी, स्थान—सोनई, पो०—सोनई, जिला—मथुरा।

आदि—

× × × ×

व्रज की ठकुराइनि हलरावैं हो हो मेरे लाला।
घन तन स्याम कमल दल लोचन सुंदर वदन विसाला॥

× × × ×

...के लरिका बोले मैया दूध विलोवैं।
उठि चल वह आगन में जसुधा तू काहे कूरोवैं॥
इतनो सुनत चलै अकुते से मैया के ढिग आये।
दधि मथान रहन दीनो तव ले जसुमति उरलाये॥ १९॥

× × × ×

आरि करै मति कुमर सिरोमनि पल में दधि मथि लैंहों।
छगन मगन में स्याम छवीले वहुत पयोधर देंहों॥ २०॥
रई गही एकै कर दूजे करसौं आचर षेंच्यो।
दुहु पाव की एडी घसि घसि कुमर सिरोमनि अंच्यो॥
देषी आरि अरीले की जव तव गोदी में लीनों।
प्रेम प्यास यों परम पयोधर कर गहि मुष में दीन्हों॥ २१॥
वहुत भूष के चषके मसके रस कें पीवन लागे।
मुलकनि मुष की देषि माइ के परम दंद दुष भागे॥

अंत—

उठि के राम गहि जव वहियाँ भीतर कौ लैं साज्यौं।
हाथ मरोरि छुटाय स्याम घन नंद ववा तन भाज्यौ॥
दोनों वाँह गरे में मेली लागि गये गर माही।
क्यों रे क्यों रे कहत नंद हरि बोलत नाहीं नाहीं॥ ८२॥
तवहि नंद जू नेह लाल को अंतरगत कौं लीनों।
कहै पूत तो मारूँ याकूँ यों ऊँचो कर कीनौं॥
अखराय कैं हाथ गह्यौ मेरी मैया कौं मतिमारौं।
मेरे प्रान रहेगे कैसें वाधै कहा तुम्हारौं॥ ८३॥

नंद कहत ज्यौं गई कहूँ वह वाविन तोहि सरेगौं।
कछू भयौं जों तेरी मैयें तव तू कहा करेगौं॥
महा प्रेम कौ बचन सुनत ही बोलें माय कहाँ हैं।
तहीं जाउगों रहुन क्यों हू मेरी माय जहाँ हैं॥ ८४॥
हंसी सकल ब्रजनारी मंडली.........................

× × × ×

—अपूर्ण

विषय—

श्री कृष्ण की दामरी लीला का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ के बाँयें हाशिये पर "दा०" लिखा हुआ है जिससे ग्रंथ का नाम "दामरी लीला" ज्ञात होता है। रचयिता के नाम का पता नहीं लगता। ग्रंथ के अपूर्ण होने से रचनाकाल तथा लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

संख्या १७२. श्री दामोदर हरसानी की वार्ता, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० श्यामलालजी, मु०—भरोठर, पो०—सोनई, जिला—मथुरा।

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री कृष्णाय नमः श्री गोपीजन वल्लभाय नमः

श्री आचार्यजी के सेवकनि कौ वार्ता। श्री आचार्यजी के सेवक दामोदर हरसानी की वार्ता।

एक समय श्री आचार्यजी व्रज मैं पांव धरे हे। तव दामोदरदास साथ हे। श्री आचार्यजी दामोदरदास सो दमला कहत हते। और कहते यह मारग तेरे काजैं प्रकट कियो है। श्री आचार्यजी ऐसे वासौं कहत हते सो श्री गोकुल मैं गोविंदघाट ताके ऊपर एक चौंतरा हुतो। तहाँ श्री आचार्यजी विश्राम करते। ताठौर पर श्री द्वारकानाथजी के मंदर भए तहाँ श्री आचार्यजी पौढे हुते। ता समय श्री आचार्यजी को महाचिंता उपजी। श्री ठाकुरजी आज्ञा दीनी है जो जीवन को ब्रह्म सम्बंध करो। तातै श्री आचार्यजी ने विचारयो। जो जीव तो दोष निधान है श्री पुरुषोत्तम तो गुण निधान है। ऐसैं संवंध कैसैं होय। तातै चिंता उपजी सो अत्यंत आतुर भये। तासमै श्री ठाकुरजी तत्काल प्रगट होय श्री आचार्यजी सो पूछो तुम चिंता आतुर क्यौं हो तासमै श्री आचार्यजी श्री ठाकुरजी सौं कह्यो। जो जीवन को सरूप तो तुम जानत हो। दोषवंत है तो तुमसौं संवंध कैसैं होय।

अंत—तापाछैं केतेक दिन कौं श्री गुसांईजी नैं श्री अक्काजी कौं पूछ्यौ जो श्री आचार्यजी मार्ग प्रगट कियो है सो उत्सव कौ कहा प्रकार हे हमतो कछू जानत नाहीं। तव श्री अक्काजी ली गुसांईजी सौं कही जो। श्री आचार्यजी अपने मार्ग को उत्सव को प्रकार

सो सब दामोदरदास सौं कह्यौ है। सो तुम दामोदरदास सौं जाय कैं पूछो। तुम सौं दामोदरदास कहैंगे। तापाछै श्री गुसांईजो दामोदरदास के घर पाउ धारे। तब दामोदरदास बहुत आदर सन्मान करि भक्ति भाव सौं घर मैं पधराये। ता पाछे उत्सव को प्रकार जो पूछ्यौ सो सब दामोदरदास ने श्री गुसांईजी आगे कह्यो और एक समै दामोदरदास के पिता को श्राद्ध हुतो। तादिन श्री गुसांईजी नैं दामोदरदास कौं श्राद्ध करवायो। तापाछे श्री गुसांईजी नैं कह्यौ जो मोकौ श्राद्ध करवाये की दक्षिणादेहु। तब दामोदरदास नैं कह्यौ। दक्षिणा मैं एक वात कहूगो सो सिद्धांत रहस्य के डेड श्लोक को व्याख्यान कह्यो। यह ऐसी वात है। तब श्री गुसांईजी मुसकाइ चुप करि रहे। पाछे दामोदरदास मारग—

× × ×

(अपूर्ण)।

बिषय—श्री वल्लभाचार्यजी और दामोदरदासजी के भक्ति विषयक संवादों का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के केवल प्रारंभ के छः पत्रे प्राप्त हैं। श्री वल्लभाचार्यजी तथा उनके प्रिय सेवक श्री दामोदरदासजी के बीच समय २ पर जो भक्ति विषयक तथा अन्य बातें होती थीं उनका संकलन किया गया है। ग्रंथ कर्त्ता का नाम मालूम नहीं। रचनाकाल तथा लिपिकाल भी अज्ञात ही हैं।

संख्या १७३. दिल्ली की पातशाही का व्योरा, कागज देशी, पत्र—४, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्) ११०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० प्रभुदयाल जी शर्मा, सम्पादक—'सनाढ्य जीवन,' इटावा।

आदि—

श्री गणेसाइनमोः श्री सरस्वती नमौः गुरभयनमोः श्री दली की पतासाही लीषते॥ ऐता तो तुमर तप्साः पाछै चुहाण तप्साः पाछै पठाण तप्सा। संवत् ८२९ रैचरस दली पातसाही हुईः तीरी बगतः वैसाष सुदी १२ दीलीऐ मुरत साधेः बरस जग जोत हुवैः जणी मोरत घड़ी पुल साधीः साधेनः संवत छातरी सुवा गज षीली=सेस नाग रामाधामै जाकीः॥ प्रथम दीली तुवरत पराः तीरी वीगतः

आसामी पैली तुवर

आसमी	बरस	मास	दिन	घड़ी	पल
१ राजा वीसलदेव	१९	५	१८	१९	२
२ राजा गंगेव	२६	३	२८	९	६
३ राजा पृथीमल	१८	६	१९	११	३
४ राजा जदव	२०	७	२७	१५	५
५ राजा नरपाल	१५	२	८	३	१
६ राजा उद्र	२४	४	६	९	०

मध्य—

संवत् १२४९ रै चैत सुदी १२ रे दीन लड़ाई हुई : चुहाण भागा : गढगज लीषी पठाण आया सुलताणा साहब दी गोरी दीली वैठा आसामी दली उदयणो महातुरकाणो दली हुअ : पठाण वैठा

१ सुलताण साहब दी गोरी	१	२	५	७६	१०	१५
	१	५	०	१२	७	
२ सुलताण समसदीन	१४	३	१३	१०५		७
३ सुलताण पीरोज साह	२६	६	१०	१९		९
४ सुलताण कुतुवउद्दीन	२	६	७	२		२
५ सुलताण अलावद्दीन	२१	६	१	२७		१

अंत—

संवत् १६०८ रे जेठ सुदी १३ रे दीन लड़ाई हुई : पठाण भागा ॥ मुगलाणो हुवौ : ॥

१ सुरताण तीमरलंग	४५	७	२१	७	६
२ सुरतण वावर मुगल	२३	६	२२	१५	५
३ सुरताण हुमायूं	१०	४	१२	१९	१
४ सुरताण अकवर	२६	१	८	१३	१
५ सुरताण जहाँगीर	८	५	८	९	१
६ सुरताण साहजीहा	३५	७	१५	२१	१
७ सुरताण औरंगजेव	१०	५	१८	७५	१०
८ सुरताण आलमसाह	८	१	७	३	१
९ सुरताण मोजदीनमुगल	१२	३	५	२	१
१० सुरताणफेरेकशाह	१५	२	५०	८	९

विषय—दिल्ली के बादशाहों के घरानों का विवरण।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता के संबंध में कुछ पता नहीं चलता। इसका विषय दिल्ली के तख्त पर बैठनेवाले राजा तथा बादशाहों के राजत्वकाल का उल्लेख करना है। इसमें राजाबीसलदेव से लेकर मुगल सम्राट फर्रुखसीयर तक का विवरण पाया जाता है। उससे ज्ञात होता है कि दिल्ली में पहिले तोमरों का और फिर चौहानों का राज्य हुआ। किन्तु संवत् १२४९ वि० (११९२ ई०) में चौहान पराजित हुए। उनके पश्चात् मुसलमानी बादशाहों का राज्य हुआ। यद्यपि इसमें बादशाहों के राजत्वकाल के घड़ी पल तक दे दिये हैं; परन्तुप्रसिद्ध इतिहास लेखकों के ग्रन्थों से कुछेक स्थानों पर उनका सामंजस्य नहीं बैठता। उदाहरण के लिए अकबर का राजत्वकाल सन् १५५६ ई० से १६०५ ई० तक माना जाता है जिसको प्रायः ४९ वर्ष होते हैं। किंतु इसमें उसका राजत्वकाल केवल

२६ वर्ष १ मास ९ दिन १३ घड़ी तथा १ पल बताया गया है जो नितांत अशुद्ध है। इसी प्रकार जहाँगीर सन् १६०५ से १६२७ ई० तक २२ वर्ष गद्दी पर रहा। परन्तु इसमें केवल ९ वर्ष ५ मास ८ दिन ६ घड़ी तथा १ पल दिया गया है, इत्यादि। हो सकता है, उक्त बादशाहों का केवल वही समय लिया गया हो जितने समय तक वे दिल्ली की गद्दी पर रहे, आगरे का समय न जोड़ा गया हो परन्तु प्रमाणाभाव में यह संदेहजनक ही है।

संख्या १७४. गीता, कागज—बाँसी, पत्र—४२, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७२६ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० बालमुकुन्दजी चतुर्वेदी, मानिक चौक मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि— श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गुरुभ्यौ नमः ॥

धर्म क्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता जुजुत्सव।
मांमका पंडवाश्चैव किंम कुर्वती संजय ॥ १ ॥

राजा ध्रितराष्ट पुछत है ॥ संजय सौ अहो संजय कुरुषेत्र महि मेरे पुत्र और पांडौ के पुत्र ॥ २ ॥ युद्ध करवे कुं एक ठौर भए हैं ॥ तहा दोउ कहा करत भए ॥ सो हमसों कहो ॥ तव संजय कहत है ॥

॥ संजयोवाच ॥

अहो राजा तुम्हारे पुत्र जे है ॥ दुरजोधनादि सोऊ ॥
पांडवनि की सेना देषि द्रोनाचारिज सों कहत है ॥ ४ ॥

× × ×

अंत—जे मेरे प्रिय भगत होहि ॥ षिमा सीलवंत प्रियवादी होहि तिनसौ कहौ ॥१२॥ संत सील होहि प्रिय पूरन काम होहि ॥ ऐसे वैष्णव होहि ॥ तासौ कहौ ॥

॥ अरजुनोवाच ॥

तव अरजुन श्री कृष्ण सों— ... ॥ श्री कृष्ण देव मेरो सवु अग्यानु गयो ॥१४॥ ग्यानु पायो अबु तुहारो कह्यौ सबु करिहौं ॥ श्री कृष्णजु ॥१५॥ संजयोवाच ॥ यह कथा संजय राजा ध्रितराष्ट सौं कहत है ॥ अहो राजा ध्रितराष्ट यह श्री कृष्ण अरजुन सौ कीही ॥१६॥ श्री व्यास जू के प्रसाद तैं ॥ तातै अहौ राजा ध्रतराष्ट्र या बद की जब मोहि सुद्धि आवतु है ॥१७॥ तब मेरे परम आनंदु होतु है ॥ तातै यह सुनौ राजा ध्रतराष्ट ॥१८॥ यत्र जोगेश्वर कृष्ण यत्र पार्थ धनंजय ॥ तत्र श्री विजयं भूत्य ॥ ध्रुवामिति मिर्दं मर्म ॥१९॥

इति श्री महाभारते भीष्म पर्वणे परमहंस संहितायां श्री भगवद् गीतायां सुपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां जोग शास्त्रे श्रीकृष्ण अरजुन संवादे नाम अष्टादशोध्याय कौ यह अरथ ॥१८॥ संवत १७२६ ब्रषे माह मासे कृष्ण पक्षे दसमी तिथौ गुरुवारे ॥ पठनार्थं श्री सदाकुंवरबाई लिषितं वहु वाघेली वांचै सुणै जौने राम राम दंडौत ॥ यदृशं पुस्तके दृष्टं तादृशं

लिषितं मया ॥ यदि शुद्धमशुद्धंवा मम दोषो न दीयते ॥ १ ॥ श्री बेदला नगरे ॥ श्री रघुनाथ चरणे ॥

विषय—गीता का भाषा गद्य में अनुवाद किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता का नाम विदित न हो सका । इसकी प्रस्तुत प्रतिलिपि वाघेली नामक एक स्त्री ने सदाकुँवरबाई नामक किसी स्त्री के लिये की थी । लिपिकाल संवत् १७२६ वि० होने के कारण ग्रंथ काफी पुराना है । रचनाकाल नहीं दिया है ।

संख्या १७५. ईश्वर पार्वती संवाद (मूलस्तंभ), कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)--७४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० रघुबर दयालजी, स्थान—दलेल नगर, पो०—दलेल नगर, जिला—इटावा ।

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वतीये नमः ॥ श्री गुरुवे नमः ॥ अविघ्नमस्तु ॥

हे ईश्वर महादेव तुम्हारो जाप जोगी जती तपसी महात्मा सब करत हैं तुम आदि पुरुष और अनादि हो सदासिव हो मैं तुम कूं नमस्कार करतु हौं ॥ हे जगन्नाथ तुम्हारी जय होइ ॥ तुम परम पुरुष हौ ॥ निरंकार हौ ॥ निरंजन हौ ॥ विश्व व्यापक अरु जगजीवन हौ ॥ सगुण परमात्मा तुम्है हौ ॥ हे त्रिनेत्र पंचमुखा परमेश्वर आदि नाथ कर्पूरवत् तुम्हारौ गौर वर्ण है ॥ पार्वती तुम्हारे अर्द्धांग में विराजै है । गंगाजू तुम्हारे जटानि सौं प्रघटी है तुम्हारी गुणात्मीक मूर्ती है ॥ सूर्य्यचन्द्रकरिकै तुम्हारो भाल सुशोभित है ॥ शेष नागजू कौ हार तुम्हारे गरे में पर्‌यो है ॥ अलंकारु ॥ अंग में विभूति कौ उवटनौ है रह्यो है ॥ वाघंवर पहिरैं हौ ॥ मस्तक पर चन्दन लग्यो है ॥ तुम्हैं दक्षनांगा चतुरानन जन्म दयो ॥ वामांग विष्णुनारायण सों ॥ तू ब्रह्मा विष्णु महेश एक मूर्ति ॥ परमहंस ॥ सर्वव्यापक है ॥ तुम्हारो भेद कोउ न जाने ॥ वेद पुराण कोउ नाहीं जाने ॥ इकईस स्वर्ग पर तेरा मुगुट ॥ अलक्ष ॥ अपरांपर ॥ ब्रह्मादिक सौं अगोचर ॥ तुम्हारौ पारु काहुन पायौ ॥ समस्त पृथ्वी विस्तार आकाश मूर्ती लिंग देख्या ताकी पूजा कवन बिधि होइ ॥ हे पसुपती सभ मेघमाला तेरे स्नान कौ नव लक्ष तारांगन शोभित है ॥ ऐसा देय ईश्वर ॥ निरालंब परमेश्वर ॥

× × ×

जा ग्रंथ कौ नाम मूलस्थंव ॥ ईश्वर पार्वती कौ संवाद ॥ जे ताही विषै अनुवाद करयौ ॥ पार्वती पूछै हे ईश्वर या पिंड ब्रह्मांड की स्थिति शास्त्र मारगी ॥ महा माया प्रकाश ॥ कैसे भयो ॥ कैलाश शिखिर पै विराजे पार्वती सहित त्रिपुरारी ॥ तहाँ गौरी त्रिपुरारी प्रति पूछति आनन्द सौं ॥ करजोरि विन्ती करि पूछै मोसूं निरंकार की स्थिति कथन करौ ॥ × × × ×

मध्य—

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

तब हेमवंता की वाणी ॥ पार्वती कहै ॥ हे चन्द्र मोलि ॥ म्हारे संग सकल चन्द्र

सूर्य्यं हैं ॥ चंद्र कोट और सूर्य्य जेहि स्थान वसें सो कथन करो ॥ कैलाशनाथ कह्यो पारवती भल्यो पूछ्यो ॥ चंद्र सूर्य्य वृत्तांतु ॥ तुम सुनहु ॥ चन्द्र वसे गगन मंडलमाहिं ॥ कैसा दीसै ॥ सो कह्यों ॥ शोभवंत ॥ ताकी सोला कला बनी ॥ सुन हेमवंता की नन्दिनी ॥ तिहिकों चितु दै सुनहुँ ॥ संखिनी १ पद्मिनी २ लछुनी ३ कामिनी ४ पुक्षीनी ५ व्यापिनी ६ वीधा ७ मोहिनी ८ प्रमोदिनी ६ मीथुनी १० वीकाशिनी ११ अंमृत १२ संजीवीनी १३ नीचनवी १४ ज्ञान दृष्टा १५ अनुभवी १६ ते सोरा कला सहित शशी अधोमुख धावता ॥ शंभू पार्वती षन कहै ॥ अपनी कला सहित नाभि मूल सूर्य्यनाथ तहाँ वसतु आदित्य ॥ द्वादस कला ॥ तिन वारह कला के नाम सुनहु ॥ ज्वालिनी १ कर्नी २ दहनी ३ दीपनी ४ जोतनी ५ तेजनी ६ विद्यामोहिनी ७ जाहालनी ८ जीतनी ९ प्रकाशिनी १० दीपकलिका ११ द्वीपनी १२ ये वारह कला सहित दिन करु ॥ ताकी पश्चमी चाल रहै ॥

अंत—तव पार्वती ने पूछ्यो ॥ सदा शिव एक वीस स्वर्गा की उत्पत्ति कहौ ॥ असु स्वर्ग ॥ १ ॥ मासु स्वर्ग ॥ २ ॥ रसासु स्वर्ग ॥ ३ ॥ वीसासु स्वर्ग ॥ ४ ॥ बैश्व स्वर्ग ॥ ५ ॥ सुकासु स्वर्ग ॥ ६ ॥ सुकासासु स्वर्ग ॥ ७ ॥ नर्व स्वर्ग ॥ ८ ॥ दुवासु स्वर्ग ॥ ९ ॥ गोकर्द स्वर्ज ॥१०॥ सकारु स्वर्ग ॥११॥ छुकारु स्वर्ग ॥१२॥ तलवे स्वर्ग ॥१३॥ सन्मान स्वर्ग ॥१४॥ नीसुल स्वर्ग ॥१५॥ वुधा स्वर्ग ॥१६॥ वुधाकारु स्वर्ग ॥१७॥ वुभून्माकारु ॥१८॥ कीर्नाकारु स्वर्ग ॥१९॥ निर्विकारु स्वर्ग ॥२०॥ निरंजनाकार स्वर्ग ॥२१॥ पहिली स्वर्गी भूत सृष्टि ॥ दुसरे स्वर्गी स्थल वासीक ॥ तिसरे सुर्गी यमदूत ॥ चौथे स्वर्गी यक्ष ॥ पाँचवा स्वर्गी किन्नर ॥ छठे स्वर्गी इन्द्र ॥ सातवें स्वर्गी इन्द्र ॥ आठवें स्वर्गी कौल ॥ नवें स्वर्गी परलोक ॥ दसवें स्वर्गी चित्रगुप्त ॥ ग्यारहवें स्वर्गी गण ॥ वारावे स्वर्गी गंधर्व । तेरावे स्वर्गी ब्रह्मराक्षस ॥ चौदावे स्वर्गी मानवी ॥ पंद्रावै स्वर्गी महालोक ॥ सोलावा स्वर्गी परात्पर लोक ॥ सत्रावे स्वर्गी देवलोक ॥ अठारावे स्वर्गी अमर लोक ॥ येकोनीसवे स्वर्गी यौगोनी पीटी ॥ वीसवें स्वर्गी सुर समस्त ॥ एक वीसमें स्वर्गी कर्म्मा ब्रह्मा है ॥ तव पार्वती वोली ॥ अहो देव पशुपती या सुनि मरी भ्रान्ती निवारण भई ॥ इन सुनिकैं ॥ ऐसा एकवीस स्वर्ग का भेद तुमसों सुनि जान्यों गिरिजाहि वोधु भयो ॥ अनुभव मनमाहिं आयो ॥ ज्ञानवोध सकल भयो ॥ भ्रान्ति दूरि भई ॥ तिहारे प्रसाद सौं ॥

॥ इति श्री मूलस्तंव ईश्वर पार्वती संवाद ॥

॥ कथियत नाम सप्तमोध्याय ॥ ७ ॥

॥ श्री सदासिवार्पन मस्तू ॥

॥ श्री रस्तु ॥ हस्ताक्षर ॥

॥ सुकवन गोसाईं ॥

जले द्रक्षे स्थले द्रक्षे, रक्षे शिथिल वन्धनात् । मूर्ख हस्ते नदातव्यं ये वदन्ति पुस्तका ॥

विषय—(१) मंगलाचरण शिवस्तुति, शिव के श्रृंगारादि का वर्णन, मूलारंभ, संसार में कुछ देवादि का न होना, शून्य वर्णन, सृष्टि उत्पत्ति, पंचतत्व, पंचीकरण, शरीर, गुण, वर्ण, छत्तीस तत्व, प्रसिद्धि पंचतत्व, गुण, परम तत्व, मूलस्थान, अविद्या, पिंड रचना, मैथुन कर्म, रजवीर्य्यादि संयोग, गर्भ स्थिति, गर्भ की वृद्धि मास प्रभाव से, कन्या-पुत्र जानना, संतान के स्वभावादि के लिए संभोग समय में स्त्री-पुरुष की स्थिति, कर्मानुसार योनि प्राप्ति, गर्भ का सोहं-सोहं कथा कोहं कोहं कथनोपरान्त रुदनादि। पाँच तत्वों का विचार। इन्द्री वर्णन अष्टधा प्रकृति विचार, अष्ट भैरव और उनकी विद्या, [प्र० अ० १—१६]। पत्र १ से १९ तक (प्र० अ०)।

(२) षट्चक्र वर्णन। मनपुरी के भेद, अनुहात, इड़ा, पिंगलादि वर्णन। षट्चक्रों का मूल, उनके देवता और जापादि का वर्णन। पत्र २० से २४ तक (द्वि० अ०)।

(३) त्रिगुण के वर्णादि का वर्णन, देह निर्माता सप्तधातु वर्णन, नवषंड (नवद्वारे), दश पवन और उनकी नाड़ियाँ [तृ० अ०, २४—३०]।

(४) शरीर का अर्थ, पत्र ३० से ३२ तक (च० अ०)।

(५) आत्मतत्व, देह की विवंचना, दस देह विचार, देह शुद्धि का अभिप्राय, ७२ कोठे, अंतस्करण, अष्ट दल कमल, आत्मश्रमण, अक्षर पुरुष और वानी, जन्म स्थान, पत्र ३२ से ४५ तक (पं० अ०)।

(६) चंद्र सूर्य का वृत्तान्त, राशि की सोलह कला के नामादि, सूर्य की बारह कला, सत्रह विकला, सप्तद्वीपी देही, पंचमुद्रा, सप्त सागर विचार और उनके स्थान, पिंड की परिभाषा, रूप की विवेचना, पदपिंड, चार मुक्ति, जिस देव की भक्ति करै उसी लोक की प्राप्ति हो, पत्र ४५ से ५४ तक (ष० अ०)।

(७) देह कै अष्टागिरी के नामादि विस्तार, स्थिति और परिचय सहित, लोकादि वर्णन, सप्त पाताल का उद्भव, इक्कीस स्वर्गों की उत्पत्ति और वहाँ के निवासी, पत्र ५४ से ६२ तक (स० अ०)।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयितादि का कुछ भी पता नहीं है। यह भी विदित नहीं होता कि यह कब बना और कब लिखा गया? इसकी प्रतिलिपि किसी "सुकवन" नामक गोसांई ने की है। ग्रंथ शिव पार्वती के संवाद के व्याज से लिखा गया है। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर प्रलय तक की समस्त बातों का उल्लेख हुआ है। इस ग्रंथ का मूल सिद्धान्त समस्त स्वर्गादि व्यवस्था का निज शरीर में ही माना जाना है। तृतीय अध्याय में शिव ने इसे अनेक शास्त्रों का सार कहा है।

संख्या १७६. जोग सुधानिधि, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—$४\frac{३}{४} \times ३\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५५ वि० (लगभग), प्राप्ति स्थान—ला० मानसिंह, स्थान—ब्याना, पो०—ब्याना, रियासत भरतपुर [ग्रंथ सभा के लिये प्राप्त]।

आदि— अथ सप्तचक्र विधि लिष्यते ॥

ब्रह्मरंध्र मूरधनी स्थाने ॥ सहंस्र दल पद्मं सर्व बरण प्रभा गुरु देवता ॥ चैतनि सक्ति ॥ परम हंस रिष ॥ चैतन आत्मक ॥ सर्बमात्रा ॥ अजपा गाइत्री ॥ तत्र एक सहंस्रांणी सास परवर्तंते ॥१०००॥ घटी ॥ २ पल ॥४६॥ अक्षर द्वै ॥ ज्ञेय अक्षरो बले ॥ गिगन मंडले ॥ य अक्षरो बले पातालं ॥ १ ॥ अथ आग्या चक्र भ्रू स्थाने ॥ द्वै दल कमल ॥ माणिक बरण प्रभा द्वै मात्रा सहतं ॥ हं क्षं ॥ पद्म मध्ये परम हंस देवता सुषमनां सक्ति हंस ऋषि चैत्तनि बांहण ॥ ज्ञान देह ॥ विज्ञान अवस्था ॥ २ ॥ अथ बिसुध चक्र कंठ स्थाने ॥ षोडस दल कमल ॥ धूरम बरण प्रभा ॥ पद्म मध्ये श्री जीव देवता ॥ अविद्या सक्ति ॥ विराट ऋषि ॥ बाइ बांहण ॥ षोडस मात्रा ॥ अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ॥१६॥ ३ ॥ अथ अनाहत चक्र हृदय स्थांने ॥ स्वेत बरण प्रभा द्वादस दल पद्मं मधे श्री महारुद्र देवता ॥ उर्मा सक्ति ॥ नांदीयौ बांहण ॥ बाघंबर बस्त्र ॥ हिरण गरभि ऋषि ॥ कारण देह सुषपति अवस्था ॥ द्वादस मात्रा ॥ क ष ग घ ङ च छ ज झ न ट ठं ॥१२॥ ४ ॥

मध्य— ॥ अथ पांच तत्त की धारणा ॥

आकास तत्त ब्रह्म रंध्र आकास तत्त है ॥ सुभ व्रक्षु गोलाकारं जिह निश्चै जांनि ॥ सदा शिव देवता अक्षर स हं तंः हकारं ॥ मंत्रंः तहां घटिका पाँच प्रांन करि लीनं ॥ परम मुक्ति कौ दाता ॥ १ ॥ अथ बाइ तत्त की धारणां ॥ षट कौंण मेघ बरणं ॥ भ्रूव मधे जकार मंत्र ॥ ईश्वर देवता ॥ ऐसी लछि बिचारं ॥ तहाँ घटिका पाँच प्राण करि लीनं ॥ २ ॥ अथ तेज तत्त की धारणा ॥ यह अगनि त्रिकौंण ॥ मधि वरणं ॥ तालवा मधे श्री महा रुद्र देवता ॥ रेफ मंत्रं ॥ तहाँ घटिका पाँच प्रांण करि लीनं ॥ ३ ॥

॥ अथ आसन कहीए हैं ॥

चौरासी लष आसन सारे ॥ चौरासी लष जीव जोनि की बैठक विधि ॥ तिस मांहै सार चौरासी आसन ॥ चौरासी मैं सार सोल्हा आसन ॥ विगति स्वसतिक ॥ १ ॥ गोमुष ॥ २ ॥ पद्म ३ हंश ॥ ४ ॥ एच्यारि ब्रह्मा के आसन ॥ नृसिंघ ॥ १ ॥ गरुड़ ॥ २ ॥ कूर्म ॥ ३ ॥ नाग ॥ ४ ॥ एच्यारि विष्णु के आसन ॥ बीर ॥ १ ॥ मोर ॥ २ ॥ बज्र ॥३॥ सिध ॥ ४ ॥ एच्यारि रुद्र के आसन ॥ भग आसन सक्ति कौ ॥ १ ॥ पछिम तांन सिव कौ आसन ॥ १ ॥ उतांन धनुष सिव कौ आसन ॥ इति षोडस आसन ॥१६॥ षोडस मांहि च्यारि श्रेष्ठ ॥ पछंतर सिंघ ॥ १ ॥ पद्म ॥ २ ॥ सिध ॥ ३ ॥ भद्र ॥ ४ ॥ इती च्यारि आसन ॥ च्यारि मांहि दोइ श्रेष्ट ॥ पद्म ॥ १ ॥ सिध ॥ २ ॥ दोइ मांहि एक सिधासन ॥ इती आसन संपूरण ॥

अंत— ॥ अथ चंद्रमा की कला के भेद ॥

लीला ॥ १ ॥ किलोला ॥ २ ॥ उथन ॥ ३ ॥ उदमदनी ॥ ४ ॥ तरंगनी ॥ ५ ॥ पोषनी ॥ ६ ॥ लंपटा ॥ ७ ॥ लहर ॥ ८ ॥ पसरती ॥ ९ ॥ द्रवंती ॥१०॥ सथती ॥११॥

श्रवती ॥१२। प्रवाह ॥१३॥ सोमि ॥१४॥ प्रष्ण ॥१५॥ नृवरती ॥१६॥ अथ सूरज कला ॥ ग्रासकी ॥ १ ॥ उग्रही ॥ २ ॥ अंकोचनी ॥ ३ ॥ सोषनी ॥ ४ ॥ प्रमोधनी ॥ ५ ॥ मूरछा ॥ ६ ॥ आकरषती ॥ ७ ॥ त्रिष्टबंधनी ॥ ८ ॥ उमारी ॥ ९ ॥ षा किरनावती ॥१०॥ प्रभावती ॥११॥ सीपरकसी नांम ॥१२॥

॥ अथ पथ कहीए हैं ॥

जौ गेहूँ अर साठी चावल । षीर षांड घृत माषन मुषभर ।
प्रबर सूंठि सत अरु राई । पाँच सात पुनि षांन बताई ॥२७॥
सरसूं और सूंठि के पात । पुनि पटौल बथवा किन षात ॥
और षाह नीकैं चौराई । पाँच साग की बात बताई ॥२८॥
नही सीरौ नही तातौ पानी । मधि भाग लीजै सुषदांनी ॥
और ऐसौ ही षैवौ षाई । इति बिधि रहै जोग कौ पाई ॥२९॥
मूंग दूध घृत चावल साठी । धात बढावन दिढ़ करि काठी ॥३०॥
इति पथ कुपथ जोग सुधानिधि ग्रंथ संपूर्ण ॥

विषय—योग सम्बंधी बातों का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार हैं :—

१—अष्ट चक्र वर्णन; २—पंच तत्व की धारणा; ३—आसन वर्णन; ४—प्राणायाम के भेद; ५—व्यष्टि और समष्टि प्राण; ६—सात शरीर; ७—काल कौंण स्थिति के अवांतर भेद; ८—सत, रज, तम की विगति; ९—चंद्रमा की कला के भेद; १०—सूरज कला; ११—पूरक कुंभक रेचक कौ अर्थ; १२—प्राण वायु अपान वायु कौ अर्थ; १३—सुषुम्ना नाड़ी की निर्मल करन की बिधि; १४—प्राणायाम प्रमाण; १५—पथ वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता ने अपने नाम का कहीं भी उल्लेख नहीं किया । ग्रंथ के अंतिम पत्र से पहले का एक पत्र खंडित है । रचनाकाल नहीं दिया है । ग्रंथ का नाम आरंभ में नहीं है । पथ वर्णन के अंत में, "इति पथ कुपथ जोग सुधानिधि ग्रंथ संपूर्ण" । लिखा है । पथ वर्णन में केवल ४ चौपाइयाँ हैं । इसके पहले कुपथ वर्णन किया गया होगा जिसका पत्रा नष्ट हो गया है । परंतु उस पत्रे में ९ से अधिक दोहे-चौपाइयाँ नहीं थीं । केवल इतने ही छंदों का ग्रंथ नहीं कहा जा सकता । ये केवल संपूर्ण ग्रंथ के अंश मात्र हो सकते हैं । अतः अष्ट चक्र से लेकर पथ कुपथ तक के सभी विषय जोग सुधानिधि के समझे जाने चाहिए । "इति पथ कुपथ" पथ कुपथ वर्णन की पुष्पिका है और "जोग सुधानिधि ग्रंथ संपूर्ण" सारे ग्रंथ की समाप्ति की विज्ञप्ति है । विशेष के लिए देखिये "भक्ति भांवती" और "कबीर के पदों की टीका" वाले विवरण पत्र ।

ग्रंथ सभा के लिए प्राप्त हो गया है ।

संख्या १७७. श्री कबीर साहिब से पदों की टीका अर्थ सहित, कागज—देशी, पत्र—१३२, आकार—४ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४५२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्ति स्थान—श्री लाला मानसिंह लोहिया, ब्याना, रियासत—भरतपुर ।

आदि—श्री निरंजनाय नमः अथ श्री कबीर साहिबजी के पदों की टीका अर्थ सहित लिष्यते ॥

॥ पद राग गौड़ी ॥

दुलहनी गावहु मंगल चार ।
हम घर आये हो राम भरतार ।
तनरति करि मैं मन रत करि हूँ पंच तत बराती ।
रामदेव मोरे पाहुने आये मैं जोवन मैं माती ॥ १ ॥
सरीर सरोवर बेंदी करिहूँ ब्रह्मा वेद उचारा ।
रामदेव संगि भाँवरि लेहूँ धनि धनि भाग हमारा ॥ २ ॥
सुर तेतीसूं कौतिग आए मुनिवर सहस अठ्यासी ।
कहै कबीर हम व्याह चले हैं पुरुष एक अविनासी ॥ ३ ॥

अर्थ

दुलहनी आत्मा ॥ घर घट भरतार परमेश्वर ॥ टेक ॥ तन मन परमेस्वर सूं रत कीया । पंच तत्त तिनकी तासीर परमेश्वर सूं लीन ॥ बराती बने जोबन प्रेम मदमत ॥१॥ सरीर सरोवर बेदी करिहूं ॥ परमेस्वर सूं वणाव सोई बेंदी । ब्रह्मवाणी ॥ भाँवरी परमेश्वर सूं विलास सोई भाँवरि ॥ २ ॥ सुर देवता तेतीस ॥ पाँच इंद्री पचीस प्रकृति तीन गुण एते तीस ॥ मुनियर सहंस अठ्यासी ॥ नौ नाड़ी बहत्तरि कोठे शसधात ए अठ्यासी मुनि ॥ आत्म प्रमात्म सूं संजोग सोई ब्याह ॥ संसार सूं निरबासी कहुय चले ॥ ३ ॥

॥ पद ॥

मन के मोहन बीठला इहु मन लागो तोहिरे ।
चरन कँवल मन मांनीयाँ और न भावे मोहिरे ॥ टेक ॥
षट दल कँवल प्रकासीया चहुँफू केरि मिलाइ ।
दहुँ के बीच समाधि है तहाँ कलन परसै आइ ॥ १ ॥
अष्ट कमल दल भीतरा श्री रंग केलि कराइ ।
संत गुरु मिलै तो पाइये नहीं तो जन्म अवृथा जाइ ॥ २ ॥
कदली कुस्म दल भीतरा दस आंगुलक बीच ।
तहाँ ढारस षोजिलै जुरा मरन नही मीच ॥ ३ ॥
वंकनालि कै अंतरै पछिम दिसा की वाट ।
तहाँ नीझर झरै रस पीजिये भँवर गुफा के घाट ॥ ४ ॥
त्रिवेणी मन न्हाइलै सुरति मिलै जे हाथि ।
तहाँ न फिरि मग जोई ऐ सनकादिक मिलि हैं साथि ॥ ५ ॥
गगन गर्जि मघ जोईया तहाँ दीसै तार अनंत ।
बिजुरि चमकि घन बरषि है तहाँ भीजत है सबसंत ॥ ६ ॥
षोरस कँवल जब चेतीया मिलिया श्री बनवारि ।

जुरा मरन भौ भाजिया अब पुनरपि जन्म निवारि ॥ ७ ॥
गुर गम है तो पाइये नहिं तो झषि मरै जिनि कोइ ।
तहाँ कबीरा रमि रह्या सहजि समाधै सोइ ॥ ८ ॥ २ ॥

अर्थ

मोहन मोहि राषे सब ॥ बठिल व्यापक ॥ टेक ॥ षटदल पांषुड़ीका ॥ स्वाधिष्टान चक्र लिंग अस्थान निवास ॥ मन पवन सुरति कौ चहुँकूं ॥ च्यारि पांषुड़ी का आधार चक्र गुदास्थांन ॥ दोइ का आज्ञा चक्र लिलाट स्थान । समाधि थिर कल नांही ॥ १ ॥ अष्ट पंषुड़ी पाँच तत तीन गुण की काया सोई कंवल । अस्थान निरंजन ॥ साषी । पाँच तत के पाँच हैं ॥ १ ॥ कदली काया कुस्म आत्म कँवल ॥ दस पांषुड़ी का मणिपूर चक्र नाभिस्थान द्वादस पांषुड़ी का अनाहत चक्र हृदास्थान ॥ २ ॥ वंक नालि सुरति अंतरौ स अमिल ॥ पक्ष्म परमेस्वर नीझर ब्रह्म रस भँवर मन सिधां का गुफा हृदा ॥ ३ ॥ अर्थ भक्ति मैं ॥ मोहन सब मोह्या ॥ कोई ब्रह्म मैं कोई माया मैं ॥ बीठल सब मैं व्यापक ॥ टेक ॥ षटदल पाँच इंद्री छटा मन निवास ॥ वहर मुष तैं अंतर निहचल करै ॥ च्यारि मन बुद्धि चित्त अहंकार चतुष्ट अंतःकरण दोइ पष राग दोष तिन मै सम रहै ॥ तो काल भै नांही अष्ट कंवल पाँच तत्त तीन गुण तिनकी काया सोई अष्ट कंवल ॥ ता भीतरि श्रीमाया ताका रंग प्रमेस्वर विराजमान ॥ २ ॥ कदली काया कुस्म हृदां कंवल ता भीतरि परमेस्वर छै ॥ दस आगुलद······दिस भर मैं ॥सोई अंतर॥ दूजा दसूं द्वारे भर मैं ॥ द्वादस बारह अंगुल बाइ षोजि लै स्वासि स्वासि जपि लै नांम ॥३॥ वंक नालि सुरति परमेस्वर सूं बांकी ॥ अंतरैक··· एतिस अंतर तिस ही मांहि पद्म परमेस्वर की वाट छे ॥ जे सुरति सूधी होइ परमेस्वर सूं तो वाट पावै ॥ परमेस्वरसूं बांक सूरति सोई अंतराइ ॥ नीझर राम रस भरमन सिधां का हिरदा सोई गुफा ॥ ४ ॥ वेणी मन पवन सुरति एक ३॥ मघ चौ······की वाट फेरि न देषै ॥ सनकादिक इंद्री···॥ गगन अतः करण गरजे कहिए उमगि ॥ अनाहद धुनि सोइ गरजि ॥ मघ कहीए ब्रह्म पंथ जो या देष्या तार तेज बीजरी ब्रह्म···कृपा ॥ ६ ॥ षोडस सोलह कला मनकी···उधि हुई ॥ सहज समाधि दुंदनांही ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ राग माली गौड़ी पद ॥

पंडिता मनरंजिता तू भगति हेत ल्यौ लाइरे ।
प्रेम प्रीति गोपाल भजि नर और कारन जाइरे ॥ टेक ॥
दाम छै पणि काम नांही । ग्यान छै पणि धंधरे ।
श्रवण छे पर सुरति नांही नैन छे पणि अंधिरे ॥ १ ॥
जाके नाभि पदम स उदित ब्रह्मा चरन गंग तरंगरे ।
कहे कबीर हरि भगति बांछू जगत गुर गोविंद रे ॥ २ ॥

अर्थ

पंडिता मन रंजिता ॥ पंडित जो मन मैं षुसी होइ रह्यौ है ॥ विद्या बल करि कुल अभिमान करि सचि आचार पन करि ॥ सोऊ कारण जाता रहैगा । तातैं भगति हेत करि

प्रेम प्रीति करि गोविंद भजि ॥ टेक ॥ दाम स्वासं सुमिरण विन मिथ्या ॥ वाचिक करणी विनां ग्यान सब झूठ ॥ श्रवण छै पणि समझि सुरति नांही ॥ माथै नैंन हृदै अंध ज्ञानं दृष्टि नही ॥ १ ॥ नाभि कंवल सूं ब्रह्मबांणी उदित ॥ जिस हृदै गोविंद चरण धारे त्यांह चरणांतैं गंगा बांणी चली ॥ तिसकी भगति वंछौ ॥ २ ॥ १ ॥ पद ॥ १२१॥ राग ९ ॥

इति श्री कबीरजी के पद संपूर्ण अर्थ सहित अध्यात्मी सुभं भवेत ॥९९॥

विषय—कबीरदासजी के १२१ पदों की टीका की गई है ।

विशेष ज्ञातव्य—टीकाकार ने अपना नाम नहीं दिया है । टीका का रचनाकाल भी ज्ञात नहीं । ग्रंथ गुटकाकार हस्तलेख में है जिसके अंत में 'ज्ञान समुद' सुंदरदास कृत लिपिबद्ध है । इसकी पुष्पिका के बाद सारे गुटके की पुष्पिका दी गई है जो इस प्रकार है ।

"सर्व गुटकाँ की वाणी कौ जोड़ हजार ॥५०००॥ वाणी सर्ब आई सही ॥ ग्रंथ पाँच हजार ॥ निर्गण सर्गुण सोधिकैं ॥ लिषी वस्तु तस सार ॥ १ ॥ संवत् ॥१८५५ का मिती श्रावण सुदि ९ बार चंद्र वारे ॥ सुभं भवेत् ॥ लिषतं च नग्र डीडपुर मधे दयाल धाम गाढा मध्य श्री स्वामीजी सेवादासजी की बगीची मांहे ॥ लिष्यतं च साध बिहारीदास स्वामीजी श्री श्री श्री अमरदास···(? जी) को शिष स्वामीजी श्री १०८ श्री श्री सेवादासजी कौ पौता शिष बांचै बिचारै जाकौ राम राम डंडोत ॥ ररं ॥" इससे गुटके का लिपिकाल सं० १८५५ वि० है । टीका कबीर साहब के पदों पर होने से अत्यंत महत्व पूर्ण है । यद्यपि यह बहुत ही सूत्र रूप में है, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि पदों के गूढ़ से गूढ़ स्थलों को समझाने का सार्थक प्रयास किया गया है ।

हस्तलेख सभा के लिये प्राप्त हो गया ।

संख्या १७८. कल्प ग्रंथ, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६५ वि०, प्राप्तिस्थान—ठा० बद्रीप्रसाद जी वैद्य, मोहल्ला—चोबच्चा मथुरा, जि० – मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः सति कवीर ॥ अथ उषद लिष्यते ॥ कलप ॥

एकस्मे कैलासपर्वत पै सिवि जी वैठे हे । प्रस्न भए है ॥ कैलास के फुलवादि देषत भए ॥ वड़े पुसी भये । ता समैं कवीर साहव आवत भए है । प्रस्न कछु पूछत भए ॥ ऐ म्हाराज मन के हेत की हमसौं कहौ । आइ कैं वैठे संपति सुष नीकैं होइ ॥ तो कृपा करि हमसौं कहौइ ॥ तव सिव जी वोले ॥ ऐ वालिक अति सुछिम गैलहुं में ज्याके अरथ की हम सौं कहै है ॥ धर्म के अर्थ की हम सौं कहौं ॥ काम के अर्थ की मौं सौं कहौ ॥ पलास के वीजी ॥ आँवरे के रस मैं भिजोवै ॥ अज के पेसाव में भिजो वैइ राषै ॥ मास ऐक लूं सुषावैइ, फेरि कोलू में गेरि कें पिरावै ॥ तेलु कढ़ावइ । सो तेलु टांक मोरैइ ॥ मास ऐक दिन प्रात षाइ ॥ मांस दोइ २ दुध संग पीवै ॥ गुर तेल न षाइ ॥ सोने सो कंठ होइ ॥ मास चारि पीवै तो नौ हाथी कौ वलु होई ॥ सौ नौं सी प्रमान प्रतमा

होइ ॥ मास छै पीवै तौ हजार ब्रष जीवै ॥ पंथ गुनु या कलप को सुही जानीयौ ॥ इति कलप संपूर्ण ॥ १ ॥

अंत—पलास की वफुली सुकावै चूरण मिंही करै ॥ पकावै गाइकै दूध मैं ॥ दुध भात संग षाइ ॥ अच्छे जतन सौं रहै ॥ ब्रष एक मैं ॥ मास छै मैं ॥ मुतिब्र सौं लोहा कंचन होइ ॥ हजार ब्रष की आरवल होइ ॥ ऐते कलप संपूरण ॥ सुषसागर में रहै समाइ ॥ रछ्या करै कवीर गुसांईं ॥

॥ सति कवीर ॥

विषय—कल्प के (वृद्धावस्था को तरुणावस्था में परिवर्तित करना) विषय में कबीर और महादेव जी का संवाद ।

विशेष ज्ञातव्य—यह एक विचित्र ग्रंथ कल्प के विषय में प्राप्त हो रहा है। इस ग्रंथ को पढ़ने से यह मालूम हुआ कि कबीर साहब एक समय कैलाश पर्वत पर महादेव जी के पास गए और उनसे वृद्धावस्था को दूर कर फिर से तरुणावस्था प्राप्त करने का उपाय पूछा। महादेव जी ने कल्प का विषय उनको सूक्ष्मता से बताया। रचनाकाल तथा रचयिता का नाम मालूम न हो सका।

संख्या १७९. कंस की सभा, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—९½ × ६¾ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० अयोध्या प्रसाद जी, स्थान—भरथना, पो०—भरथना, जि०—इटावा।

आदि—........गैंड़ा वेड़ा स्याह ॥ गोश ॥ खरगोश ॥ भेड़िया ॥ अनेक प्रकार के जीव शब्द करि करि कें वन कों शोभायमान करि रहे हैं तामें हाथीन के हौदान में वैठें राजा के कुमार सिकार खेलिवे कूं जात है कैसी सोभा विन राजकुमारनि की है ॥ सीस पै वाँकी मंडील सो वै हैं ताके ऊपर सिर पेचु कलंगी झुकि रही है ॥ नारि में मोतीन की माला दिपि रही है ॥ भुजान में जड़ाऊ वाजूवंद कसि रहे हैं ॥ हाथ नु में तीर कमान लिये खड़े हैं ॥ सिकार खेलिवे कूं अरु वन की सोभा देखु प्रभु आगे बढ़े ताके वीच में ॥ सुंदर सरोवर है ॥ तिन सरोवरनि में निर्मल जल भरे हैं ॥ कमल डह डहाइ रहे हैं ॥ कर रहे हैं तव तिन पै भौंरानि के झुंड गुंजारि रहे हैं ॥ तिनके किनारेन पै हंस भौस्यारस ॥ कुलंग ॥ बतक ॥ कबूतर ॥ सुन्दरकोलाहल शब्द करि रहे हैं ॥

मध्य—ऐसी शोभा देखि प्रभु आगे वढ़े ॥ तहाँ मथुरापुरी के चारों ओर खाई है जमुना जी की वनि रही है ॥ तामैं सुंदर नाव पड़ी है जिनमें मस्तुल चढ़े तिनपै पचरंगी झंडा जडे तिनपै वर्द्धमान गठे तिनपै मलहा ठाड़े हैं आपुस में सलाह करि रहे हैं ॥ कै कौन घाट पै लगावै तहाँ सुंदर घाट वनि रहे हैं ॥ तहाँ की शोभा देखिकै प्रभु अगारी हूँ वढ़ें ॥ सो पुरी कूं देखे हैं ॥ कैसी वह पुरी है ॥ तामैं परकोटा है ॥ तामैं वड़ी वड़ी बुर्जी छिकि रही हैं ॥ तिनमें तोपैं चढ़ि रही हैं ॥ पेटी भरि रही हैं ॥ गोलानि के गंज लगि रहे हैं ॥ × × ×

अंत—चौबेन की छोटी छोटी वगीची हैं तिनमें छोटी २ वीरनि की मूर्ती है ॥ ता मै एक वगल कूं महादेव की पिंडी है ॥ तहाँ कोई तौ भांग लामें हैं ॥ भिज में कोई धो में हैं ॥ कोई रगड़ें हैं कोई मसाले कूं कौडी लिये जात हैं ॥ कोई और नि कूं ओरे के लड्डूला में है कोई कोई घोंटे हैं कोई छाने हैं कोई रंग लगा में है ॥ कोई पी में हैं कोइ पिमावै हैं ॥ कोई मिर्च के झल्लाट के मारे जीभ कूं दांतन तन दवामें हैं ॥ कोई मिर्च थोरी वतामें हैं ॥ कोई लोटा लिये जंगल कूं दौरे जात हैं ॥ कोई आ में हैं कोई हाथ मटिआमें हैं कोई रज लगामें हैं कोई दंड पेलै हैं कोई मुग्दर भानें हैं ॥ कोई लेजम भाने हैं कोई वान वाँधे है मोर मोर कोई चाल चले हैं कोई लोटन करे है कोई लंगोट राँधे है कोई जाँघिया वाँधे है कोई कफनी वाँधे है कोई अखाड़े में छिरकाव करे हैं ॥

॥ इति ॥

विषय—कृष्ण का मथुरा कंस के यहाँ जाते समय मार्ग में पड़ने वाले वन की शोभा राजकुमारों के शिकार खेलने का, सरोवरों की शोभा, राजा कंस के बाग की शोभा, बारह-दरी का वर्णन, उसकी सजावट, प्रकाश और वृक्षादि की शोभा, मथुरा पुरी की शोभा, खाइयों की शोभा, नावों की सजावट, पहरेदार, तिलंगों, सिपाहियों, दर्वाजो पर बने बँगलों, कंस के शहर में आये देश-देश के राजाओं, राज्य के अधिकारियों और चौबों की बगीचियों का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ व्रजभाषा के गद्य-काव्य का नमूना है। आदि भाग लुप्त हो गया है। अन्त में "इति" शब्द लिखा है पर उससे ग्रंथ का समाप्त होना नहीं समझा जाता। रचयिता के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

संख्या १८०. कोकशास्त्र, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७२५ वि०, प्राप्ति स्थान—गोविंदरामजी, अधिकारी, जोगमाया तथा नंदबाबा का मंदिर, महावन, जिला—मथुरा।

आदि— श्री रनत भवर मौहौ ॥

राजा भौर वासेनी वसौ। ताकी वडी मरजाद। राजा भोज की सी सभा। राजा कौ उजीर ४००। तिनकौ नाम प्रथम हंसः सौभाग मदनः कामसेनी। पदम सेनी। काम राजी। सुरीज सेनी। चंद्रसेनी। कौक देवा। काम समुहा। एते नाम प्रसीधी। राजा कौ अस्त्री ७००।

× × ×

उजीरा सब जुहार कियो। आगी भाट चारण वेद व्यास सकल सभा जुरी वैठी। इतन मौ पूरव देस तौ जोगनी १ आइ वरस १६ के नागी होइ राजा की सभामां ही उं भे रही। तव राजा कौ अचरजु हुवौ। पाछौ राजा सकल अपण उजीर वुलाई कहौ। जुथे इनो पुछौ जतु कुन छौ। कहाँ ते आइ। कुण थाणव। और क्यौ नागी हुइ। पाछौ जोगनी कही

जुहु जोगनी छौ । पंषनी म्हारौ नाव । और नागी हुयौ हुई ज राजा आदी दे आसत्री छौ । इन मौ कोई पुरीष नाही । ता तौ हु नागी हुइ । पाछौ राजा मन मौषी जो । और महल माँ उठी गयौ ।

मध्य—प्रभात हुवो तव कोक देव राजाजी सौ आइ जुहार कियौ । और कहौ जु स्वामी मौ जोगनी जीती हौ: पाछौ राजाजी देषवानौ षदायौ । देषै तौ पड़ी हौ । पाछे जागी और रोवन लागी । पाछौ राजाजी जोगनी बुलाई । और पूछी तु क्यौं रोवौ हो । पाछौ जोगनी षिसानी हुई । नीची जोइ रही । और कहौ जु स्वामी मैं राजा तथा परधान और अनेक हराया था । म्हारा पयाडा औ जुहु नाही उठौ । सुहु पंषनी जोगनी थारौ उजीरी हु जीती । आवहु काइ मुषले जाऊ । मौ कोकदेव नै भजै नाही ता काष्ट भ क्षीण करौ पाछौ राजाजी कहौ । पाछौ राजाजी कहौ जुतु आजी पाछौ कहु सेती बाद न करौ । तौ तो नौ कोकदेव ने परणाऊ । पाछे जोगनी कहौ जु स्वामी बाद न करौ वीसी सेती पाछौ जोगनी कोकदेव नो परणाई । कोकदेव जोगणी नौ घर ले गयौ । राजाजी वौहैत सौज दीन्ही । टंका कौड़ी १ वकस्या । और टंका कौडी षाई आयौ छौ सौ भी वकस्या । सव ऊजीरन ऊपरी कीयौ । पाछौ जोगनो कौ नाऊ सोभाग सुंदरी काढौ । आस्त्री करी राषी । वीलास भोग करन लागा । पाछौ दुहु मिली कोकसास्त्र कियौ । तिह का प्रकार दस कह्यौ छौ । त्यह कौ व्यौरौ प्रथम प्रकार मां आस्त्री का ऊँच नीच लछन जानीवा । दूजा प्रकार मां आस्त्री का और लछन जानीवा । तीजौ प्रकार मां आस्त्री कौ कैसो कैसो मीलीजे ।

अंत—और आस्त्री सोभाग सुंदरी की सै छै । रूप तौ रंभा कौ सौ । वतीस लछीनी । चंद्रवदनी । चंचल तौ लछमो सारीषी । मोह उपजावनी । सव कोकसास्त्रन की जाननहारी । कोकदेवा की भोग पतनी । सुदी १ दिन कोक देव पुछी । जुतु आस्त्री चतुरी । आसी जानन हारी । थां कौ देस कीसो । कौन की वेटी । और जोगनी रूप क्यौ धारौ । पाछौ सोभाग सुंदरी वोली । म्हारा कौन देस छौ । पीता कौ नाऊ सरूप । माता कौ नाय सेन्या । गाँव कौ नाँव घनपुर पाटण । पाछौ कोकदेव वोल्यौ । तै जोगनी कौ रूप कीयो सुक्यौं । पाछौ जोगणी वोली । जु स्वामी वोल छौ हतौ कहु । पाछौ कोकदेव वोल दीयो । पाछौ जोगणी वोली । म्हारौ पिता अपुत्रवत हतौ । महादेव कौ जाप करतौ उपास करतौ । पाछौ राजी महादेव सुपना मांही आय कह्यौ । जु थारौ पुत्री १ होसी । सु सव कोकसास्त्रन की जाननहारी होसे । तीह कौ वीवाह वरस १६ लगन करीसी । पाछौ हुवा वरस सोलह की हुई । मोटी हुई । पाछौ म्हारौ पिता म्हानौ कहौ जुतु नौ गमौ सोतु परणी । पाछौ मौ कही । जु म्हानौ जीत से तीह नौ परणीस्या । पाछौ हु निसरी । पाछौ राजा तथा परधान मौ अनेक हराया । मोटा मोटा सो कोई देस दी संतरा । म्हासो जीतौ नही । पाछे तु भौती-भौती हुरावला नौ जीती ॥ १ ॥

इति श्री कोक देव वीरः कृत कोकस सत्र संपूर्ण ॥ संवत् १७२५ वरषे साके १५९१ वरषे फालगुनी १० भौम वासरे । पोथी लिषतं सुषराम पठनार्थं शुभं भवत् ।

विषय—एक समय राजा भौरवासेनी की सभा में पूर्व दिशा से एक योगिनी नंगी होकर आई। राजा को इस पर आश्चर्य हुआ। योगिनी ने कहा मैं किसी को भी पुरुष नहीं समझती। यदि कोई पुरुष है तो मुझे जीते। बहुत चिंता और विचार के बाद मंत्री कोक देव को उसे जीतने के लिये कहा। कोकदेव बड़े विद्वान और कोकशास्त्र में प्रवीण थे। उन्होंने योगिनी को जीत कर उससे विवाह किया। पश्चात् इस दम्पति ने मिल कर कोक शास्त्र की रचना की। योगिनी का नाम पीछे से सौभाग सुंदरी रखा गया। उसने अपनी कथा इस प्रकार कही :—

मेरा पिता अपुत्र था। वे महादेव की सेवा किया करते थे। पिता का नाम सरूप तथा माता का नाम सेन्या था। ग्राम का नाम घनपुर पाटण था। एक दिन महादेव ने सपना दिया कि तेरी एक पुत्री होगी जो कोकशास्त्र की जानने वाली होगी। उसका विवाह सोलह वर्ष की आयु में होगा।

इसके बाद मेरा जन्म हुआ। जब आयु सोलह वर्ष की हुई तो मैंने पिता से कहा कि मुझे जो जीत लेगा उसी से विवाह करूँगी। किंतु कोई भी मुझे न जीत सका। इस कोकशास्त्र के दस प्रकार हैं। जो इस तरह हैं :—

१—स्त्री का ऊँच नीच लक्षण।
२—स्त्री को कौन-कौन से पति मिलने चाहिए।
३—स्त्री के और लक्षण।
४—स्त्री की योनि के लक्षण।
५—स्त्री को कब किस तरह काम इच्छा होती है।
६—स्त्री को द्रवित करने की ओषधी।
७—किस-किस अंग से काम की उत्पत्ति होती है।
८—काम स्तम्भ।
९—पुरुष इंद्री को दृढ़ करने के उपाय।
१०—चौरासी आसन वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—यह हस्तलिखित ग्रंथ बहुत ही जीर्ण दशा में है। यद्यपि ग्रंथ पूर्ण है तो भी पढ़ने में बहुत बाधा उपस्थित होती है। भाषा राजस्थानी है। लिपिकर्ता ने जहाँ-तहाँ लिखने में अशुद्धियाँ की हैं। इसका लेखक कौन था, यह नहीं दिया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सुप्रसिद्ध कोकदेव रचित कोकशास्त्र का यह अनुवाद है। रचनाकाल भी नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १७२५ वि० है। अनुवाद गद्य में है।

संख्या १८१. लीलावती, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—७३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हीरालाल जी, मु०—पीरूसुवा, डा०—राया, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गनाधिपते नम अथ लीलावती लिष्यते ॥ आठ चावल की रती १ आठ रती को मासौ १ दशमासे की मोहर १ सवादस मासे कौ रुपइया १ चालीश शेर कौ मन १ जैट का रुपइया के भंजैते दमरी कौ आना जानो १

अथ व्याज

जेते आना सैकरा लीजै एक रुपइया कौ कहा जु दीजै। जेते आना तेते दाम एक रुपैया कौ सो परमान। दाम १०० को आना १ जेते सैकरा आंक लीजै येक आंक को कहा जु दीजै। जेते आना तेते दाम एक रुपइया कौ सो परवान दाम १०० को आना १

अथ हुटिवन

जेते आना सैकरा दीजै एक रुपइया कौ कहा जु लीजै। जेते आना तेते दाम एक रुपइया कौ सो परमान। दाम १०० को आना १ और जा लेषे मैं सकरा की दर होइ सो यही भाँति लगाय जै।

अथ बनात षरदि

जै रुपइया गज बनात लीजै येक गृह कौ कहा जु दीजै। जेते रुपइया तेते आना दीजै काहे काजे लेषा कीजै तीन अगुर कौ गिरह १

× × ×

मध्य— लेषो सोने का

तोला १ मासे १२ मासे येक की रती ८ रती की तीसी १६ तीसी के १ दाने १६ इति प्रमान तोले १५ दर ५॥ऽ रती जा कौ हिसाब क्रिया तोले के मासे करै मासे की रती करै रती कों चौगुनी करै चौगुनी करिकै जै रती को भाव होइ तिन कू वीचौ गुनी करै तो लेन की रतीन कू काटि डारै पावै सो रुपइया जानै।

× × ×

अंत— अथ हिसाब धरा कौ

जाकौ उदर हरन कर्तव्यता जैसे जिनसि लेइ मन १ के धरा ४ ओर जितनी जिनसि होइ ताके धरा करै आगै दरि जितेक की होइ तो धरान कू दरि सों गुनि लेइ तो आगै सेर वचे तौ उनकूं भी दरि सों गुनि लेइ तो जितने आंक आवै तो उन आंकन कू १ रुपैया के १० आंक काठियै ओर आगे छटंगी वचै तो उनकूं दरि सो गुनि लेइ जितने आंक आवै तो उन आंकन कूं आना –ऽ के आंक १० काटियै जैसे जिनसि ११॥ऽ ७॥≢) दर ५॥–) धरा।ऽ जाकी कर्तव्यता जैसे १ मन के धरा ४ जाके रुपया ३३। हुये असैही १० मन के धरा ४० जाके रुपया २३२॥ऽ हुये ॥ऽ जाके धरा ३ जाके रुपया १७।≢) हुये आगें ३ दरि प्रमान गुनियें तो जाके आंक ४०॥ इतने हुये इतने आंकन कूं १ऽ रुपैया के १० आंक काटियै जाके ४–) ४॥) आगै ॥≢) छटाक वची इतनी छटाकन कूं दरि सों गुनै तो जाके रुपैया ६३॥≢) इतने आंक......अपूर्ण

× × ×

विषय—लीलावती नामक ज्योतिष विषयक संस्कृत ग्रंथ का व्रजभाषा गद्य में अनुवाद किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। मध्य के संख्या ८ और संख्या १२ के आगे के पत्रे खंडित हो गए हैं। ग्रंथकर्त्ता का नाम, रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या १८२. मारकंडेय पुराण, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० शोभाराम जी, ग्राम—जैंत, पो०—जैंत, जि०—मथुरा।

आदि—श्री गणपते नमः॥ अथ ग्रंथ मार्कण्डे पुरान लिषितं॥

॥ काबि छंद ॥ चौपाई॥

गुरु गोविंद को नांऊ सीसा। कृपाकरी है विस्वा बीसा॥
मार्कण्डेपुरान तास गुन गाऊं। भाषा वाणि वोलि सुनाऊं॥
संवत् सौल सै अठ्यासा। कातिग बुध द्वादसी प्रकास्या॥
बुधवार कृष्ण पछ होई। तादिन कथा वषांणी सोई॥२॥

॥ ग्रंथ कर्त अध्याइ सोवित है॥

कहिये गो मार्कण्डें को भाव। विष्णुपुत्र ह्वै है विधिगाव॥
औतरैगे मार्कंडे पुत होइ। जैमुनि बूझै कहिहै सोई॥३॥

॥ अव आगें कथा चलित है॥

॥ चौपई॥

हुतौ मार्कण्डे रुषिसरतया। विष्णु करी ता सेती कृपा॥
करी कृपा रीझें रिष सेती। कछु विनती ताके हेती॥४॥
मांगि मार्कण्डे चाहे जोई। जौ मांगै सो देहुं सोइ॥५॥

मार्कण्डे बाच

जौ जान्यौ सो देहुं गुसाईं। मनसा बाचा दया कराहीं॥

श्री भगवान वाच

तुमकौ देहु कहा रिषि देवा। औतर पुत्र करौंगो सेवा॥
तब औतरे मार्कंडे हरि। बहुत भांति कर सेवा करी॥ ६॥
मार्कण्डे नाम पर्‍यौ तव जाना। ताकी आवं सुनौ अब कानां॥
सात कलप आरबल होई। एक कलप ब्रह्मा हर सोई॥ ७॥

मध्य—चहु युग गये चौकड़ी येका। जांहि इकोत्र सै सुनो व मेका॥
इंद्र मरै एक तब जाई। और कथा सुनिये चित्त लाई॥
चवदह इंद्र मरैंगे जवही। एक दिन ब्रह्मा वीतै तवही॥
एसै ब्रष सौ वीतै आई। तबै एक ब्रह्मा मरिहै भाइ॥८॥
एक कलप है ताका नामा। ऐसा सप्त बीतें येह कामा॥
मार्कंडे मरि है तव जाय। ताकी कथा सुनौ चित्त लाइ॥ ९॥
एक रिष मार्कंडे पै आयौ। चतुरानन कौ पुत्र कहायौ॥
जैमुनि रिषि है ताको नामा। पूछत भयौ ताहि यह कामा॥११॥

॥ जैमुनिवाच ॥

वेद् व्यास कौ सिषि हंस ही । मार्थ कथा सुनि उनि कही ॥
तामैं अनंत भांति के धर्मा । सुनत कटैं मेरे सव कर्मा ॥१२॥
एक आसंक्या मेरै रही । सो तुम ... ...
मोकौं कहौ कृपा कर सार । पमे सुक्ये ··· ... ... ॥१३॥
कैसे द्रोपद्रा पंच भातारी । पंडवन व ... ... री ॥
ए पंडवन के वाल कंवारे । अस्वस्थामा के सों ... ... ॥१४॥
पंच पुत्र द्रौपदी केरा । भूमि पौढि कुर वर्न हेरा ॥
सूतै देषि २ मारे जाई । कहो गुसांई मो समझाई ॥ १५ ॥
वलभद्र तीर्थ क्यू गये । चारि प्रसंग कहौ क्यू भये ॥ १६ ॥

श्री मार्कण्डे वाच

जै मुनि सुनिय संध्या बारौ । अग्निहोत्र हू कर्न विचारौ ॥
तौंही ताऊं पंछी च्यारी । कथा कहैगे वहु विस्तारी ॥१७॥
विधि पर्वत है तिनकौ ठामा । पंछी धर्म उनहूँ कौ नामा ॥

॥ जैमुनि उवाच ॥

कैसे ज्ञानबंत ते भये । लष चौरासी ··· ···

॥ मार्कण्डे वाच ॥

इंद्रासन नार्द ज ... ...
अपछरा हाजिर आई ॥

॥ श्री नार्दपु ... ॥

··· ··· राषे जनक हैं गांधर्व बहु गावें ॥
तव वन अरवी धरयौ सुभाव । कहा एकै कहै रोवहु गाव ॥
एक कहै हूं रिषि है रिझाऊं ॥ १९ ॥

॥ मार्कण्डे वाच ॥

हमकौं कहा रिझावो भामा । दुर्वासा पहि रिझावौ गुण गांमा ॥
तौ तुमकौ जानौ सिरदारा । तव तिनि सव मिलि कियौ विचारा ॥२०॥
तब ही इंद्रलोक तजि धाई । चलि स्वमेर पर सिर धाई ॥
तिन में नामी कोइल भई ।··· ··· ···

प्रस्तुत प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—मार्कण्डेय पुराण का हिन्दी में पद्यानुवाद किया गया है ।

रचनाकाल

संवत् सोलसै अठ्यास्या । कातिग वुध द्वादसी प्रकास्या ॥
षुधवार कृष्ण पछ होई । तादिन कथा वषांणी सोई ॥

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण लिखा है। केवल तीन ही पत्र लिखे गए हैं। अंत का पत्र खंडित है। रचयिता ने आरम्भ में रचनाकाल तो दिया है; किंतु अपना नाम नहीं दिया। रचनाकाल संवत् १६८८ वि० है लिपिकाल ग्रंथ के खंडित हो जाने से मालूम न हो सका।

संख्या १८३. मथुरा वर्णन, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१०३/४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० अयोध्या प्रसादजी, स्थान—फुलरई, पो०—बलरई, जि०—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ परान्हे मथुरा वर्णन ॥ श्री गवान के संग वालक गये उनके श्रंगार वर्णन करे हैं वे सुंदर अलकारी कारी सटकारी अलकैं तिनके ऊपर पचरंगी चीरानुकीलो मोर मुकुट तुर्रा तुर्री मिल मिलाय रही हैं आरसी से गोल कपोल कानन में मकराकृत कुंडिल झोका खाय रहे हैं वाँकी भृकुटी मान सी चढ़ रही है तिनकी चलन न्यारो होयवे मो आय रही है वो सुन्दर विशाल भाल तामें केशरि की खोरि लगि रही है वो सुआसी ऊँची नासिका तामैं गजमुक्ता की वुलाक झोका खाय रही है विंवा से अधर तामैं कुंदकली से दशनमन्द मन्द हँसनि तामैं वीरी की रचन जम्बूफल से चिवुक त्रिरेखायुक्त कंठ तामैं रत्न जटित सुवर्ण की धुकधुकी हलन हो रही है। ताके ऊपर रत्नजटित हार भुजान में वाजूवन्द वो सुन्दर अमेठ मा कड़े रतन सों जड़े गोल पोहचेन में पड़े भये है जड़ाऊ पहुँची चटकीली पीताम्वर ताके ऊपर छुद्र घण्टिका पावन में नूपुर पहिरे वाये जठर पट धरे वाये जरीदार पटुका के इत वित दोनों ठोर लटके हैं तिनके वाँके छोर छूटे हैं वो सुन्दर वाको तिलक लगी रहो है मांथे पै मोर पंख हाथन में सोनेन की जड़ा छरीया में ऐसे सव गोप चले जाय हैं वलदाऊजीन के संग चले जायँ है वीच में श्री कृष्ण चले जायँ हैं वलदाऊजीन के संग चले जायँ हैं वीच में श्री कृष्ण चले जायँ हैं तहाँ पहिरे वनमाला संग लिये ग्वाल वाल गरे मोतिन की माला नन्दलाला चले जायँ है भैया वलराम सहित श्री कृष्ण कंस मामा की पुरी को देखत नरनारीन को देखत वजार में चले जायँ हैं ॥

मध्य - तासं प्रविष्टौ वसुदेव नन्दनौ जो श्याम सुन्दर मथुरा को देखन गये तहाँ पहिलें ही कहा देखत भये सो सोभ वर्णन करैं हैं तहाँ मथुरिया नगरी वड़ी रूप की आगरी वाला रूप वागरी सवसे चले आगरी धरैं सीस गागरी ऐसे पनघट पर ठट्टकेढ़ ठाड़े हैं पनिहारिन के तब तौ श्री कृष्ण अनेक प्रकार की हंसी करते भये ॥ यानी यं पातुमिच्छामित्वतः कमल लोचने यदि दास्य तिने छामिने दास्यति पिवाम्यहं ॥ १ ॥ याकौ पानी मीठ है, याकौ पानी मैला है याकौ घड़ा रूद है ॥ याकौ घड़ा कोर हैं याकौ पानी पीयेंगे याकौ पानी नहिं पीयेंगे या प्रकार हँसी करैं हैं कस को स्वभाव ऐसे होंयगे तैसे नगर की स्त्रीन को होयगो तव तौ श्री कृष्ण के रूप माधुर्य देखि कें अमृत सरीके वचन सुन कर का वोलीत दुक्तं ॥ उक्तिर्ध्याया स्फुरति नयने ध्यानमन्यत्र चास्ते यस्य स्थनं नखनपनैः न श्रवोन्यं

श्रणोति स्यामं दृष्ट्वा पथि चकितं रीति रेताहशीनो वृन्द्ररण्ये चिरपटि चिताकेन जीवंति गोय्य ॥ १ ॥

ऐसे श्री कृष्ण कूं देखि सहचारी के मनुष्य स्त्री सब चली अमुकी चले गामैं चलोंगी या प्रकार कामी अकामी निकामी सब कामी अंतरगामी गरुड़गामी कृष्ण नामी के देखन को चले आये सो आयकैं घाटन पर बाटन पर ठाठ बाँधिकें जहाँ तहाँ बराबरि जो किनारे तिवारे छज्जे चौवरि छत्तन पर छज्जन पर चारौं ओर भीर छकि रही ॥

अंत—अचर चर समस्ता नन्द सन्दोहकारी। निखिल पसुनारी सर्व चिन्तापहारी विषया विष्ट चित्तानां विछन्वी वेशस्वद्रूरतः। वारुणी दिग्गतं वस्तु वृजनैऐन्ही किमाप्नुयात् धारण करे है अपनी शोभा कृष्ण को देखावे हैं जैसे अपने घर महिमान आवै ताकूं अपनी वड़ार के लिए अमकछी वस्तु भेट करे तद्वतृराजन् मथुरापुरी की शोभा का कहूँ तथा च छायापि लोचन पथं जजंगामयस्या से ये वधू नगर मध्य मलं करोति ॥ किंचाकलष्य नगरे मुकुंद = अंधोपिवंधु कर दत्त कर प्रयाति इतने में एक स्त्री जो आई सो सबके ऊपर पांवड़े की केशीषरपर जा वैठी ताकी कैसी शोभा हो रही है हे राजन् परीक्षित और का कहौं मथुरा मणिमय जो है सो कृष्ण के प्रतिविंव जो परा सो सवरी मथुरा कृष्ण मय दीखै है या प्रकार भगवान गोपन कूं संग लीये सवै दर्शन देत पुरी कूं देखत चले जात भये ॥ १ ॥ संपूर्णमस्तु ॥

विषय—श्री कृष्ण का मथुरा में पहुँचना, वहाँ की शोभा, ग्वालों के साथ आनन्द विनोद और शृंगारादि का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ ब्रज भाषा गद्य काव्य का एक नमूना है। उसमें कृष्ण का मथुरा में पहुँच कर ग्वाल बालों सहित आमोद-प्रमोद करने और पुरी, निवासी आदि की शोभा और शृंगारादि का यथेष्ट वर्णन किया गया है। प्रायः समस्त ग्रंथ गद्य में ही लिखा गया है, कहीं-कहीं कुछ श्लोक भी लिखे हैं। इसमें उपमादि अलंकारों और तुकबन्दी पर विशेष ध्यान दिया गया है। रचयिता के संबंध में कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ।

संख्या १८४. मोहनदेव जी की वार्ता, कागज—देशी, पत्र—२५, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—कैथी और नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सोहनलाल जी, ग्राम—विशंभरा, पो०—शेरगढ़, जि०—मथुरा।

आदि—एक चलन समै देषै तो ॥ श्री विष्णु राजा जुस्टलु श्री मोहन देव जु के आइ भोजनु करै। कही जैसो भुजनु अजे कीनौ है तेसो अवलौ नही कीनो हो प्रकते सुधार की आतमा कौ दरसनु भयो श्री मोहन देव जु को दरसनु भयौ ॥ ९ ॥ श्री श्री...

एक चलन समै देषै तो ॥ श्री मोहन देव जु कौ ध्यान मै तारी लगी वस्त मै मनु गरक भयो। ता वेरट कौ दीरघ दरसनु भयो। मन की वेरट सूधरी ता आतमा कौ दरसनो भयो श्री मोहन देव जु को ॥ १० ॥

× × ×

मध्य—एक चलन संमै देषै तो गोसाई जी ॥ देषै तो पाताल थ अकास लौ कौट की नीव है। ताके कनी कगुरने अनेग ठाढे हैं धरम भगति की ऐसी नीव भई। ता आतमा कौ दरसनु श्री भाउ जू कौ भयौ। ऐसो दरसनु वैकुंठ को देषौ श्री गुसांई जू नै कही धरम कौ दल देष्यौ ॥ १२ ॥

× × ×

एक चलन संमै जो देषे तो ॥ एकु छैलौ है। ताकै पान झरत हैं। श्री मोहन देव जू कही याके पान संचै धरौ। आगे ऐसै समै आवेगे ईने पत्र ने सौ कारजु होइगै। छौलौ जस कौ व्रिछु कह्यौ। पान सवद कहै ॥ जा संचते ते मुकते होइ जसू आयो ॥ ता आतमा कौ दरसनु भयो श्री गुसाई मोहनदेव जू कौ ॥ ३० ॥

× × ×

अंत—एक चलन संमै जो देषे तो ॥ श्री मोहन देव जू कै उपज भई ॥ हमारी साज हार मै है। सो जो आवै देषै तो लावत हौ ॥ एक पवनु रूप नरु है। पवन ही का मौट धरै अधफर चलौ अवत है। एकु श्री गुसाइ जू कौ फरगुल आने उठायो। तामै पवन ही कौ चेनु है। मनसा सहेत पंचहू पवन सुधारो ता आतमा कौ दरसनु कह्यौ ॥ ३६ ॥

विषय—गो० मोहन देव स्वामी के ध्यान करते समय, चलते समय और शिष्यों को उपदेश करते समय जो जो रहस्यमय अध्यात्मिक घटनाएँ घटित हुईं, उनका वर्णन किया गया है। एक पत्र में घटना का वर्णन है और उसके आगे दूसरे पत्र में उसी घटना सम्बन्धी चित्र दिया है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता का नाम मालूम नहीं। रचनाकाल तथा लिपिकाल भी ज्ञात न हो सके। ग्रंथ विचित्र ढंग का है। इसके देखने से मालूम होता है कि पहले गुसाईं मोहन देव स्वामी एक बड़े भक्त हो गए हैं। उनके जीवन में ध्यान करते समय जो जो रहस्यमय घटनायें घटीं उनका वर्णन उनके किसी शिष्य ने इसमें किया है।

जो घटनाएँ घटित हुई हैं उनके चित्र भी दे दिये हैं जिससे उनका रहस्य अच्छी तरह समझ में आ जाय। चित्र सब रंगीन हैं; परंतु उच्च कोटि के नहीं। उनमें केवल भाव दर्शाने का प्रयत्न किया गया है।

ग्रंथ का नाम विदित न हो सका। केवल विषय की दृष्टि से "मोहन देव जी की वार्त्ता" नाम रख दिया है। ग्रंथ सभा के लिये प्राप्त कर लिया गया है। इसके अक्षर कुछ तो कैथी के हैं और कुछ नागरी के। भाषा भी बहुत कुछ राजस्थानीपन लिये हुए है। लिपि बहुत ही अशुद्ध है।

हस्तलेख के प्रारम्भ के ८ पत्रे चित्र सहित नष्ट हो गए जान पड़ते हैं, क्योंकि एक घटना का वर्णन एक ही पत्रे में है और उसके आगे के पत्रे में उसी के भाव का चित्र दिया है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में नवीं घटना से पत्रे प्रारंभ होते हैं। बीच २ में भी कुछ घटनाओं के चित्र नष्ट हो गए हैं।

संख्या १८५. मोहिनीजी को वर्णन, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१०½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५३ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० लक्ष्मी नारायणजी, स्थान—धनुवाँ, पो०—बलरई, जि०—इटावा ।

आदि— श्री गणेशाय नमः ।। मोहिनीजी को वर्णन ।।

बहुत सुंदर साट पाट लह गाजा के दामन में मोतिन की लामन लगी पहिले ही पट्टे किनारी लगी ताके ऊपर डोरी लगी ताके ऊपर चौड़ो गोटा ताके ऊपर गोखरू फिरि पट्टे की कोर ताके ऊपर कँगूरा ताके ऊपर रतनन के हरे पीरे काम की वेलि बूटा जाके ऊपर मणिन के काम के मोर तोता चकोर मैना हंस पपैयान के फूल कटि रहे हैं जामे पचरंग रेसमी कलावत्तू के काम के मोतीन झुरी जामें ऐसो सुंदर नारो है कलवत्तू के काम की जामें कोर झल्लू पल्लू दोऊ छोर झकझोर जामें कढ़े मोर चकोर ताको प्रकाश चहुँओर बहु सुंदर चित-चोर नन्द किशोर ने सारी ओढ़ि लीनी है ।।

मध्य—बहुत सुन्दर चौड़ौ माथो है ताके ऊपर शीश फूल और वेंदी चन्द्रक पहिरे हैं तिनके नीचे एक रत्न जटित की वेदी लगी है ताके नीचे मुलतानी कमानी सी जुदी जुदी दोऊ भौं हैं तिनके नीचे कमल सरीखी पाँखुरी सी डहडही आँखें हैं तिनमें लाल लाल कोरा छिटकि रहे हैं सुरमा लगी रहो है तिनके तनक तनक लाज भरी चितवनि है तिनके नीचे वह सुआ की सी सुघर नासिका है तामैं नाथ झोका खाय रही है तामैं बड़े २ मोती लगि रहे हैं तिनके वीच में एक लाल लगि रह्यो है ता नथ में जड़ाऊ मोरनि को भलुका दमकै है ॥ ताके नीचे मीनाकारी के काम की झुमकी लटकि रही है वह कोमल कानन में झुमका करनफूल वारी पहिरि लीनी है और गोल गोल कपोलन में छल्लादार अलकै छटकि रही है ॥

अंत—वह मुख में वीरी की रचन वह कुंदकली से दन्त पंक्तीन की विकसन तिनमें चोपन की चमकन और मिस्सी की लगन वह गोल कपोलन पै अलकावली की छिटकन वह कानन में झुमका झुमकीन की झूमन ऊपर तामे मोतीन की लगन वह भलकादार नथ की दमकन वह झुमकी की लटकन वह आँखिन में लाज भरी चितवन वह सुरमा की लगन लाल डोरी की छिटकन और माथे में वेंदो की चमकन वेणी की परनतिन में लाल की गुथन वह चन्द्रकलान की फवनि होती चली आवै है सो मोहिनीजी हो गये ॥ शुभम् ॥ संवत् १९५३ मिती आश्वनि कृष्ण द्वादशी ।

विषय—मोहिनी की शोभा का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में मोहिनी की शोभा का वर्णन है जो व्रज भाषा गद्य-काव्य का नमूना है । यह वर्णन उस समय का है, जिस समय विष्णु भगवान् ने भस्मासुर से पार्वती की रक्षा कर शिव को बचाने के निमित्त मोहिनी का रूप धारण किया था ।

संख्या १८६. नायिका भेद, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—मास्टर छिद्दू सिंहजी, ग्राम—सिहाना, पो०—जैंत, जि०—मथुरा ।

आदि— ...... तन सुंदर जोवन जोतन की चिनगी ।
थिरताइ की आवनी पाइनि मैं सुव चंचलता की उगैं उड़िंगी ।
वतियानि कियौ धुनि पावति हौं मुषतें निकसेंगी सुधा सौं पगी ।
जिन आंषिनि सूधे ही देषति ही अव ते अषियाँ तिरछान लगीं ॥ २ ॥
मुग्धा भेद २ अग्यात जोवना ग्यात जोवना । ज्ञात जोवना ।

दोहा

अपन में जोवन जो नहीं आयौ जानै वाल ।
ताहि कहत अग्यात जोवना सुंदर गुनी रसाल ॥ ४ ॥

कवित्त

काचे पुंगीफल से उरोजनि लगावै लेप चल दल दलनि दवावति अपानि है ।
देषि रोम राजि राजि जानति पपीलसाजी वाजि सी कपोत लेति झझकि भुलानि है ।
रामजी सुकवि देषि देषि मुसक्याति आलि ताली दे हसन वाली चालति नवानि है ।
आइ तरुनाई देह जानति न वाम जिमि पाइ गृह संपति सुदामा नहीं जानी है ॥

मध्य—तथा परकीया में औरहू भेद हैं वाक विदग्धा १ क्रीया विदग्धा २ लछिता ३ कुलटा ४ मुदिता ५ अनुसयना ६ अनुसयना तीनि तथा गुप्ता तीनि भेद या भांतिपरकीया के भेद हैं ॥ अथ वाक विदग्धा वचननि में चतुराई करै सो वाक विदग्धा ॥

दोहा

करै वचन मैं चतुराइ वाक विदग्धा जानि ।
करै क्रिया मै चतुराइ क्रिया विदग्धा मानि ॥

॥ कवित्त वाक विदग्धा यथा ॥

वोलति ही सजनीनि मिली त्रीय चौपरि चारु महारस लैवौ ।
नंदन गोकुल चंद जू कौ कछु दिष्टि परयौ ललच्याइ चितैवौ ।
प्यारी प्रवीन कह्यौ पर ओट सौं कीजतु है कित आपनौ ऐवौ ।
जो करै ईस तौ वीस विसे कछु दाउ परै अव कें मिलि जैवौ ॥ १ ॥

अंत— अथ स्वाधीनपतिका

जाके रूप गुन सौं रीझि कें प्रीतम जाकै आधीन है जाइ सो स्वाधीन पतिका ॥ ७ ॥

अथ अभिसारिका लछन

पिय के मिलिवे कौं बड़े उछाह सौं जाइ तथा वड़ौ साहस है जाकैं तथा समै समान सोभा सजति सो अभिसारिका ॥ ८ ॥

॥ इति अष्ट नाइका ॥ तथा नवई नाइका आगम पतिका कहावे है । जा नाइका को पीउ विदेस में है ताकौ आगम विचारे सो आगम पतिका नाइका है ॥ ९ ॥

नाइका भेद और हू कहे हैं तथा नाइका भेद ग्यारह सै बावन है ११५२ तैसेई नाइक के भेद है पति उपपति वेसक तीनि भांति के पुरुष हैं तिन भेद वौहौत है ।

विषय—नायिका भेद वर्णन किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार से है :—

स्वकीया — मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा, धीरादिक भेद तथा जेष्ठा कनिष्ठा वर्णन,

पत्र ५ तक।

परकीया—ऊढ़ा, अनूढ़ा, वाक् विदग्धा, क्रिया विदग्धा, लक्षिता, कुलटा, मुदिता, अनुसयना, गुप्ता भेद वर्णन, पत्र ५ से ९ तक।

सामान्या— रूपगर्विता, प्रेमगर्विता, अन्य संभोग दुःखिता और मानवती,

पत्र ९ से १० तक।

अष्टनायिका—प्रोषितपतिका, खंडिता, कलहंतरिता, विप्रलब्धा, उत्कंठिता, वासक सज्जा, स्वाधीन पतिका और अभिसारिका, पत्र १० से १२ तक।

नवमनायिका—आगमपतिका ··· ··· पत्र १२

विशेष ज्ञातव्य——न तो रचयिता का नाम ही और न ग्रंथ का नाम ही विदित हो सका। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात ही हैं। इसका केवल प्रारम्भ का पत्र लुप्त है। इसमें निम्नलिखित कवियों की नायिका भेद सम्बन्धी कविताओं के उदाहरण दिए गए हैं।

१—रामजी सुकवि २—मतिराम ३—सुंदर ४—गननाथ। ऐसा जान पड़ता है कि इसको किसी ने उपर्युक्त कवियों के ग्रंथों के आधार पर रचा है। यद्यपि यह एक छोटा सा ही ग्रंथ है तो भी बहुत महत्त्वपूर्ण जँचता है। संक्षेप से करीब २ सभी विषयों का वर्णन स्पष्टता से कर दिया है। गद्य का भी प्रयोग किया गया है। ग्रंथ सभा के लिये प्राप्त हो गया है।

संख्या १८७. नौसेर पातसाह की दस ताज की वात, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—$8\frac{1}{2} \times 3\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० परमानंद, ग्राम—नोनेरा, डा०—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर।

आदि—श्री हरये नमः अथ नेसेर पातसाह की दस ताज की वात लिष्यते ॥

नौसेर वातसाह के दस ताज रहती तिनमै सै एक ताज पहर के तषत पर वैठते रहै दरवार हाजिर होइ तव एक मनुष्य उठि करि उस ताज मै लिष्या था श्री भगवान की भगति करते रहो १ तुमकौ जो चाहै तिनकौ तुम भी चाहौ २ काम के समै न वालेन सू काम लेते रहौ ३ वावले फितूर सूं दूर रहौ ४ क्रोध के वषत कछू अरज मति करौ ५ आदमी के दुख देने मै राजी मति होऊ ६ हित उपदेस ग्रंथ वडेन के पास मुष की वानी सुन्या करौ ७ जो वात कहने की नहीं होय जिसको मति कहौ ८ जो चीज मांगने की नही होई जिसकू मति माँगौ ९ हर एक काम में जलदी मति करौ १०

× × ×

मध्य—ताज आठमी मै यह लिष्या था ॥ सवके साथ भलाई करौ १ अपने स्वभाव कूं भलौ रषौ जिससे तुम्हारौ जीतव्य आनंद सै गुजरै अपने औगुन होय तिनकौ छोड़ो किसी से मुदारत करनी होय वहाँ क्रोध मति करौ लराई ऐसी करौ जासू फेर मिलवे कू जगै रहै षरच आमद तै सिवाय मति रषौ

अंत—ताज नव मौ मै यह लिखा था नये वृक्ष को आरोपन करौ पुराने को उषारि डारौ जिस सभा में जाओ तहाँ हाथ पाँव जुवान अपने वस मै रषौ बुरे काम सू दूर रहौ बुरी वस्तु मै बडाइ मति जानौ निरबुधी गुनहीन होय तिसका कहे का बुरा मति मानौ वावरे सू सिष्या मति करौ

ताज दसमी में यह लिख्या था आपसे छोटा होइ तिस पै दया राषौ वृद्ध के कहने की सहनता राषौ और उनका आदर सतकार करौ ज्वान अवस्था का काम वृद्ध अवस्था मति करौ माता पिता की आग्या मै रहौ परलोक कू इस लोक मै वेचौ मति मृत्यु का भय राषते रहौ जीतेव थोरा समझौ इह हवाल नोसेर पातसाह की दस ताज मे लिष्या था १० इति नोसेर पातसाह की दस ताज संपूर्णम् शुभम् ॥

विषय—नौसेर सम्भवतः नौशेरवाँ बादशाह के दस ताज थे। प्रत्येक दिन वह उनमें से एक ताज पहन कर दरबार में आता था। दरबार में एक मनुष्य उठ कर ताज में लिखे नीति के वाक्यों को पढ़ कर लोगों को सुनाता था। दसों ताजों पर नीति के जो वाक्य लिखे थे, उनका वर्णन यहाँ किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में रचयिता का नाम नहीं दिया है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथ गद्य में होने के कारण महत्वपूर्ण है। इसकी भाषा बहुत कुछ खड़ी बोली है।

संख्या १८८. नवरस वर्णन, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—११½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६७२ वि०, प्राप्ति स्थान—पं० श्री वल्लभजी, स्थान—शेरगढ़, पो०—शेरगढ़, जि०—मथुरा।

आदि— अथ नवरस वर्णनं ॥

श्री कृष्ण राधिकाजी के हेत तौ श्रृंगार रूप भये। कहा जब राधिकाजी ते मिलिके विहार कीनों तब श्रृंगार रस भयो ॥ १ ॥ और जब गोपीन के वस्त्र हरे कहा चुराये अज्ञाम वस्त्र और गोपी जल ते न्यारी कीनी सूर्य्य नारायण कों दंडवत करवाई तव गोपी लज्जित हू भई और हसी हू कछू आपु हू हसेः तव हास्य रस भयो ॥ २ ॥ और जब माता ने दामरी ते वांधे तव दामरी की गांठि पूरी नहीं आईः कहा जब तांइ दोनौ ओर अहंकार रह्यौः दसोदा मैया नै तौ यह विचार कै तनक सौ छोरा है याही वांधि ही लेहुगीः और श्रीकृष्ण महाराज ने यह विचारी कै मेरी माँ या तौ त्रलौकी कों वांधै हैः सो यह गोपी मोहि कैसें वांधि लेहिगी यह दोनो ओर जब तांइ भाव रह्यौ तव तांइ दामरी में गांठि नहीं लगी। और जब जसौदाजी ने यह विचार कीनौ यह बालिक साधारन नहीं है ईश्वर है और श्री कृष्णचंद्र ने यह विचारी कि जो मैं ईश्वर हूँ तौ कहा भयौ आखीर तौ मेरी माता है और वृद्ध सरीर है अव हारि गई है दामरी मैं वधि जानौ ही जोग्य है तव एक ए आगुर दोनौ ओर ते दामरी वढी तब करुणा रस भयौ ॥ ३ ॥ और जब केसी दैत्य कों मार्‍यौ बड़े क्रोध सौ तहाँ रौद्र

रस भयौ ॥ ४ ॥ और वत्सासुर कों मारयौ तब वीर रस भया। वीर रस काहे ते जान्यो जैसें सूरि मारण मैं धरि परै है अैसे ही श्री कृष्ण महाराज वत्सासुर पै दौरि और सींग पकरि कै उखारि लीयौ फेरि सीगन ही की मारु दीनी यों वीर रस भयो ॥ ५ ॥ और जब दावानल कौ पान कियौ तब भयानक रस भयौ ॥ ६ ॥

मध्य—कहा ग्वाल बछरान की जरिवे की भय भई याते भयानक रस भयो ॥ ६ ॥ और जवपूतना कुचन ते विष लगाय कें गोकुल मैं आई श्री कृष्ण के सुष में स्तन दीने तव गाढें कुच गहिके वाके प्राण कुचन की राह खैंच तव श्री कृष्ण कौं गिलानी आइ जाकौं दूध पीजिये ताके कहा प्राण लीजिये जहां गिलानी होय सो वीभत्स रस होइ है सो याते वीभत्स रस भयौ ॥ ७ ॥ और जव ब्रह्मा नें वछरा और ग्वाल चुराये तव श्री कृष्ण आपु ही बछरा ग्वाल भये तव ब्रह्मा आय के ब्रज में देषैं तौ यहां ग्वाल वछरा है और ब्रह्म लोक में जाय देखै वहां हू ग्वाल वछरा हैं तव ब्रह्मा की मति हरी गई: तब अद्भुत रस भयो काहेत जान्यो कै ब्रह्मा आपुही तों पृथ्वी कों संग लै कै देवतान सहित छीसागर पै मेरी अस्तुति कीनी और अव मेरी परीक्ष्या लैवे कों वछरा ग्वाल चुराये याते अद्भुत रस भयो और काहेते भयौ कै छीर समुद्र की वात तों दूरि की है अव देवकी के मंदिर में आय कै मेरी गर्भ स्तुति करि गयों है अव मेरी परिक्ष्या ले है याते अति अद्भुत भयो ॥ ८ ॥ और जव सांत चित होकें विचार कीयौ कि कहा कारज करि चुके और कहा कार्य करना रहया पृथी पै तहां सांत रस भयौ यह श्री भागवत एकादस स्कंध में श्रीकृष्णजी ने उद्धवजी ते वर्नन कीनौ है। तहां सांत रस भयौ ॥ ९ ॥ याते श्री कृष्णचंद्र ही मैं नोहूं रस हैं ॥ ९ ॥

अंत—अथ चारि प्रकार की गोपीन कौ वर्णन। नित्यसिद्धा १ साधन सिद्धा २ श्रुतिरूपा ३ ऋषिरूपा ४ ॥ ब्यौरौ ॥ नित्यसिद्धा तौ वे हैं जो गोलोक तें साथ ही आमै और साथ ही चली जांय। और साधन सिद्धा वे हैं जिननें कात्यायनि महामाये पूजकें वर-दान माग्यौ है कि श्रीकृष्ण वर मिलै ॥ और श्रुतिरूपा वे हैं जो वेद की श्रुति न अस्तुति करी हे फेरि वे वृज मैं प्रगट भई है ॥ और ऋषिरूपा वे हैं जिनने जनकपुर मै और वन में रामचंद्रजी कौ दर्शन कीनौ हो तिननें आय कै वृज मै अवतार लीनों ॥ ४ ॥ सं० १६७२

विषय—श्रीकृष्ण चरित्र से नवरसों का उदाहरण देकर भगवान् श्रीकृष्ण को नव रसमय सिद्ध किया गया है तथा गोपियों के नित्यसिद्धा, साधन सिद्धा, श्रुतिरूपा और ऋषिरूपा नाम से चार भेद वर्णन किये हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ रचयिता का नाम तथा रचनाकाल का कोई पता नहीं लगता। लिपिकाल ग्रंथ के अंत में संवत् १६७२ दिया है जो ग्रंथ की लिखावट और कागज को देखकर संदेहोत्पादक है। शायद जिस प्रति से यह ग्रंथ उद्धृत हुआ है उसका ही लिपिकाल सं० १६७२ वि० रहा होगा।

संख्या १८९. पक्षी चेतनी, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—चौ० केहरी सिंहजी, स्थान—नयावाँस, पो०—इटावा, जि०—इटावा।

आदि— श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पक्षी चेतनी लिख्यते ॥

जब जटायु देख्यो शशि, पंषन करि बलहीन ।
भक्त जानि रघुनाथ जू, मुक्ति गीध को दीन्ह ॥ १ ॥

चकोर	बाज	चिरीव	मोर
टेंक	परेवा	षंजन	काग
भरता	मुरगा	तीतिर	सुआ
किलकिल	सरहस	हंस	हारिल

प्रान ८

किलकिल	भँवरा	सुआ	कोकिल
षंजन	पपीहा	मटमर	पीलव
पर्णाइ	हंस	काग	टेंक
तूती	बकुल	तीतिर	हारिल

वेद ४

अहो निशा जब होइगी, करु सिंगार के काज ।
नाहीं मैं नाहीं करौं, सुनो कान्ह ब्रजराज ॥ २ ॥

सावन नहीं सुहावना,
मन भावन बिनु मोहि ।
विरह कुहक मनमें उठी,
बाल विहंगम होइ ॥ ३ ॥

मानत ज्यो भूषन तज्यो,
उठि चलुरी बृजनारि ।
तुही तुही पिय रटतु है,
सीता की अनुहारि ॥ ४ ॥

किलकिल	भँवरा	भरता	हुलहुल
मुरगा	पीलव	सरहस	कोकिल
हंस	लाल	बया	चीमल
परेवा	मटमर	तीतिर	हारिल

कला १६

मध्य— उमड़ि घुमड़ि घन बरसही,
चपला चमके जोर ।
होत दुःख सब सषिन को,
अब बन बोलत मोर ॥ ११ ॥

तोहि प्रीतम बोलै सखी, मैं आई एत जानि ।
टेंक ढाइंम करो उठी, चतुराई तजि मान ॥ १२ ॥

सखीन मध्य वैठी हती, चलत न सुनो मुरारि।
सुआ पढ़ावत सुन्दरी, गयो मदन सर मारि॥१३॥
सोहैं कजरारे नयन, षंजन गंजन मीन।
अर्द्ध डीठि चितई सखी, पिय प्यारे का कीन॥१४॥
भुज फरकै तरकै जवै,
आनँद उर न समाइ।
अहो काग कव आइहैं,
मिलिवें कों अकुलाइ॥१५॥

अंत— आयु गई स्मान को जव सरहस वोली ताल।
गृह आए प्रीतम मिले, अति सुख पायो वाल॥२७॥
जौन किलकिला पंष वल, थकि तवुणी यों जात।
निरवारे छवि मीन की, फिर नैन उठे तेहि काल॥२८॥
प्रीतम को भोजन रच्यो, छोड़ि सवै गृह काज।
वोले सव तीतिर कहौ, मिले श्याम मोहि आज॥२९॥
देषत ही मन लै गई, नवल विचक्षन नारि।
जीति लई गति हंस की, विछुअनि की झनकारि॥३०॥
चारि जाम जागे सषी, झूठी सो हौ वात।
वात जहाँ ... ... (शेष लुप्त)

विषय—पक्षियों और नायिका से सम्बन्धित कुछ दोहों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में ३१ दोहे हैं। वे प्रायः संयोग और वियोग श्रृंगार से सम्बन्ध रखते हैं। प्रत्येक दोहे में श्लेष से अथवा उपमान के रूप में किसी न किसी पक्षी का नाम आया है। ग्रंथ के आदि में तीन कोष्टों में से प्रत्येक में सोलह-सोलह कोष्ट बना कर प्रत्येक कोठे में एक-एक पक्षी का नाम लिखा गया है। कहा जाता है कि ऐसे कोष्ट चौपड़ आदि खेलों की भांति खेलने का काम देते हैं, परन्तु प्रस्तुत पुस्तक में इसका कोई नियम नहीं लिखा गया है।

रचयिता और रचनाकालादि विषयों पर प्रकाश नहीं डाला गया है। ३२ वें दोहे की दूसरी अर्द्धाली से आगे ग्रंथ अपूर्ण है।

संख्या १९०. पं० ध्या० (संभवतः पंचाध्याई), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी, स्थान—कुवा वाली गली, जि०—मथुरा।

आदि—

तुरत जोगिन कीसी गति हरी॥ ६६॥
यगोपी ओपी रस हरि की प्रानन ते प्यारी।

हरिकी मीत हर कोउकी प्रीत औ जगत नारि से न्यारी ||६७||
तिन घूंघर नूपुर की वजन हरि मन अति सौहैं ।
जीवन प्रान समान कान्ह सुनि सुनि के मोहे ॥६८||
झनक मनक औ रुनक झुनुक कर रसन रसीली आई ।
लषि लषि कै अति सुष हरि पायो भांत भांत मन भांई ||६९॥
चंद मुखिन को रूप निहारैं हरि दोउ नयेन की कोरैं ।
ससि सो मनो लगाय रहीं टकटकीं चकोरैं ॥७०॥
अति आदर से हरि के ओर पास आय चमकी ।
चहूं ओर घनके मानो चपलासी दमकी ॥७१॥
नंद नंद हसि मंद तव वोले वचन अमोले ।
नयन सयन से चयन उपजावैं प्रान के पलटे जोले ||
हरि रस सरस को यही सुभाव कहत है बाँकी ।
वंक कहन औ वंक सुनन उमगन दोउ धांकी ॥७३॥
यहो तिय जियते ... ... ॥

× × ×

की नारी ॥८७॥

खग मृग नाग वत्स गो गोप व्रजनारी ।
मीन मत्स सुनि सुनि धुनि सुधि बुधि सबै विसारी ॥८८||
कोमल मधुर वयन वनितन के सुनि भयो चयन अयन हरि हिय में ।
माखन चोर द्रबे माखन ज्यों प्रेम आंच लागी जब जियमें ॥८९॥
मंद हसे विहसे सरसे परसे नंद लाला ।
यद्यपि अनिह अगमदरसे हरसे गोपाला ॥९०॥
नंद नंदन जग वंदन चंदन बन बन विहरैं थहरैं ॥
जाको लषि लषि वृज वनितन के मन में उठत हैं लहरैं ॥९१॥
चंदन वंदन महक सुगंधन फूल फूल सीझू में ।
रूमन रूम उमंग उमंग मनो मतंग सी घूमैं ॥९२॥
अंग अंग भरे रंग रंग मोहन विहरै संग संग वनि तन के ।
ज्यों घन में उडपति राजत मध्य में उड़गन के ॥९३॥
नंद नंद विहरै वन वन में ज्यों शशि रासि रासि मे धावैं ।
लखि वनिता सुख मन अकोर देज्यो चकोर ... ...

× × ×

—अपूर्ण प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—श्री कृष्ण और गोपियों का रास नृत्य वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के केवल दो पत्र, संख्या ११ और १४ के प्राप्त हुए हैं। दोनों की पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है। ग्रंथ स्वामी के कहने से ज्ञात हुआ है कि यह "पंचाध्याई" ग्रंथ है जो नंददास कृत पंचाध्याई से भिन्न है। इसके रचयिता का नाम विदित न हो सका। कविता इसकी अत्यन्त सरस है। रचनाकाल तथा लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

संख्या १९१. फल चिन्तनी, पत्र—२, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—लाला गुलजारीलालजी, स्थान—रीतौर, जिला—इटावा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ फल चीतनी लिख्यते ॥ दोहरा ॥
ग्रीषम को आगम भयो, अंग उठी आति आगि।
पिय के संग रितु मानियें, सखी दाख के वाग ॥ १ ॥
सुरग चूनरी पैंधि कैं, द्दग अंजनु अति देइ।
चली कामिनी वाग में, स्याम घटा सुख देइ ॥ २ ॥
कहति कामिनी कंथ सों, एक अरज सुनि लेउ।
मेरे मन सुख ऊपजै, पिया जाइफर देउ ॥ ३ ॥
फागुन कौ आगमु भयो, सखी सुनी में आइ।
मेरे अमर सुहावनै, पिय विनु रह्यौ न जाइ ॥ ४ ॥
श्री कामिनि मन आनंद भय, सनमुख आये पीउ।
हँसति हँसति दमकति तिया, जौं दाढ़ौं के वीज ॥ ५ ॥

मध्य— कामिनि खेलति वाग में, सव सषिअन के संग।
सुदर पहिरें चूनरी, ज्यौं षिरनी कौ रंग ॥१३॥
दस षट भूषन साजिकै, कंथ भाम नै आइ।
पिय कर देषो आमरो, हँसि वूझी तिय ताइ ॥१४॥
प्रीतम रूठे ए सखी, प्रान धरों उन माहिं।
राइ करौंधा ऐ सखी, धा भरि आये ताहि ॥१५॥
नव गृह वाहि नक्षत्र पुनि, कीजै उनसौं सूत।
तामैं रोसन कीजिये, पिय मोहि देउ अतूत ॥१६॥
अष्ट चौगुनै लछ है, तुम प्रवीन दस चार।
पीय मोहि देउ मँगाय कै, जामे तत्त अचार ॥१७॥

अंत— कहा कहूँ मैं आजुकी, ऐ सखि मेरी पीर।
मैं माँगो पिय नादयो, यौ ना कौ फल अंजीर ॥२७॥
मैं देषन गइ वाग मैं, सषी सयानो साथ।
वालम वैठे वाग में, अंड विजौरा हाथ ॥२८॥

कहति कामिनी कंथ सों चूनरि सुरंग रँगाइ।
सब सखियनु कै कारनै, पिया कुवानी लाइ ॥२९॥
सुनु सषि मो मन में वसी, कहौ कंथ सौं जाइ।
जहँ देषै सुष ऊपजै, पिस्ता देउ मँगाइ ॥३०॥
ठाड़ी अपने महल मैं, मोगल प्रीतम वाह।
श्री अमृत फल हँसि दियो, सखी हमारे नाह ॥३१॥

॥ इति फल चिंतनी समाप्तम् ॥

॥ शुभम् ॥

विषय—प्रत्येक दोहे में किसी एक फल का नाम कहीं स्पष्ट और कहीं श्लेष से देकर अपनी सखी को सम्बोधन करके नायक अथवा नायिका के सम्बन्ध में श्रृंगार पूर्ण वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में केवल ३१ दोहों का संग्रह है। प्रत्येक दोहे में किसी न किसी फल का नाम होने के कारण ही इसका नाम "फल चिन्तनी" रखा गया है।

रचयिता के नामादि का उल्लेख इसमें नहीं हुआ है और न ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल ही दिए हैं।

संख्या १९२. रागमाला, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य तथा गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० श्यामलालजी, मु०—भरोठा, पो०—सोनई, जि०—मथुरा।

आदि—

× × ×

... विकरंती पट वासं गुणा करींदीवर श्यामा ॥१०॥

॥ आसावरी ॥

श्रीषंडशैल शिखरे शिखि पिछवासा।
मातंग मौक्तिक कृतोत्तमभूषणासौ ॥
आवृष्य वंदन तरोः शवरी भुजंग।
मातन्वतीवलयमुज्ज्वल लाल कांति ॥११॥

॥ मोदकरी ॥

अविचित कुसुम राशि रचयंती कुसुमदामशयनाय।
उपवनोपकंठे सुरतमना मोदकरी श्यामा ॥१२॥

॥ नारद भैरवी ॥

शिव पूजन करती हो सो नारद भैरवी ॥१३॥

॥ हिंडोलरागराजः ॥

निर्तविनी मध्य तरंगितासु ।
दोलासुखेला सुषमादधानः ॥
खर्व्वः कपोल द्युति कर्बुरश्च ।
हिंडोल रागः कथितो मुनीद्रैः ॥१४॥

मध्य— ॥ गौरी ॥

निधायपाणौ सुरवृक्षगुछं कांची कला माहित मध्य भागा ।
शुभ्रं वसानां शुचि गौर कांतिगौरी सदानंद करी प्रदिष्टा ॥१५॥

॥ रामकली ॥

स्वर्णप्रभा भासुर भूषणा च नीलं निचोलं वपुषा वर्ह्ंती ।
कांते पदोपांत मधिश्रितेपि मानोन्नतारामकरी प्रदिष्टा ॥१६॥

॥ पट मंजरी ॥

वियोगनी कांतवितीर्ण पुष्पं स्रजंवसानावपुषातिशुक्ला ।
श्री स्वासमाना प्रियया सख्यं वधूस्रागीपटमंजरीयम् ॥१७॥

॥ केदार ॥

गजा रूढो मनस्वी च हेम माली प्रियान्वितः ।
अधिपः सर्वं रागानां केदारः परिकीर्तितः ॥१८॥

॥ माल कौश ॥

प्रिया का अधर सुधारस पीवता हो । सो माल कौशरागः ॥२८॥

॥ टोढी ॥

एक वगीचे में षड़ी हो चारो तरफ तरुवर होय
अरु फूल होय अरु वीना वजावती हो अरु मृग
कान देकै पास आय षडे हो सो टोढी कहिये ॥२६॥

× × ×

॥ जैत श्री ॥

अंत— तोता नायका के हाथ मै हो अरु एक आगे
तंम्बूरा वजावती हो अरु एक वागीचे में
मोर वैठा हो सो जैतश्री कहिये॥३६॥

इति श्री रागमाला समाप्तम् ॥ शुभं ॥

विषय—छत्तीस रागिनियों के स्वरूपों का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—यह ग्रंथ अपूर्ण ही मिला है, किन्तु ऐसा मालूम होता है कि केवल एक ही पत्रा लुप्त हुआ है जिसमें दस रागों के स्वरूप वर्णन किए गए थे । बाकी रागों का स्वरूप वर्णन पूरा प्राप्त है । इसमें रचयिता ने विषय का वर्णन संस्कृत तथा भाषा

दोनों में किया है। संस्कृत के तो श्लोक हैं और भाषा गद्य है। न तो रचयिता का नाम ही मालूम हो सका और न रचनाकाल तथा लिपिकाल ही दिए हैं। ग्रंथ विषय की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

संख्या १९३. रागमाला, कागज—देशी, पत्र—२७, आकार—९¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० छोटेलाल जी रासधारी, ग्राम—मुखराई, पो०—राधाकुंड, जि०—मथुरा।

आदि—अथ रागमाला लिष्यते ॥ प्रथ सुर वरनन ॥

॥ दोहा ॥

सुनौ राग अव रागनी हित सौं चित्त दै कान।
तामध सुर जो मूल है कर हौं प्रथम वषान ॥ १ ॥
षर्ज रिषभ गंधार पुन मध्यम पंचम जान।
धैवत और निषाद है सातौ सुर पहिचान ॥ २ ॥
संज्ञा सातौ सुरन की आद वरन कौं लेत।
सै रै गै मै पै कह्यौ धै नी लियौ सचेत ॥ ३ ॥
आद जु षरज षकार है ऐवज लियो सकार।
है पै दोनों एक से इहि विधि कर निरधार ॥ ४ ॥
आरोही जासौं कहै जो सुर वढ़तौ जाय।
अवरोही सो जांनियै फेर घटै सुर आय ॥ ५ ॥
आरोही द्रष्यंत है सो मै कह्यौ सुनाय।
सै रै गै मै पै कह्यौ धैनी दयो वताय ॥ ६ ॥
आरोही की रीत यह वढ़ कैं घट है सोय।
नी धै पै मै गै सुनौं रै सै इह विध होय ॥ ७ ॥

× × ×

मध्य— ॥ अथ मुकाम वरनन ॥

सवै पारसी राग के वारह कहे मुकाम।
सुनौ सवै चित्त लाइकैं वरनौं जिनके नाम ॥ १ ॥
रस[१] नावा[२] कौंचक[३] कहैं वुजरक[४] और इएक[५]।
जंगोलह[६] हसनी[७] अवर कहैं हिजा[८] उसाक[९] ॥ २ ॥
वहुर इहावी[१०] कहत हैं इसफान[११] कहू जान।
वूसलीक[१२] वारह यही सवकौ करौं वषान ॥ ३ ॥
इक इक के छै भेद हैं कहियतु जिनके नाम।
अपनैं चित सव लायकै सुनौं गुनी गुनधाम ॥ ४ ॥

दोई भेद हैं रास के पंचगाइ चित्तलाइ।
महिजर के दूजो कहत दीनो ताइ सुनाइ॥

अंत—पषावजि के बोल लिषते

॥ चौताले के ॥

दिं दिं धा धा तिं तिं ताता।

पेसकार

धाधिन नग दिधि ननग धिन नग किटितक दि दि गन धा॥ १॥

॥ मौंहोरा ॥

धा धा दिं ता किटि धा दिं तौ॥ ३॥ किटि तक गदि गनधा॥ २॥ धा तिं ना धातिंना धिता किट तक दि दि ग न धा॥ ३॥ दिदा थुं दा दिं ता दीं ता किट तक दि दि गनधा॥ ४॥ त किट धि किट तक तकि ट धि किटि॥ ३॥ धि धि किट तक गी दि ना न धा॥ ५॥ तगीं न धि ता दि धिता॥ ३॥ धि धि किट तक गदि गनधा॥ ६॥ धुम किट तकि टत का धुम किट तकिटत का धिता किट तक गदि गन धा॥ ७॥ तगा थुगा धा धिता धिता किट तक गदि गन धा॥ ८॥ विलंपति १ मधा २ द्रुत ३ सम १ असम अतीत अनाघाता॥

॥ अथ भैरवी की सरगम॥

॥ संगीत रत्नाकरे श्लोक॥

गांधारांश ग्रह न्यासो गांधारादिक मूर्छना।
गीयंते भैरव प्रातः हनुमन्मत को विदाः॥ १॥

× × ×

गाधारोश भैरव

षडूजांश गृहं न्यासं ऋषभे वार्जिता स्वरा।
यामे तृतीये संयुक्ता आभीरी गीयते वुधै॥
सा ग मग सा पगा सा नी धम ग सा नी ध मप ध सा ध सानी
घ प म ग स॥ १॥ ... ...

× × × ॥ अपूर्ण॥

विषय—१—स्वर वर्णन,	पत्र	५४ से ५७	तक।
२—राग भेद वर्णन,	पत्र	५७ से ५७	तक।
३—राग मिलाप वर्णन,	पत्र	५७ से ६४	तक।
४—मुकाम वर्णन (पारसीमतानुसार),	पत्र	६४ से ६६	तक।
५—तालवर्णन,	पत्र	६६ से ६९	तक।
६—पषावज के बोल,	पत्र	६९ से ६९	तक।
७—रागों के सरगम और अंगन्यास (संस्कृत में)	पत्र	६९ से ८०	तक।

विशेष ज्ञातव्य—न तो रचयिता के नाम का पता लगा और न रचनाकाल और लिपिकाल का ही। ग्रंथ की रचना अधिकतर संस्कृत ग्रंथ "संगीत रत्नाकर" के आधार पर हुई है। रागों के सरगम और अंगन्यास संस्कृत में ही लिखे गए हैं जो 'रत्नाकर' से सीधे उद्धृत कर दिए गए हैं। "वारता संगीत की पोथी' और पारसी मतों के भी अवतरण दिए गए हैं। ग्रंथ सभा के लिये प्राप्त कर लिया गया है। जिस जिल्द में यह ग्रंथ है उसमें इसके पहले श्री हरिवंश जी महाराजकृत चौरासी पद, रासलीला, श्री वृन्दावनदास जी के चौबीस छन्द, फुटकर श्लोक, कवित्त, पद, दोहे और किसी मोहनलाल समाधिया कृत रामायण की घटनाओं की तिथियाँ दी हुई हैं। चौरासीपद, रासलीला और चौबीस छन्द छापे के हैं। शेष हस्तलिखित हैं।

संख्या १९४. रागरागिनी स्वरूप, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—पं० महावीर प्रसादजी, स्थान—इकदिल, पो०—इकदिल, जि०—इटावा।

आदि— ॥ अथ भैरों स्वरूप वर्णन ॥

भैरो शिवं छवि सिर जटा, सेत वसन तिर ......।
......माला गरैं, सिद्ध रूप सुख दैन ॥२९॥
सवै...शिवमूरति भैरों कौ भाववन्यौ तिरनेतरमुं...गरैं।
पट सेत सवै तन में पहिरैं हृदयैं भगवान ... धरैं॥
तिरसूल विराजत है कर मै सव भामिन कौम...त हरैं।
तन छार लगैं दुति दूनि भई चित चाहन में जिय जात छरैं॥३०॥

॥ अथ रागिनी स्वरूप ॥

॥ दोहा ॥

शिव पूजत कैलास पर। दोऊ कर में ताल।
सेत चीर अँगिया अरुन। रूप भैरवी वाल ॥३१॥
भस्म पिटारी कर गहैं, हाथ लिये तिरशूल।
वंगाली व्याकुल भई। सवै गई सुधि भूल ॥३२॥
कानन फूल दोपहरिया। कर कांकन श्रंगार।
सीस केस सोहत छुटे। सेत वसन वरार ॥३३॥
कंचन तन लोचन कमल। नागरि महा अनूप।
पिय पै वैठी हँसत है। मधु माध्वी यह रूप ॥३४॥
पुहप कदम कानन धरै। पहरैं वस्तर लाल।
क्रोधवंत तिरसूल कर। लियैं सिंधुनी वाल ॥३५॥

मध्य — ॥ अथ हिंडोल स्वरूप वर्णन ॥

॥ दोहा ॥

पीत वसन हिंडोल के है, जुहिंडोरे माहिं ।
सखी झुलावति चाव सौं, गाय गाय मुसकाहि ॥४३॥

॥ सवैया ॥

कीन्ह बनाव महा छवि सुंदर भावत वैठि हिंडोल हिडोले ।
झोंक झुलावत और दुहूं सव गावति हैं सखिया मुख खोले ॥
गोरो सो गात दिखात खरे मनो दामिनि सी द्युति देखन सोले ।
वस्तर पीत लिये रस रीति अनंग सौं सो है हँसै मृदु वोले ॥४४॥

॥ अथ रागिनी स्वरूप वर्णन ॥

॥ दोहा ॥

राम कली नीले वसन । कंचन सी सव देह ।
पिक वानी गावति खड़ी । पिय के प्रेम सनेह ॥४५॥
विरह भरी पट मंजरी । मन मलीन तन छीन ।
सखी सीख अति देति है । भई प्रेम आधीन ॥४६॥

अंत—

॥ अथ मेघ राग स्वरूप वर्णन ॥

॥ दोहा ॥

श्याम वसन जो मेघ है, गहे हाथ तरवार ।
अति आतुर चातुर खरौ, गावत सुरत विचार ॥६४॥

॥ सवैआ ॥

मेघ मलार महा अति सुंदर इंदर की छवि आप वन्यो है ।
पहिरे पट श्याम गहे तरवार जो माल गये इह भाँति ठन्यो है ॥
जैसो जहाँ चहियै जोइ अंग सो तैसियै भाँति में आप धर्यो है ।
काम को आतुर है अति ही तिय की रति की चित चाव वन्यो है ॥६५॥

॥ अथ रागिनी स्वरूप वर्णन ॥

॥ दोहा ॥

भूपाली विरहिन खरी, केसरि वोरे चीर ।
भयो विरह की ज्वाल तें, पीरो सवै सरीर ॥६६॥
विरह जरा तन गूजरी, रोवत छूटे केस ।
कामदेव कानन लगे, तिनहिं दियो उपदेश ॥६७॥
देश कार कंचन वरण, खेलत पिय के संग ।

हिय हुलास है काम को, ...
... ...

—शेष लुप्त

विषय—राग और रागिनियों के स्वरूपों का संक्षिप्त वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में राग रागिनियों के स्वरूपों का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। ग्रंथ आद्यन्त से खंडित है। रचयिता तथा रचनाकाल और लिपिकाल आदि का उल्लेख इसमें नहीं है।

संख्या १९५. रामाश्वमेध, कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—१०¾ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२११२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६३१ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० मोहनलाल जी, ग्राम—सत्तूखेड़ा, पो०—गौमत, जि०—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ रामाश्वमेध लिष्यते॥

अयुध्या नगरे अभस्थाने रत मंडफ विचीत्रो स्वयं।
गुन निधिसह रघुवरं रतनसिंहासन विभ्राज मान॥ १॥

× × ×

महादेव उवाच

उमा कहेऊ सब प्रश्न तुम्हारी। रामचंद्र महिमा अति भारी।
हाथ सीप ले जलनिधि जाई। गहरे जल कोउ पार न पाई॥
नाना भाँति मुनीसन गाये। यहि विधि रघुपति चरित सुहाये॥
मुनि ब्रह्मादि निरन्तर गावहि। रघुपति चरित पार नहिं पावहि॥
जदपि कहौं मैं मति अनुसारी। अब कहा कहौं सो सैल कुमारी॥
सुनि अस वानि उमा हरषानी। बोली मधुर मनोहर वानी॥
तुम सब कथा मनोहर गाई। सुनिकर नाथ मोहि अति भाई॥
एक लालसा अति मन मांहि। विस्वनाथ मोहिं कहो समुझाई॥

दोहा

प्रथम कहो संवाद सो सिया तजी जगदीश।
राम पुत्र किहि भाँति भये सकल कहौ मम ईस॥ १॥

मध्य— चौपाई

वोले राम मनोहर बानी। जग्य साज मुनि कहौ वषानी॥
कहत वसिष्ट सुनहु घनस्यामा। प्रणतपाल दायक विश्रामा॥
उत्तम तुरीय जो चंचल करनी। लोचन सरिस सुभग वर वरनी॥
सव तन षीर मनोहर वरना। पीत सु कुछ कुमद वपु चरना॥

कंचन पत्र लिषत अस भाला । संवत भरि दिग विजय विशाला ॥
जोधा अमित प्रबल जनु काला । लरहिं जहां तहां वहु दिगपाला ॥
तिनहि जीति दस दिस सुनरामा । आवहि अवधि होय सव कामा ॥

दोहा

वहुत कठिन व्रत साधना दंपति अंतर भेद ।
दंड राष व्रत संजमहि अस्वमेध कह वेद ॥ ४० ॥

चौपाई

एकहि रथ एक कुंजर संगा । दस दस भार तुरंगम अंगा ॥
जहां तहां वाज करहि प्रवेशा । विषम जुद्ध तहां करहि नरेसा ॥

अंत—

दोहा

राम नाम महिमा अधिक को अव सरनि सिहाय ।
धन्य मात जेहि पुत्र भये सो नित राम जपाय ॥ ११ ॥
तुलसीदास भाषा करी सप्तकांड समझाय ।
सुनत सुजन मन मोद अति भव भय सकल नसाय ॥ १२ ॥
अर्थ वहुत अक्षर अलप रामचरित अति गूढ़ ।
सुजन अर्थ सव जानही कहौ सुमति निज ढूढ़ ॥ १३ ॥
अस्वमेध संछेप कह अर्थ समझि नहि जाइ ।
तेहि कारन टीका सहित कहौ सकल समुझाइ ॥ १४ ॥
तुलसीदास पद पंकरू मुदित नाय कर भाल ।
अस्वमेध व्याख्यान कछु कहौ रामगुन गाय ॥ १५ ॥
राम सिया पद नाय सिर कहौ चरित समुझाय ।
तुलसीदास के कवित शुभ तिन में दियो मिलाय ॥ १६ ॥
भू मंडल अरु तत्व पुनि जहां ज्ञान मिलाय ।
अर्थ मिलाये अर्थ सन संशय सकल नसाय ॥ १७ ॥
रामचरित करि नेम कहि गामहि सुनहि सुजान ।
तिनकर सकल मनोरथ पूजहि श्री भगवान ॥ १८ ॥

इति श्री राम चरित्रे सकल कलुष विध्वसने तुलसीदास कृत रामअश्वमेध लवकुश जुध्व वर्नंनो संपूर्णम् ॥ संवत् १९३१ अस्वन मासे कृष्ण पक्षे त्रयोदश्यां गुरु वासरे ॥

विषय—रामाश्वमेध वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—पुष्पिका के लेख से रचयिता सुप्रसिद्ध गो० तुलसीदास हैं, किन्तु ग्रंथांत में दिए हुए ८ दोहों से और ही पता चलता है । ये दोहे विवरण में दिए गए हैं । इनका सार संक्षेप में निम्नलिखित प्रकार से है :—

"तुलसीदास जी ने आठ काण्डों की भाषा की ॥ १२ ॥ अश्वमेध काण्ड संक्षेप से कहा जो ठीक-ठीक समझा नहीं जाता । इसी कारण मैं इसे टीका सहित समझाकर कहता हूँ ॥ १४ ॥ तुलसीदास जी के पद पंकज में शिर झुकाता हूँ और रामगुण गानकर अश्वमेध का व्याख्यान करता हूँ ॥ १५ ॥ सीताराम के पदों में मस्तक नवाकर चरित्र (अश्वमेध चरित्र) समझाकर कहता हूं । तुलसीदास जी के कवित्तों में उसे (चरित्र को) मिला दिया हैं इत्यादि" ।

इससे दो बातों का पता चलता है :—

पहला तो यह कि—तुलसीदास जी ने अश्वमेधकांड संक्षेप से कहा । इसे सुगम करने के निमित्त इन आठ दोहों के रचयिता ने इस संक्षेप काण्ड की विस्तृत टीका की । यह टीका तुलसीदास जी के कवित्तों ही में-दोहा चौपाइयों में-की गई ।

दूसरा यह कि—तुलसीदास जी के दोहे—चौपाइयों में टीकाकार ने अपने दोहे चौपाइयाँ भी मिला दिए हैं ।

ग्रंथ की कविता रामचरित मानस के समान प्रौढ़ नहीं है । मैंने इसी ग्राम से प्राप्त लखनऊ की छपी हुई दो रामायणों के अश्वमेधकाण्ड से भी इसका मिलान किया, किन्तु यह उनसे बिलकुल भिन्न निकली । मैं यह मिलान और सूक्ष्मता से करना चाहता था किन्तु ग्रंथ स्वामी की जल्दी के कारण ऐसा न कर सका । उन्होंने ऐसा वचन अवश्य दिया है कि सभा को आवश्यकता पड़ने पर वे ग्रंथ देखने को दे सकते हैं ।

टीकाकार ने अपना नाम नहीं दिया है । रचनाकाल भी अज्ञात ही है । लिपिकाल संवत् १९३१ वि० है ।

संख्या १९६. सिंघासन बत्तीसी, कागज—देशी, पत्र—३९, आकार—९½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७९३ वि०, प्राप्ति स्थान—श्री किरोड़ी सिंहजी, ग्राम—वाटी, पो०—राल, जि०—मथुरा ।

आदि—

......रतार जीमावती होय । रांधती होय । काम करती होइ सो छोड़नै । कुँवर गरधबसेन री रूप देषण नुं आवै । तरै नगर रा लोक भेला होयनै । राजा हेमरथ कनै आया । तरै राजा कह्यौ । थे पंच महाजन भेला होयनै । किसै काम आया छो तिका वात कहो । तरै महाजनां उभा होयनै अरज कीनी । में राजाजी री नगरी माहे सदा सुषी ज रहां छां । सो रहां छां । पिण एक मांनु सबलो दुष छै । सो कहो । तरै महाजनां कह्यौ । महाराजा सिलामत कुँवर गंधरव सेनजी । रूप रा निधान छै । सु अमारी असतरी काई घरमाहे वस सकै नहीं । कुँअरजी सारो दिन नगर माहे फिरै । तिणवासतै मांहरी असतरीयां माहे उभी न रहै । घर माहे काम होय सो । उभै मेलनै कुँवर रो रूप देषणनुं वारै आवै । लाज सरम छोड़ देवै । जिण गली चोहटा दिसी कुँवरजी आवै । तिण गली यारै असतरीयां लारै लगी फिरै । सु महाराजाजी सलांमत । कुँवरजी नै मोहल माहे बैठा राषो । तिण वासतै म्हे पंच महाजन अरज करण सारू आया छां । तरै महाराजा कह्यौ । मांहरै पुत्र

थांनुं दुष दीयो छै तो। मांहरै उण पत्र सुं कोई काम नहीं। सो नारी छुरी छै तो पेट मारणी छै। जो कुँवर प्रजा नै दुषदाई छै तो देसोटो देइस। सुं कहनै प्रजा नै सीष दीनी। पछै राजा कनै कुँवर आयो पछै राजा कुँवर नै तीन पानरो बीडो दीनो। तै नगर मै घणो अन्याय कीयो। प्रजा लोक तो ऊपरै पुकार कीधी। तिण वासतै तुं म्हांरा देस मै नगर मै गांव मै मत रहै। इसो राजा हुकम कीधो।

मध्य—हिवै दूजै दिन राजा भोज सिंघासण वैसण लागो। तरै विजयादेवी बीजी बोली। सुण हो राजा भोज। जे तुं राजा विक्रमादित्य जिसडो होय तो बैसै। इणै सिंघासण। तरै राजा भोज कह्यो। राजा विक्रमादित्य राज करै छै। पर दुषरो कापणहार छै। बड़ो धरमातमा छै। दान पुन्य रो करणहार छै। पिण एक बात कहुँ छुं। सो थेस को साथ सांभल जो। पंडितांरो साथ वैठो छै। राजा विक्रमादित्य उजेणी नगरी राज करै छै। घणो दान पुन्य करै छै। पछै एक दिन राजा तीरथ री जात चाल्यौ। चीतोड़ परवत आया। तठै एक कुंड छै। पाणी सुंद्रह भरीयो छै। तठै स.को सिनान करनै आया। पुन्यवंत धरमवंत सनांन करै छै। तरै पाणी सफेद उजलो रहै छै। पापी अधरमी सनांन करै पाणी कालो होय जाय छै।

× × ×

तरै राजा बांभणरो दुष भांजनै घरै आया। पछै प्रभात हुओ। तरै बांभण कुंड माहे सिनान कियो। तरै पाणी उजलो सपेद रह्यो। बाभण पाणी उजलो सपेद देषनै षुसी हुवो। इसो राजा विक्रमादित्य हुवो। जे तुं राजा भोज इसो राजा होय तो सिंघासण बैसै नहीं तर मत बैसे। तरै राजा भोज सिंघासण दूजै दिन पिण न वैठो॥

इति विजया कथित बीजी बात संपूर्ण ॥ २ ॥

अंत—परनारी सहोदर। परदुष कापणहार। चवदै विद्यारो निधांन। संवत वरतायो। पार को दुष दीठां थकां। दुष भांजीयां बाहिरा अन पाणी आचरणी री आषड़ी छै। तरै पदमनी देवी कहै छै। हो राजा भोज इण गुणां माहिला गुण राज मांह हुवै तो राज इण सिंघासण विराजो। नही तर मत विराजो। तरै राजा भोज कनै आ दलिद्र पूतलारी बात कह...रही। तितरा माहे नू सिंघासण पहिलो देवलोक...धरमेंद्र तठै उडनै गयो। तिण सिंघासण पर इंद्र महाराजा बैठा। कै राजा विक्रमादित्य बैठा। पिण बीजो कोई वैसण पावै नहीं।

इति श्री सिंघासण बत्तीसी री वारता संपूर्ण ॥ सं० १७९३ वर्षे

विषय—

१—ग्रंथारम्भ और प्रथम पुतली द्वारा कथित प्रथम बात, पत्र ५२ से ६० तक।
२—विजया कथित बीजी बात, पत्र ६० से ६१ तक।
३—जयवंती देवी कथित तीजी बात, पत्र ६१ से ६२ तक।
४—अपराजिता कथित चौथी बात, पत्र ६२ से ६३ तक।
५—जयघोषा कथित पाँचवी बात, पत्र ६३ से ६४ तक।

६—मुंजघोषा कथित छठी बात,	पत्र ६४ से ६५ तक ।
७—लीलावती कथित सातवीं बात,	पत्र ६५ से ६६ तक ।
८—जयवंती देवी कथित आठवीं बात,	पत्र ६६ से ६७ तक ।
९—जयसेना कथित नवमी बात,	पत्र ६७ से ६८ तक ।
१०—मदनसेना कथित दसवीं बात,	पत्र ६८ से ६९ तक ।
११—मदन मंजरी कथित ग्यारहवीं बात,	पत्र ६९ से ७० तक ।
१२—श्रृंगार कलिका कथित बारहवीं बात,	पत्र ७० से ७१ तक ।
१३—रति प्रियादेवी कथित तेरहवीं बात,	पत्र ७१ से ७२ तक ।
१४—नरमोहिनी कथित चौदहवीं बात,	पत्र ७२ से ७३ तक ।
१५—भोग निधि देवी कथित पन्द्रहवीं बात,	पत्र ७३ से ७४ तक ।
१६—प्रभावती कथित सोलहवीं बात,	पत्र ७४ से ७४ तक ।
१७—सुप्रभावती कथित सत्रहवीं बात,	पत्र ७४ से ७६ तक ।
१८—चंद्रमुषी देवी कथित अठारहवीं कथा,	पत्र ७६ से ७७ तक ।
१९—अन्यगंधा कथित उन्नीसवीं कथा,	पत्र ७७ से ७७ तक ।
२०—कुरंग नयना कथित बीसवीं कथा,	पत्र ७८ से ७८ तक ।
२१—लखनवती देवी कथित इक्कीसवीं कथा,	पत्र ७८ से ७९ तक ।
२२—सौभाग्य मंजरी देवी कथित बाईसवीं कथा,	पत्र ७९ से ८० तक ।
२३—चंद्रिका देवी कथित तेईसवीं बात,	पत्र ८० से ८१ तक ।
२४—हंसगमनी देवी कथित चौबीसवीं बात,	पत्र ८१ से ८३ तक ।
२५—विद्यापाली देवी कथित पचीसवीं बात,	पत्र ८३ से ८४ तक ।
२६—आनंद प्रभादेवी कथित छब्बीसवीं कथा,	पत्र ८४ से ८५ तक ।
२७—शशिकांता कथित सत्ताईसवीं कथा,	पत्र ८५ से ८५ तक ।
२८—रूपकंता देवी कथित अठाईसवीं कथा,	पत्र ८५ से ८६ तक ।
२९—देवप्रिया कथित उन्तीसवीं कथा,	पत्र ८६ से ८७ तक ।
३०—नंदी देवी कथित तीसवीं कथा,	पत्र ८७ से ८८ तक ।
३१—पदमावती देवी कथित इकतीसवीं बात,	पत्र ८८ से ८९ तक ।
३२—पदमनी देवी कथित बत्तीसवीं कथा,	पत्र ८९ से ९० तक ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। कुछ पत्र प्रारम्भ के और कुछ बीच के लुप्त हो गए हैं। इसके पहले इसी हस्तलेख में "पंचाख्यान री कथा" नामक ग्रंथ लिपिबद्ध था जिसका अब केवल ४४ वीं संख्या का अंत का पत्र प्राप्त है, शेष सब पत्रे नष्ट हो गए हैं।

रचयिता का नाम नहीं दिया है। ग्रंथ-रचनाकाल भी अज्ञात है। लिपिकाल संवत १७९३ वि० है। "पंचाख्यान री कथा" का लिपिकाल उपलब्ध पत्र में संवत् १७९२ वि० है। दोनों ग्रंथों की भाषा विशुद्ध राजस्थानी है। ये गद्य के ग्रंथ होने से महत्वपूर्ण हैं।

संख्या १९७. वार्ता, कागज—देशी, पत्र—९०, आकार—१३ × ७½ इंच, पंक्ति

(प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—श्रीयुक्त घुरीमल लट्टूरचंद मोदी, गोकुल, जि०—मथुरा ।

आदि—

× × ×

और नहीं तो श्री आचार्यजी महाप्रभू तो खीजेंगे तातें जैसे पेरिके आपु हते सो तैसे फेरि के पार गये । सो आवत ही स्नान करिकैं आपु सेवा मैं तत्पर भये । तापाछे उहाँ प्राग में परमानंद स्वामी रात्रके जागरन के श्रमित हते सो आंषि लगी सो.तव निद्रा आई । सो तव इतने में स्वप्न भयों । सो स्वप्न में देखै तो जैसे रात्रि के जागरन मैं श्री आचार्यजी महाप्रभून के सेवक क्षत्री कपूर वैठै हते सो देखे । ओर देखें तो उन क्षत्री कपूर की गोद मैं श्री नवनीत प्रियाजी कों दर्शन भयों ।

× × ×

अब श्री गुसांईजी के सेवक नंददास सनोढ़िया ब्राह्मण तिनकी वार्ता

सो वे नंददास पूर्व में रहते सो दोऊ भाई हते । वड़े भाई तो तुलसीदास छोटे भाई नंददास हते । सो वे नंददास पढ़े वहोत हते । और तुलसीदास तो रामानंदीन के सेवक हते । सो वे नंददासजी कों हूँ रामानंदीन कों सेवक कियों हते । सो नंददास कों लौकिक विषै घनी आसक्ति हती ।

× × ×

सो तव वड़े भाई तुलसीदास नंददास कों वोंहोत समझावते । कहते जो तू जहाँ तहाँ डोले मति सो वे नंददास मानते नांही ।

× × ×

मध्य—सो जाते जाते सीहनंद में नंददास जाय निकसे सो तव वा गाम के भीतर चले जात हते । सो तहाँ एक क्षत्री को घर हतों । सो वह क्षत्री श्री गुसांईजी कों सेवक हतो । सो नंददास चले चले वाके घर के पास जाय निकसे । सों वा क्षत्री की स्त्री अत्यंत सुंदर हती सो तव वह स्त्री नंददासजी की नजरि परी । सो तव वा स्त्री कों देखि कें नंददास उहाँ ही ठाढ़े होय रहे । ओर वा क्षत्री की वहूँ तो उपर ते उतर के अपने घर मे काम काज कों लगी । और नंददास तो जव सों वाकों देष्यौ सो तवतें मोहित होय रहै ।

× × ×

और एक समय नंददास को वड़ो भाइ तुलसीदास व्रज में आयो । तापाछें श्री मथुराजी में तुलसीदासजी आये सो तव पूछी जो यहाँ नंददास श्री गुसांईजी को सेवक कहिये है । सो तव वे मथुरा के लोगन ने कही जो वह नंददास-हों जहाँ श्री गुसांईजी होयगें सो तहाँ होंयगे । जो कें तो श्री गुसांईजी आपु श्री गोकुल होयगे ओर कें श्रीनाथजी द्वार होंयगे ।

अंत—तव तुलसीदास श्री गुसांईजी को दडौत करिकें पाछे तुलसीदास गोविंद कुंड पर गये। सो तव नंददास ने तुलसीदास कूं दूरिते देखिकें श्री गोवर्धननाथजी के ओर देखन लागे। सो तव तुलसीदास ने नंददास के पास जाय कें कही जो नंददास तू ऐसों कठोर क्यों भयो हैं। मैं तो तोकों आछी सिक्षा बतावत हतों जो तू मेरो कह्यौ करेगो तो तू वहौत सुख पावैंगों ताते एक वेर तू मेरे संग चलि उहाँ गए पाछें तेरो मन प्रसंन होय सो कीजो तेरो मन होइ तो अयोध्या में रहियै। जो तेरो मन होय तो प्राग में रहिये।

× × ×

प्रसंग प्रथम १

ओर एक समय गोविंददास महाबन के टीलेन पर नित्य ही जाते सो तहाँ कीर्तन करते श्री ठाकुरजी उहाँ ही उनको दर्शन देते। सो कोइक विरियाँ गोविंददास के साथ मदन गोपाल जाय के गोविंददास कीर्तन करेंसो मदन गोपालदास सीख लेहि। सो तव गोविंददास एक समैं श्री ठाकुरजी सों कहे। जो यह तान सूधी लेऊ सो मदन गोपाल काय यह तेसो वे महावन में रहते सो गोविंददास जव ही कीर्तन करिवे कों आवते। सो तव श्री ठाकुरजी सुनते सो तव गोविंददास ने श्री ठाकुरजी सौं पूछी जो यह तान सूंधी लेहूँ। सो तव मदन गोपालदास ने श्री गोविंददास सों पूछी जो तुम कौन सो कहत हैं। जो इहाँ तो कोई दूसरो नाहीं है। सो तव गोविंददास ने मदन गोपाल सों कही जो में तो यो ही वकतु हों परिषहो उन सों न कही। ताषा ... ...

× × ×

विषय—ग्रंथ में महाप्रभू वल्लभाचार्यजी के और श्री गुसांई विट्ठलनाथजी के सेवकों की वार्ता का वर्णन किया गया है।

श्री वल्लभाचार्यजी के सेवक

१—श्री परमानंदजी—ये कन्नौज के रहने वाले बताए गए हैं।

२—श्री कृष्णदास अधिकारी सूद्र—ये द्वारिका से आते समय मीराबाई से मिले थे।

३—श्री कुंभनदासजी गोरवा—ये गोवर्द्धन के पास जमुनावतो ग्राम में रहते थे। परासोली चंद्र सरोवर पर उनकी धरती थी जहाँ ये खेती करते थे।

श्री गुसांईजी के सेवक

१—चत्रभुजदासजी—ये कुंभनदासजी के पुत्र थे।

२—नंददासजी सनोढ़िया—इनको श्री गोस्वामी तुलसीदासजी का छोटा भाई कहा गया है। ये पहले बड़े विषयासक्त थे। रणछोड़जी के दर्शन के लिये द्वारिका जाते समय सीहनंद ग्राम में एक खत्री की रूपवती स्त्री में अनुरक्त हो गए। प्रति दिन उसके दरवाजे पर जाते और जब उसका दर्शन कर लेते तब वहाँ से लौटते। ये लोग इस विपत्ति से बचने के लिये गोकुल आये; किंतु नंददासजी वहाँ भी जा पहुँचे। पीछे श्री विट्ठलनाथजी के शिष्य हो गए और उस स्त्री का संकट दूर हो गया। एक समय तुलसीदासजी इनको मिलने व्रज

में आए। बड़ी कठिनाई से तो ये मिले; किंतु जब इन्होंने तुलसीदासजी को देखा तो उनसे पीठ फेर दी। तुलसीदासजी फिर लौट कर चल दिए।

३—छीत स्वामी—ये मथुरा के ब्राह्मण थे और पहले बड़े गुंडे थे।

४—गोविंद स्वामी—ये आंतरी में रहते थे।

विशेष ज्ञातव्य—खेद है ग्रंथ से रचयिता का नाम तथा रचनाकाल और लिपिकाल आदि का कोई पता नहीं चलता। इस वार्ता से अष्टछाप के सात कवियों के विषय में जानकारी होती है जो व्रज भाषा के धुरंधर कवि थे।

वल्लभ कुल में जितनी भी वार्ताएँ लिखी गई हैं वे इस दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण हैं। कोई ऐसा भक्त नहीं हुआ है जिसने काव्य चर्चा न की हो। इन वार्ताओं को देखने से यह पता चलता है कि उस समय में भी कवियों और भक्तों का जीवन चरित्र लिखना महत्वपूर्ण समझा जाता था। उनके साथ अलौकिक बातों का सम्बन्ध होने से ही आजकल उन्हें ज्यादा महत्व नहीं दिया जाता। परंतु इतने से ही इनका महत्व नहीं घट जाता। ये वार्ताएँ अब बहुत मूल्यवान जँचती हैं। यहाँ प्रत्येक सम्प्रदाय में इस तरह के ग्रंथ पाए जाते हैं। केवल नाम में ही भेद रहता है।

किंतु ऐसे ग्रंथ वहाँ विद्यमान हैं जहाँ से ये देखने के लिये भी अत्यंत कठिनाई से मिलते हैं। कभी-कभी तो देखना असम्भव ही हो जाता है। ग्रंथ में केवल सूरदासजी का ही नाम छूटा हुआ है। शायद इनका नाम प्रारम्भ में रहा हो जो खंडित हो गया है। श्री परमानंददास, श्री कृष्णदास और श्री कुंभनदासजी, श्री वल्लभाचार्यजी के सेवक कहे गए हैं। श्री चतुर्भुजदासजी, श्री नंददासजी, श्री छीतस्वामी और श्री गोविंद स्वामी श्री गुसाईं विट्ठलनाथजी के शिष्य कहे गए हैं।

तृतीय परिशिष्ट (आ)

अज्ञातनामा रचयिताओं की साधारण रचनाओं की नामावली

क्रम संख्या	ग्रंथ	विषय	लिपिकाल
१	अ० ब० प० द०	शकुन	
२	कुछ भक्तों पर टिप्पणियाँ	भक्ति	
३	कुब्जा ग्रह प्रवेश लीला	कुब्जा और कृष्ण के मिलन की कथा	
४	कृष्ण जन्मोत्सव	कृष्ण जन्म संबंधी उत्सव	
५	कोक ग्रंथ	कोकशास्त्र	
६	क्षेत्र गणित	पैमाइश	
७	गनेश अष्टक	प्रार्थना	
८	गीता	गीता का अनुवाद	
९	गीता	गीता का अनुवाद	
१०	गीता सार	गीता का सार	
११	गुरु नामावली	निंबार्क संप्रदाय के गुरुओं के नाम	
१२	घूंस रासा	घूंस की कथा	
१३	चीर हरण	भगवान कृष्ण द्वारा गोपियों के वस्त्रों का अपहरण	
१४	जगत दर्पण	भूगोल	
१५	जोगी जोगिनी खेल	भगवान कृष्ण की भक्ति	
१६	ज्ञान बारा खड़ी	ज्ञानोपदेश	
१७	तत्त्वार्थ सूत्र वचनिका	जैन धर्म संबंधी चौरासी सूत्रों की व्याख्या	
१८	तुरकी शकुनावली	शकुन	सन् १८०७ ई०
१९	तुलसी सिद्धार्थ प्रकाश ज्योतिष	ज्योतिष	
२०	दुर्वासा उच्छिष्ट भोजन वर्णन	दुर्वासा और पांडवों की कथा	
२१	दृष्टांत के दोहे	ज्ञानोपदेश	
२२	दृष्टांत सार	ज्ञानोपदेश	
२३	नय चक्रस्य भाषा		

क्रम संख्या	ग्रंथ	विषय	लिपिकाल
	प्रकाशिनी टीका	जैन धर्म	
२४	पंचदशी विधि यंत्र	यंत्र	
२५	पखाणे	कहावतें	
२६	पत्तल	एक धार्मिक संस्कार	
२७	पद नामावली	स्वामी हरिदास की महानता	
२८	परची कबीर जी की	कबीर जी का जीवन वृत्त	
२९	परची करमा बाई	करमा बाई का जीवन वृत्त	
३०	परची जयदेव जी	जयदेव जी का जीवन वृत्त	
३१	परची त्रिलोचन जी	त्रिलोचन जी का वर्णन	
३२	परची धन्ना जी	धन्ना जी का जीवन वृत्त	
३३	परची धू जी	ध्रुव की जीवन कथा	
३४	परची नाम देव जी की	नाम देव का जीवन वृत्त	
३५	परची प्रह्लाद जी की	प्रह्लाद जी की कथा	
३६	परची वधिक जी	बधिका जी का जीवन वृत्त	
३७	परची मीरा बाई की	मीरा बाई का जीवन वृत्त	
३८	परची रैदास जी की	रैदासजी का वर्णन	
३९	परची वालिमक जी	वाल्मीकि मुनि की कथा	
४०	परची सुखदेव जी	सुखदेव मुनि की कथा	
४१	परची सेन जी की	सेन जी का वर्णन	
४२	पीपा की परची	पीपा जी का वर्णन	
४३	पोथी लेखन	पाठ्य पुस्तक	
४४	प्रश्न संग्रह	शकुन	सन् १८४६ ई०
४५	फुटकर कवित्त	भक्ति	
४६	बाराखड़ी	श्रृंगार	
४७	बारामासी	विरह श्रृंगार	
४८	ब्राह्मण लीला	यादवों के पुरोहित और बालकृष्ण की कथा	
४९	भरत खंड का वर्णन	भूगोल	
५०	भागवत	भागवत का ब्रजभाषा में अनुवाद	
५१	भागवत का नवम स्कंध	भागवत का नवाँ स्कन्ध	
५२	भागवत की कथाओं प्रर सवइया	भागवत की कथायें	

क्रम संख्या	ग्रथ	विषय	लिपिकाल
५३	भारत वर्णन	भूगोल	
५४	भावना सार चरित्रसार की भाषा वचनिका	जैन साधुओं की दिनचर्या	
५५	मंत्रावली	मंत्र	
५६	मल्लयुद्ध	कौरवों और पांडवों का मल्ल युद्ध	
५७	महाभारत	महाभारत (आदि पर्व)	
५८	महाभारत	महाभारत (सभापर्व) का अनुवाद	
५९	महाभारत	महाभारत (सभापर्व) का अनुवाद	
६०	मानस कोशाङ्क	तुलसीदास कृत रामचरित मानस में आये कठिन शब्दों के अर्थ	सन् १८६७ ई०
६१	मानस धर्मसार	कानून	
६२	मुष्टि ज्ञान शुभाशुभ	भविष्यवाणी	सन् १८०७ ई०
६३	रमलसार प्रश्नावली	रमल	
६४	रामायण	रामायण की कथा का सार	
६५	रेखा गणित अध्याय छठवाँ	रेखा गणित	
६६	लघु चाणक्य राजनीति	राजनीति	सन् १८५३ ई०
६७	विरह लीला	उद्धव और गोपियों के बीच हुआ संवाद	
६८	वृद्ध चाणक्य राजनीति	राजनीति	सन् १८५३ ई०
६९	बृहत् प्रेत मंजरी	किसी व्यक्ति के मृत्योपरान्त या मृत्यु के अवसर पर किए जानेवाले धार्मिक संस्कार संबंधी पुस्तक	
७०	शंकावली	रामायण की कुछ शंकाओं का समाधान	सन् १८६७ ई०
७१	शनिश्चर की कथा	शनिग्रह की कथा	सन् १८२१ ई०
७२	शिवरात्रि व्रत की कथा	शिवरात्रि व्रत रखने का महत्व	सन् १८५८ ई०
७३	शिव शृंगार	भगवान शंकर की विवाह के अवसर पर हुई सजावट का वर्णन	सन् १८९५ ई०

क्रम संख्या	ग्रंथ	विषय	लिपिकाल
७४	शिव स्तुति (शिव अस्तुति)	प्रार्थना	सन् १८३३ ई०
७५	सकुनावली	शकुन	
७६	साध्वातिचार	जैन धर्मानुसार उन अवगुणों का वर्णन जिनसे साधुओं को दूर रहना चाहिए	
७७	सीता चरित्र	सीता की कथा	
७८	सौ संवत्सर	हिंदू पंचांग के आधार पर सौ वर्षों की साधारण प्रवृत्तियों का परिचायक ज्योतिष का ग्रंथ	
७९	हानि लाभ विचार	शकुन	
८०	हिन्दी फारसी कोष	शब्दकोष	

चतुर्थ परिशिष्ट

(क) परिशिष्ट १ और २ में आये उन रचयिताओं की नामावली जो प्रस्तुत खोज में नये मिले हैं।

(ख) पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं।

(ग) संग्रह-ग्रंथों (पद-संग्रहों और कवित्त-संग्रहों) में आये उन कवियों की नामावली जो पहले अज्ञात थे तथा जिनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों, मिश्रबंधु विनोद और शिवसिंह सरोज में नहीं मिलता।

(घ) रचयिता और उनके आश्रयदाता ।

चतुर्थ परिशिष्ट (क)

परिशिष्ट १ और २ में आये उन रचयिताओं की नामावली जो प्रस्तुत खोज में नये मिले हैं।

क्रम संख्या	रचयिता	खोज विवरण में दी हुई संख्याएँ	वर्तमानकाल	ग्रंथों की संख्या	विशेष
१	ईसख (मिर्जा)	६७		१	
२	उत्तमदास (हित)	१५८		१	
३	उदय	१५५		१	
४	उमा	१५७		१	
५	कलीराम	७८	१७ वीं शताब्दी	१	१ प्रतियाँ
६	कुमुटीपाव	८५		१	
७	केवलकृष्ण (कृष्ण कवि)	८४	१९ वीं शताब्दी	१५	१८ प्रतियाँ
८	केसरी कवि	८०		१	
९	कृष्ण कवि	८४	१६ वीं शताब्दी	१५	१८ प्रतियाँ
१८	कृष्णदास	८३		१	
११	खगपति कायस्थ	८१	१७ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
१२	ख्वाजा मुहम्मद फाजिल	९५		१	
१३	गंगादास (साधू)	४९		१	
१४	गिरिधरनाथ "नाथकवि"	५२		१	
१५	गुपाल कवि	५४		१	
१६	गोस्वामी सुखलालजी	१४६		१	
१७	चंद	२०		१	
१८	चंद	२१		१	
१९	चंद्र	२३		१	
२०	चिंतामणि	३१		१	
२१	चिंतामणि गोपाल	३२		१	
२२	चिदात्माराम	२९		१	
२३	चीखा	३०		१	
२४	चोखन	३३		१	
२५	जगन्नाथ "सुखसिंधु"	६८		१	

क्रम संख्या	रचयिता	खोज विवरण में दी हुई संख्याएँ	वर्तमानकाल	ग्रंथों की संख्या	विशेष
२६	जनहरिदेव	५७	१९ वीं शताब्दी	१	
२७	जनौल	७०		१	
२८	जमुनादासजी	६९		१	
२६	जयगोविंद वाजपेयी	७३		१	
३०	जयसिंह (राजा)	७४	१९ वीं शताब्दी	१	
३१	जवाहरलाल	७२	१९ वीं शताब्दी	१	
३२	ज्वाला स्वरूपजी (मुंशी)	७६	१९ वीं शताब्दी	१	
३३	तापा या तापान	१५१		१	
३४	तुका राम	१५२		१	
३५	तुलसीदास	१५४		१	
३६	दयाराम	३६		१	३ प्रतियाँ
३७	दयाराम	३८		१	
३८	देवीदास	३९		१	
३९	देवीदीन मुदर्रिस	४०	१६ वीं शताब्दी	१	
४०	दीनजी	४३		१	
४१	दीनबंधु कुर्मी	४४		१	
४२	दुत	४७		१	
४३	दुर्गा परसाद वाजपेयी	४६		१	
४४	धर्म कुँवरि (रानी)	४१		१	
४५	नवल	१०४		१	
४६	नवलदास	१०५	१७ वीं शताब्दी	१	
४७	नाथ कवि	५२		१	
४८	पंडित रामसिंह	१२३		१	
४९	परमानंद	१०७		१	
५०	प्रसिद्ध	११०	१८ वीं शताब्दी	१	
५१	बनमाली	४		१	२ प्रतियाँ
५२	बसंत	६		१	
५३	बालकराम	३		१	
५४	बालगोविंद	२		१	
५५	बीर भान	१७	१८ वीं शताब्दी	१	
५६	बुद्ध सिंह (रावराजा)	१९	१८ वीं शताब्दी	१	
५७	ब्रज दूल्है	१८		१	

क्रम संख्या	रचयिता	खोज विवरण में दी हुई संख्याएँ	वर्तमानकाल	ग्रंथों की संख्या	विशेष
५८	भगवान	९		१	
५९	भट्टोत्पल	११		१	
६०	भूप	१४		१	
६१	मधुकरदास	९४	१८ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
६२	महेश नारायण सिंह	९६		१	
६३	माणकदास	९७		१	
६४	माधौदास	६२		१	
६५	माधौदास	९३		१	२ प्रतियाँ
६६	मिर्जा ईसख	६७		१	
६७	मुंशी ज्वाला स्वरूपजी	७६	१९ वीं शताब्दी	१	
६८	मुहम्मद फाजिल (ख्वाजा)	९५		१	
६९	मोतीलालद्विज कवि	१०१		१	
७०	मोहन	९८	१६ वीं शताब्दी	१	
७१	मोहनदास	९९		१	
७२	मोहनदास समाधिया	१००	१९ वीं शताब्दी	१	
७३	रतन	१२६		१	
७४	महाराज रसिक मोहनराय	१२५		१	
७५	राघबदास	११२	१७ वीं शताब्दी	१	
७६	राघोदास	११३		१	
७७	रामकवि	११६		१	
७८	रामचंद्र	११५		१	
७९	रामजन	११८	१८वीं शताब्दी	१	
८०	रामदयाल	११७		१	
८१	राम नारायण	१२१		१	
८२	रामपुरी	१२२	१७वीं शताब्दी	१	
८३	राम लला	१२०		१	
८४	राजा जयसिंह	७४		१	
८५	रानी धर्म कुंवरि	४१		१	
८६	रामसिंह (पंडित)	१२३		१	
८७	रूप रामजन	१३०	१८वीं शताब्दी	१	
८८	लक्ष्मीदास चतुर्वेदी	८८	१९वीं शताब्दी	१	
८९	लछमनदास (उदासी)	८७		१	

क्रम संख्या	रचयिता	खोज विवरण में दी हुई संख्याएँ	वर्तमानकाल	ग्रंथों की संख्या	विशेष
९०	ललित दीन (हित)	८९		१	
९१	लोक मणिदास चतुर्वेदी	९१		१	
९२	वली	१५९		३	
९३	विसन दास (जन)	१६१		१	
९४	विसेश्वर कवि	१६२		३	
९५	शिव प्रसाद	१४३		१	
९६	श्याम कवि	१५०		१	
९७	श्रीधर	१४५		१	
९८	श्रीलाल	१४७	१९वीं शताब्दी	१	
९९	सरस्वती	१३७		१	
१००	सर्वसुखदास जी	१३८		१	
१०१	सहज	१३७		१	
१०२	सालू	१३४		१	
१०३	साहब राय	१३२		१	
१०४	सीतल	१४१		१	
१०५	सीधर	१४०		१	
१०६	सुखलालजी (गोस्वामी)	१४९		१	
१०७	सेवाराम	१३९	१९वीं शताब्दी	३	
१०८	हरिदेव (जन)	५७	१९वीं शताब्दी	१	
१०९	हरिनारायण मिश्र (हरिनाम)	५८		२	
११०	हरिवंश	६१	१८वीं शताब्दी	१	
१११	हरिवंश अली	६३		१	
११२	हरिवंश टंडन	६२		१	
११३	हरिशंकर	६०		१	
११४	हित उत्तमदास	१५८		१	
११५	हितदास जी	६६	१८वीं शताब्दी	१	
११६	हित ललित दीन	८९		१	
११७	हीरा सखी (हित)	६५		२	
११८	हेम	६४		१	

———

चतुर्थ परिशिष्ट (ख)

पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं।

क्रम संख्या	रचयिता	विवरणसंख्या	रचनाकाल	प्राप्त हस्त-लेखों की संख्या	विशेष
१	अखैराम	१	१८वीं शताब्दी	४	
२	उदय	१५६	१८वीं शताब्दी	२	
३	कबीर	७७	१५वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
४	काशी गिरि	७९		१	
५	किंकर कवि	८२		१	
६	कुशल कवि	८६	सन् १७६९ ई०	१	३ प्रतियाँ
७	कृष्ण कलानिधि	१४६		१	
८	गंगाधर	५०		१	२ प्रतियाँ
९	गोपेश्वर जी	५३	१६वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
१०	गौतम ऋषी	५१		१	
११	ग्वाल	५५	१९वीं शताब्दी	४	
१२	चंदलाल हित	२२	१८वीं शताब्दी	२	
१३	गोस्वामी चतुरशिरोमणि लाल	२६	सन् १८११ ई०	१	
१४	चतुर्भुज मिश्र	२७	सन् १८३९ ई०	१	
१५	स्वामी चरणदास	२५	१८वीं शताब्दी	६	
१६	जटमल	७१	१७वीं शताब्दी	१	
१७	ज्ञानी जी	७५		२	
१८	गोस्वामी तुलसीदास	१५३	१६वीं शताब्दी	२	
१९	दयाराम	३७	सन् १७२२ ई०	१	
२०	दयाल	३५		१	
२१	दलेलपुरी	३४		१	
२२	दीनदयालगिरि	४५	१९ वीं शताब्दी	१	
२३	द्वारिकेश	४८		१	
२४	ध्रुवदासजी	४२	१७ वीं शताब्दी	२	
२५	नागरीदास (सावंतसिंह राजा)	१०३	१८ वीं शताब्दी	६	
२६	पलटूदास	१०६	१८ वीं शताब्दी	१	
२७	प्रभुदयाल	१०८	१९ वीं शताब्दी	३	
२८	प्राणनाथ	१०९	१७ वीं शताब्दी	१	

क्रम संख्या	रचयिता	विवरणसंख्या	रचनाकाल	प्राप्त हस्त-लेखों की संख्या	विशेष
२९	प्रेमनिधि	१११	१९ वीं शताब्दी	१	
३०	बनारसी	५	सन् १६१३ ई०	१	
३१	बिहारिन देवजी	१६	१७ वीं शताब्दी	१	
३२	बिहारी	१५		१	
३३	भगवानदास निरंजनी	१०	१७ वीं शताब्दी	२	
३४	भगौतीदास	८	१७ वीं शताब्दी	२	
३५	भड्डली	७		१	२प्रतियाँ
३६	भीष्म	१२		१	२प्रतियाँ
३७	भोपति या भूपति	१३	१७ वीं शताब्दी	१	३प्रतियाँ
३८	मुरलीधर	१०२		१	
३९	रघुराजसिंह	११४	१९ वीं शताब्दी	१	
४०	रसिक	१२४		१	
४१	रसिक प्रीतम	५९	१८ वीं शताब्दी	१	
४२	रामचरण स्वामी	११६	१८ वीं शताब्दी	२	
४३	रिषिकेश	१२७	१८ वीं शताब्दी	१	
४४	रूपचंद	१२८		४	
४५	रूपरसिक	१३१		२	
४६	रूपलाल हित	१२९	१८ वीं शताब्दी	२	
४७	लोचनसिंह कायस्थ	९०	१९ वीं शताब्दी	१	
४८	विंदा (जन)	१६३		२	
४९	विनोदीलाल (लालचंद)	१६०	१७ वीं शताब्दी	१	
५०	वृंदावनदास "हित	१६४	सन् १७७३ ई०	२	
५१	व्यास	१६५	१६ वीं शताब्दी	१	
५२	शंकराचार्य	१३६		१	
५३	शिवानंद स्वामी	१४२		१	
५४	श्रीकृष्ण कवि या कृष्णकलानिधि	१४६		१	
५५	सनेही राम	१३५		१	
५६	सुखलाल	१४८		२	
५७	सोमनाथ	१४४	सन् १७२९ ई०	१	
५८	हरिबक्स बिसेन	५६	१९ वीं शताब्दी	४	
५९	श्री हरिरायजी "रसिक प्रीतम"	५९	१८ वीं शताब्दी	१	

चतुर्थ परिशिष्ट (ग)

संग्रह-ग्रंथों (पद-संग्रहों और कवित्त-संग्रहों) में आये इन कवियों की नामावली जो पहले अज्ञात थे तथा जिनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों, मिश्रबंधु विनोद और शिवसिंह सरोज में नहीं मिलता ।

क्रम संख्या	कवियों की नामावली
१	अनन्य सुजान
२	अभिनाम
३	अलिरूप
४	आजीज
५	कल्यानसिंह (ख्यालबाज)
६	कान्ह प्रवीन
७	किंडा (ख्यालबाज)
८	कृष्ण सखा
९	केशौ किशोर
१०	खुस्याल
११	गिध कवि
१२	गिरिधर गोकुलचंद
१३	गुलाब दत्त
१४	गोकुलेश
१५	चेता (ख्यालबाज)
१६	छबि कवि
१७	जगन्नाथ प्रभु
१८	जटा कवि
१९	जीत लाल
२०	जीवनि
२१	डल्लुराम
२२	दया सखि
२३	दासदरबारी या लालदरबारी
२४	दासन प्रभु
२५	दुल्लाराम (ख्यालबाज)
२६	देबी (ख्यालबाज)
२७	धीरज प्रभु
२८	नंदा (ख्यालबाज)
२९	नरनागर
३०	नवनीत हित
३१	नागर
३२	नानक शा
३३	नाह कवि
३४	निकट सहचरि
३५	न्याय बुधानंद गुरु
३६	पिय दयाल
३७	पीपा
३८	पुरंदर
३९	प्रानपति
४०	प्रेमदासी
४१	बली
४२	बिहारिनीदासी
४३	बीरा गोपीदास
४४	भजनलाल
४५	भोगनाथ
६	मंजु कवि
४७	मघराम
४८	मानंद चंद
४९	मोहन रसिक
५०	रघुगुपाल
५१	रघुबीर राय

५२ रमत
५३ रस रसिक
५४ रसिक भूप
५५ लाडली सखी
५६ लोचन
५७ वंशी (ख्यालबाज)
५८ वल्लभ (रहीम के समय वर्तमान था)
५९ विजय सखी
६० विपुल विहारिनिदास
६१ श्रीकृष्ण दासी
६२ सत्य कवि
६३ सरसदासी
६४ सिंभ
६५ कवि सीस
६६ सुंदरघन
६७ सुख या सुखन
६८ सुघर राय
६९ सुरत
७० सूरतनै
७१ सूरतसिंह (ख्यालबाज)
७२ हरदयाल (ख्यालबाज)
७३ हिंदूपति विप्र
७४ हित अनूप
७५ हित विनोद
७६ हित विनोद
७७ हीरादास

चतुर्थ परिशिष्ट (घ)

रचयिता और उनके आश्रयदाता

क्रम संख्या	हस्तलेखों की संख्या	कवियों के नाम	आश्रयदाताओं के नाम	विशेष
१	७२	जवाहिर लाल	राजा बाजार के महाराज महेश नारायण सिंह की धर्मपत्नी रानी धर्म कुंवरि (जौनपुर)	
२	१७	बीर भाण	अभै साह महाराज	इनका निवास स्थान अज्ञात है।
३	१३६	सरस्वती	महाराज माधवेश या मधुकर	इनका निवास स्थान अज्ञात है।

———

ग्रंथकारों की अनुक्रमणिका

ग्रंथों के सामने की संख्याएँ परिशिष्ट १ और २ में दी हुई क्रम संख्याएँ हैं।

अखैराम	१	चतुर शिरोमणिलाल	२६
ईसख (मिर्जा)	६७	चतुर्भुज मिश्र	२७
उत्तमदास	१५८	चत्रभुजदास (चतुर्भुजदास)	२८
उदय	१५५	चरणदासजी	२५
उदय	१५६	चिंतामणि	३१
उमा	१५७	चिंतामणि गोपाल	३२
ऋषिकेश	१२७	चिदात्मा राम	२९
कबीर	७७	चीखा	३०
कलीराम	७८	चोखना	३३
काशीगिरि	७९	जगन्नाथ सुखसिंधु	६८
किंकर कवि	८२	जटमल	७१
कुमुदी पाव	८५	जनविंदा	१६३
कुशल कवि	८६	जनविसनदास	१६१
कृष्णदास	८३	जनहरिदेव	५७
केवल कृष्ण "कृष्णकवि"	८४	जनौल	७०
केसरी कवि	८०	जमुनादासजी	६९
खगपति कायस्थ	८१	जयगोविंद वाजपेयी	७३
ख्वाजा मुहम्मद फाजिल	६५	राजा जयसिंह	७४
(साधु) गंगादास	४९	जवाहिरलाल	७२
गंगाधर	५०	ज्ञानीजी	७५
गिरिधरनाथ "नाथकवि"	५२	ज्वाला स्वरूपजी	७६
गुपाल कवि	५४	तापा या तापान	१५१
गोपेस्वरजी	५३	तुकाराम	१५२
गौतम ऋषि	५१	तुलसीदास	१५४
ग्वाल कवि	५५	तुलसीदास जी	१५३
चंद	२०	दयाराम	३६
चंद	२१	दयाराम	३७
चंदलालहित	२२	दयाराम	३८
चंद्र	२३	दयाल	३५
(गोस्वामी) चंद्रगोपालजी	२४	दलेलपुरी	३४

दीनजी ४३
दीनदयाल गिरि ४५
दीनबंधु कूर्मी ४४
दुत ४७
दुर्गाप्रसाद बाजपेयी ४६
देवीदास ३९
देवीदीन मुदर्रिस ४०
द्वारिकेश ४८
धर्मकुंवरि ४१
ध्रुवदास ४२
नवल १०४
नवलदास १०५
नागरीदास (महाराज सावंत सिंह) १०३
परमानन्द १०७
पलटूदास १०६
प्रभुदयाल १०८
प्रसिद्ध ११०
प्राणनाथ १०९
प्रेमनिधि १११
बनमाली ४
बनारसी ५
बसंत कवि ६
बालक राम ३
बाल गोविंद २
बिहारिनदेवजी १६
बिहारी १५
बीरभाण १७
बुद्धसिंह (रावराजा) १९
ब्रज दूल्हे १८
भगवान ९
भगवानदास निरंजनी १०
भगौतीदास (भैया) ८
भट्टोत्पल ११
भड्डली ७
भीष्म १२
भूप १४
भोपति या भूपति १३
मधुकरदास ९४
महेशनारायण सिंह ९६
माणकदास ९७
माधोदास ९२
माधोदास ९३
मुरलीधर १०२
मोतीलाल 'द्विज कवि' १०१
मोहन ९८
मोहनदास ९९
मोहनदास 'समाधिया' १००
रघुराजसिंह (महाराज) ११४
रतन १२६
रसिक १२४
रसिक मोहनराय (महाराज) १२५
राघवदास ११२
राघोदास ११३
रामकवि ११९
रामचंद्र ११५
रामचरण ११६
रामजन ११८
रामदयाल ११७
रामनारायण १२१
रामपुरी १२२
रामलला १२०
पंडित रामसिंह १२३
रूपचन्द १२८
रूपरसिक १३१
रूप रामजन १३०
रूपलालजी हित १२९
लक्ष्मीदास चतुर्वेदी ८८
लछमनदास उदासी ८७
ललितदीन ८९

लोकमणिदास चतुर्वेदी ६१
लोचनसिंह कायस्थ ९०
वलि १५९
विनोदीलाल १६०
विशेश्वर कवि १६२
वृन्दावनदास १६४
व्यासजी १६५
शंकराचार्य १३६
शिवप्रसाद १४३
शिवानन्द स्वामी १४२
श्यांम कवि १५०
श्री कृष्ण कवि या कृष्ण कलानिधि १४६
श्रीधर १४५
श्रीलाल १४७
सनेहीराम १३५
सरस्वती १३७
सर्वसुखदास जी १३८
सहज १३३
साल्ह १३४
साहब राय १३२
सीतल १४१
सीधर (श्रीधर) १४०
सुखलाल १४८
सुखलालजी गुसाई १४९
सेवाराम १३९
सोमनाथ १४४
हरिनारायण मिश्र 'हरिदाम' ५८
हरिराय जी (रसिक प्रीतम) ५९
हरिवंश ६१
हरिवंश अली ६३
हरिवंश टंडन ६२
हरिवख्श विसेन ५६
हरिसंकर ६०
हितदास जी ६६
हीरासखी (हित) ६५
हेम ६४

———

ग्रंथों की अनुक्रमणिका

ग्रंथों के सामने की संख्याएँ परिशिष्ट १, २ और ३ (अ) में दी हुई क्रमसंख्याएँ हैं ।

अंबा आरती १४२
अलंकार आभा २७
अज्ञातनामा ५
अद्वैत प्रकाश १५९ ए
अनन्यमाल १५८
अनुभव रस अष्टयाम ६५ ए
अनुभव हुलास ९
अनुराग विलास २१
अमर प्रकाश या अध्यात्म प्रकाश १६६
अलंकार वर्णन १४
अष्टक ६३
अष्टक ६९
अष्टक ८३
अष्टयाम समय प्रबंध १६४ बी
अहरावन लीला १५६ ए
आनंद लहरी १२६
इकतालीस शिक्षापत्र (टीका) ५३ ए, बी
ईस्वर पार्वती संवाद १७५
ईसख प्रकास (सामुद्रिक) ६७
ईसाई धर्म वर्णन सार ८४ पी
ईसू धर्म प्रकाश ८४ क्यू
उत्सव मणिमाल १३१ बी
उपदेशावली ८४ डी
उल्था श्री सत्यनारायण १६२ बी
उषा अनिरुद्ध विवाह ३२
एकाक्षर मंजरी १७
एकादशी महात्म्य १३३
ओषा हरण ३९
कंस की सभा १७६
कबीर का एक खंडित ग्रंथ ७७ ए, बी
कबीर साहब के पदों की टीका १७७
कर्म विपाक उनचासवाँ अध्याय ३१
कल्पग्रंथ १७८
कवित्त १११
कवित्त बसंत ५५ बी
कवि सर्बस्व ७३
कार्तिक महात्म्य १० बी
काल ज्ञान १२७
काव्य पीयूष रत्नाकर ६८
काव्य रस ७४
कृपाकल्याणक १३१ ए
कृष्ण और शिव का अर्द्धाङ्ग स्वरूप वर्णन ७९
कृष्ण कवि का संग्रह ८४ सी
कृष्णचंद्रिका १ डी
कृष्णध्यान चतुरष्टक १५०
कृष्णपदाष्टक १६२ सी
कृष्ण विलास १६३ ए
केवल भक्ति ३६ ए, बी, सी
कोकशास्त्र १८०
क्षेत्र भास्कर ९१
ख्याल १२४
ख्याल १४८ बी
ख्यालों की पुस्तक १४८ ए
गंगा की कथा ८१ ए
गंगा नाटक ८६ ए, बी, सी
गंगा लहरी १३०
गंगास्तुति ८१ बी
गणेश कथा ८०
गीता १७४
गीता शतक ४१

गुटका के पद्मावत की टीका ८८
गोकुल लीला १६३ बी
गोकुलाष्टक १६३ डी
गोपीचंद ११७
गोरा बादल की वार्ता ७१
गोवर्द्धन लीला ५० ए, बी
गोवर्द्धन लीला ५८ ए
गोवर्द्धन समय के कवित्त १०३ सी
ग्रंथ त्रिपदा या त्रिपद वेदांत निर्णय २६
ग्रह भाव फल ३४
चंडी चरित्र ३५
चंद चौरासी (?) २३
चंद्र चौरासी २४
चतुर्थ अष्टयाम ६५ बी
चरणदासजी के पद २५ बी
चित्तौर के घराने का ब्योरा १७०
चित्र काव्य (उदधिबंध) ४५
चित्रगुप्त की कथा १०१
चीखा की बारह खड़ी ३०
चोर मिहचनी १५६ बी
छंद प्रकाश १५
छद्म लीला १२९ बी
जन्मोत्सव बधाई १८
जानकी विजय रामायन ११०
जुगल ध्यान ४२ बी
जैजिन पचीसी १०४
जैमिनि अश्वमेध १० ए
जैमिनि अश्वमेध १२२
जोग शिक्षा उपनिषद २५ जी
जोग सुधा निधि १७६
ज्ञान कल्याणक १२८ डी
ज्ञान चालीसी ६६
ज्ञान बत्तीसी १५५
झूलणा ४३
तत्व जोग नामोपनिषद २५ एच
तप कल्याणक १२८ सी
तीरंदाजी रिसाला ९५
तेज-विंद्योपनिषद २५ एफ
दंपति भावामृत १४६
दया विलास ३७
दामरी लीला १७१
दिल्ली की पातशाही का ब्योरा १७३
दृष्टांत सागर ११६ ए
दृष्टांत सागर की टीका ११८
देवाष्टक १३६
देवी अष्टक ८४ बी
देवी स्तुति ४७
दोहा पचीसी १६२ ए
द्रव्य संग्रह ११५
द्वादश महावाक्य विचार ४ बी
धर्म चरित्र ७२
ध्रुव चरित्र ९४ ए, बी
नरसिंह लीला ९२
नरसी की हुंडी ६
नल दमयंती की कथा ८४ एन
नवरस वर्णन १८८
नवलदासजी की वाणी १०५
नायका भेद १८६
नासकेत पुराण १३९ बी
नीति पचीसी ८४ आर
नेमनाथजी को बारामासो १६०
नौसेर पातसाह की दस ताज की बात १८७
पंचमंगल १२८ बी
पंचरत्न ८४ के
पंचरत्न (गूरूसाहब की प्रशंसा) ८४ एल
पंचाध्यायी १६०
पक्षीचेतन १८९
पद ११६ बी
पद १५७
पद और कवित्त २५ ई

पदों का संग्रह ८४ एफ
पनिहारिन वर्णन ८४ सी
पलटू साहब की बाणी १०६
पांडवसत १६१
पांडुचरित्र ११३
पिंगल १४३
पिगल मंजरी १२३
प्रश्नज्ञान ११
प्रस्तार प्रकाश ५५ ए
प्रस्तावक कवित्त ५५ डी
प्रह्लादचरित्र ३३
प्रेमसागर १ सी
फल चिंतनी १९१
फाग विलास १०३ ई
बड़ी ओनम ९३ ए, बी
बरवा १६८
बारहमासी ५८ बी
बालकरामजी के कवित्त ३
बाल बजरंगी चरित्र १६७
बिहारी सतसई ११६
बुद्धि विलास ९६
ब्रह्म जिज्ञासा १६९
ब्रह्म विलास ८ बी
ब्रह्मस्तुति ७५ ए
ब्रह्मोपासना ८४ एम
भक्तमाल ११२
भजन ८१
भड्डली सगुनावली ७ बी
भागवत १२ बी
भागवत दशम स्कंध १२ ए
भागवत दशम स्कंध (हरि चरित्र) १३ ए बी सी
भागवत दशम स्कंध १३९ सी
भावना सागर २६
भूगोलसार १४७
मटकी और हेली २५ डी
मथुरा वर्णन १८३
मनोरंजनमाला ६१
महेश्वर महिमा ८२
मांझ बतीसी १३८
माणक पदावली ६७
माप विधान ४०
मान कवित्त १०८ ए
मानलीला १४०
मार्कण्डेय पुराण १८२
मुहूर्त चिंतामणि १ ए
मूल पुरुष ४८
मोहनदेव जी की वार्ता १८४
मोहिनी जी को वर्णन १८५
युवतीधर्म ८४ ओ
योगोभ्यास मुद्रा ८५
रघुराज के कवित्तों का संग्रह ११४
रति विहार ४२ ए
रस मंजरी ६२
रस रूप १३७
रसिक लहरी या कीर्त्तन ५९
रसिक श्रृंगार ५२
रागमाला १९२
रागमाला १९३
रागमाला १९४
रामचन्द्र अवतार १५४
रामचन्द्रोदय (लंकाकांड) १४६
रामाज्ञा ५१
रामायण १३२
रामायण की घटनाओं का तिथिपत्र १००
रामाश्वमेध ५७
रामाश्वमेध १९५
रामाश्व वर्णन ४४
रास पंचाध्याई १६५
रीझ चतुर १०३ बी
रुक्मणी मंगल १२०

रुद्र मालिनी छंद	७६
रुपैया अष्टक	१४५
लघुजातक	१ बी
लवकुश पर्व	१०७
लावनी	४९
लीला	१३५
लीलावती	१८१
लोचन प्रकाश	९०
लोलंबराज (वैद्यक)	१४१
वस्तु विचार	१५९ सी
वाणी चरणदास जी की	२५ ए
वार्ता	१६७
विंती	१२८ ए.
विनय निवेदन	८४ ए
विराट चरितामृत	१०९
विविध विषय के कवित्त	१०३ ए
षट् शास्त्र विचार	१५९ बी
षट्शास्त्र वेद द्वादश महावाक्य विचार	४ ए
शनिश्चर की कथा	७०
शब्दपारखी	७५ बी
शिवस्तुति	१५२
शृंगारसार	१०२
श्री गंगा चरित्र	१३९ ए
श्री गोवर्द्धन रूप माधुरी	२८
श्री चूनरी	८ ए
श्री चूनरी	६४
श्री दामोदर हरसानी की वार्त्ता	१७२
श्री स्वामी बिहारिन देवजी की वाणी	१६
संग्रह	४६
संग्रह	५६
संग्रह	८४ जी
संग्रह	८४ एच
संग्राम दर्पण	१४४
संस्कृत के काल	८४ आई
संस्कृत के कुछ पद्य खंडोंपर सवैये	२
संस्कृत व्याकरण	८४ जे
सगुन	७ बी
सगुनावली	९८
सदाशिवजी को व्याहलो	३८
सदाशिवजी को व्याहलो	१५१
सद्गुरु स्तोत्र	१०८ सी
सनेह तरंग	१९
समय प्रबंध	१२९ ए
सर्वोपनिषद	२५ आइ
साल्ह की वाणी	१३८
सिंघासन बत्तीसी	१६६
सीत सार	१०३ एफ
सुख दुख वर्णन	५४
सुघर सुनारिन लीला	१६४ ए
सुदामा चरित्र	७८
सुधाधर पिंगल	२०
सुधानिधि काव्य (भाषा)	६६
सेवक वाणी	१२५
स्फुट पद और कवित्त	२५ सी
हनुमान अष्टक	१५३ ए
हनुमान स्तुति	१५३ बी
हरि चरित्र	६०
हित अष्टक	२२ ए
हितजी के कृपा पात्र	२२ बी
हिताष्टक	८६
हिताष्टक	१२१
होली आदि का छंद	५५ सी
होली उषादि	१०८ बी